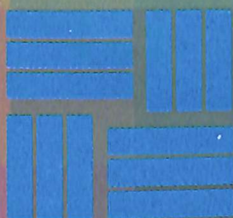
कालिदास एवं भवभूति के नारी पात्र



डॉ. कैलाशनाथ द्विवेदी

कालिदास एवं भवभूति के नारी पात्र



कालिदास एवं भवभूति के नारीपात्र

लेखक
डॉ. कैलाश नाथ द्विवेदी,
एम. ए., साहित्याचार्य, साहित्यरत्न, पी-एच. डी., डी. लिट्.
प्राचार्य
मथुरा प्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
कोंच, जालौन (उ. प्र.)- २८५२०५.

साहित्य रत्नालय, कानपुर-१

* पुस्तक : कालिदास एवं भवभूति के नारी पात्र
* लेखक : डॉ० कैलाश नाथ द्विवेदी
* प्रकाशक : साहित्य रत्नालय,
३७/५०, गिलिस बाजार, कानपुर २०८००१
* मुद्रक : अजित आफसेट, रामबाग, कानपुर
* प्रकाशन वर्ष : १६६६
* संस्करण : प्रथम
* मूल्य : ३००=००

Kalidas Avam Bhavbhuti Ke Naree Patra
By : Dr. Kailash Nath Dwivedi
Price : Rs. Three Hundred only

समर्पण

परम पूजनीया-ममतामयी माँ

सौ. सुखरानी देवी

को

सादर समर्पित !

कविद्वयस्य काव्ये यन्नारीणां चारुचित्रणम् ।
समीक्ष्य लिखित ग्रन्थं मातः स्वीकुरु मेऽर्चनम् ।।

- कैलाश नाथ द्विवेदी

विषयानुक्रम

प्राक्कथन

सृष्टि के शुभारम्भ से ही मानव जीवन की परिपूर्णता नर की जन्मदात्री नारी पर ही अवलम्बित है। नारी को केन्द्र बिन्दु मानकर उसकी महत्वपूर्ण सामाजिक एवं पारिवारिक भूमिका को ध्यान में रखकर हमारे पुरातन साहित्य एवं शिल्प में कवियों और कलाकारों ने भारतीय नारी के विविध रूपों को प्रभावी रूप से अंकित किया है,जिससे हमारी संस्कृति श्रीसम्पन्न संलक्षित होती है।

वैदिक काल से लेकर अब तक महिमा मण्डित नारी संस्कृति की सम्पोषिका स्वरूपिणी होकर भारतीय संस्कृति की अनुपम निधि-संस्कृत साहित्य के महाकाव्य, रूपकादि विविध विधाओं में विलसित है। श्रव्य काव्य की अपेक्षा दृश्य काव्य की प्रभावशालिता सहृदय सामाजिकों में अधिक होती है, जिससे काव्यों में नाटक अधिक रम्य माना जाता है। संस्कृत के समृद्ध नाट्य साहित्य में जो महत्व एवं अद्वितीय गौरवपूर्ण स्थान भास के पश्चात् कालिदास तथा भवभूति को प्राप्त हुआ, उतना अन्य किसी नाटककार को नहीं।

पुरातन भारतीय साहित्य में प्रतिपादित नारी गौरव को ध्यान में रखते हुये हम कह सकते हैं कि समस्त सामाजिक सम्बन्धों के मूल में प्राचीनकाल से ही हमारे परिवार और समाज में नारी की स्थिति एवं उसकी रचनात्मक भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण रही है। संस्कृति के समस्त नाट्य साहित्य में विशेषतः कालिदास एवं भवभूति के नाटकों में नारी के महिमा मण्डित प्रभावी व्यक्तित्व एवं स्वरूप का अत्यन्त हृदयावर्णक चित्रण हुआ है। मेरा बहुत दिनों से यह संकल्पात्मक विचार था कि तात्कालिक समाज में नारी के सर्वाङ्ग जीवन का उद्घाटन एवं अनुसन्धान इन दोनों कालजयी महाकवियों के नाटकों में चित्रित नारी पात्रों के आधार पर प्रस्तुत करूँ जो बाबू द्विजेन्द्र लाल राय जैसे सुधी लेखकों से भी अनस्पृष्ट सा रह गया। वैसे श्री राय की 'कालिदास और भवभूति' कृति पर्याप्त दिग्बोधक एवं उपादेय है।

'कालिदास की काव्य कृतियों के अनुसन्धात्मक अध्ययन में आरम्भ से ही अपनी अभिरुचि होने के कारण उनके नारी विषयक दृष्टिकोण को समझने और व्याख्यायित करने में कोई कठिनाई नहीं हुयी तथा भवभूति की नाट्य कृतियों में नारी पात्रों को तदनुसार तुलनात्मक रूप में मेरे प्रस्तुतीकरण का प्रयास नोट्स रूप में शनैः शनैः सन्दर्भानुसार पूर्ण होता गया। मेरे नोट्स और आलेखों को क्रमशः संजोकर पुस्तकाकार पाण्डुलिपि तैयार करने में मेरी युयोग्य शोध छात्रा डॉ० पुष्पा पुरवार और पुत्रवधू प्रो०

मीरा द्विवेदी (संस्कृत प्राध्यापिका-वनस्थली विद्यापीठ) ने जो परिश्रमपूर्ण सहयोग मुझे दिया-एतदर्थ इनको स्नेहिल शुभाशीष देता हुआ इनके सुखद उज्ज्वल भविष्य की मंगल कामना करता हूँ।

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रकाशन में साहित्य रत्नालय कानपुर के उत्साही प्रकाशक श्री महेश त्रिपाठी ने विलम्बपूर्वक व्यवस्था अर्थाभाव को अनुभव कर की है, इसके लिए इन्हें हार्दिक धन्यवाद समर्पित है।

मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि प्राच्यविद्या, भारतीय संस्कृति एवं संस्कृत नाट्य साहित्य के व्यापक ज्ञान क्षेत्र में महिमा मण्डित भारतीय नारी जीवन के सभी पक्षों के रहस्योद्घाटन पूर्ण मौलिक गवेषणा की दृष्टि से मेरा यह अभिनव ग्रन्थ जिज्ञासु अनुसन्धानकों को अभिनव विचार की सद्दिशा प्रदान करेगा। यदि मेरा यह विनीत प्रयास पाठक अध्येताओं को यत् किञ्चित् भी उपादेय लगा तो लेखक अपने श्रम को सर्वथा सार्थक समझेगा।

आशा है, मनीषी विद्वज्जन लेखक अथवा प्रकाशक की अनवधानतावश मुद्रण सम्बन्धी दोषों पर ध्यान न देकर ग्रन्थ के गुणों को ही ग्रहण करेंगे।

विनयावनत

कैलाशनाथ द्विवेदी

प्राचार्य

मथुरा प्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय

कोंच (जालौन) उ० प्र०

भूमिका (विषय प्रवेश)

भूमिका (विषय प्रवेश)

अति पुरातनकाल से ही हमारे अशेष राष्ट्रीय जन जीवन पर जिसका प्रभूत मात्रा में प्रभाव पड़ा तथा सम्पूर्ण भारतीय साहित्य एवं संस्कृति जिससे पूर्णतया अनुप्राणित है, वह संस्कृत भाषा एवं साहित्य ही इस महान् देश की अनुपमनिधि है । अपने अपार शब्द एवं अर्थ के मंजुल सामंजस्य को संजोये संस्कृति-साहित्य सामाजिकों की ज्ञान-वृद्धि एवं रसानुभूति को दृष्टि में रखते हुए अनेक काव्यात्मक विधाओं से विलसित है, जिनमें काव्य सहृदय संवेद्य प्रधानतः श्रव्य तथा दृश्य दो रूपों में दृष्टिगत होता है ।

सामान्यतः श्रव्य काव्य में बुद्धि तथा हृदय का सम्बन्ध श्रोत्रेन्द्रिय द्वारा होकर सुनने या पढ़ने मात्र से सहृदय को अमन्द आनन्दानुभूति होती है, जबकि दृश्य काव्य में पात्रों के सरस संवाद सुनने के साथ ही उनकी अभिनयात्मक आंगिक चेष्टाओं को रूपकात्मक रूप में नेत्रों से देख कर आनन्दानुभव किया जाता है । यही दृश्य काव्य ही रूपक कहा जाता है, जो नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, वीथी, अंक, प्रहसन १० भेदों से रसाश्रित होता है ।[१]

नाटकं सप्रकरणं भाणः प्रहसनं डिमः ।

व्यायोग समवकारौ वीथ्यंकेहामृगा इति ।। (दशरूपक १/११)

संस्कृत के समस्त रूपक या नाट्य साहित्य को वस्तुतः भारतीय वाङ्मय की उत्कृष्टतम साहित्यिक सिद्धि कह सकते हैं, क्योंकि विविध प्रकार के पात्रों के सर्वाङ्ग अभिनय (आंगिक, वाचिक, सात्विक, आहार्य) से रूपक में उत्कृष्ट रसानुभूति सहृदय को होती है । संस्कृत नाट्य -साहित्य अत्यन्त पुरातन तथा समृद्ध है जिसकी संक्षिप्त विवेचना यहां प्रस्तुत की जा रही है -

संस्कृत नाट्य साहित्य का उद्भव एवं विकास -

भारतीय परम्परा नाट्य की उत्पत्ति ब्रह्मा द्वारा रचित "नाट्यवेद" ऋग्वेद से पाठ्य सामवेद से संगीत, यजुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद के रसतत्व से युक्त [२] था । किन्तु नाटक के प्रधान अंगों (संवाद, संगीत, नृत्य, अभिनय) को ध्यान में रखते हुए विद्वानों[१] ने वेदिक साहित्य का अनुसन्धान कर ऋग्वेद के कतिपय संवादसूक्तों में नाटकीयता पार उन्हें उत्पत्ति स्रोत स्वीकार किया है, जिनमें यम-यमी, (ऋग्० १०/१०) उर्वशी पुरुखा (ऋग्० १०/९५) तथा सरमा-पणि (ऋग्०

---

१. नाटकमथ प्रकरणं भाणव्यायोग समवकार डिमाः ।
ईहामृगां कवीथ्यः प्रहसनमिति रूपकाणि दश ।। (दशरूपक१/ ११ की भूमिका, पृ.२५)

२. नाट्य शास्त्र १/१७ जग्राह पाठ्यं ऋग्वेदात् सामेभ्यो गीतमेव च ।
यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि ।।

१०/१०८) के संवादात्मक सूक्त महत्वपूर्ण हैं जो कालान्तर में परिष्कृत एवं परिमार्जित होकर हृदयावर्जक विक्रमोर्वशीयम् जैसी नाटकीय कृतियों में परिणत हुए होंगे ।

मनीषी हिलेब्राण्ड, कोनो, कीथ[२] आदि पाश्चात्य विद्वानों ने वैदिक अनुष्ठानों के अभिनयात्मक क्रियाकलापों को नाटकों के उद्भव-स्रोत को माना, किन्तु यह मत पूर्णतया निर्भ्रान्त नहीं कहा जा सकता । वैदिक कर्मकाण्ड से धार्मिक नृत्यों (जिनमें मूक आंगिक अभिनय समाविष्ट था) को नाट्योद्भव का एक हेतु माना जा सकता है । इस प्रकार वैदिक साहित्य नाटक के मूल तत्वों से युक्त होकर नाट्योत्पत्ति में विशेष सहायता कर रहा ।

रामायण-महाभारत नाटक एवं उसके कुछ तत्वों का उल्लेख प्रस्तुत करते हैं । रामायण में नट, नर्तक, नाटक, रंग, कुशी लव आदि शब्द तथा महाभारत के विराट पर्व में रंगशाला, नट आदि शब्द नाटकों के पूर्व अस्तित्व को परिपुष्ट करते हैं ।

धार्मिक यात्राओं, महोत्सवों आदि की भी नाट्योत्पत्ति पर कुछ प्रभाव परिलक्षित होता है, जिनमें मनोरंजनार्थ राम-कृष्ण की नाट्यपूर्ण लीलाएँ पुरातनकाल से ही अभिनीत होती हैं ।

डॉ० पिशेल के द्वारा कठपुतलिका नृत्य से तथा कोनो जैसे विद्वानों के द्वारा क्रमिक नाटकों के प्रभाव से नाटकों की उत्पत्ति की संभावना करना समीचीन प्रतीत नहीं होता है । पाणिनि ने[६] अपनी अष्टाध्यापी में "नटसूत्र" का उल्लेख कर नाटकों की पूर्ववर्तिता को प्रमाणित करते हुए हमें निश्चित परिणाम पर पहुँचाया है । पतंजलि[७] के महाकाव्य में भी "बलिबंध" तथा "कंसबध" नाटकों का प्राचीन प्रामाणिक कृतियों के रूप में उल्लेख है । इनके अतिरिक्त नाट्यशास्त्र में वर्णित पुरातन प्रेक्षागृहों के अनुरूप ३०० ई० पू० भी प्राचीन नाट्यशाला छोटानागपुर की पहाड़ियों में "सीता बेंगा" गुहा में प्राप्त हुई है ।

अतः निश्चित रूप से संस्कृत नाटकों का उद्भव बहुत पुरातन काल से है, जो वैदिक काल से लेकर परवर्ती पुराणेतिहास काव्य काल तक लोकगीतों, नृत्यों एवं धार्मिक समारोहों आदि से नाट्यकला ग्रहण करता हुआ अनेक शताब्दियों के क्रमिक विकास को नाट्य-साहित्य में संजोये है ।

भास - संस्कृत के प्रारम्भिक नाटककारों में भास अग्रगण्य हैं, जिनका कालिदास प्रभृति परवर्ती नाटककारों पर प्रभूत प्रभाव परिलक्षित होता है । महाकवि कालिदास ने "मालविकाग्निमित्रम्" की प्रस्तावना में भास का उल्लेख किया है । कालिदास के समान भवभूति भी भास से कम प्रभावित प्रतीत नहीं होते हैं । अनेक अपाणिनीय आर्ष प्रयोगों तथा पुरातन वातावरण को अपनी कृतियों में प्रस्तुत करने के कारण ये कालिदास के पूर्ववर्ती एक प्राचीन

---

१. A. Macdonell, A History of sanskrit Literature, Delhi. 1965 Pp. 292
२. संस्कृत ड्रामा (संस्कृत नाटक), कीथ, (अनु. उदय भानुसिंह) दिल्ली, १९६५, पृ. ८-९ ।
३. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास-डा. कैलाशनाथ द्विवेदी, इटावा, १९७१, पृ. ६६
४. महाभारत. सभापर्व ३३/५१
५. संस्कृत नाटक, कीथ (अनु. उदय भानुसिंह) पृ. ४६, ५४.
६. अष्टाध्यापी ४/३/११०.
७. महाभाष्य ३/२/१११.

नाटककार सिद्धहोते हैं ।

कौटिल्य ने अर्थशास्त्र (१०/३) में प्रतिज्ञायौगन्धरायण के एक श्लोक को प्रमाण रूप में उद्धृत किया है, जिससे कौटिल्य के पूर्ववर्ती भास चतुर्थशती ई. पू. के पश्चात् नहीं हो सकते । भास के नाटकों का सामाजिक चित्रण निःसन्देह छठी शती ई. पू. से चतुर्थ शती ई. पू. तक के भारत का है तथा नाटकों का भरत वाक्य भी किसी नन्द राजा को संकेतित करता है । अतः अन्तः एवं व़ाह्य प्रमाणों के आधार पर भास चतुर्थ शती ई. पू. के नाटककार सिद्ध होते हैं ।

स्व. टी. गणपति शास्त्री को १९०९ ई. में त्रावणकोर राज्य में भास के १३ नाटक अनुसन्धान में प्राप्त हुए हैं, जिनमें दूत वाक्य, कर्णभार, दूतघटोत्कच, उरुभंग, मध्यमव्यायोग, पंचरात्र, अभिषेक नाटक, बालचरित, अविमारक, प्रतिज्ञायौगन्धरायण, प्रतिमानाटकम्, चारुदत्त, स्वप्नवासवदत्ता उल्लेखनीय हैं । ये सभी भाषा शैली, भाव व्यंजना, प्राकृत पद्य अपाणिनीय प्रयोग, प्रस्तावना, भरत वाक्य, आकार आदि में अतिशय सादृश्य के आधार पर एक ही नाटककार भास की रचनाएँ सिद्ध होती हैं ।

इनके अतिरिक्त डा. कुन्हन राजा "वीणावासवदत्ता" को तथा पं. कालिदास शास्त्री "यज्ञफलम्" को भास की रचना मानते हैं, किन्तु इन्हें इनकी मौलिक रचना नहीं कहा जा सकता ।

कालिदास - कविकुल गुरु कालिदास संस्कृत साहित्य के मुकुटमणि हैं । इनकी रघुवंश, कुमार सम्भव, (महाकाव्य), मेघदूत, ऋतुसंहार (गीत काव्य) कृतियों के अतिरिक्त (१) अभिज्ञान शाकुन्तलम् (२) विक्रमोर्वशीयम् तथा (३) मालविकाग्नि मित्रम् नाट्य कृतियाँ सुविख्यात हैं, जिनमें श्रेष्ठ नाटकीय तत्व नाट्यशास्त्रनुमोदित समाहित हैं तथा नारी पात्रों का सुन्दर चित्रण इनमें प्राप्त होता है ।

कालिदास का जीवन काल निर्धारण

विद्वानों ने महाकवि कालिदास के जीवन को बहुत विवादग्रस्त बना दिया है, किन्तु सामान्य रूप से "मालविकाग्निमित्रम्" नाटक के नायक अग्निमित्र शुंग की स्थितिकाल के आधार पर १५० ई. पू. जीवन काल की आरम्भिक सीमा तथा महाकवि बाण [१] (हर्ष वर्धन ६०६ ई. से ६४७ ई. के समकालीन) के हर्ष चरित की प्रस्तावना तथा पुलकेशी द्वितीय (६३४ ई.) के ऐहोल के शिलालेख के [२] आधार पर छठी शती ई. अन्तिम सीमा निर्धारित ई जा सकती है ।

अब तक प्राप्त अनेक अनुसन्धानात्मक [३] निर्णयों के आधार पर प्रथम शती ई. पू. का मत तथा गुप्तकालीन (चतुर्थशती ई. का उत्तरार्ध से पंचम शती ई. का पूर्वार्द्ध [४]) मत ही विचारणीय रह जाते हैं । तथा डा. हार्नले, मैक्समूलर, ओक, म. म. हरप्रसादशास्त्री प्रभृति विद्वानों द्वारा प्रतिपादित छठी शती ई. जीवनकाल विषयक मत की प्रमाणिकता डा. ए. वी. कीथ, बी. सी. मजूमदार प्रभृति

---

१. हर्ष चरित, (प्रस्तावना) - निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु, प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मंजरीष्विव जायते ।।

२. स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रितकालिदासभारविकीर्तिः- (एहोलशिलालेख)

३. ख्यातिं कामपि कालिदासकृतयो नीताः शकारातिना । J. B. o. P. s, 1916. p31.

विद्वानों द्वारा खण्डित की जा चुकी है । प्रो. शारदानन्दराय, प्रो. क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय, के. एस. रामस्वामी शास्त्री जैसे विद्वान् अश्वघोष के काव्य साम्य के आधार कालिदास की पूर्ववर्तिता मानते हुए ई. पू. प्रथम शती कालिदास का जीवन काल निर्धारित करते हैं किन्तु स्व. प्रो. बी. बी. मिराशी,[७] ई. बी. कावेल [८] जैसे विद्वानों ने इसी आधार पर कालिदास की परवर्तिता सिद्ध की है। डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ. भगवतशरण उपाध्याय, [९] डा. चन्द्रबली पाण्डेय, [१०] प्रो. मिराशी, डा. कैलाशनाथ द्विवेदी, [११] प्रभृति विद्वानों ने अन्तः एवं वाह्य साक्ष्यों भास्कर्य एवं मूर्तिकला, साहित्यिक प्रमाणों, भाषा - सम्बन्धी विशिष्ट पदों के आधारों, ऐतिहासिक परिवेश आदि के आधार पर कालिदास को गुप्तकालीन स्वीकार किया है ।

समीक्षा - अतः महाकवि की कृतियों में भाषा सम्बन्धी विशिष्ट शब्दों के आधार भास्कर्य (मूर्ति एवं चित्रकला के आधार के अतिरिक्त विविध साहित्यिक अन्तः एवं नाट्य प्रमाणों के आधार पर उनको गुप्तकालीन (वह भी चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ३८० ई. से ४१३ ई. जो शकारि, साहसांक, विक्रमांक या विक्रमादित्य उपाधि से अभिमण्डित थे के शासनकाल में समसामयिक) मानना समाचीन प्रतीत होता है ।

हर्ष - स्थाण्वीश्वर सम्राट् हर्षवर्धन का स्थितिकाल ६०६ ई. से ६४८ ई. तक था । विद्याव्यसनी साहित्यकार वाण जैसे कवि के आश्रयदाता एवं नाटककार के रूप में इनकी ख्याति फैली हुई थी तथा इनकी ३ नाट्य रचनाएं संस्कृत नाट्य साहित्य में सुपरिचित हैं -

१. प्रियदर्शिका २. रत्नावली ३. नागानन्द ।

इनमें "रत्नावली" नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ नाटिका तथा नागानन्द सातवीं शती ई. की रचनाओं में अग्रगण्य नाटक हैं ।

महेन्द्र विक्रम वर्मा - ये हर्ष के समसामयिक राजा सिंह विष्णु वर्मा के पुत्र तथा रांची के राजा थे । इनकी नाट्य रचनाओं में "मत्तविलास प्रहसन" महत्वपूर्ण हैं । इनके युग की अन्य हास्यकारिणी नाट्यकृति चतुर्भाणी (वर रुचिकृत उभयामिसारिका, शूद्रक कृत पदम प्राभृत, ईश्वरदत्तकृत धूर्त-विटसंवाद तथा आर्यश्यामिलक कृत पादताडिक) उल्लेखनीय हैं । इन चारों

---

४. J. R. A. S. 1909. P. 109.

५. J. R. A. S., 1909. P. 433.

६. J. B. o. R. s., 1916. P. 389 PQkk J. R. A. s. 1909. P. 78.

७. Kalidasa, Mirashi. P. 13.

८. U. P. Historic society, Vo 1. xxii Pt I & II 1949 " An Evidence in Kalidasabyv. s. agrawal.

९. India in kalidass. Alld. 1949. P. 26. कालिदास और उनका युग

१०. कालिदास, पाण्डेय, बनारस, २०११ वि. पृ. १३-२३.

११. महाकवि कालिदास, कानपुर, १९८५ पृ. ३९
कालिदास की कृतियों में भौगोलिक स्थलों का प्रत्यभिज्ञान, १९६९, पृ. १३ संस्कृत साहित्य का समी. इतिहास, कानपुर १९६९ पृ. २३, २९, ४५.

१. गोडवहो ७/९९ "भवभूति जलनिधि निर्गतकाव्यामृत रसकणा इव स्फुरन्ति, यस्य विशेषा

एकांकी नाट्य कृतियों में साधारण स्त्रियों, वेश्याओं जैसे नारी पात्रों के साथ ही धूर्त एवं कामियों की हास्यास्पद वार्ताएं कही गई हैं ।

भवभूति - भास तथा कालिदास के पश्चात् परवर्ती प्रसिद्ध नाट्य कृतियों में संस्कृत नाटककारों में भवभूति उल्लेखनीय हैं । इनकी नाट्य कृतियों में अपने परवर्ती नाटककारों में से भास के अतिरिक्त कालिदास की कृतियों का विशेष - साहित्यिक प्रभाव परिलक्षित होता है ।

जीवनकाल निर्धारण - आचार्य वामन (८०० ई.) ने "काव्यालंकार सूत्र वृत्ति" में भवभूति के एक 'पद्य' इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिनयनयोः (उत्तर र. १/३८) को उद्धृत किया है ।

इसके अतिरिक्त "गोडवहो" [१] प्राकृत काव्य में वाक्पतिराज ने भवभूति की प्रशंसा की है, जिसमें वाक्यतिराज से इनकी पूर्ववर्तिता तथा राजा यशोवर्म के राज्य काल के पूर्वार्द्ध में इनकी प्रसिद्धि प्रतीत होती है ।·अतः म.म. वासुदेव वि. मिरासी [२] का यह अनुमान और विचार समीचीन प्रतीत होता है कि भवभूति ७०० से ७३० ई. के आसपास अपनी साहित्यिक क्रियाशीलता से साहित्य संसार में सुपरिचित हो रहे होंगे ।

महाकवि भवभूति के नाटकों की प्रस्तावना से हमें इनका कुछ परिचय प्राप्त होता है । विदर्भ राज्यस्थ पद्मपुर नामक नगर के निवासी एक उदम्बर वंशीय ब्राह्मण परिवार में इनका जन्म हुआ था । इनके पिता का नाम नीलकण्ठ तथा माता का नाम जातुकर्णी था । भवभूति का प्रारम्भिक नाम श्रीकृष्ण था, जो ज्ञाननिधि के शिष्य थे । इनकी ३ नाट्य कृतियां प्राप्त हैं - १. महावीरचरितम् २. मालतीमाधव ३. उत्तररामचरितम् ।

"महावीरचरितम्" भवभूति की प्रथम नाट्य कृति है जिसमें रामायण के पूर्वार्द्ध की कथा रामविवाह, रामवनवास, सीताहरण एवं राज्याभिषेक का वर्णन ७ अंकों में प्रस्तुत हुआ है । इस नाटक पर भासके अभिषेक नामक नाटक तथा बालचरितम् का प्रभाव परिलक्षित होता है । यद्यपि इसमें नाट्य कला का पूर्ण परिपाक नहीं हुआ है, तथापि वीर रस का परिपोष इसमें अच्छा हुआ है।

"मालतीमाधवम्" भास के "अविमारक" नाटक से प्रभावित मालतीमाधव १० अंकों का एक प्रेमकथापरक प्रकरण है जिसमें मालती तथा माधव के प्रणय एवं विवाह का कल्पनाजन्य वर्णन है । रोचक कथानक, यथार्थ तथा विशद चरित्र चित्रण तथा सुन्दर काव्यात्मक भाषा के कारण यह महावीरचरितम्" की अपेक्षा आलोचकों द्वारा अधिक समादृत हुआ है ।

"उत्तर रामचरितम्" रामायण के उत्तर काण्ड कथानक पर आधारित यह ७ अंकों का भवभूति का अंतिम एवं सर्वोत्कृष्ट नाटक है । कवि ने नाट्कीय रूप प्रदान करने के लिए कालिदास के समान इसकी मूल कथा में मौलिक परिवर्तन किए हैं । रामायण की कथा सीता के पृथ्वीगर्भ में समाने से दुःखान्त है, किन्तु भारतीय नाट्य कला के आदर्शानुसार रामसीता का मिलन कराकर कवि ने इसे सुखान्त स्वरूप प्रदान किया है । चित्रदर्शन प्रसंग, राम का वनदेवता से मिलन, दण्डकारण्य में तमसामुरला के साथ छाया सीता की उपस्थिति, चन्द्रकेतु और लव में युद्ध कराते हुए नायक को

अद्यापि विकटेषु कथा निवेशेषु । । "

२. Bhavabhuti_ V. V. Mirashi_ Delhi 1974. P. 11_ 12 AD. 'Bhavabhuti's literary activity these lay between 700 and 730 AD.

१. Krishns swami Aiyangar com. Vol.I, Winternitz -

पराजित न दिखाना, वाल्मीकि आश्रम में जनक-वशिष्ठ के साथ ही कौशल्या, अरुन्धती आदि का आगमन तथा सप्तमांक में गर्भांक नाटक ये सभी भवभूति की कथानक में मौलिक कल्पनाएं हैं ।

अनेक नाट्य कलात्मक वैशिष्ट्य से युक्त होने के कारण ''उत्तररामचरिते भवभूति र्विशिष्यते'' की सूक्ति उनकी नाट्यकला के चूंडान्त निदर्शन को व्यक्त करती है ।

विशाखदत्त - (विशाखदेव) - महाराज पृथु के पुत्र तथा बटेश्वर दत्त के पौत्र विशाख दत्त का एक मात्र उत्कृष्ट नाटक मुद्राराक्षस प्राप्त होता है । देवी चन्द्रगुप्तम् नाटक के प्राप्त अंशों के आधार पर विशाखदत्त का स्थितिकाल छठीं शताब्दी ई. प्रतीत होता है ।

मुद्राराक्षस समग्रसंस्कृत साहित्य में एक राजनैतिक ऐतिहासिक [1] कथानकयुक्त ६ अंकों का बेजोड़ नाटक है, जिसपर भास के प्रतिज्ञायौगन्धरायण का प्रभाव परिलक्षित है । अन्य नाटकों की भांति यह रस प्रधान न होकर घटना-प्रधान नाटक है, जिसमें राजनीति की कुटिल चालों का सजीव चित्रण हुआ है ।

भट्टनारायण - 'भट्ट' एवं 'मृगराज' उपाधियों से विभूषित भट्टनारायण ८वीं शती ई . के पालवंशीय बंगाल के शासक के आश्रित थे तथा वामन (८०० ई. जैसे आचार्यों ने इनकी नाट्य कृति वेणी संहार से उद्धरण ग्रहण किए हैं । अतः ७२५ ई. के आसपास विद्यमान महानारायण का ''वेणीसंहार'' नामक ६ अंकों से युक्त वीररस का सुन्दर नाटक प्राप्त होता है, जिसका कथानक महाभारत से लिया गया है ।

मुरारि - मौद्गल्य गोत्रीय श्री वर्धमानक एवं तन्तुमती देवी के पुत्र मुरारि माहिष्मती के निवासी थे, जिन्होंने ८०० ई. के आसपास भवभूति के ''महावीरचरितम्'' से प्रभावित होकर अनर्धराघव नामक ७ अंकों के नाटक की रचना की, जिसमें ताडकावध से लेकर राज्याभिषेक तक की घटनाएं कुछ मौलिक परिवर्तन के साथ वर्णित की हैं ।

''मुरारिपदचिन्तायाँ भवभूतेस्तु का कथा । भवभूतिं परित्यज्य मुरारिंसुररीकुरु ।''

की उक्ति से भवभूति की अपेक्षा श्रेष्ठता प्रतिपादित है ।

कालिदास तथा भवभूति के परवर्ती नाटककारों में शक्तिभद्र (नवीशती ई.) का १६२६ ई. में मदरास से प्रकाशित ''आश्चर्य चूडामणि'', दामोदर मिश्र का रामायण पर आधृत १४ अंकों का महानाटक ''हनुमन्नाटक'',[2] राजशेखर (१०वीं शती ई . पूर्वार्द्ध) कृत कर्पूरमंजरी (सट्टक), विद्धशाल-भंजिका (नाटिका), बालरामायण तथा भाल भारत या प्रचण्डपाण्डव नाटक , क्षेमीश्वर (१०वीं शती पूर्वार्द्ध) कृत 'चण्डकौशिक' एवं ''नैषधानन्द'' नामक नाटक, दिङ्नाग (१०वीं शती ई.) कृत 'कुन्दमाला', जिसका ६ अंकों का कथानक भवभूति कृत ''उत्तर रामचरितम्'' के समान रामायण के उत्तर काण्ड पर आधारित है, अत्यन्त महत्वपूर्ण रचना है ।

संस्कृत के प्रतीकात्मक या रूपककथात्मक (Allegorical) नाटकों में कृष्ण चन्द्र मिश्र

Historical Drama in sanskrit Literature. P. 360.

२. हनुमन् नाटक, श्री मधुसूदनदास, (द्वितीय संस्करण) में मात्र ६ अंक हैं ।

१. मनु. ६/२२ प्रजनार्थ स्त्रियः स्त्रष्टाः सन्तानार्थञ्च मानवाः ।

(११वीं शती ई.) का "प्रबोधचन्द्रोदय" नामक ७ अंकों का नाटक उल्लेखनीय है । जिसमें विवेक, मोह, ज्ञान, बुद्धि, श्रद्धा आदि अमूर्त भावों को स्त्री पुरुष पात्रों के रूप में प्रयुक्त किया गया है ।

परवर्ती पूर्वमध्य एवं मध्य काल के नाटककारों में **जयदेव** (१२वीं शती) कृत "प्रसन्नराघव", **वत्सराज** (१२वीं शती ई .) कृत कर्पूरचरित, (भाषा) "हास्यचूड़ामणि", (प्रहसन) समुद्र मन्थन (समवकार), किरातार्जुनीय व्यायोग, (व्यायोग), रुक्मिणी-हरण (ईहामृग) त्रिपुरदाह (डिम), **हस्तिमल्ल** (१३वीं) शती ई. के 'विक्रान्त-कौरवं, मैथिली-कल्याण" तथा 'सुभद्रा-नाटिका,' **यशपाल** (१३वीं शती ई.) कृत "मोहपराजय", **वेंकटनाथ** (१४वीं शती ई.) का " संकल्प सूर्योदय", कर्णपूर (१६वीं शती) का चैतन्य चन्द्रोदय, **जयसिंह सूरि** का "हम्मीर-मदमर्दन, **जगदीश्वर** (१६०० ई.) "हास्यार्णव", **रामभद्र दीक्षित** का" जानकीपरिणय", केरल के राजकुमार **रवि वर्मा** (१३ वीं शती ई.) का " प्रद्युम्नाभ्युद", **रूपगोस्वामी** (१६वीं शती) कृत "विदग्ध माधव" तथा "ललित माधव", **हरिहर** (१५ वीं शती ई.) का "प्रभावती परिणय", प्रभृति नाट्य कृतियाँ उल्लेखनीय हैं।

अर्वाचीन नाटककारों में **आर. कृष्णमाचारी** कृत "वासन्तिका स्वप्न", **लक्ष्मणसूरि कृत** "दिल्ली साम्राज्य", **मूलशंकर याज्ञिक** कृत छत्रपतिसाम्राज्य, प्रतापविजय एवं संयोगिता स्वयंवर, **हरिदास सिद्धान्त वागीश** कृत "विराजसरोजिनी' (नाटिका), 'कंसवधम,' 'जानकी विक्रम,' "मेवाड़प्रतापम, तथा वंगीयप्रतापम' **डॉ० यतीन्द्रनाथ चौधरी** कृत' भारत भास्कर', 'महिमामय भारतम्,' 'शक्तिशारदम्,' 'भारत हृदयारविन्दम्', **म. म. मथुरा प्रसाद दीक्षित** कृत "पृथ्वीराज", वीरप्रताप, भक्त-सुदर्शन, गान्धी विजय, भारत विजय आदि महत्वपूर्ण नाट्य कृतियाँ हैं ।

समीक्षा - इस प्रकार विशाल संस्कृत नाटक- साहित्य के क्रमिक उद्भव एवं विकास में अनेक शताब्दियाँ लगी, जिसमें भारतीय साहित्य की कलात्मक प्रतिभा, मौलिकता एवं सैद्धान्तिकता के लगभग ८०० नाटक ग्रन्थों में अभिव्यक्त हुई । संस्कृत के समग्र नाट्य साहित्य में जो महत्व एवं गौरवपूर्ण स्थान भास के पश्चात् कालिदास तथा भवभूति को प्राप्त हुआ है, उतना अन्य किसी नाटककार को नहीं । भाव, भाषा, नाट्य शिल्प कथावस्तु, पात्रयोजना आदि में भवभूति से प्रभावित परवर्ती नाटककारों मुरारि, दिंग्नाग प्रभृति नाटककार उल्लेखनीय हैं ।

तद्युगीन सामाजिक एवं धार्मिक अवस्था के अनुसार समाज में नारी की स्थिति एवं रचनात्मक भूमिका - सृष्टि-प्रक्रिया में नारी एवं पुरुष प्राकृतिक शरीर रचना की दृष्टि से स्वयं में अपूर्ण है तथा पूर्णता के लिए एक को दूसरे की अपेक्षा होती है । वस्तुतः नारी और पुरुष की इस पूर्णता का प्रतीक ही समाज का विकास है जिसमें नारी का पुरुष की जननी और पालनकर्त्री के रूप में उत्तरदायित्व पुत्र से अधिक होने के कारण मनु जैसे धर्मशास्त्रियों ने उसे पूज्य एवं महनीय माना है ।

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमते तत्र देवताः (मनु. ३/५६)

जहां मनु ने नारी को पुरुष की सन्तति जनन के साथ धर्म कार्यों में पुरुष की सहधर्मिणी [1] कहा है, वहां [2] उपनिषदों में भी उसे पूज्या प्रतिपादित किया है । पति द्वारा सम्पन्न समस्त कार्यों में उसका अर्धांश होने से नारी की [3] अर्दांगिनी भी अभिहित किया गया है तथा समाज में कन्या,

(दुहिता) भगिनी, बधू (पत्नी), माता, मातामही, गुरुपत्नी आदि विविध रूपों में भी उसका उल्लेख प्राप्त होता है ।

नारी संस्कार - प्राचीन भारतीय समाज में पुरुषों के समान नारियों के भी नियमतः जातकर्म, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णभेद, [४] उपनयन, विवाह आदि संस्कार सम्पन्न होते थे। उपनयन संस्कार तो कन्याओं का उतना ही आवश्यक था, जितना कि किशोरों का वैदिक मंत्रों के यज्ञादि धार्मिक समारोहों पर उच्चारणार्थ बालक-बालिकाओं का उपनयन संस्कार सम्पन्न होता था, वैदिक- साहित्य[५] एवं सूत्र-साहित्य [६] में भी इनके संस्कारों के सम्बन्ध में संकेत पूर्ण निर्देश प्राप्त होता है । प्रतीत होता है परवर्तीकाल में स्त्रियों को संस्कारित करने के नियमों में शिथिलता आ गई और बिना वैदिक मंत्री[७] के ही उनका उपनयन होने लगा तथा विवाह संस्कार में ही सभी संस्कारों का समावेश [८] हो गया । पतिसंग को गुरु कुलवास तथा गृह कार्य को अग्निहोत्र बताया गया है । (मनु. २ /६६)

संभवतः प्रथमशती ईस्वी से वैदिक अध्ययन शून्य होने के कारण कन्याओं का उपनयन एक बाह्य प्रसाधन मात्र रह गया [९] । अतः याज्ञल्क्य [१०] ने स्त्रियों के जात कर्मादि सभी संस्कारों का उल्लेख न कर मात्र विवाह को मंत्रपूर्वक करने का परामर्श दिया है [११] । अन्य स्मृतिकारों ने याज्ञवल्क्य ने दृष्टिकोण का समर्थन किया है, जबकि परवर्तीय कतिपय धर्मशास्त्रियों में से ८वीं शती ईस्वी के यम ने स्त्रियों के उपनयन संस्कार को वेदाध्ययन के लिए आवश्यक बताया है । स्मृतिकार हारीत भी २ प्रकार की स्त्रियों --- (१) ब्रह्मवादिनी तथा (२) सद्यो बधू का उल्लेख करते हैं, जिनमें ब्रह्मवादिनी का उपनयन, अग्नीन्धन, वेदाध्ययन, भैक्षवर्या आदि गृह में होती थी, जबकि सद्यो बधू

तस्मात् साधारणो धर्मः , श्रुतो पल्या सहोदितः । ।

२. तैत्तिरीयोपनिषद्, १/११/२ मातृदेवो भव ।

३. शतपथ ब्राह्मण ५/२/१/१० अर्धो हवा एष आत्मनो यज्ञाया ।

४. Education In Ancient India, A. s. Altekar, P. 209.

५. ऋग्वेद ३/५५/१६ (योग्य युवती का विद्वान, पति से विवाह करने का निर्देश) अथर्व. ११/५/१८ ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम् । यजु. ७/१.

६. गोभिल गृह्यसूत्र २/१/१९ (सुसज्जित कन्या को पुरोहित यज्ञोपवीत धारण कराये) पारस्कर गृ. सू. - स्त्रियः उपनीता अनुपनीताश्च.

७. मनु. २/६६ अमंतइका तु कार्येयं स्त्रीणामावृदशेषतः ।

८. मनु. २/६६ वैवाहिको विधिः स्त्रीणां । संस्कारों वैदिको मतः ।

९. Great women of India, R.C. Majumdar. P. 33.

१०. याज्ञ. १/१३ तूष्णीमेताः क्रियाः स्त्रीणां विवाहस्तु समंत्रकः ।

११. वीरमित्रोदय संस्कार प्रकाश, प. ४०२-४०३.
''पुराकृत्ये कुमारीणां मौंजीबन्धन मिष्यते ।
अध्यापनं च वेदानां सावित्रीवाचनं तथा । ।

का विवाह काल में ही उपचार रूप में उपनयन संस्कार सम्पन्न हो जाता था [1] ।

उपनयन के पश्चात् ब्रह्मचर्य आश्रम से गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते समय समावर्तन संस्कार भी युवतियों का होता था, जिसमें निर्दिष्ट ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र एवं स्त्री को पृथक् , पृथक्, रीति से क्रियाएं करनी [2] चाहिए । हारीत के मतानुसार युवती होने के पूर्व कन्याओं का समावर्तन सम्पन्न हो जाना चाहिए [3] ।

समावर्तन के पश्चात् युवतियों का पाणिग्रहण अथवा विवाह संस्कार समय पर सम्पन्न होता था । यद्यपि वैदिककालीन विवाह पद्धति का अधिक परिचय नहीं प्राप्त होता है तथापि मनु [4], आश्पस्तम्ब, शांखायन, भारद्वाज, आश्वलायन [5] आदि द्वारा इस सम्बन्ध में प्रकाश अवश्य डाला है। मनु एवं आश्वलायन ने आठ प्रकार के विवाहों का वर्णन किया है --

१. ब्राह्म २. दैव ३. प्राजापत्य ४. आर्ष ५. गान्धर्व ६. आसुर ७. पैशाच ८. राक्षस । इनमें से यद्यपि प्रथम चार को समुचित माना गया है, तथापि समाज में ब्राह्म विवाह को सर्वश्रेष्ठ समझ कर साधारण रीतिं से ग्रहण किया जाता था ।

नारी शिक्षा

पुरुषों की भांति अनेक नारियों की शिक्षा के संदर्भ वैदिक साहित्य [6] में प्राप्त होते हैं । उत्तर वैदिक काल में भी स्त्रियों की उच्च शिक्षा का पता अनेक [7] संदर्भों के आधार पर चलता है । कौषीतकि ब्राह्मण में पश्यास्वस्ति नाम की एक परम योग्या नारी का उल्लेख है जिसने अध्ययन के लिए उत्तर दिशा में प्रस्थान करते हुए अपनी विद्वता से वाक् (ज्ञान की देवी) उपाधि को विभूषित किया था[8]। यह भी दृष्टव्य है, कि पुरुषों द्वारा अध्ययन न किए जाने योग्य विषयों ललित कलाओं, नृत्य एवं गान आदि में नारियों ने असाधारण प्रवीणता [9] प्राप्त की थी ।

---

१. संस्कारत्नमाला, भाग १. पृ. १६५. "द्विविधा स्त्रियो ब्रह्मवादिन्यः सद्यो बधवश्च । तत्र ब्रह्मवादिनीनामुपनयनमग्नीन्धनं वेदाध्ययनं स्वगृहे च भैक्षचर्येति सद्योवधूनां तूपस्थिते विवाहे कथनिंचदुपनयनमात्रं कृत्वा विवाहः कार्यः ।

२. आश्वलायन गृह्यसूत्र, ३/८/११

३. संस्कार - प्रकाश- प्राग्राजसः समावर्तनमिति हारीतोक्त्या । पृ. ४०४.

४. मनु.

५. आश्व. गृ. सू. १/४/२१.

६. ऋग्वेद १/१७६/१-२ (लोपामुद्रा) ऋक् . ५/७/६ ऋषिका एवं ब्रह्मवादिनी यजु. ७/, अथर्व. ११/६

७. वृहदारण्यकोपनिषद् ३/६/३,८, २/४/३, केनोपनिषद् ३/१२

८. कौषीतकि ब्रा. ७/६

९. तैतिरीयसंहिता ६/१/६/५

१. गोभिलगृग्यसूत्र १/३, आश्व. श्रौ. सू. १/२, गो. गृ. सू. १/३/१०, आपस्तम्बपारस्कर. ६/२/१ । ११/३/ १२

परवर्ती [१] सूत्र एवं स्मृति साहित्य [२] में नारी शिक्षा निरन्तर चलने के अनेक संदर्भ प्राप्त होते हैं । हेमाद्रि के मतानुसार कुमारियों को विद्या एवं धर्म के साथ नीति पढ़ाना चाहिए क्योंकि शिक्षित कन्या अपने पिता और पति के परिवार का हित करती है । पाणिनि काल में विदुषी नारियाँ शिक्षिका के रूप में अध्यापन कार्य करती थीं, जिसका संकेत उपाध्याया [३] एवं आचार्या [४] जैसे विशिष्ट पदों से प्राप्त होता है । पाणिनि ने वेद की विविध शाखाओं का अध्ययन करने वाली छात्राओं को उल्लिखित किया है । यथा - कठ शाखा की अध्येत्री नारी ''कठी'' ऋगृवेद का अधिक अध्ययन करने वाली ''बृहवृची'' कही गई है । (दृष्टव्य काशिका एवं बालमनोरमा)

महाभाष्य से ज्ञात होता है कि आपिशालि के व्याकरण ग्रन्थ का अध्ययन करने वाली ब्राह्मण नारी ''आपिंशाला [५] '' काशकृत्स्ना [६] कृत मीमांसा की अध्येत्री ''क़ाशकृत्स्ना'' तथा स्त्री शिक्षिका की शिष्या को ''औदमेध्या'' कहा गया है । (अष्टाध्यापी ४/१/१८)

इन सन्दर्भों से सिद्ध होता है, कि उस समय नारियाँ विद्वुषी ही नहीं, अपितु अनेक शुष्क शास्त्रों-व्याकरण मीमांसा आदि के अध्ययन के प्रति भी अभिरुचि रखती थीं । नारी शिक्षा की जो स्वरूप हमें वैदिक एवं वैदिकोत्तर काल में प्राप्त होता है, वही परवर्ती रामायण, महाभारत अथवा महाकाव्य काल में भी प्राप्त होता है । अनेक धार्मिक एवं सांस्कृतिक कृत्यों के सम्पादन में इनके सुशिक्षित होने का स्पष्ट पता चलता है [७]। शिवा नामक एक बनवासिनी नारी ने वेदों का अध्ययन कर अन्ततः आध्यात्मिक उत्कर्ष प्राप्त किया [८] था । स्पष्टवादिनी एवं विद्वुषी गान्धारी के ''यतो धर्म स्ततो जयः'' जैसे शब्द महाभारत की शिक्षा के सार प्रतीत होते [९] हैं ।

नारियों को शिक्षा के अन्तर्गत अनेक लोक एवं परलोक विषयक विषयों का ज्ञान कराया जाता था । उच्च शिक्षा के क्षेत्र में स्त्री को भी वेद (संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषदों) ग्रन्थों के साथ सभी वेदांगों (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष्, छन्दः शास्त्र) की शिक्षा दी जाती

---

२. मनु. २/६६ संस्कारं प्रकाश-पिता पितृव्यो भ्राता वा नैनामध्यापयेत्परः ।
स्वगृह चैवं कन्यायाः भैक्षचर्या विधीयते । । पृ. ४०३

३. पतंजलि महाभाष्य ३/८/२२ उपेत्याधीयते अस्याः सा उपाध्याया ।

४. सिद्धान्तकौमुदी (स्त्री प्रत्यय) (बालमनोरमा तत्क्वोधिनीसंहिता) या तु स्वयमेवाध्यापिका तत्र वांगीष वाच्यः उपाध्याया । पृ. ५६६.

५. महाभाष्य, वार्तिक ३(अष्टाध्यायी ४/११/१४) के उपर भाष्य. २, पृ. १०५

६. महाभाष्य, वार्तिक ५. (अष्टाध्यायी ४/१/१४) पर भाष्य .

७. श्रीमद्वाल्मीकीयरामा. अयो. २/२०/१५, सा क्षौमवासना देवी नित्यंव्रत परायणा ।
अग्निं जुहौति स्म तदा मंत्रवत्कृतमंगला ।।
'' '' किष्किंधा ४/१६/२० (तारा द्वारा स्वस्तियाग से पतिकी शुभकामना)

८. महाभारत ५/१०६/१८-१६.

६. महा. १ ५/२८/५

१. कामसूत्र १/३ (जयमंगलाटीका चौखंभा सं.)
''अभ्यास प्रयोज्याश्च चातुः षष्टिकान्, योगान् कन्या रहस्येकाकिन्यभ्यसेत् । ''

थी। वैदिक ऋषिकाओं के मन्त्रों से ज्ञात होता है कि स्त्रियां लेखन कला मे भी प्रवीण होती थीं। वात्स्यायन [१] ने २०० ई. पू. नारियों को कलाविद् रूप में ६४ कलाओं में निपुण माना है। काव्य कला की साहित्यिक अभिरुचि नारियों की वैदिक काल से दृष्टिगत होती है। "ऋम्भणी" [२] जैसी वैदिक ऋषिका की काव्य परम्परा परवर्ती कवयित्रयों में पनपती रही। हालकृत गाथा सप्तशती (प्रथमशती ई. पू.) में अनुलक्ष्मी, अनुलब्धि, माधवी, प्रहता, रेवा, रोधा, शशिप्रभा बद्धावही नामक अनेक प्राकृत कवयित्रियों का उल्लेख प्राप्त होता है।

प्रारम्भ में नारी शिक्षा पिता, भाई, पति द्वारा घर पर दी जाती होगी, किन्तु विशिष्ट उच्च शिक्षा के लिए किसी प्रसिद्ध आचार्य (गुरु) के आश्रम पर जाकर नारियाँ अध्यात्म, दर्शन, औषधि सम्बन्धी विषयों का ज्ञान प्राप्त करती होंगी। परवर्ती संस्कृति साहित्य में स्त्रियों द्वारा पुरुषों के साथ सहशिक्षा प्राप्त करने के अनेक उल्लेख प्राप्त होते हैं। बाल्मीकि आश्रम में अरुन्धती का लव कुश के साथ अध्ययन [३] करना तथा पद्मावती के शिक्षा - केन्द्र पर कामन्दकी का भूरिवसु एवं देवरात के साथ शिक्षा ग्रहण [४] करने के संदर्भ से ज्ञान होता है, कि आठवीं शती ई. तक समाज में सह शिक्षा की सुव्यवस्था विद्यमान थी।

इस उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्राचीन काल में नारी शिक्षा-व्यवस्था समाज में प्रचलित होकर अनेक लोकोपयोगी विषयों का ज्ञानार्जन कर नारियाँ रचनात्मक अनेक कार्यों को करती हुई सुप्रतिष्ठित रही हैं।

समाज में नारी की स्थिति

सामाजिक सम्बन्धों के मूल में नारी की स्थिति एवं रचनात्मक भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। परिवार एवं समाज में नारी के मातृत्व की महिमा को स्मृतिकारों के द्वारा भी प्रतिपादित किया गया है। मनु की धारणा माता के गौरव के सम्बन्ध में यह है कि उपाध्याय से दश गुना अधिक गौरवशाली आचार्य है तथा आचार्य से सौगुना अधिक पिता और पिता से हजारगुना अधिक गौरवशालिनी माता है [५]। अत्रिमृति जैसी अन्य प्राचीन स्मृति में भी माता सभी गुरुओं में मूर्धन्य मानी [६] गई है तथा उसको महत्व बताया [७] गया है।

यज्ञादि धार्मिक कृत्यों में पत्नी नियमतः पुरुष की सहयोगिनी [८] होती थी, तथा उसके बिना

---

२. ऋग्वेद १०/६०/ (वाक् सूक्त की रचयित्री ऋषिका-वागृम्भणी)
३. उत्तररामचरित, भवभूति (द्वितीय अंक)
४. मालतीमाधव, भवभूति (प्रथम अंक)
५. मनु. २/१४५ उपाध्यायान्दशाचार्य आचार्याणां शतं पिता।
सहस्रं तु पितॄन् माता गोरवेणातिरिच्यते।।
६. अत्रि स्मृति १४/ १
७. पराशर स्मृति ११/२४-२५ (सं. १६२६ ई.)
८. ऋक्. १/२२/२, १/३३/३, ३/५३/४-६, ४/४३/६, ८/३१/५, १०/८६/१०.
१. शत. ब्रा., ५/१/६/१० - "अयज्ञायो वैष यो अफलीकः"
२. ऋक्. ८/३१/५- या दम्पती सुमनसा आ च धावतः देवासो नित्यया शिरा।

पति यज्ञ के योग्य नहीं रहता था [१] । पति पत्नी दोनों समान रूप से भाग लेते थे [२] ।

कतिपय यज्ञों के सम्पन्न करने में स्त्री को उपनयन [३] से युक्तहोना पड़ता था तथा उसके द्वारा सामगान भी किया जाता था, जैसा कि शतपथ ब्राह्मण के अनुसार थे सामगानकर्ता पुरोहित उदगातृगण पत्नी के कार्य को करते [४] हैं । पत्नी सम्बन्ध सूचक शब्द नारी का पति के साथ यज्ञों के अवसर पर विशेष कर्तव्यपूर्ण सम्बन्ध सूचित करती [५] है । नारियों द्वारा अग्रहायण कर्म के प्रस्तरारोहण विधि के अवसर पर अनेक मंत्रों का उच्चारण किया जाता था [६] तथा सीतायास से भूमि को उर्वर [७] बनाने एवं उद्रबलियाग से पशुओं को समृद्ध सशक्त करने के लिए [८] यज्ञिय क्रियाएं स्त्रियां ही सम्पन्न करती थीं ।

प्रायः पति के प्रवासी होने, यात्रा हेतु प्रस्थान करने पर पत्नी ही अकेली विविध यज्ञों को सम्पन्न कर लेती थी । यह स्थिति वैदिक काल से सूत्रकाल (५०० ई. पू.) तक चलती प्रतीत होती है [९] । रामायण में कौशल्या द्वारा अकेले ही मंत्र सहित स्वस्तियाग करने का उल्लेख [१०] हुआ है ।

उपर्युक्त संक्षिप्त विवेचन से स्पष्ट है कि वैदिक काल से लेकर महाकाव्य काल तक समाज में नारी का गौरव कन्या, पत्नी, माता, आदि विविध रूपों में प्रतिष्ठित था यद्यपि पितृसत्तात्मक परिवार होने के कारण नारी का समाज में आर्थिक अधिकार पुरुष के समान नहीं रहा तथापि ''गृहस्वामिनी'' के रूप में वह पिता, पति, पुत्र की सम्पत्ति का साधिकार उपभोग करती थी । उत्तर वैदिक काल में भी पुत्रों के समान पुत्रियों का लालन पालन एवं शिक्षा दीक्षा होती थी तथा गृहचातुर्य उसका प्रमुख गुण माना जाता था ।

भारतीय गृह एवं समाज में नारी पूज्य मानी जाती थी तथा सच्चरित्र एवं शीलसम्पन्न होने से समाज में समादृत होती थी । जबकि सामाजिक एवं सांस्कृतिक समारोहों अथवा विशेष अवसरों वेश्या को नृत्यगान हेतु बुलाने पर भी उन्हें शरीर-व्यापार करने तथा दुश्चरित्र होने के कारण हेय दृष्टि से देखा जाता था । सामान्यतः निम्नकोटि की नारियाँ दुश्चरित्र होने से वेश्यावृत्ति ग्रहण करती थीं, जिनका समाज में स्थान समादृत नहीं था ।

नारी की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन -

परवर्ती स्मृति - पुराण काल में नारियों के समाज में अधिकार सीमित करके कर्तव्यपालन

---

३. तैत्तिरीय ब्राह्मण ३/८/३

४. शत. ब्रा. १४/३/१/३५ पत्नीकर्मैव एतेअत्र कुर्वन्ति यदुदगातारः

५. गोभिल गृह्यसूत्र १/३, पाणिनि. अष्टा. ४/१/३३ पत्युर्नो यज्ञसंयोगे ।

६. पारस्कर गृह्यसूत्र ३/२

७. पार. गृ. सू. २/१७

८. पार. गृ. सू. ३/१८/१०

९. Position of women In Hindu Civilizaton. P. 235.

१०. श्री मद्वाल्मीकीयरामा. अयो. २/२०/१५.

१. मनु. ५/५१ नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतं नाप्युपोषिताम् ।
पतिं सुश्रुषते येन तेन स्वर्गे महीयते । ।

की संख्या संवर्धित कर दी गई । पति सेवा को पूर्ण किए बिना पत्नी को कदापि मोक्षाधिकारिणी [१] नहीं माना गया है । पैतृक सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार नारियों को वैदिक काल के समान महाभारत के समय भी था किन्तु कन्याओं को अपने पिता की सम्पत्ति तथा विधवा स्त्रियों को अपने पति की सम्पत्ति प्राप्त करने का अधिकार नहीं था ।

परवर्ती पुराण एवं स्मृतिकाल (५०० ई. पू. से ६०० ई. तक) कन्याओं की विवाहयोग्य आयु १४ या १५ वर्ष हो जाने के कारण नारी की समाज में स्थिति बहुत परिवर्तित हो गयी । चूंकि दीर्घ अवधि तक ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने वाली कन्याएं अविवाहित नहीं रखी जा सकती थीं । अतः कर्मकाण्ड, धर्मशास्त्र, प्रभृति वैदिक विषयों की शिक्षा-दीक्षा भी उन्हें चतुर्थशती ई. तक अत्यल्प रूप में दी जाने लगी । उपनयन-संस्कार एवं वैदिक विषयों के अध्ययन का निषेध यद्यपि इस काल में हो गया तथापि कतिपय उच्च वर्ग के शिक्षित परिवारों में कन्याओं को कुछ साहित्यिक शिक्षा दी जाती थी । उनका शीघ्र विवाह होने के कारण स्वयंवर की प्रथा समाज में समाप्तप्राय हो गई । समाज में नारी की स्थिति काफी सोचनीय हो गई, उनकी वैयक्तिक स्वतंत्रता में भी पर्याप्त बाधा [२] पहुंची तथा परवर्ती साहित्य में नारियों के समाज में भेदभाव एवं तिरस्कार पूर्ण स्थिति के उल्लेख [३] प्राप्त होते हैं ।

दुश्चरित्र एवं अशालीन नारियों का समाज में सभी तिरस्कार करते हैं, जबकि सुशिक्षित, सती, योग्य, पतिव्रता नारियों का सर्वत्र समाज में गौरवपूर्ण स्थान सदैव रहा है । चूँकि नारी-जीवन की अपनी वैयक्तिक कुछ सीमाएं तथा विवशताएं भी होती हैं । वह घर से बाहर जाकर अपने को असुरक्षित अनुभव करने के कारण आर्थिक जीवन में जीवकोपार्जन में पुरुष की भाँति शारीरिक रूप में सक्षम नहीं है, न युद्धभूमि मेंही वह अपना पौरुष दिखा सकती है तथापि वह समाज में पुरुषों की प्रत्येक परिस्थिति में पूरक होकर सुकुमार होती हुई भी अपनी कलात्मक अनेक क्रियाओं से कुशलता एवं बुद्धि वैभव के सहारे सामाजिक एवं सांस्कृतिक अनेक गतिविधियों के दायित्व का निर्वाह करती हैं । इस दृष्टि से उसका समाज में अपूरणीय स्थान है तथा उसकी रचनात्मक भूमिका अत्यन्त व्यापक और महत्वपूर्ण है ।

संस्कृत नाटकों में नारी का अंकन -

वैसे समग्र संस्कृत - साहित्य में नारी का सुन्दर चित्रण उसके नख-शिख सौन्दर्य सेलेकर अनेक

---

२. मनु. ६/३ पिता रक्षीति कौमारे ......न स्त्री स्वातंत्र्यमर्हति ।

३. पुत्र की अपेक्षा कन्या का स्थान परिवार में न्यून हो गया क्योंकि पुत्र परिवार का स्थायी सदस्य होकर माता-पिता के साथ वृद्धावस्था में भी रहता था, जबकि कन्या विवाहिता होने पर दूर दूसरे परिवार में पति के यहाँ चली जाती थी । वहां भी उसका पुत्रों को जन्म देने पर ही महत्व तथा आदर था ।
परवर्ती अथर्ववेद में भी कन्या की अपेक्षा पुत्र पैदा करने निश्चिन्ततापूर्ण क्रियाओं के मंत्रों का उल्लेख है (अथर्व. ३/२३, ६/२)

१. नाट्यशास्त्र. ४/२५५-२५७.
दशरूपक २/२४-२६, ३१, ३२,

आभ्यन्तर गुणों- शील, ममता, (मातृत्व एवं व आत्सल्य), करुणा, क्षमा, दया आदि के वर्णन से युक्त पाया जाता है तथापि समस्त साहित्य की विधाओं में से जितना नाटक में नारी का अधिक प्रभावी अंकन हुआ है । संस्कृत-रूपकों (नाटक, प्रकरणादि) में कन्या (सुग्धा) युवती, प्रौढा जैसी नायिका से लेकर वृद्धा तक स्वामिनी रानी से लेकर वेटी तक का कुल-स्त्री से लेकर वीरांगना तक विविध रूपों में सुन्दर [१] चित्रण प्राप्त होता है ।

समाज में पुरुषों के साथ जीवन के व्यापक क्षेत्र में परिपूर्णता की दृष्टि नारी की संपूरक प्रभावी भूमिका रहती है । अतः संस्कृत के नाटकों में नारी की अपरिहार्य भूमिका का निर्देश भरत आदि नाट्य शास्त्रियों ने भी किया है । कहीं वह कुलजा स्वकीया नायिका [२] है तो कहीं परकीया नायिका की अन्तरंग सखी तो कहीं परिचारिका (सेविका) कहीं वेश्या के रूप में प्रस्तुत है तो कहीं अनेक [४] सामाजिक सम्बन्धों (माता, पत्नी, भगिनी, गुरुपत्नी आदि) में अनेक वैशिष्ट्यपूर्ण क्रियाओं में नारी के हृदयावर्जक स्वरूप का चित्रण संस्कृत रूपकों में पाया जाता है ।

संस्कृत के विविध रूपों में नाटक-प्रकरण में [५] तो नारी नायिका रूप में कुलजा तथा वेश्या रूप में अन्य नारी पात्रों के साथ जबकि उपरूपक नाटिका में नारी बहुल [६] रचना ही होती है, जिसमें नायिका ज्येष्ठा [७], प्रगल्भा, गम्भीरा तथा मानिनी होती है । जबकि कनिष्ठा, मुग्धा, दिव्यगुणसम्पन्न और अतिमनोहर होती है । ईहामृग रूपक में भी नायक अलभ्य नायिका की कामना करता है उसकी प्राप्ति के प्रयास में चित्रित होता है । इस दृष्टिसे संस्कृत नाटकों में भी नारी का नायिका धीरा, कुलजा, मुग्धा, प्रौढ़ा आदि रूपों के साथ उसकी सखियों, से विकाओं, सम्बन्धिनी आदि नारियों का स्वाभाविक अंकन कथावस्तु में समुचित रूप से प्राप्त होता है । [८]

कालिदास तथा भवभूति के नाटकों में नारी का अंकन

संस्कृत नाट्य साहित्य में भास के पश्चात् कालिदास तथा भवभूति ही श्रेष्ठ नाटककार के

साहित्यदर्पण ३/५६

२. दशरूपक २/३२ अन्य स्त्री कन्यकोढ़ा च नान्योढाँजिरसे क्वचित् ।

३. सा. दर्पण ३/६७-७१.
दशरूपक २/३३ साधारण स्त्री गणिका क्लाप्रामलयधौर्त्युक् ।

४. नाट्यशा. २२/२११, २१२. , सा. द. ३/७२, ७३.
दश. २/३६, ३७ से ४४ तक.

५. ना. शा. १८/५०-५३, ना. द. २/११८, सा. द. ६/२२६-२२७ दश. ३/४५(४१-४२)

६. नाट्य शा. १८/५६ स्त्रीप्राया चतुरंका ....., ना. द. २ १२१, सा. द. ६/२६६ दश. ३/४८ स्त्रीप्रायचतुरंकादिभेदक यदि चेष्यते ।

७. दाश. ३/६६ देवी तत्र भवेज्ज्येष्ठा प्रगल्भा नृपवंशजा । गंभीरामानिनी कृच्छ्रूत-द्दशानेत संगमः १३/५० नायिका तादृशी सुग्धा दिव्या चातिमनोहरा ।

८. ना. शा. १८/८०-८३, ना. द. २ १३८, १३६, सा. द.-६/२४५-२५० दश. ३/६४ दिव्यस्त्रियमनिच्छन्तीमपहारा दिनेच्छतः । श्रंगाराभासम् ....।

१. " Bhavabhuti is largely in debted to Kalidasa and certain extent toBhasa slso." S.R. Rey. Uttar Charitam. (Introduction) Calcutta. 1934. P. XXII

रूप में प्रतिष्ठित हैं [१] जिन्होंने लोक विश्रुत पुरातन कथावस्तु में संयोजे मानव-जीवन के केन्द्रबिन्दु में नारी का मुग्धा, कन्या, प्रेयसी युवती, पतिव्रता पत्नी, मातृत्व एवं वात्सल्यमयी माँ., लोकज्ञान समन्वित गुरुपत्नी, सेवापरायणा सेविकाओं, आत्मीय प्रेमभावमय अन्तरंग सखियों, आदि में हृदयावर्जक चित्रण किया है ।

कालिदास तथा भवभूति की नाट्य कृतियों में नारी के अंकन में प्रमुख आधार वस्तुतः तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि ही है, जिसे दोनों नाटक-कारों ने पूर्ववर्ती विद्यमान साहित्यिक सामग्री (पुराणेतिहास, वैदिक-साहित्य, रामायण, महाभारत, भास के नाटक आदि (आलोचक में अपने वर्तमान समाज को दृष्टि में रखकर नारी को बहुरंगी अंकित करने में श्लाघनीय सत्प्रयास किया है ।

प्रस्तुत प्रबन्ध में दोनों नाटककारों द्वारा चित्रित नारी का तुलनात्मक अनुसंधानपूर्ण अध्ययन किया जा रहा है, जिसकी संक्षिप्त रूपरेखा इस प्रकार यहां दी जा रही है ।

ग्रन्थ की संक्षिप्त पृष्ठ भूमि

भूमिका में विषय प्रवेष कराते हुए संस्कृत नाट्य साहित्य के उद्भव विकास की संक्षिप्त विवेचना, कालिदास तथा भवभूति का जीवन काल निर्धारण, तद्युगीन समाज में धार्मिक, सामाजिक अवस्था को दृष्टि में रखते हुए नारी का स्थान तथा उसकी रचनात्मक भूमिका के साथ नाटकों में नारी के अंकन की अनुसंधानपूर्ण विवेचना की गई है ।

प्रथम परिच्छेद में नाट्य शास्त्रीय दृष्टि से कालिदास एवं भवभूति के रूपकों (नाटक, प्रकरणादि) में नारी पात्रों की भूमिका की गवेषणा की गई है जिसमें नायिका के विविध स्वरूपों, नायिका की सखियों एवं सेविकाओं के साथ अन्य नारी पात्रों की भूमिका के साथ इनकी अभिनेयता की भी मीमांसा हुई है ।

द्वितीय परिच्छेद में सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन की दृष्टि से इन दोनों कवियों के नारी पात्रों की गतिविधियों तथा इनके गृहस्थ एवं दाम्पत्य जीवन के स्वरूप की विवेचना की गई है ।

तृतीय परिच्छेद के अन्तर्गत इन दोनों नाटककारों के नारी पात्रों की तुलनात्मक सांस्कृतिक भूमिका पर विचार करते हुए इनकी यज्ञादि विविध धार्मिक क्रियाओं सांस्कृतिक समारोहों, मनोरंजन की क्रियाओं के साथ नारी के आध्यात्मिक दृष्टिकोण को भी व्यक्त किया गया है ।

चतुर्थ परिच्छेद में इन दोनों नाटककारों के नारी पात्रों का ललितकलाओं (संगीत, गायन, वादन, नर्तन) चित्रकला, काव्य मूर्ति, शिल्पादि) के क्षेत्र में तुलनात्मक अनुसंधानपूर्ण अध्ययन किया गया है ।

पंचम परिच्छेद के अनृतर्गत कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों की वेशभूषा (वस्त्र, अलंकार, प्रसाधन) का तुलनात्मक अध्ययन सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर प्रस्तुत किया गया है ।

षष्ठ परिच्छेद में दोनों कवियों के नारी पात्रों का मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर इनका मूल अन्तः

प्रवृत्तियों (काम, क्रोध, असूया, ईर्ष्या-द्वेष, मात्सर्य, अहंकार, उन्माद, स्मृति, परिकल्पना आदि की तुलनात्मक गवेषणा की गई है ।

सप्तम परिच्छेद में दोनों नाटककारों के नारी पात्रों की जीवन के अन्य अवशिष्ट विविध क्षेत्रों (आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक आदि) में रचनात्मक भूमिका के साथही नाटकीयता की दृष्टि से नारी पात्रों का तुलनात्मक विवेच किया गया है ।

अन्त में ग्रन्थ के उपसंहार के अन्तर्गत इन दोनों नाटककारों के नारी पात्रों की साहित्यिक सोद्देश्यता के साथ महत्वपूर्ण निष्कर्षों का मूल्यांकन एवं प्रतिपादन किया गया है । इति शम् ।

प्रथम परिच्छेद :

नाट्य-शास्त्रीय दृष्टि से नारी पात्रों की रचनात्मक भूमिका

प्रथम परिच्छेद :

नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से कालिदास एवं भवभूति के रूपकों (नाटक, प्रकरणादि) में नारी पात्रों की भूमिका

सृष्टि के समारम्भ से ही नर के साथ नारी की समाज के सभी कार्य क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका रही है । नाटक, प्रकरणादि विविध रूपकों में भी नारी की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण रहती है । नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से यहाँ कालिदास एवं भवभूति के रूपकों (नाटक, प्रकरणादि) में नारी पात्रों की भूमिका का विवेचन कियाजा रहा है ।

नायिका - नारी पात्रों में महत्वपूर्ण भूमिका नायिका की होती है, जिसका आचार्य भरत तथा अन्य परवर्ती नाट्यशास्त्रियों ने नारी की प्रकृति, [१] आचरण की शुद्धता अथवा अशुद्धता, [२] पुरुषगत [३] सामाजिक प्रतिष्ठा, काम की अवस्था[४], शील [५], अंग-रचना, अन्तः प्रकृति [६] या अन्य आधार को दृष्टि में रखकर पर्याप्त विवेचन किया है । आचार्य भरत की दृष्टि में नायिका-भेद के लिए उपर्युक्त जो आधार स्वीकार किये हैं, उनमें स्थूल और सूक्ष्म विचार-तत्वों का समन्वय है तथा इनमें नारी की शारीरिक संरचना - अंग सौन्दर्य के अतिरिक्त उसके शील सौजन्य, आचारण की पवित्रता, जीवन की प्रकृति एवं अवस्था आदि को विशेष महत्व प्रदान किया गया है ।

---

१. उत्तमा, मध्यमा, एवं अधमा ३ भेदों में उत्तमा का लक्षण है -
या विप्रियेऽपि निष्टम्भं न वदत्यप्रियं प्रियम्
अदीर्घरोषा च तथा कलाशिल्प-विचक्षणा ।।
काम्यते पुरुषैर्यातु कुलभोगधनादिकै : ।
कुशला कामतंत्रेषु दक्षिणा रूपशालिनी ।।
ग्रहणाति कारणाद्रोषं गतेर्ष्या प्रवीति च ।।
कार्यकाल-विशेषज्ञा सुभगा सा स्मृतोत्तमा ।। - नाट्यशास्त्र, २५/३७-३८

२. बाह्या, आभ्यन्तरा एवं बाह्याभ्यन्तरा - ३ भेद. नाट्य. २४/१४३

३. दिव्या, नृपपत्नी, कुलस्त्री तथा गणिका . ४ भेद. नाट्य. २४/१४५-१४६
स्वीकाया, परकीया, साधारण स्त्री - ३ भेदे - "स्वाकन्या साधारणस्त्रीति तद्गुणा नायिका त्रिधा । दशरूपकः २/२४

४. वासक सज्ञादि ८ भेद - नाट्यशास्त्र २४/२०५ - २१२

५. ललिता, उदात्ता, धीरा, निभृता ४ भेद - नाट्य. ३४/२४

६. २१ भेद - नाट्यशास्त्र २४/६६ - १३५ .

महाकवि कालिदास तथा भवभूति ने सामान्यतः नाट्यशास्त्रीय आधार [१] पर अपने रूपकों में नारी पात्रों के अन्तर्गत नायिकाओं को अनेक गुणों से अभिमण्डित रूप में प्रस्तुत किया है, जिन्हें सम्बन्धित नाट्य कृतियों के आधार पर उद्घाटित किया जा रहा है --

नायिका मालविका - कालिदास के नाटक ''मालविकाग्निमित्रम्'' की नायिका मालविका सामान्यतः सभी गुणों से युक्त है । वह परम सुन्दरी नवयौवना विदर्भ राज-कन्या है । यह अविवाहिता होने से कन्या की कोटि में परकीया[२] नायिका की श्रेणी में आती है । विदर्भराज की राजपुत्री होने पर भी उसे दैववशात् विदिशा के राजा अग्निमित्र के अन्तः पुर में दासी रूप में रहना पड़ा था, किन्तु राजा के साथ पाणिग्रहण (विवाह के बन्धन में बँधने के पूर्व उसका राजकन्या होना प्रकट हो जाता है ।

आचार्य धनञ्जय [३] के मतानुसार कन्या के प्रति किसी नायक का उत्पन्न अनुराग प्रधान (अंगी) रस का भी अंग हो सकता है और अगंभूत रस का भी । अतएव नाटकादि में अंगी रस के आलम्बन रूप में कन्या का ही परकीया नायिका के रूप में वर्णन किया जा सकता है, परोढ़ा का नहीं, क्योंकि हमारी भारतीय संस्कृति इस परकीया कन्या को पिता आदि के संरक्षण में होने के कारण सरलता से नायक प्राप्त नहीं कर पाता । अतः वह उससे छिप-छिप कर प्रेम करता है, क्योंकि नायिका कें पराधीन होने के साथ ही नायक अफनी ज्येष्ठा स्वकीया नायिका से भी भयभीत रहता है । मालविका नायिका की भी ऐसी ही स्थिति है । वह राजा अग्निमित्र के राजभवन में दासी रूप से विद्यमान होने पर भी स्वतंत्र नहीं है, क्योंकि वह महारानी धारिणी के अधीन है । अतएव नायक अग्निमित्र उससे छिप छिप कर प्रेम करता है तथा अपनी स्वकीया (परणीता पत्नियों धारणी एवं इरावती) नायिकाओं से भी भयभीत दृष्टिगत होता है ।

१. कालिदास के द्वारा ''मालविकाग्निमित्रम्'' नाटक में चित्रित

मालविका सर्वाङ्ग [४] सुन्दरी युवती, **उत्तमा (परकीया) नायिका** की समस्त विशेषताओं से समन्वित संलक्षित होती है । यथा --

(क) मालविका अपने परिवेश के प्रियजनों से कदापि अप्रिय नहीं बोलती । नाटक में सर्वत्र

---

१. कुलजा, वेश्या तथा प्रेष्या. ३ भेद - , ना. शा. २२/२२६

२. परकीया द्विधा प्रोक्ता परोढा कन्यका तथा । साहित्य दर्पण ३/६६ (पूर्वार्द्ध)

३. दशरूपक २/२०. अन्यस्त्री कन्यकोढां च नान्योढांऽगिरसे क्वचित्
''२/२१ (पूर्वार्द्ध) - कन्यानुरागमिच्छति कुर्यादंगाङ्गिं संश्रयम् ।।

४. दीर्घाक्षं शरदिन्दुकान्तिवदनं बाहूनतावंसयोः, संक्षिप्तं निविडोन्नतस्तनमुरः पार्श्वे प्रभष्टे इव।
मध्यः पाणिमितो नितम्बि जघनं पादावरालञ्जुली ।
छन्दो नर्तयितुर्ययेव मनसि श्लिष्टं तथास्या वपुः ।।
मालविका . ३/७ विपुलं नितम्बेशे मध्ये क्षामं समुन्नतं कुचयो : ।
अत्यायतं नयनयोमम जीवितमेतदायाति ।।
माल वि. ३/८ शरकाण्डमापण्डुगण्डस्थलेयमाभाति परिमिताभरणा ।
माधवे परिणतपत्रा कतिपय कुसुमेव कुन्दलता ।

उसके प्रिय सम्भाषण विद्यमान हैं, कहीं भी अप्रिय भाषण का उदाहरण नहीं मिलता है ।

(ख) वह अदीर्घरोषा युवती है । यदि कभी किसी पर क्रुद्ध होती है तो कारण विशेष पर वह भी थोड़ी देर के लिए । नाटक के चतुर्थ [१] अंक में चित्रगत रानी इरावती को निर्निमेष दृष्टि से देखने वाले राजा अग्निमित्र के प्रति वह थोड़ी देर के लिए क्रुद्ध हो जाती है, किन्तु राजा के मनाने पर क्रोध छोड़ कर [२] प्रणत होकर मधुर भाषण करती है ।

(ग) मालविका ललितकला, शिल्प एवं संगीत में भी प्रवीणा है । नाटक के द्वितीय अंक में उसकी नृत्यकला की दक्षता के दर्शन होते हैं, जिसमें उसके द्वारा कठिनता से सीखे जाने वाले छलिक (चलित) नामक नृत्य का अभिनय अत्यन्त निपुणतापूर्वक किया, जिसकी अभिनय प्रशंसा में परिव्राजिका कहती है --

"अंगैरन्त र्निहितवचनैः सूचितः सम्यगर्थः,
पादन्यासो लयमनुगंतस्तन्मयत्वं रसेषु ।
शाखायोनिर्मृदरभिनयस्तद् विकल्पानुवृत्तौ,
भावो भावं तुदति विषयाद् रागबन्धः स एव ।।" (माल. २/८)

(घ) अपने अनिन्द्य रूप एवं सौन्दर्य के कारण मालविका राजा अग्निमित्र द्वारा काम्य है तथा राजा उसे अधिगत करने का अनवरत प्रयास करता है । अपने मित्र विदूषक की सहायता से उसे राजा के द्वारा समुद्रगृह से विसुक्त किया जाता है तथा वह सर्वविध नायक राजा के द्वारा काम्य [३] है।

(ङ) मालविका की उत्तमा प्रकृति उसके उदार गुणों के कारण है । नाटक में सर्वत्र उसकी विनम्रता एवं [४] उदारता दृष्टिगत होती है तथा कहीं भी अनुदार नहीं पायी जाती ।

(च) मालविका रूपशालिनी होने के साथ ही देश काल के अनुकूल कार्य को करने वाली है। वह एक वर्ष तक दासी रूप में रानी इरावती द्वारा प्रताड़ित होने पर भी कुछ नहीं कहती तथा अपने अपमान को सहकर भी महारानी धारिणी द्वारा निर्दिष्ट सभी कार्यों को करती है और किसी से भी अपने को राजकुमारी रूप में नहीं बताती है । रानी धारिणी ने उसे अशोक वृक्ष की दोहद (पाद-प्रहार) कार्य के लिए नियुक्त किया था, जिसे सम्पन्न करने से वह अशोक वृक्ष पाँच रात्रियों से पूर्व पुष्पों से पूर्ण हो गयी [५] ;क्योंकि कविसिद्धि के अनुसार सुन्दरी रमणी के पाद-प्रहार से अशोक वृक्ष पुष्पित हो जाता है तथा मदिरा के मुख गण्डूष से बकुल फूल जाता है ।

---

१. माल. ४/९ भ्रूभंगभिन्नतिलकं स्फुरिताधरोष्ठं सासूयमाननमितः परिवर्तन्त्या ४/१० कुप्यसि कुवलयनयने ....।

२. माल. - अंक ४, पृ. ३१०-३११.

३. माल. ४/१४ दाक्षिण्यं नाम बिम्बोष्ठि । नायकानां कुलव्रतम् । तन्मे दीर्घाक्षि । ये प्राणास्ते त्वदाशानिबन्धना : ।

४. माल. ५/६ मामियमभ्युत्तिष्ठति देवी विनयादनूत्थिता प्रियया ।

५. माल. अंक ४ (नेपथ्ये), आश्चर्यमाश्चर्यम् । अपूर्ण एवं पंचरात्रे दोहदस्य मुकुलैः संनद्धस्तपनीयाशोकः । यावदेव्यै निवेदयामि । " पृ. ३१८.

संक्षेपतः मालविका में उत्तम प्रकृति के सभी गुण पाये जाते हैं ।

२. आचरण की शुद्धता अथवा अशुद्धता के आधार पर मालविका कुलीना कन्या (राजपुत्री) होने से **आभ्यन्तर कोटि** के [1] अन्तर्गत आती है । नाटक में आभ्यन्तर उपभोग की ही चर्चा हुई है तथा राजा के अन्तःपुर में भी **कुलीनांगना** या दिव्या का ही प्रवेश होता है, अन्य का नहीं। नाटक में काम समुत्पत्ति रूप सौन्दर्य के श्रवण, दर्शन एवं अंग की लीलामय चेष्टाओं से समुत्पन्न होती है । नायक अग्निमित्र में भी मालविका के चित्र में [2] रूप दर्शन से ही काम भाव उत्पन्न हुआ है ।

३. मालविका सामाजिक - प्रतिष्ठा को ध्यान में रखते हुए विदर्भराजपुत्री (राजवंशोद्भवा) है तथा माधवसेन की भगिनी है, जिसके सम्बन्ध में स्वयं राजा अग्निमित्र एवं रानी धारिणी का आदरपूर्ण यह कथन रेखांकित किया जा सकता है --

''प्रेष्यभावेन नाभेयं देवी शब्द क्षमा सती ।
स्नानीय वस्त्र क्रियया पत्रोर्णं वोपयुज्यते ।। '' माल. ५/१२

''धारिणी - भगवति ! त्वया **अभिजनवतीं मालविकामनाचक्षाणया असाम्प्रतं** कृतम् । (पृ.३२६)

रानी धारणी नाटकान्त में मालविका को रानी की पदवी प्रदान कर राजपत्नी के रूप में प्रतिष्ठापित कर देती है ।

४. मालविका कामदशा की वासक सज्ञादि आठ अवस्थाओं में से ''विरहोत्कण्ठिता'' [3] कोटि की नायिका है, जो अपने प्रियतम - विरह के कारण उत्कण्ठित रहती है, क्योंकि उसका प्रिय राजा अग्निमित्र अनेक कार्यों के विघ्नों के कारण उससे मिल नहीं पाता है । वह मालविका से अत्यधिक प्रेम करता है, किन्तु अपनी रानियों - धारिणी एवं इरावती-के कारण उससे स्वेच्छयामिल नहीं पाता है । राजा के विरह में मालविका भी उत्कण्ठित रहती है,जैसा कि नाटक के तृतीयांक [4] में उसी के शब्दों से प्रकट होता है ।

५. ललिता, उदात्ता, निभृता एवं धीरा - शील के इन चार गुणों में से नृपकंन्या होने से मालविका उपर्युक्त चारों सद्गुणों [5] से समन्वित है, कि दिव्या एवं नृपपत्नी (राजपुत्री) उपर्युक्त चारों ही गुणों से युक्त रहती है --

---

१. नाट्यशास्त्र, २४/१४३-१४६
२. मालविका २/२ चित्रगतामस्यां कान्ति विसम्बादिशंकि मे हृदयम् ।
३. नाट्यशा. २४/२०६
दशरूपक २/ चिरमत्यव्यलोके तु विरहोत्कण्ठिता मता
४. मालविका. अंक ३, ''माल.- अथं स सुकुमारदोहदापेक्षी अगृहीत कुसुमनेपथ्य **उत्कण्ठिताया** मामनुकरोत्यशोकः । ''कालिदास-ग्रन्थावली, डॉ. रेवाप्रसाद द्विवेदी, वाराणसी, १६७८
विदू. - ''श्रुतं भवता उत्कण्ठिताऽस्मीति तत्र भवती'', पृ. २८७६
५. माल. ३/५ के पश्चात् मालविका की उक्ति. , पृ. २८६.
१. ''२/८ अंगरेन्त निर्हितवचनैः ....तथा इसके पूर्व परि. - यथा-दृष्टं

''धीरा च ललिता च स्यात् उदात्ता निभृता तथा ।
दिव्यानां जात यस्तैस्तैर्गुणैर्युक्ता भवन्तिहि । । ना. शा. ३४/२४

६. अंग-रचना एवं अन्तः प्रकृति की दृष्टि से दिव्य सत्त्वदि २१ प्रकार की नारियों में से मालविका नाट्यशास्त्रानुमोदित मानवी कोटि की नारियों के सामान्य गुणों से सम्पन्न संलक्षित होती है । जो भरत द्वारा इस प्रकार वर्णित हैं -

''आर्जवाभिरता नित्यं दक्षात्यन्तं गुणान्विता ।
विभक्तांगी कृतज्ञा च गुरुदेवार्चने रता ।
धर्म कामार्थ नित्या च अहंकार विवर्जिता ।
सुहृतप्रिया सुशीला च मानुषं सत्त्वमाश्रिता । । '' ना. शा. २४/११०-१११

मालविका नाटक में सर्वत्र आर्जवयुक्त दृष्टिगत होती है तथा कहीं भी उसका आचरण अनार्जव प्रकट नहीं करता । वह गुणों से युक्त एक दक्ष युवती है । नृत्य कला में उसके अद्वितीय नृत्य कौल के दर्शन हमें नाटक के द्वितीय अंक में होते हैं । नाट्याचार्य गणदास के कथनानुसार मालविका अल्प समय में ही नृत्यकला में दक्षता [२] प्राप्त कर लेती है ।

मालविका मनोहर एवं सुश्लिष्ट अंगों वाली सुन्दर युवती है, उसके अंग-प्रत्यंग से सुन्दरता दृष्टिगत होती है । उसके चित्रगत अंग सौन्दर्य को निहार कर राजा उस पर मोहित हो गया था । स्वयं राजा उसकी सुन्दरता के सम्बन्ध में नृत्योपरान्त स्थिति को चित्र जैसा खींचता हुआ कहता है--

राजा - 'सर्वास्वस्थायु चारुता शोभान्तरं पुष्यति । तथाहि --

''वामं सन्धिस्तिमितवलयं न्यस्य हस्तं नितम्बे,
कृत्वा श्यामाविटपिसदृशं स्रस्तमुक्तं द्वितीयम् ।
पादाङ्गुष्ठालुलितकुसुमे कुट्टिमे पातिताक्षं,
नृत्यादस्याः स्थितिमतितरां कान्तमृज्वायतार्धम् । । '' २/६

नृत्योपरान्त इस प्रकार की भंगिमा में खड़ी होने से नायिका के शरीर का ऊर्ध्व अर्द्ध भाग सरल भाव से स्थित है तथा नृत्य के समय से भी अधिक नयनाभिराम यह प्रतीत हो रही है । राजा को वह चित्रांकित अवस्था [३] से भी अधिक रमणीय प्रतीत हुई । इससे मालविका के सुश्लिष्ट शारीरिक संरचना (अंग-प्रत्यंग) का हमें ज्ञान होता है ।

मालविका कृतज्ञा तथा गुरु - देवता की अर्चना भी करती है । वह अपने प्रति सखी जनों द्वारा किए गये उपकारों को नहीं भूलती । बकुलावलिका के आत्मीयतावश किये गये उपकारों के कारण वह उसके अत्यधिक संन्निकट आ गई है । वह अफने गुरु गणदास [४] की आज्ञा का पालन

सर्वमनवद्यम्'' कालिदास ग्रन्थावली, पृ. २७७.

२. ''अंक, पृ. २६७, २६२, गण. - विज्ञाप्यतां देवी परम निपुणा मेधाविनी च.१/५.

३. माल. २/२ चित्रगतायामस्यां कान्ति विसंवादिशंकि हृदयम् ।
सम्प्रति शिथिलसमाधिं मन्ये येनेयमालिखिता ।। ''

४. माल. अंक २ गण. - वत्से, एहि गच्छाव इदानीम् (सहाचार्येण निष्क्रान्ता मालविका) कालिदास ग्रन्थावली, पृ. २७८.

१. माल. अंक ३, पृ. २६४. अंक ४, ३०८, ३०६, ३११.

भी श्रद्धापूर्वक करती है । उनके द्वारा प्रशिक्षित नृत्य कला को वह सच एवं आत्मसात् कर लेती है। नाटक के द्वितीयांक में वह अपने आचार्य गणदास के निर्देश पर ही नृत्य-प्रदर्शन हेतु मंच पर समुपस्थित होती है तथा उनकी आज्ञा से ही मंच पर कुछ समय तक ठहरती है और आज्ञानुसार मंच से चली जाती भी है ।

मालविका निरंहकार युवती है । वह राजपुत्री होने पर भी दुर्भाग्यवश एक दासी का भी कार्य करती है । जो राजा का प्रेम पाकर अहंकारयुक्त भी हो सकती है, किन्तु मालविका [1] इस स्थिति में होकर भी अहंकारशून्य है । नाटक के तृतीय एवं चतुर्थांक में कनिष्ठा रानी इरावती द्वारा डराए -धमकाए जाने पर भी वह कुछ भी अहंकारवश न कहकर विनम्रता पूर्ण उत्तर देती है ।

सखियों के सम्बन्ध में वह सुहृत्प्रिया होने के साथ सुशीला भी है । बकुलवलिका उसकी परम अन्तरंग सखीहै, जो उसके साहचर्य एवं सांन्निध्य में ही कारावास जैसा संकट भी सहन करती है । वह सौम्य गुणों से समन्वित है, जिसपर सन्तुष्ट होकर महारानी (ज्येष्ठा पत्नी) धारिणी उसे अपनी सपत्नी बना लेती है । समासतः मालविका मानुषी कोटि की नारीमणि है ।

आचार्य भरत मुनि ने नायिका की कामदशा की आठ अवस्थाओं के वर्णन करने के साथ उसकी अन्य ३ कोटियों का भी समुल्लेख किया है -- कुलजा, वेश्या तथा प्रेष्या । इनमें से मालविका विदर्भराजपुत्री होने के कारण कुलजा कोटि की नायिका है ।

नायिका के नाट्यशास्त्रीय आधार पर भावगत अलंकार -

नायिका के विविध दृष्टिकोण से भेद विवेचित करने के साथ ही नाट्य [2] शास्त्रियों ने नारी जीवन की प्रकृति के अनुरूप उन २० अलंकारों की परिकल्पना की है, जो उसके आभ्यन्तर जीवन के सौन्दर्य, सलज्जता, सुकुमारता, स्नेहशीलता एवं पावनता की उज्ज्वलता को उद्भासित करते हैं। आचार्य भरत [3] के मतानुसार ये अलंकार भाव या रस के आधार होते हैं तथा देह के माध्यम से मानवमन में संवेदन रूप से व्याप्त इन भावों की अभिव्यक्ति हुई है ।

नारी - पात्रों में अलंकारों की ३ श्रेणियाँ होती हैं --

३ आंगिक तथा १० स्वाभाविक तथा ७ अयत्नज = २० अलंकार ।

इन्हें दशरूपककार [4] धनंज्जय ने इस प्रकार वर्णित किया है --

"भावो हावश्च हेला च **त्रयस्त्र शरीरजाः** ।।
शोभा कान्तिश्च दीप्तिश्च माधुर्यं च प्रगल्भता ।
औदार्य धैर्यमित्येते **सप्तभावा अयत्नजा** ः ।

---

२. नाट्यशास्त्र, २२/२२६ (गायकवाड8ओरियंटल सीरीज, संस्करण), बड़ौदा

३. नाट्यशास्त्र २४/४. "अलंकारास्तु नाट्यज्ञैर्ज्ञेया नाट्यरसाश्रया ः ।
यौवने ह्यधिकाः स्त्रीणां विकारा वक्त्रगात्रजाः"

४. ना. शा. - २४/ ५- आदौ त्रयोऽङ्गजा प्रोक्ता दश स्वाभाविका परे ।
अयत्नजास्तथा सप्त रसभावोपवृंहिता ।।
दशरूपक २/४७. यौवने सत्त्वजाः स्त्रीणामलंकारस्तु विंशतिः ।

१. ना. शा. २४/८, दशरूपक, २/५० निर्विकारात्सकात्सत्तवाद्भावतत्र - छविक्रिया" (३३)

"लीला विलासो विच्छित्तिर्विभ्रमः किलकिञ्चितम् ।
मोट्टायितं कुट्टमितं विव्वोको ललितं तथा ।।
विहृतं चेति विज्ञेया **दशभावाः स्वभावजा ः** । (दश. २३०-३३)

आंगिक अलंकार

भाव - नायिका के मनः स्थित भावों की अभिव्यक्ति होने से भाव [१] नामक अलंकार होता है । यथा --

"दुर्लभः प्रियो मे तस्मिन् भव हृदय निराशमहो
अपांगो में परिस्फुरति किमपि वामः ।
एष स चिरदृष्टः कथं पुनरुपनेतव्यो ,
नाथ मां पराधीनां त्वपि परिगणय सतृष्णम् ।। माल. २/४

इस गान में मालविका ने अपने मन के सम्पूर्ण विचारों को राजा अग्निमित्र के प्रति अभिव्यक्त कर दिया है । अतः भाव नामक अलंकार है ।

हाव - कुछ अंगों में विकास उत्पन्न करने वाला रतिभाव (श्रृंगार) ही हाव [२] होता है । यथा--

वामं सन्धिस्तिंमितवलयं न्यस्य हस्तं नितम्बे,
कृत्वा श्यामा विटपसदृशं स्रस्तमुक्तं द्वितीयम् ।
पादांगुष्ठ लुलित कुसुमे कुट्टिमे पातिताक्षं,
नृत्यदस्याः स्थितमतितरां कान्तमृज्वायतार्धम् ।। माल. २/६

यहाँ नृत्योपरान्त नायिका की आंगिक स्थिति का वर्णन राजा करता है, जिससे मालविका के नेत्रादि अंगों में श्रृंगार रस समन्वित मधुर विकार उत्पन्न होने से हाव नामक अलंकार है ।

हेला - जब (हाव) स्पष्ट रूप से रतिभाव का सूचक होता है तो हेला [३] कहा जाता है । यथा - नाटक के तृतीय आंक में अशोक वृक्ष पर पाद प्रहार के पश्चात् राजा अचानक आकर जब मालविका से यह पूछता है कि इस कठोर वृक्ष पर वाम - पादप्रहार करने से तुम्हारे सुकुमार चरण को कोई पीड़ा तो नहीं पहुँची ? तब मालविका लज्ञा का अभिनय करती है -

(मालविका लज्ञां नाटयति) । [४] अतः यहाँ हेला नामक नायिका का आंगिक अलंकार है ।

विच्छित्ति - यदि थोड़ी सी वेश रचना (आकल्प रचना) भी शोभा को सम्वर्धित कर देती है तो वहाँ विच्छित्ति नामक [५] भाव होता है । जैसे नाटक के पचमांक में अल्प रेशमी वस्त्रों से आच्छादित

---

२. ना. शा. २४/६-१० ,
दश. २ /५१ हेवाकसस्तु श्रृंगारो हावोऽक्षिभ्रूविकारकृत् ।
३. ना. शा. २४/११, दश. २/५२ - स एव हेला सुव्यक्त श्रृंगाररस सूचिका ।
४. माल. ३/१८ के पश्चात् . पृ. ३६६ .
५. नाट्यशास्त्र २४/१२, दशरूपक २/६२ आकल्परचना अल्पापि विछित्तिः कान्तिपोषकृत् ।। (३८)
१. ना. शा. २४/१८. दश. २/६४ क्रोधाश्रुहर्षभीत्यादे : संकरः किलकिंचतम् ।

मालविका राजा अग्निमित्र को उज्ज्वल नक्षत्रों एवं उदीयमान चन्द्रमा की ज्योत्स्ना से चैत्र विभावरी की भांति दृष्टिगत होती है -

अनतिलम्बि दुकूलनिवासिनी, बहुभिराभरणैः प्रतिभाति मे
उडगणैरुदयोन्मुख चन्द्रिका, हतहिमैरिव चैत्रविभावरी ।। (माल.) २/७

यहाँ नायिका का विच्छित्ति नामक अलंकार है ।

किलकिंचित - क्रोध, अश्रु, हर्ष एवं भय इत्यादि का समवेत रूप होना किलकिंचित्[१] कहलाता है । नाटक के चतुर्थांक में रानी के कारागृह से मुक्त होकर मालविका तथा वकुलावलिकां राजा के चित्र का दर्शन करती है तो वकुलावलिका राजा के चित्र को प्रणाम करने को कहती है, किन्तु मालविका का विचार राजा को प्रणाम करना है, चित्र को नहीं । वह सहर्ष प्रणाम कर लेती है, किन्तु द्वार की ओर राजा को न देखकर सविषाद सखी को उपालम्भ देती है -

''बकुलावलिका - सखि ! प्रणम भर्तारम् ।
मालविका - (सहर्षम) नमस्ते । (सहर्षं द्वारमवलोक्य सविषादम्)
सखि, मां विप्रलम्भयसि । ''[२]

यहाँ पर मालविका में हर्ष तथा विषाद का सांकर्य होने से किलकिंचित् , नामक अलंकार है।

कुट्टमित - नायिका के (रतिक्रीडा में प्रियतम द्वारा) केश तथा अधर ग्रहण किये जाने पर (नायिका) हृदय में प्रसन्न होकर जो कोप प्रकट करती है, वही कुट्टमित[३] कहलाता है । नाटक के चतुर्थाक में कुपित मालविका को मनाते हुये राजा उसका आलिंगन करना चाहता है ; किन्तु नायिका उससे कतरा कर दूर हो जाती है -

राजा - तदनुहयतां चिरानुरक्तोअयं जनः । (इति संश्लेषमभिनयति) मालविका परिहरति नाट्येन।

मालविका की इस कतराने की चेष्टा का वर्णन स्वयं नायक इस प्रकार करता है -

''हस्तं कम्पयते रुणद्धि रसनाव्यापार लोलांगुलिः,
स्वौ हस्तौ नयति स्तनावरणतामालिंग्यमाना बलात् ।
पातुं पक्ष्मलनेत्रमुन्नमयतः साचीकरोत्याननं
व्याजे नाप्यभिलाषपू रणसु खं निर्व र्त यत्ये व मे मनः ।। मौल४/१५

यहाँ पर मालविका का कुट्टमित नामक अलंकार है ।

ललित - नायिका का सुकुमार अंगों को स्निग्धतापूर्वक चलाना ललित[५] कहलाता है । नाटक के द्वितीय अंक में परिव्राजिका मालविका के नृत्य प्रदर्शन की प्रशंसा करती हुई कहती है -

---

२. माल. अंक ४/७ के पूर्व, (कालिदास ग्रन्थावली), पृ. ३०८ ।
३. ना. शा. २४/२०, दशरूपक २/६६ - सानन्दतः कुट्टिमितं कुप्येत् केशाधरग्रहे । (४०)
४. मालविका अंक ४, पृ. ३२०
५. ना. शा. , २४/२२, दशरूपक २/६८ सुकुमारांगविन्यासो मृसणो ललितं भवेत् (४१)
१. ना. शा. २४/२५. दश. २/५३ रूपोपभोगतारुण्यैः शोभांगानां विभूषणम् ।

परिव्राजिका - "अंगैरन्तर्निहितवचनै : सूचितः सम्यगर्थः,
पादन्यासो लयमनुगतस्तन्मयत्वं रसेषु ।
शाखा योनिर्मृदुर भिनयस्तद् विकल्पानुवृत्तौ,
भावो भावं नुदति विषयाद् रागबन्धः स एव । । माल. २/८

इस छन्द में नायिका मालविका के अंग-संचालन की सुकुमारता होने से ललित नामक अलंकार अभिव्यक्ति है ।

अयत्नज अलंकार

शोभा - रूप, उपभोग तथा तारुण्य से नायिका के अंगों का सौन्दर्य संवर्धित हो जाना ही शोभा [१] कही जाती है । राजा अग्निमित्र मालविका के रूप सौन्दर्य के सम्बन्ध में विदूषक से कहता है -

"अव्याज सुन्दरीं तां ललित विधानेन योजयता ।
परिकल्पतो विधात्रा वाणः कामस्य विषदग्धः । । माल. २/१३. [२]

इसी प्रकार "दीर्घाक्षं शरदिन्दुकान्ति ....वपु. ।" मा. २/३ तथा "चित्रगतायामस्यां ...... येनेयमालिखिता । " माल. २/२ " जैसे छन्दों में मालविका के रूप, यौवन आदि का सौन्दर्य समृद्ध दृष्टिगत होने के कारण शोभा नामक अयत्नज अलंकार है ।

धैर्य - नायिका का सभी परिस्थितियों में चंचलता से रहित एवं आत्मश्लाघा से शून्य चित्तवृत्ति[३] धैर्य कहलाती है । मालविका की स्वाभाविकी चित्रवृत्ति होने से उसमें धैर्य नामक अलंकार नाटक के तृतीयांक में उसके आत्म प्रशंसापत्र वकुलावलिका के साथ सम्पन्न संवाद में संलक्षित होता है --

"बकुलावलिका - 'सखि । अरुणशतपत्रमिव शोभते ते चरणम् ।
सर्वथा भर्तुरंक परिवर्तनी भव ।
मालविका - सखि । मा अवचनीयं मंत्रयस्व ।
बकुला. - गुणेष्वभिनिवेशिनो भर्तुरपि ।
माल. - अलीकं मंत्रयसे । एतदेव मयि नास्ति । "[४]

इस प्रकार मालविकाग्निमित्रम् नाटक की नायिका मालविका में ६ अलंकार - ३ आंगिक, ४ स्वाभाविक एवं २ अयत्नज - प्राप्त होते हैं । नाट्यशास्त्रीय [५] दृष्टि से कन्या परकीया नायिका के भी विशिष्ट गुण उसमें उपलब्ध होते हैं । अतः इसे कन्या परकीया नायिका स्वीकार करना समीचीन प्रतीत होता है ।

---

२. तुलनीय शकुन्तला का शोभा अलंकार - "अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं ....तदूपमनर्थ न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः । अभि. २/११

३. ना. शा. २४/२८, दश. - २/५६" चापला अविहता धैर्य चिदवृत्तिरविकत्थना । "

४. माल. अंक, ३, कालिदास ग्रन्थावली पृ. २६३ - १

५. दश रूपक २/२१ उ.

१. विक्रमो. अंक ३, पृ. १६७

नायिका उर्वशी - ''विक्रमोर्वशीयम्'' रूपक की नायिका उर्वशी है, जो अप्सरा होने से प्रतिम सौन्दर्यशालिनी है । नाट्यशास्त्र के आचार्यों के नायिका विषयक वर्गीकरण के अनुसार उर्वशी साधारण'' अथवा ''सामान्या'' नायिका है । वह स्वकीया या परकीया वर्गोकरण में से इस प्रकार की नायिका की कोटि में भी नहीं आती है, क्योंकि स्वीया तो विवाहिता पत्नी होती है । उर्वशी परकीया भी इसलिए नहीं है क्योंकि न तो वह कन्या है और न किसी की विवाहिता पत्नी । इस स्थिति में स्वकीया तथा परकीया से भिन्न तृतीया सामान्या या साधारण श्रेणी में इसे निर्धारित करना समीचीन प्रतीत होता है ।

उर्वशी दैवी एवं मानुषी दोनों योनियों के मिश्रित रूप में हमारे समक्ष आती है, क्योंकि वह स्वर्ग और मर्त्यलोक दोनों में विचरण करने वाली है । नायिका के प्रकृतिगत भेद की दृष्टि से उत्तम, मध्यम तथा अधम - इन तीन भेदों में से उर्वशी उत्तम प्रकृति की नायिका है, क्योंकि उसमें उत्तम प्रकृति के अधोलिखित प्रायः समस्त गुण दृष्टिगत होते हैं - यथा -

अपने आत्मीय (प्रिय) जनों से उर्वशी का प्रेम-व्यवहार होता है । राजा पुरुरवा से उसका अनन्य एवं एकान्त प्रेम है तथा वह कभी भी राजा से अप्रिय या कटु सम्भाषण नहीं करती है ।

नाटक के तृतीयांक में जब पुरुरवा ज्येष्ठा रानी औशीनरी को जाने से रोकता है तब भी वह राजा पर कुपित नहीं होती, प्रत्युत वह उसकी प्रशंसा ही करती है -

''उर्वशी - सखि ! प्रिय कलत्रो राजर्षिः । न पुनर्हृदयं निवेदयितुं शक्नोमि ।''[1]

यद्यपि उर्वशी अदीर्घरोषा है, तथापि कारण विशेष पर क्रोध करती है तथा क्रोध समाप्त होने पर प्रिय सम्भाषण भी करती है । उसकी इस प्रकृति का परिचय नाटक में यत्र-तत्र मिलता है । जब राजा पुरुरवा ने विद्याधर कन्या को गहरी दृष्टि से देर तक देखा, तभी कुपित होकर उर्वशी कुमारवन में प्रविष्ट हो गई थी । यह क्रोध उसके द्वारा कारणं विशेष से किया गया । शाप के समाप्त होने पर वह राजा पुरुरवा से पुनः मधुर वाणी में बोलती है -

उर्वशी - ''प्रियंवद !, महान खलु काल आवयोः प्रतिष्ठाचिन्निर्गतस्य ।
कदाचिद्वसूयप्यन्ति महयं प्रकृतयाः । तदेहि निर्तावहे ।''[2]

तुलनीय ''उर्वशी'' [3] नाटिका), डा. चन्द्रभान त्रिपाठी कृत (१९८९ ई०)

उर्वशी अभिनय कलादि में भी प्रवीणा है । रूपक में इस तथ्य का उल्लेख है कि इन्द्रादि देवदातों के समक्ष उसने लक्ष्मी स्वयंवर नाटक में प्रमुख नारी पात्र- ''लक्ष्मी'' का अभिनय किया था, जिसमें प्रमादवश उर्वशी ने अपने प्रिय का नाम ''पुरुषोत्तम'' न कह कर पुरुरवा कहा था । इस अनजानी त्रुटि के कारण नाटक के निर्देशक भरत द्वारा वह शापित भी हुई, किन्तु इसके आधार पर उसकी अभिनय प्रवीणता को नकारा नहीं जा सकता, अन्यथा उसे प्रमुख नारी पात्र (लक्ष्मी) की भूमिका का कार्य न सौंपा जाता ।

उर्वशी अप्सरा होने के कारण अप्रतिम रूप शालिनी है । उसके अनिर्वचनीय सौन्दर्य का

---

२. विक्रमो. ४/४ के पश्चात् (कालिदास ग्रन्थावली, सं. रेवाप्रसाद द्विवेदी) पृ. ४०६

३. उर्वशी (संस्कृत नाटिका) प्रणेता पं. चन्द्रभानु त्रिपाठी, शाकुन्तल मुद्रणालय, प्रयाग, १९८९

१. तुलनीय - अभि.शा. २/१० '' चित्रे निवेश्य परिकल्पित सत्वयोगा

वर्णन स्वयं राजा पुरुरवा करता हुआ कहता है -

"अस्याः सर्गविधौ प्रजापतिरभूच्चन्द्रो न कान्तिप्रदः,
श्रंगारैकरसः स्वयं नु मदनो मासो न पुष्पाकरः ।
वेदाभ्यासजडः कथं नु विषयव्यापृत कौतूहलो,
निर्मातुं प्रभवेन्मनोहरमिदंरूपं पुराणों मुनिः । । "विक्रमो. १/१०[१]

अन्यत्र अनेक स्थलों पर राजा उर्वशी की शोभा का वर्णन करता है । वह विदूषक से कहता है कि उर्वशीका शरीर आभूषणों का आभूषण एवं श्रृंगार - प्रसाधनों का भी श्रृंगार है । उपमेय वस्तुओं की भी उपमा उससे दी जा सकती है -

आभारणस्याभरणं प्रसाधन विधेः प्रसाधन विशेषः
उपमानस्यापि सखे प्रत्युपमानं वपुस्तस्याः । ।   विक्रमो. २/३

उपर्युक्त गणों के अतिरिक्त उर्वशी में उत्तम प्रकृति के अन्य अनेक गुण विद्यमान है । यथा - वह उदार प्रकृति की भी है । अपनी सपत्नी काशिराजपुत्री औशीनरी के प्रति उसका मन ईर्ष्यालु न होकर उदार एवं सहिष्णु है । रूपक के तृतीयांक [२] में उसे देखकर खिन्न न होकर प्रसन्न होती है तथा उसकी प्रशंसा ही करती है ।

अपने अप्रतिम रूप-सौन्दर्य के कारण उर्वशी राजा पुरुरवा द्वारा काम्य है । अपने शरीर के उस अंग को नायक कृतार्थ मानता है, जो रथ के हिलने डुलने से उर्वशी से छू गया था -

"अयं तस्याः रथक्षोभादंसेनांसो निपीड़ितः ।
एकः कृती शरीरेअस्मिन्, शेषमंगं भुवोभरः । । " विक्रमो. ३/११

उर्वशी का अप्रतिम प्रेम ही राजा के काम सन्ताप को मिटा सकता है - पुष्प शयूया, चन्द्र किरणें या चन्दन लेप नहीं ।

कुसुमशयनं न प्रत्यग्रं न चन्द्र मरीचयो,
न च मलयजं सर्वांगीणं न मणियष्टयः ।
मनसिजस्जं सा वा दिव्या ममालमपरोहितुं,
रहसि लघ्येदारब्धा वा तदाश्रयिणी कथा । ।   विक्रमो. ३/१०

उर्वशी इन गुणों से अभिमण्डित होने के साथ ही कार्य एवं कला की भी अभिज्ञा है, जिसका परिचय उसने इतने दीर्घ काल तक अपने पुत्र को अपने एवं प्रिय दोनों से पृथक् रखकर दिया । वह भलीभाँति जानती थी कि प्रियतम पुरुरवा के अपने पुत्र मिलन पर उसे स्वर्ग प्रस्थान करना पड़ेगा । अतः उसने ऐसा कार्य किया था ।

रूपोच्चयेन मनसा विधिना कृतानु । स्त्री रत्नसृष्टिरपरा
प्रतिभाति सा मे, धातु र्विभुत्वमनुचिन्त्य वपुश्च तस्या : । । "

२. विक्रमो . ३/१३ के पूर्व उर्वशी" हला स्थाने खलु इयं देवी शब्देनोपचर्यते । न किमपति परिहीयते शच्या ओजस्विताया । " पृ. ३७६

१. विक्रमो. अंक ४, पृ. ४०६ ।

इसी प्रकार आर्य-काल विशेषज्ञता का परिचय रूपक के चतुर्थांक [१] में भी वह राजा को राजधानी प्रतिष्ठान लौटा कर देती है ।

उपर्युक्त उसके उदात्त प्रकृति के गुणों को ध्यान में रखते हुए उर्वशी उत्तम प्रकृति की नायिका सिद्ध होती है ।

२. आचरण की शुद्धता या अशुद्धता की दृष्टि से नायिका भेद के आधार पर उर्वशी बाह्य कोटि के अन्तर्गत आती है । यद्यपि राजा के अन्तः पुर में वेश्या या गणिका का प्रवेश वर्जित होता है, तथापि दिव्य वेश्या के साथ राजा का [२] समागम हो सकता है । उर्वशी दिव्या वेश्या होने के कारण वाह्या कोटि की नायिका है ।

३. सामाजिक प्रतिष्ठा के आधार पर उर्वशी में ३ स्वरूप दृष्टिगत होते हैं - दिव्या, नृपपत्नी तथा गणिका । अप्सरा होने से वह दिव्या है तथा कालान्तर में राजा के द्वारा प्रेयसी तथा पत्नी रूप में ग्रहण कर लेने से वह नृप पत्नी हो जाती है तथा गणिका तो वह है ही । इस प्रकार नाट्शास्त्रीय[३] दृष्टि से उसकी तीन कोटियाँ स्पष्ट दृष्टिगत होती हैं ।

४. नायिका की कामदशा की अवस्था - वासक सज्ज़ादि आठ दशाओं में से उर्वशी मुख्य रूप से अभिसारिका [४] कोटि की नायिका है, जिसमें आचार्य भरत द्वारा निर्दिष्ट यह लक्षण प्रकट होता है -

"हित्वा लज्जां समाकृष्टा मदेन मदनेन च ।

अभिसारयते कान्तं सा भवेदभिसारिका ।। ना. शा. २४/२१२ [४]

वैसे अभिसारिका होने के साथ उर्वशी रूपक के चतुर्थ एवं पंचम अंकों में स्वाधीन भर्तृका[५] भी है । पत्रोटक में यत्र-तत्र वह अभिसारिका दृष्टिगत होती है । यथा - द्वितीयांक में कामाकुला वह राजा के समीप जब जाती है तो उसकी सखी चित्रलेखा उसके गन्तव्य स्थान की जिज्ञासा में पूछती है तभी उर्वशी व्यंजना द्वारा पुरुरवा का नाम प्रकट करती हुई कहती है -

"सखि ! तदा हेमकूट शिखरे लताविटपेन क्षणविहिन्ताकाशगमनां

मासुपहस्य किमिदानीं पृच्छसि, क्व गम्यते इति ! " [६]

इसी प्रकार रूपक के तृतीयांक में वह स्वयं स्पष्टतः अपने अभिसारिका वेश को अभिव्यक्त करती हुई चित्रलेखा से कहती है -

---

२. नाट्यशास्त्र २४/१४६ दिव्यवेश्यांगनानां हि राजा भवति संगमः ।

३. ना. शा. २४/ १४५.

४. दशरूपक, (धनंजय कृतम्), २/४४ - कामार्ता अभिसरेत् कान्तं सारयेदभिशारिका ।। (७२)

५. दशरूपक २ /३७ आसन्नायत्तरमणा हृष्टा स्वाधीनभर्तृका ।

६. विक्रमो. अंक २, पृ. ३५५. (कालिदास-ग्रन्थावली, श्लोक २/६ के बाद)

१. "अंक ३, पृ. ३७६ ।

२. ना. शा. ३४/२४

"हला चित्रलेखे ! अपिरोचते तेअयं ममाल्पाभरणभूषितो नीलांशुकपरिग्रहो अभिसारिकावेषः ।। [१]

रूपक के चतुर्थाक के प्रवेशक से यह प्रकट होता है कि उर्वशी अपने प्रिय राजा के साथ गन्धमादन पर्वत पर रमणार्थ गई थी । वन में उसके तिरोहित हो जाने पर राजा ने उसके ढूँढ़ने का पूर्ण प्रयास किया तथा वह उसे प्राप्त करने में सफल भी हुआ । इसी प्रकार पंचमांक में भी नारद द्वारा इन्द्र का उन्हें परस्पर विसुक्त न होने का सन्देश प्रेषित करना उर्वशी का स्वाधीनभर्तृका स्वरूप प्रकट करता है ।

५. नारी के शील के आधार पर दिव्या [२] तथा नृपपत्नी होने के कारण उर्वशी ललिता, उदात्ता निभृता एवं धीरा इन चारों गुणों से समन्वित संलक्षित होती है ।

६. अंगरचना एवं अन्तः प्रकृति की दृष्टि से उर्वशी दिव्यादि २१ प्रकार की नारियों में से गान्धर्व कोटि की नारियों के गुणों से समन्वित है । यथा - वह पुष्पित उपवनों में विहार करने वाली नारी है । रूपक के चतुर्थाक में चित्रलेखा तथा सहजम्या के सम्वाद से ज्ञात होता है कि रतिप्रिया उर्वशी पुरुरवा के साथ गन्धमादन [३] वन को विहारार्थ गई थी । रूपक के द्वितीयांक में भी वह राजा का पता प्रमदवन में जाकर लगाती है ।

उर्वशी स्मिता मितभाषिणी भी है । उसका वाग्व्यापार रूपक में सभी पात्रों के साथ मनोहर पाया जाता है । प्रथमांक में अपनी वैजयन्तीमाला लता में बिंध जाने पर वह मुस्कुराकर उसे छुड़ाने के लिये अपनी सखीसे निवेदन करती है ।

राजा, विधूषक, औशीनरी आदि से भी उसका संभाषण मधुर, सरस एवं समुचित पाया जाता है ।

उर्वशी राजा को अत्यधिक प्रेम करने वाली, रतिप्रिया तथा स्निग्धावयवा भी है । उसके अंग प्रत्यंग अत्यन्त सुकुमार हैं । उसके सुकुमार-सुन्दर शरीर की रचना में राजा पुरुरवा की परिकल्पना [४] उसके सर्वातिशायी सौन्दर्य को पुष्ट क्ररतीहै । वह गीत में भी पारंगत है, जैसा कि उसने राजा के प्रति प्रणयनिवेदन में यह गीत भूर्जपत्र पर अंकित किया था -

"स्वामिन् ! सम्भाविता यथाहं त्वया अज्ञाता, तथानुरक्तस्य यदि नाम तवोपरि अहम् । किं मे ललित पारिजातशयनीये भवन्ति ।

नन्दनवनवाता अत्युष्णकाः शरीरके ।। विक्रमो? २/१२

७. अन्य आधार - वेश्या, कुलजा, प्रेष्या में से उर्वशी वेश्या कोटि [५] में आती है । स्वर्ग की

---

३. विक्रमो. ४ अंक. (प्रवेशक) - "उर्वशी किल रतिसहायं राजर्षिमामात्येषु निवेशितराज्यधुरं गृहीत्वा गन्धमादनं वनं विहर्तुं गता । "

४. विक्रमो. १/१०. अस्याः सर्गविधौ ....पुराणो सुनिः ।।

५. Kalldasa, R.S. Bamaswaml Shastri quotes Byder " Ã^kr'km "Im too much of a nymph te be a woman and too much of a wor to be a nymph. " Srirangam, Edition 1960 Page 267

१. ना. शा. २४/८ दश. २/५० निर्विकारात्मकात्सत्त्वादभावस्तत्राधविक्रिया ।

२. विक्रमोओ। अंक, श्लोक ६ के पश्चात्, पृ. ३४४

अप्सरा होने से उसका कार्य देवों का मनोविनोद करनाहै । अतएव वह साधारण वेश्या न होकर दिव्यकोटि की वेश्या है । इस प्रकार उर्वशी का नायिका रूप में चरित्र विशिष्ट है ।

नायिका के अलंकार

महाकवि कालिदास की अन्य नाट्य कृतियों की नायिकाओं के समान उर्वशी अनेक आंगिक स्वाभाविक एवं अयत्नज अलंकारों से अभिमण्डित दृष्टिगत होती है ।

आंगिक अलंकार

उर्वशी के अधोलिखित अलंकार आंगिक प्राप्त होते हैं -

भाव - नाट्यशास्त्रानुसार नायिका की मनः स्थिति भाव - [१] व्यंजना से दर्शकों को ज्ञात होती है रूपक के प्रथमांक में राजा पुरुरवा द्वारा रक्षित उर्वशी उसे देखकर आत्मगत (स्वगत) भाव व्यक्त करती हुई कहती है -

"उपकृतं खलु दानवेन्द्रसंरम्भेण । " [२] अर्थात् उर्वशी तथा पुरुरवा का प्रथम मिलन एवं प्रेम दानवों के संघर्ष के कारण (उपकार रूप में) हुआ । अतः इस भाव- व्यंजना से यहाँ भाव नामक आंगिक अलंकार है ।

हेला - श्रृंगार रस पूर्णललिताभिनय द्वितीयांक में दो स्थलों पर होने से हेला [३] नामक आंगिक अलंकार अभिव्यक्त हुआ है --

उर्वशी - (मदनवेग नमभिनीय सलज्ज्म्) तथा उर्वशी -

(साध्वसं राजर्नमुपेत्य प्रणम्य च सुव्रीम् । [४]

स्वाभाविक अलंकार

उर्वशी में अधोलिखित स्वाभाविक अलंकार दृष्टव्य है ।

विच्छिति - अल्पवेशरचना भी सौन्दर्य को जब संवर्धित करती है तो विच्छिक्ति [५] अलंकार होता है । उर्वशी द्वारा रूपक के तृतीयांक में अपने अभिसारिकावेश की सुन्दरता के सम्बन्ध में चित्रलेखा से पूछे जाने पर इनके अधोलिखित संवाद में विच्छिक्ति नामक अलंकार है : -

उर्वशी - (आत्मानमवलोक्य) हला चित्रलेखे, अपि रोचते ते अयं ममाल्पा भरणभूषितो नीलांशुक परिग्रहो अभिसारिकावेषः ! " [६]

चित्रलेखा - सखि, नास्ति ते वाग्विभवः प्रशँसितुम् । इदं तु चिन्तयामि अपि नानाहं पुरुरवा भवेयमिति । " [७]

यहाँ पर अल्प आभूषणों से उर्वशी के अप्रतिम सौन्दर्य की अभिव्यंजना से विच्छिक्ति अलंकार है ।

---

३. ना. शा. २४/211, oM. 2/५२ स एव हेला सुव्यक्तश्रंगाररससूचिका

४. विक्रमो. २ अंक, कालिदास के नाटक पृ. १७४

५. ना. शा. २४/१२ दश . २/६२ आकल्परचना अल्पादिविच्छित्तिः कान्ति र्यो सकृत् ।

६. विक्रमो., अंक ३ कालिदास के नाटक पृ. १८६ ।

१. ना. शा. २४/१८ दश. २/६४ क्रोधाश्रुहर्षभीत्यादेः संकरः क्लिकिंचितम् ।

२. विक्रमो ५/१५ के पश्चात् कालिदास ग्रन्थावली, स.न. रेवाप्रसाद द्विवेदी, पृ. ४१८

किलकिंचित् - उर्वशी का किलकिंचित [१] अलंकार रूपक के पंचमांक में प्रकट होता है - "उर्वशी-ऋृणोतु महाराजः । प्रथमं पुनः पुत्रदर्शनेन ससुत्थेनानन्देन विस्मृतास्मि । इदानीं महेन्द्रसंकीर्त्तनेन स्मृतः समयो मम् हृदयमायासयति ।"[२]

इस स्थल पर उर्वशी में हर्ष तथा शोक भावों का सकर करण होने से किलकिंचित नामक स्वाभाविक अलंकारहै ।

ललित - उर्वशी के अधोलिखित सुकुमार अभिनय से ललित [३] नामक अलंकार अभिव्यक्त होता है - उर्वशी - (भवतु क्रीडिस्यामि तावत्) (इति तिरस्करणीमपनीय पृष्ठतो गत्वा राज्ञो नयने संवृणोति । " [४])

विहृत - अवसर आने पर भी नायिका उर्वशी का लज्ञा के कारण न बोलना विहृत [५] अलंकार है । यह भाव रूपक के प्रथमांक में व्यक्त उस समय होता है, जब लज्ञावश राजा को आमंत्रित नहीं कर पाने के कारण चित्रलेखासे ऐसा करने को कहती है -

"**उर्वशी (जनान्तिकम्)** - सखि चित्रलेखे । उपकारिणं राजर्षिं न शक्नोम्यामंत्रपितुम् । तत्वमेव में सुखम् भव । " [६]

इसी प्रकार तृतीयांक में भी जब राजा उर्वशी से यह पूछता है कि देवी की अनुमति के पूर्व किसकी अनुमति से उसका हृदय चुराया था, तब उसकी सखी चित्रलेखा कहती है - "चित्र. - वयस्य! निरुत्तरा एषा ।" (विक्रमो. अंक ३)

यहां भी उचित समय पर लज्ञावश उसके न बोल पाने के कारण विहृत अलंकार है ।

अयत्नज अलंकार - उर्वशी में शोभा, धैर्य, औदार्यादि अयत्नज [७] अलंकार पाये जाते हैं -

शोभा - रूपक के प्रथमांक में पुरुरवा की इस उक्ति में शोभा अलंकार व्यक्तहोता है - राजा- (उर्वशीं विलोक्य आत्मगतम) स्थाने खलु नारायणमृषिं विलोभयन्त्यः ....अस्याः सर्गविधौ .... रूपं पुराणो मुनिः (१/१०) डा. चन्द्रभानुत्रिपाठी ने [८] भी अपनी संस्कृत नाटिका "उर्वशी' में उर्वशी की शोभा को प्रभावी अंकित किया है ।

इसके अतिरिक्त नाटक के द्वितीयांक में राजा की इस उक्ति" आभरणस्याभरणं .... वपुस्तस्या ।।" (विक्रमो. २/३) में शोभा, रूप, यौवनादि सभी उर्वशी –

---

३. ना. शा. २४/२२, दश. २/६८ सुकुमारांगविन्यासो मृसणो ललितं भवेत्

४. विक्रमो. ३ अंक, पृ. ३७६

५. ना. शा. २४/२३ दशे. २/६६ प्राप्तकालं न यद्ब्रूयात् व्रीडयाविहृतं हि तत् ।

६. कालिदास के नाटक (विक्रमो.) पृ. १५४ ।

७. ना. शा. २४/२५, दशे. २/५३

८. दृष्टव्य संस्कृत नाटिका - "उर्वशी" प्रणेता - पं. चन्द्रभानु त्रिपाठी, संस्कृतप्राध्यापक प्रयाग डिग्री कालेज, प्रयाग, १९८९, पृ. २० - २८ .

१. ना. श. २४/२८ दश. २/५६ चापलाअविहिता धैर्य चिन्नवृत्ति रविकत्थना,

२. विक्रमो. २ अंक कालिदास के नाटक, पृ. १६६ ।

सौन्दर्य - वर्णन होने से शोभा नायक अयलज अलंकार है ।

धैर्य - उर्वशी की मनोवृत्ति में अचंचलत्व प्रकट होने से धैर्य [१] नामक अलंकार रूपक के द्वितीयांक में इस प्रकार व्यक्त हुआ है --

"उर्वशी - सखि ! मदनः खलु मां नियोजयति ।"[२]

उर्वशी के इस कथन में उसकी मनोवृत्ति के अचंचलत्व का विज्ञापन होने से धैर्य अलंकार है।

औदार्य - उर्वशी सभी अवस्थाओं में सदा विनम्र दृष्टिगत होती है, जिससे उसका औदार्य भाव [३] प्रकट होता है । यथा - नाटक के तृतीयांक में उसके इन वचनों में नम्रता होने से औदार्य अयत्लंज अलंकार है -

"उर्वशी - हला देव्या दत्तो महाराजः । अथैऽस्य प्रणयवतीव
शरीर-संपर्क गतास्मि । मा खलु मां पुरोभागिनीं समर्थयस्व ।"[४]

उपर्युक्त विवेचन इसे तथा डॉ. कुसुमभूरिया [५] आदि के मतानुसार कहा जा सकता है कि उर्वशी में २. आंगिक, ४ स्वाभाविक तथा ३ अयत्नज अलंकार प्राप्त होते हैं । इन अलंकारों मे विभूषित वैदिक आख्यान में उल्लिखित, कालिदास की "विक्रमोर्वशीयम्' की उर्वशी ने दिनकर जैसे हिन्दी के भूर्धन्य राष्ट्र कवि को भी आकृष्ट कर "उर्वशी" की रचना में प्रवृत्त किया जिनकी [६] दृष्टि में उर्वशी , रसना, प्राण, त्वक्, श्रोत्र आदि कामनाओं की प्रतीक सनातन नारी है ।

श्री दादूराम शर्मा भी 'विक्रमोर्वशीयम् की उर्वशी को देवों की केलि सहचरी बनकर भी उसे एकाकिनी प्रेमवंचिता होने पर धरा पर अनेकिनी एवं सौभाग्यशालिनी पाते हैं, जैसा कि उनका यह विचार है -

"स्वर्गलोक की सौन्दर्य निधि धरापुत्र के अनुराग से आकृष्ट होकर जब धरती पर आती है सार्थक और धन्य होती है । " इसकी व्यंजना करके कालिदास वस्तुतः स्वर्ग से पृथ्वी की श्रेष्ठता सिद्ध करना चाहते हैं । "

(द्रष्टव्य-विक्रमोर्वशीय और उर्वशी का तुलनात्मक अध्ययन शीर्षक शोध लेख) [७] संस्कृत नाट्य साहित्य में उर्वशी को चित्रित करने वाली अर्वाचीन नाट्य कृतियां विरचित हुई हैं । जिनमें डा. चन्द्रभानु त्रिपाठी की संस्कृत नाटिका उर्वशी उल्लेखनीय है । [८]

---

३. ना. श. २/२६ दशे. २/५८ औदार्य प्रश्रयः सदा ।
४. विक्रमो. अंक ३ श्लोक १७ के पूर्व पृ. ३८३ (कालिदास गृन्थावली)
५. कालिदास के रूपको का नाट्यशास्त्रीय विवेचन, डा. कुसुमभूरिया, कानपुर, १९७९
६. उर्वशी,दिनकर (भूमिका) पृ. खे-ग २०/३-४ पृ. १७२ १९७९-८०
७. विश्वभारतीयलिका २०/३-४ पृ. १७२ १९७९-८०
८. उर्वशी, (नाटिका), प्रयाग, १९८९.
१. सा. द. ३/९७ कन्या त्वजातोपयमा सलज्ज्ञा नवयौवना ।
२. ना. शा. २५/३७-३९

नायिका शकुन्तला - ''अभिज्ञान शाकुन्तलम्'' नमक श्रेष्ठ नाटक की नायिका शकुन्तला शास्त्रीय दृष्टिकोण से कन्या परकीया नायिका है । साहित्यदर्पणकार [१] आचार्य विश्वनाथ ने कन्या परकीया के जिन विशिष्ट गुणों को निर्दिष्ट किया है, वे सभीगुण शकुन्तला में विद्यमान है । वह महर्षि कण्व की धर्मपुत्री है तथा अविवाहिता, सलज्ञा एवं नवयौवना भी है । वह अनुपम सुन्दरी युवती, सरल हृदया तथा जडचेतन सभीसे प्रेम करने वाली आदर्श कन्या है, जिसका चरित्र विश्व साहित्य में बेजोड़है ।

नाट्यशास्त्रीय आधार [२] पर नायिका शकुन्तला का चरित्र अधोलिखित रूप में विश्लेषित किया जा सकता है ।

१. प्रकृति भेद - उत्तमा, मध्यमा एवं अधमा ३ कोटियों में से परिभाषा में दिये निम्नलिखित सभी गुणों से युक्त होने के कारण शकुन्तला उत्तमा कोटि की नायिका है, क्योंकि वह अपने आत्मीय (प्रिय) जनों के साथ सदैव प्रेम-व्यवहार करती है । अपने पिता कण्व, आर्या गौतमी, प्रियंवदा अनसूया सखियों आदि के साथ उसका व्यवहार अशोभन न होकर स्नेह-सम्मानपूर्ण है । नाटक के पंचमांक में दुष्यन्त द्वारा तिरस्कृत होने पर जब वह ऋषियों का अनुगमन करने लगती है तो शार्ङ्गरव[३] सक्रोध उसे डाँट देता है, तब भी वह उनसे अप्रिय बात नहीं कहती है ।

(ख) शकुन्तला अदीर्घरोषा है । यदि कभी क्रोध करती है तो किसी कारण विशेष पर तथा बहुत लम्बे समय तक क्रोध नहीं करती । नाटक के पंचमांक [४] में राजा द्वारा प्रत्याख्यात होने पर यद्यपि क्रोध पूर्वक शकुन्तला उससे बहुत कुछ कहती है, तथापि नाटक के सप्तमांक में पुनर्मिलन की स्थिति में राजा को कुछ भी लांक्षित न कर अपने भाग्य को ही दोष देती है । शकुन्तला --

उतिष्ठत्वार्यपुत्रः। नूनं मे सुचरित प्रतिबंन्धकं पुराकृतं तेषु दिवसेषु परिणाममुमासीत्,, येन सानुक्रोशोप्यार्यपुत्रोऽपि तथा संवृत्त । (अभि. ७/२४ के पश्चात् पृ. ५५४)

(ग) शकुन्तला कला-शिल्पादि में भी दक्षहै । आश्रम के उपवन की शोभा में संवृद्धि करने के साथ ही वह काव्य (गीत) रचना कला में भी निष्णात है । दुष्यन्त को प्रणय पत्र लिखने में वह अपनी काव्यात्मक गीत-रचना कुशलता का परिचय इस प्रकार देती है । -

''तव न जाने हृदयं मम पुनः कामों दिवापि रात्रावपि ।
निर्घृण ! तपति बलीयस्त्वंयि वृत्तमनोरथान्यंगानि ।। '' अभि. ३/१३

(घ) अपने शील-सौन्दर्य कुलादि के कारण वह राजा दुष्यन्त द्वारा काम्य है । राजा उसे प्राप्त करने हेतु अपनी अभिलाषा स्वयं प्रथमांक में इस प्रकार व्यक्त करता है -- '' अपि नाम कुलपति - रियमसवर्णक्षेत्रसम्भवा स्यात् । '' असंशयं क्षत्र-परिग्रह क्षमा यदार्यमस्यामभिलाषि मे मनः । सताँ हि सन्देह पदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तः करणप्रवृत्तयः ।। (अभि. १/२०)

---

३. अभि. शा. पंचम अंक. शार्ङ्गरवः - ''किं पुरोभागे स्वातंत्र्यमवलम्बसे । ''

४. '' '' ५. शकुन्तला - अनार्य, आत्मनो हृदयानुमानेन पश्यसि । क इदानींमचो धर्मकंचुकप्रवेशिनः तृणच्छन्नकूपोपमस्य तवानुकृतिं प्रतिपस्ये । '' (कालिदास ग्रन्थावली पृ. ५०६)

१. अभि. ४X१४ यस्य त्वया व्रण ....पदवीं मृगस्ते ।

२. '' ४/१२ उद्गलित दर्भकलवा मृग्यः ....लताः ।

(ङ) शकुन्तला दक्षिणा अर्थात् उदाहरहृदया युवती है । कण्वाश्रम के समस्त पशुपक्षियों के साथ भी वह सहृदयता तथा उदारता सहित व्यवहार करती है । उसकी विदावेला पर कण्व का यह कथन इस तथ्य क पुष्टि करता है कि पुत्र-प्रतिम मृगशावक, जिसे शकुन्तला ने श्यामाक मुष्ठियों से संवर्धित किया था ।[१] आश्रम से अब जाते समय वस्त्र पीछे से खींचता है । इसी प्रकार पत्र-पुष्पों के अतिरिक्त लताभगिनि वनज्योत्स्ना पर भी उसका अगाध प्रेम है । उसके वियोगजन्य सन्ताप से समस्त जड़ चेतन[२] संतप्तहैं, क्योकि उनसे उनका अनन्य एवं असाधारण प्रेम है ।

(च) अप्सरा मेनका के गर्भ से समुद्भवा शकुन्तला अप्रतिम सौन्दर्यशालिनी है । उसके सर्वातिशायी सौन्दर्य पर विमुग्ध होकर राजा दुष्यन्त की अनेक[३] उक्तियाँ उसे परम सुन्दरी रमणीमणि सिद्ध करती है, जिसका रूप लावण्य अनुपम एवं अलौकिक परिलक्षित होता है ।[४]

(छ) वह कार्य तथा काल का पूर्ण ज्ञान रख तदनुकूल आचरण करने वाली है । पिता कण्व द्वारा नियुक्त शकुन्तला अपने आश्रम के सभी अतिथियों के स्वागत-सत्कार का समुचित ध्यान रखती है । पौधों एवं लताओं को निश्चित समय पर सींचती भी, उनके समय पर पुष्पित फलित होने पर उत्सव मनाती है । अपने प्रिय विरह में भग्नमना होने से अनजाने में दुर्वासा के आतिथ्य सत्कार का ध्यान न रहने के कारण उसे उनका कोपभाजन बन कर शापित भी बनना पड़ा, जिससे राजा उसे विस्मृत कर बैठा और पहचान भी नहीं पाया ।

उपर्युक्त आधार पर उत्तम प्रकृति के अनेक गुंण शकुन्तला में दृष्टिगत होते हैं ।

२. **आचरण की शुद्धता**[५] या अशुद्धता की दृष्टि से कुलीन ललना होने से शकुन्तला आभ्यन्तर कोटि के अन्तर्गत आती है, क्योंकि राजा के अन्तःपुर में दिव्या अथवा कुलीनांगना ही प्रविष्ट हो सकती हैं - अन्य सामान्या नारी नहीं । राजा की यह कामससुत्पत्ति नायिका के रूप - सौन्दर्य दर्शन, श्रवण एवं आंगिक लीलामय चेष्टाओं से उत्पन्न होती है । दुष्यन्त में भी कामभाव की संसुत्पत्ति शकुन्तला के सौन्दर्य दर्शन से ही पायी जाती है ।

३. **सामाजिक प्रतिष्ठा** की दृष्टि से शकुन्तला मुख्य रूप से नृप पत्नी[६] कही जायेगी किन्तु अप्सरासंभवा होने के कारण दिव्यतत्व भी उसमें पाया जाता है, जिसे नाटक के प्रथमांक में राजा की उक्ति "सर्वधाप्सरः सम्भवैषा" के साथ पंचमांक के अन्त में राजपुरोहित की इस उक्ति में देखा जा सकता है कि उसे एक दिव्य ज्योति उठाकर ले जाती है[७] तथा उसकी रक्षा करती है । सप्तमांक में राजासे पुर्नमिलन होने पर वह नृप पत्नी ही है ।

---

३. " १/१८ सरसिजमनुद्धिं ....१/१६ अधरः किसलयराग ....२/१० अनाघ्र

४. द्रष्टव्य - "शाकुन्तलायम् " (लेखक का सघः प्रकाशित संस्कृत काव्यग्रन्थ), अर्वान्दीन संस्कृतम्,जनवरी १६६१,तथा परिजातम् नम्बर - (१६६१) के अंकों में अंसतः प्रकाशित ।

५. ना. शा. २४/४३, १४५ - नहि राजोपचारेषु बाह्य स्त्रीभोग दूष्यते आभ्यन्तरो भवेद्राज्ञो बाह्ये बाह्य जनस्य वा । दिव्येश्यांगनानां हि राजा भवति संगमः

६. ना. शा. २ ४१४८, १४६.

७. अभि. ५/३० सा निन्दती ....जगाम ।

१. ना. शॉ. २४/२०७ ओलसुरतातिरसैर्बद्धो यस्याः पार्श्वगतोप्रियः । समादेगुणसंयुक्ता भवेत्स्वाधीनभर्तृका । "

४. काम दशा की अवस्था को ध्यान में रखते हुये वासक सज्ञादि ८ अवस्थाओं में से शकुन्तला की ३ या ४ अवस्थाएं दृष्टिगत होती है - स्वाधीन मर्त्यका, विप्रलब्धा, विरहोत्कण्ठिता तथा प्रोषितपतिका ।

नाटक के तृतीयांक में गान्धर्व विवाह के कुछ क्षणों में वह स्वाधीन [1] मर्तृका नायिका है ।

राजा दुष्यन्त के हस्तिनापुर प्रस्थान करने पर चतुर्थांक में शकुन्तला उसके विरह में उत्कण्ठित रहती है, जिससे उसे अपने किसी कर्त्तव्य का ध्यान नहीं रहता । वह आश्रम की कुटी के समक्ष चित्रलिखित सी विरहोत्कण्ठिता [2] होकर बैठी है । जैसा कि प्रियंवदा अनसूया से कहती है -

"अनसूये ! पश्य तावत् वामहस्तोपहितवदंना -अलिखितेव प्रियसखी । भर्तृगतया चिन्तया अत्मानमपि नैषा विभावयति किं पुनरागन्तुकम् । "(अभि. अंक ४, पृ. ५७)

नाटक के पंचमांक में शार्ङ्गरव-शारद्वत के प्रति शकुन्तला के इस कथन में उसकी विप्रलब्धा[3] अवस्था प्रकट होती है --

"कथमनेन कितवेन विप्रलब्धास्मि' युवामपि मां परित्यजथ ! "[4]

पति के द्वारा पंचमांक में प्रत्याख्यात होने पर शकुन्तला मारीचाश्रम में प्रोषितभर्तृका जैसी पाई जाती है । राजा स्वयं उसके दीर्घकालिक विरहव्रत में धारण किये प्रोषितपतिका स्वरूप का वर्णन करता हुआ कहता है --

"वसने परिधूसरे वसाना नियमक्षाममुखी धृतैकवेणि: ।
अतिनिष्करुणस्य शुद्धशीला मम दीर्घ विरह-व्रतं बिभर्ति । । ' अभि. ७/२१

५. ललित, उदात्तादि शील के ४ गुणों में से शकुन्तला दिव्या तथा नृप पत्नी होने के कारण उपर्युक्त प्रायः समस्त गुणों से समन्वित है जैसा कि नाट्यशास्त्र [5] के द्वारा भी समर्थित है कि दिव्या एवं नृपपत्नी में उपर्युक्त चारों गुण पाये जाते हैं ।

६. अंग रचना एवं अन्तः प्रकृति के आधार पर दिव्य सत्त्वादि २१ प्रकार [6] की नारियों में से शकुन्तला गान्धर्व कोटि की नारियों के गुणों से युक्त है । तदनुसार वह पुष्पित उपवनों से प्रेम करने

---

२. ना. शा. २४/२०६ अनेक कार्यव्यासंगाद्यस्या नागच्छिति प्रियः ।
तस्यानुगम् दुःखार्ता विरहोत्कण्ठिता मता ।।
दशं. २/३६ चिरयत्यव्यलीकं तु विरहोत्कण्ठिन्तोन्मनाः
३. दश. २/४२
४. अभि. ५/२६ के पश्चात्, पृ. ५०८ । विप्रलब्धोक्तसमयमप्राप्ते अति विमानिता
५. ना. शा. ३४/२४ धीरा च ललिता च स्यात् उदात्ता निभृता तथा । दिव्यानां जात यस्तैगुणेर्युक्ता भवन्ति हि ।
६. ना. शा. २४/१००, १०६
१. अभि. ४६ पातुं न प्रथमं व्यवस्यति .... सर्वैरनुज्ञायताम् ।
२. अभि. १/१८ सरसिजमनुविदं ....१/१६ अधरः किसलयरागः ....

वाली है तथा स्वयं अपने हाथों से अपनी वाटिका के पौधों एवं लताओं को सींचती है । उनके फूलने फलने पर कण्व के शब्दों में वह प्रसन्न होकर उत्सव भी मनाती [1] है ।

शकुन्तला स्मित भाषिणी है । वह अपनी सखियों से स्नेह सहित मधुर संभाषण करते हुये मुस्करा कर अतिथि सत्कार करती है । वह कृशांगी सुकुमार शरीरा, गीत, नृत्तादि में निपुण, नित्य प्रसन्न रहने वाली, सखियों के साथ हास परिहास करने वाली, स्निग्धत्वक्केश लोचना आदि अनेक अप्रतिभ गुणों एवं रूप से अभिमण्डित है । राजा दुष्यन्त विसुग्ध होकर स्वयं उसके सौन्दर्य [2] का वर्णन करता है ।

७. आचार्य भरत [3] ने अन्य आधार-काम दशा की विभिन्न ८ अवश्थाओं के अनुसार नायिका भेद करते हुए अन्य ३ प्रकार की नायिकाओं का उल्लेख किया है - वेश्या, कुलजा तथा प्रेष्या । सम्भवतः परवर्ती नाट्य आचार्यों ने इन्हीं ३ भेदों के आधार पर स्वीया, परकीया (अन्या) तथा साधारणी (सामान्या) इन्हें अभिहित किया है । इस आधार पर शकुन्तला को कुलजा परकीया (कन्या कोटि का स्वीकार करना समीचीन प्रतीत होता है ।

नायिका शकुन्तला के अलंकार

आंगिक अलंकार - अधोलिखित आंगिक अलंकार शकुंन्तला में संलक्षित होते हैं -

भाव - नाटक के प्रथमांक में दुष्यन्त को देखकर नायिका की निम्नलिखित मनः स्थिति सूचक भावपूर्ण स्वगतोक्ति में भाव [4] नामक अलंकार है -

शकुन्तला (आत्मगतम्) किन्तु खल्विमं प्रेक्षय तपोवन विरोधिनी विकारस्य गमनीयास्मि संवृता । (अभि. शा. । अंक, पृ. १६)

हाव - शकुन्तला के श्रृंगारिक आंगिक विकारों के विषय में विदूषक को बतलाते हुए द्वितायांक में राजा दुष्यन्त कहता है, जिसमें उसके नेत्रों, भौहों आदि में श्रृंगार रसानुकूल मधुर विकार होने से हाव [5] नामक अलंकार है -

"अभिमुखे मयि संहृतमीक्षणं, हसितमन्यनिमित्तकृतोदयम् ।
विनयवारित वृत्तिरतस्तया न विवृतो मदनो न च संवृतः । । अभि. २/११

हेला - जब अनसूया राजा दुष्यन्त से नाटक के प्रथमांक में कहती है कि आपके आने से

---

३. ना. शा. २२/२२६ (गायकवाड ओरियण्टल सीरीज (सं.)

४. ना. शा. २४/८ वागंगमुख रागैश्च सत्त्वेनाभिनयेन च । कवेरन्तर्गतं भावं भावयन् भाव उच्यते ।

५. ना. शा. २४/१० तत्राक्षि भ्रूविकाराढ्य श्रृंगार रस सूचकः ।
सग्रीवारेचको ज्ञेयो हावश्चित्तसमुत्थितः ।।

१. अभि. शा. १ अंक (शकुन्तला श्रृंगारलज्ज्ञां रूपयति), पृ. १७

२. ना. शा. २४/११ य एव भावाःसर्वेषां श्रंगार रस संश्रयाः १ समाख्याता बुधैर्हेला ललिताभि

आश्रमवासी सनाथ हो गये हैं, तभी शकुन्तला श्रृंगार लज्ज़ा [१] का अभिनय करती है, जिसमें श्रृंगारिक ललित अभिनय होने के कारण हेला [२] नामक अलंकार है ।

स्वाभाविक अलंकार -

विलास - राजा दुष्यन्त नाटक के प्रथमांक में शकुन्तला के विषय में जो विचार करता है कि यह भी उसे प्रेम करने लगी है क्योंकि -

"वाचं न मिश्रयति यद्यपि मद्वचोभिः कर्णं ददात्यभिमुखे मयि भाषमाणे ।
कामं न तिष्ठति मदानन सम्मुखीयं भूयिष्ठमन्यविषया न तु दृष्टिरस्याः ।। "

अभि. १/२८

यहां पर सुखं, कर्ण नेत्रादि से नायिका की नायक (दुष्यन्त) के प्रति प्रेमभाव में विशिष्टता होने से विलास [३] नामक स्वाभाविक अलंकार है ।

विच्छित्ति - वल्कलवस्त्रधारिणी सुन्दरी शकुन्तला के सौन्दर्य के विषय में राजा दुष्यन्त नाटक के प्रथमांक में कहता है - " सरसितसुनुबिद्धं शैवलेनापि रम्यं मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति । इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् ।। " अभि. १/१९

इस छन्द में वल्कलावृता अलंकारशून्या सुन्दरी शकुन्तला की शोभा का वर्णन होने से विच्छित्ति [४] ' नामक अलंकार है ।

क्लिकिंचित - नाटक के स्पतमांक में राजा से पुर्नमिलन होने पर शकुन्तला में अधोलिखित स्थलों पर हर्ष तथा विषाद दोनों भावों का सांकर्य होने से क्लिकिंचित [५] नामक अलंकार है - "जयतु जयत्वार्यपुत्रः (इत्यधोक्ति वाष्यकण्ठी विरमति) अभि. ७ अंक पृ. १३३

मोट्टायित - द्वितीयांक में शकुन्तला को राजा दुष्यन्त के प्रति भावों में भावित हो जाना इस श्लोक में मोट्टायित [६] अलंकार अभिव्यक्त होता है -

अभिमुखे मयि संहृतमीक्षणं ....संवृतः ।। अभि. २/११

कुट्टमित - राजा शकुन्तला का तृतीयांक में अधरपान हेतु मुख ऊपर उठाना चाहता है, जिसे शकुन्तला रोकने का अभिनय करती है -

"अपरिक्षतकोमलस्य ....रसोअस्य ।। अभि. ३/२२

(इति मुखमस्याः समुन्नमयितु मिच्छति । शकुन्तला परिहरति नाट्येन) यहां कुट्टमित [७] नामक अलंकार है ।

---

३. ना. शा. २४/१५- नयात्मिकाः।

४. ना. शा. २४/१६

५. ना. शा. २४/१८

६. ना. शा. २४/१९ इष्टजनस्य कथायां लीलाहेला दिदर्शनेनापि । तद्भावभान कृतं मोट्टायित मित्यभिख्यातम् ।।

७. ना. शा. २४/२०

१. ना. शा. २४/२२ कर चरणांगन्यासः सभ्रूनेत्रोष्ठसंप्रयुक्तसतु । सुकुमार - विधानेने स्त्री भिरिदं स्मृतं ललितम् ।

ललित - राजा शकुन्तला के विषय में नाटक के द्वितीयांक में चरणन्यासादि का सुकुमारतापूर्वक संचालन होने का वर्णन करता है । अतः यहां ललित [१] नामक अलंकार व्यक्त होता है -

विहृत - नायिका की सखियों से रोग का हेतु नाटक के तृतीयांक में पूछा जाने पर शकुन्तला दुष्यन्त विषयक बात बताती है, किन्तु लज्जा के कारण सम्पूर्ण वाक्य नहीं बोल पाती - "शकुन्तला - सखि । यतः प्रभृति मम दर्शनपथमागतः स तपोवन-रक्षिता राजर्षिः (इत्यर्धोक्ते लज्जां नाटयति) - (अभि शा. ३ अंक, पृ. ४४)

यहां विहृत [२] नामक स्वाभाविक अलंकार है ।

अयत्नज अलंकार

शोभा - शकुन्तला के सौन्दर्य के सम्बन्ध में विधूषक से राजा जो वर्णन करता है उसमें नायिका के यौवन, रूप, शोभा का वर्णन होने से शोभा [३] नामक अयत्नज अलंकार है ।

कान्ति - शकुन्तला की शोभा का काम-पीडा से युक्त होने से कान्ति [४] नामक अलंकार तृतीयांक के अधोलिखित इस श्लोक में प्राप्त होता है, जहां राजा उसके रोग या सन्ताप के सम्बन्ध सोचता हुआ कहता है -

स्तनन्यस्तोशीरं..................युवतिषु । । अभि. ३/७

दीप्ति - शकुन्तला का शरीर सन्ताप या रोग के कारण म्लान हो गया है, जिसके सम्बन्ध में राजा दुष्यन्त कहता है -

"क्षाम-क्षाम कपोलमाननमुरः काठिन्यमुक्तस्तनं ......स्पृष्टा लता माधवी (अभि. ३/८)

यहां शकुन्तला की कान्ति में प्राप्त होने वाले काम विकार के और अधिक वृद्धि हो जाने पर दीप्ति [५] नामक अयत्नज अलंकार है ।

माधुर्य - शकुन्तला की सभी अवस्थाओं में चेष्टाओं में सुकुमारता होने से माधुर्य नामक [६]

---

२. ना.शा. २४/२३ प्राप्तानामपि वचनं क्रियते यद्भाषणं स्त्रीभिः ।
व्याजात् स्वाभावतो वा हयेतत समुदाहृतं विहृतम ।।

३. ना. शा. २४/२५ - + अभि. १/२० अधरः किसलयरागः , २/९ चित्रे निवेश्य।

४. ना. शा. २४/२६ (पूर्वार्द्ध अभि. २/१० अनाघ्रातं पुष्पं ....विधिः ।।

५. ना. शा. २४/२६ (उत्तरार्ध)

६. ना. शा. २४/२७

१. अभि. स्निग्ध वीक्षितं ....स्यतां पश्यति ।। २/२
तुलनीय लेखक का काव्यग्रंथ - शाकुन्तलीयम (निसर्गकन्या शकुन्तला) संकोच लज्जाऽमितशीलभावं विभाव्य सख्यौ चतुरे तदानीम् । तिरोहिते तद्हित कामयन्त्यौ

अलंकार है । वह अधोलिखित श्लोक में प्राप्त होता है, जहाँ नायिका [१] की श्रंगारिक चेष्टाओं के सम्बन्ध में दुष्यन्त कहता है ।

औदार्य - शकुन्तला दुष्यन्त के पुर्नमिलन पर स्पतमांक में दुष्यन्त के प्रति किसी प्रकार कठोर वचन न कहकर अपनी विनम्रता को व्यक्त करती है । राजा के क्षमा मांगने एवं उसके चरणों पर प्रणिपात करने पर वह कहती है -

"उतिष्ठत्वार्य पुत्रः । नूनं में सुचरितप्रतिबन्धकं पुराकृतं तेषु दिवसंषु परिणामाभिमुखमासीद्येन सानुक्रोशशुऽप्यार्यपुत्रो मयि विरतः संवृतः ।। " (अभि.शा.७अंक,पृ.१३३)

यहां पर नायिका का औदार्य [२] अलंकार प्राप्त होता है ।

धैर्य - शकुन्तला तथा राजा दुष्यन्त के स्पतमांक में वार्तालाप के अन्तर्गत नायिका की निरभिमान चंचलता विहीन स्वाभाविक चित्तवृत्ति का वर्णन होने से धैर्य [३] नामक अयत्नज अलंकार पाया जाताहै ।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर अभिज्ञान शाकुन्तलम् की नायिका शकुन्तला में ४ आंगिक, ७ स्वाभाविक तथा ६ अयत्नज अलंकार पाये जाते हैं ।

उसकी कोटि का निर्धारण प्रारम्भ में कन्या, परकीया, कुलजा आदि रूप में होता है, किन्तु गान्धर्व विवाह के पश्चात् उसे स्वकीया श्रेणी में रखा जा सकता है । दशरूपककार [४] तथा साहित्यदर्पणकार [५] ने जो इस कोटि की नायिका के शील, लज्ञा आदि श्रेष्ठ गुण बतलाये हैं, शकुन्तला इनकी साकार प्रतिमूर्ति होने से आदर्श नायिका के रूप में सर्वमान्य है । वस्तुतः वह प्राचीन भारतीय नारियों ने सर्वथा अप्रतिम हैं, इसके अलौकिक शील, सौन्दर्य का सुन्दर निरूपण परवर्ती नाट्य एवं काव्य[६] ग्रन्थों में प्राप्त होता है ।

यथा - "कण्वाश्रमीया कवितेव काम्या कलाधरस्यैव कलेव रम्या ।

सकामयुग्मं हयनुरंजयन्त्यौ ।।
भ्रष्टं मृणालाभरणं विशिष्टं स्रस्तः सपुष्पयः मृदुकेशपाशः । छिन्नश्च तस्याः नवपुष्पहारः संदष्टशय्या मृदितेव दृष्टा ।। (३८, ४०)

२. ना. शा. २४/२६ औदार्य प्रश्रयः सर्वावस्थानुगोवुधैः ११ (उत्तरार्द्ध)
३. ना. शा. २४/२८
४. दश. २/१५ (उत्तरार्द्ध) - स्वीया शीलार्जवादियुक्ता
५. सा. द. ३/५७ (पूर्वार्द्ध) विनयार्जवादियुक्ता गृहकर्मपरा पतिव्रता स्वीया ।
६. दृष्टव्य - "शाकुन्तलीयम्" (निसर्ग-कन्या शकुन्तला) लेखक डॉ. कै. ना. द्विवेदी का संस्कृत काव्य ग्रन्थ, प्रकाशित, अर्वाचीन संस्कृतम् " जनवरी, १९९६ अंक, देववाणी परिषद्, दिल्ली - पारिजातम् ६/६ अप्रैल, १९९१ अंक, पृ. १३-१६,
१. सा. द. ३६६ (पूर्वार्द्ध) दश. २/२०, २१ पूर्वार्द्ध)
२. मा. मा. १०/१ चाटूनि चास्मधुराणि च संस्मृतानि देहं दहन्ति हृदयं च विदारयन्ति ।
३. मा. मा. ३/१४ के पूर्व (मालती, मदयन्तिका लवंगिका ते विविधविधं नृत्यं कृत्वा

चक्षुः शलाकेव सुधामयीयं चानन्दधारेव सुधी मुनीनाम् ।। (शाकुन्लीयम् , ११)
शकुन्तला विधातुस्तु सत्क्रियेव गतिः शुभा । सौन्दर्य-प्रेममूर्तिः सा कालिदास सुकल्पना !।
धन्या निसर्ग कन्येयं प्रेमिकाऽ प्रतिमा भुवः प्रकृतिप्राङ्गणे पुष्टा प्रीतिरीतिप्रकाशिनी ।।
सखिहृत प्राणभूतेव धूतेबाबन्धवायुना । मानिनी वीरमातेयं वात्सल्यार्थं मनस्विनी ।।
पुरुवंशपताकेव भरतप्राणधारिणी । भरतमानसे स्थित्वा भारत कीर्तिवर्धिनी ।।
सती साध्वी सुशीलेयं राजते जनमन्दिरे । पूजयामः इनां भक्तया भारताः सुभक्ताः वयम् ।।
शाकुन्तलीयम् (८०-८४)

मालती माधव की नायिका

भवभूति के महत्वपूर्ण प्रकरण ''मालतीमाधव'' की नायिका मालती है । नाट्यशास्त्रीय दृष्टिकोण [१] से मालती कन्या परकीया नायिका की श्रेंणी में आती है । कन्या होने के कारण वह अपने पिता पद्मावतीश्वर के मंत्री भूरिवसु के अधीन हैं । अतएव वह नायक माधव को छिप-छिप कर अवलोकित करती है । प्रकरण मालती-माधव के अंगी (प्रधान) रस का आलम्बन मालती ही है । नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से परकीया नायिका की कोटियों - कन्यां एवं परोढ़ा में कन्या ही अंगीरस का आलम्बन बन सकती है । अंतः इस आधार पर मालती कन्या परकीया कोटि में आती है ।

१. कालिदास के नाटकों की नायिकाओं के समान मालती भी नारी की प्रकृति के आधार पर उत्तमा परकीया नायिका की समस्त विशेषताओं से युक्त है । यथा ---

(क) मालती अपने परिवेश के परिजनों या प्रियजनों से कदापि अप्रिय भाषण नहीं करती प्रकरण [२] में सर्वत्र उसके प्रिय संभाषण पाये जाते हैं । कामन्दकी स्वयं मालती के प्रिय वचन बोलने की प्रशंसा करती हुई कहती है -- '' प्रीत्या वाचं ददात्यनुवर्तते ....प्रणम्य च याचते ।। मालतीमा. ३/२

(ख) मालती अदीर्घरोषा नवयौवना है । वह प्रकरण में कभी किसी पर कुपित नहीं दृष्टिगत होती है । पंचम अंक में कराला देवी को उसकी बलि देने वाले अघोरघण्ट पर भी वह कपालकुण्डला एवं माधव के समक्ष भी कुपित नहीं होती, जबकि माधव उसपर अत्यन्त क्रुद्ध होकर ललकारता है।

(ग) वह कालिदास की नाट्यकृतियों की नायिकाओं के समान अनेक ललित कलाओं-संगीत शिल्प चित्रकला आदि में निष्णात है । प्रकरण के तृतीय [३] अंक में उसकी सखी लवंगिका की उक्ति से मालती की कलात्मक अभिरुचि का पता चलता है । अपनी सखियों सहित वह विविध प्रकार के समूह नृत्य करने में भी निपुण हैं । सभी महोत्सवों के अवसर पर मालती की संगीत नृत्य-प्रियता परिलक्षित होती है । यथा -लंवगिकोक्ति - ''त्वमपि स्वभावेनैव तस्मिन्नवसरे असंगीतकं नर्तितासि । '' अंक २, पृ. ६१

(.....सर्वप्रकार महोत्सवे नृत्याति । पृ. ४७०

१. मा. मा. १/२२ सा रामणीय कनिधेरधिदेवता वा......वेधाः ।

मा. मा. १/२३ परिमृदितमृणालीम्लानमंगं ....कपोलः ।।

मम. मा. १, १/२८

(घ) मालती का अनिंद्य [1] सौन्दर्य मालविका, शकुन्तला आदि नायिकाओं से कम आकर्षक नहीं है । उसकी सुकुमारता, रमणीयता आदि की झलक प्रकरण के अनेक स्थलों पर पाई जाती है।

उसकी सौन्दर्य-सृष्टि का मूल कालिदास की नाट्यकृति विक्रमोर्वशीयम् की नायिका उर्वशी से भिन्न नहीं प्रतीत [2] होता है । यथा -

''सा रामणीयकनिधेरधिदेवता वा, सौन्दर्यसार समुदाय निकेतनं वा ।

तस्याः सखे ! नियतमिन्दुकलामृणालज्योत्स्नादिकारणमभूत्मदनश्चवेधाः।। मा.मा.१/२२

उर्वशी का सौन्दर्य-स्त्रोत कुछ इसी प्रकार का कालिदास ने वर्णित किया है -

अस्याः सर्गविधौ प्रजापतिरभूच्चन्द्रो नु कान्तिप्रदः, श्रृंगारैकरसः स्वयं नु मदनो मासो नु पुष्पाकरः।

वेदाभ्यासजडः कथं नु विषयव्यावृत्त कौतूहलो निर्मातुं प्रभवेन्मनोहरमिदं रूपं पुराणो मुनिः।। विक्रमो. १/१०

मालती की उत्तमा प्रकृति उसके अनेक आभ्यन्तर [3] गुणों के कारण है । प्रकरण में अनेक स्थलों पर उसकी विनम्रता, उदात्तता, वंशाभिमान, धैर्यपूर्वक परिवार की मर्यादा का ध्यान आदि अनेक विशेषताएं उसे उत्तम प्रकृति की नायिका प्रकट करती हैं । यथा --

ज्वलतु गगने रात्रौ रात्रावखंण्डकलः शशी,
दहतु मदनः किं वा मृत्योः परेण विधास्यतः ।
मम तुदयितः श्लाध्यस्तातो जनन्यमलान्वया,
कुलममलिनं न त्वेवायं जनो न च जीवितम् ।। मा. मा. २/२

२. आचरण की शुद्धता अथवा अशुद्धता की दृष्टि से मालती कुलीना (मंत्रिपुत्री) होने के कारण आभ्यन्तर कोटि के अन्तर्गत आती है । स्वयं यह धीरा नायिका अपने उच्च-निष्क्लंक कुल का संकेत उपर्युक्त धन्द में अपनी सखी लवंगिका से करती है । अतः मालती आभ्यन्तरा नायिका है ।

३. सामाजिक प्रतिष्ठा को ध्यान में रखते हुए मालती पद्मावती पति के प्रतिष्ठित मंत्री भूरिवसु की पुत्री है, जिससे अपने समस्तरीय विदर्भराजमंत्री देवरात के पुत्र माधव की नायिका होने से कोई सामाजिक अप्रतिष्ठा नहीं होती । सौदामिनी [4] तथा कामन्दकी के इस सम्बन्ध में कथन इस तथ्य को पुष्ट करते हैं ।

---

२. मालती. २/६, के पश्चात्, पृ. ११७

३. मालती. २/२

४. मा. मा. १०/ इदमत्र रामणीयकं यदमात्यभरिवसु देवरातयोश्चिरातुसंपूरितो अयमितरस्तेऽपत्यंसम्बन्धरूपोमनोरथः ११/ पृ. ४७१ (सौदामिनी की उक्ति)
मा.म. १०/२४ यत्यप्रागेव मनोरथैर्वृत...............प्रेयस्तदप्युच्यताम् ।।

१. मा. मा. - ८ अंक, प्रवेशक-माधवोक्तिः -, तारथ वामशीलां मालतीमुपावर्तये । ''

२. मा. मा. २/५, ८/७ के पूर्व, पू. ३५६

३. मा. मा. मालती - '' अहो लवंगिकया मालती विप्रलब्धा'', पृ. २८२

४. मालती प्रकरण में कामदशा की वासकसज्जादि ८ दशाओं में कहीं पर स्वाधीन-भर्तृका [१] उत्कण्ठिंता, [२] विप्रलब्धा [३] आदि विविध अवस्थाओं में परिलक्षित होती है ।

(ङ) मालती की उत्तमा प्रकृति उसके उदात्त हृदय तथा उदार गुणों के कारण है । प्रकरण के प्रत्येक अंक में आद्यन्त उसकी उदारता, धीरता तथा शालीनता संलक्षित होती है । वह किसी स्थल पर भी अनुदार नहीं पाई जाती है ।

(च) मालती का माधव केप्रति अतिशय प्रेम किसी भी अवस्था में भी शालीनता की सीमा नहीं लांघता । नगरदेवता के मन्दिर में वह लवंगिका के प्रेम से माधव का आलिंगन कर लेती है, किन्तु उसे वस्तुस्थिति का पता जैसे चलता है, वह सहसा पीछे हट जाती है तथा भयवश कम्पित होने लगती है । प्रकरण के अष्टमांक [४] के प्रारम्भ में स्वच्छन्द तथा कामोद्दीपक वातावरण में माधव द्वारा अनेक अनुनय विनय किये जाने पर भी नवपरिणीता मालती ठीक वैसा ही आचरण करती है जैसा कि उच्चवंशीद्भवा शिष्ट एवं सुसंस्कृत भारतीय नववधू को करना चाहिये ।

इसके पूर्व उसकी कुलीनता, सुशीलता, प्रेमरसपूर्ण रमणीयता आदि अप्रतिम गुणों को अभिव्यक्त करता हुआ मकरन्द कामन्दकी से तथ्यपूर्ण वर्णन करता है -

"श्लाघ्यान्वयेति नयनोत्सवकारिणीति, निर्व्यूढ़ सौहृदरसेति गुणोऽवलाति ।

एकैस्मेव हि वशीकरणं गरीयो, पुष्पाकमेव नियमित्यथ किं ब्रवीमि ।। मा. मा. ६। १७

अपनी प्रिय सखी लवंगिका द्वारा बार-बार कहे जाने पर भी मालती माधव के साथ प्रेम विवाह (Love Marriage) करने को तत्पर नहीं है, क्योंकि उसके हृदय में अपने माता-पिता के लिए पर्याप्त सम्मानपूर्ण स्थान है । तथा वह उनके विरुद्ध आचरण नहीं करना चाहती । कामन्दकी भी उसे कालिदास की अमर नाट्यकृति अभिज्ञानशाकुन्तलम् की नायिका शकुन्तला तथा भास के उदयन- चरित नाटकों की नायिका वासवदत्ता की प्रेम कथा सुनाकर गान्धिर्वरीति से विवाह करने का परामर्श देती है, किन्तु ऐसा करना वह अपनी कुल मर्यादा के विरुद्ध एवं अपने लिए भी लज्जा जनक मानती है । अपने माता पिता के गौरव की रक्षा के लिए भी लज्जाजनक मानती है । अपने माता पिता के गौरव की रक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग करने के लिए भी वह तत्पर है।

डा. वृजवल्लभ [५] शर्मा की दृष्टि में मालती मुग्धा कुलकन्या के रूप में अपने अनिर्वचनीय सौन्दर्य के कारण अनुपमेय है । स्व. आचार्य पं. चन्द्रशेखर [६] पाण्डेय भी मालती-माधव की समालोचना में मालती को एक कुलवती, सच्चरित्र, आदर्श भारतीय महिला रत्न रूप में देखते हैं । उनके मतानुसार मालती के स्वभाव में विनय एवं माधुर्य का अपूर्व मेल दृष्टिगोचर होता है ।

---

४. मा. मा. ८ अंक, पृ. ३४६ मालती - "नाहं किमपि जानामि (इत्यर्धोक्ते लज्जां नाटयति)

५. भवभूति के नाटक (म.प्र. हि.ग्र. अकादमी सं.), भोपाल, १९७३, पृ. १२०

६. मालतीमाधव की संक्षिप्त समालोचना, (स्वर्णजयन्ती स्मारिका, वि. सि. सनातनधर्म कालेज, कानपुर), १९७१, पृ. ३३,

१. मा. मा. अंक ४, पृ. १९२ (लाला सीताराम कृत हिन्दी अनुवाद द्रष्टव्य ये पंक्तियां)
"परलोक में सुनि मोहि दह दुख पाइ सोच करै नहीं ,
तन रतन सुबरन छीन करि संताप अग्नि जरै नहीं ।

यद्यपि माधव के वियोग में उसे असह्य वेदना का अनुभव होता है, किन्तु माधव के समान वह हृद्गत अपनी व्यथा की गाथा गाती नहीं फिरती । माधव के प्रति उसका अनुराग अचलहै, उस वियोग एवं विपत्ति के समय वह अपने जीवन से अधीर हो उठती है तथा अपनीप्रिय सखी लवंगिका[1] से जो प्रार्थना करती है, उससे उसके अप्रतिम प्रेम का पता चलता है जो सर्वथा निःस्वार्थ एवं आदर्श है । इसमें आदर्श भारतीय प्रेम का प्रतिबिम्ब परिलक्षित होता है ।

स्व. पं. चन्द्रशेखर पाण्डेय [2] के मतानुसार मालती के प्रेम में प्रेम एवं कर्त्तव्य की अन्तर्द्वन्द्व दिखलाया गया है । मालती को प्रेम में प्राण परित्याग करना स्वीकार्य है, किन्तु कर्त्तव्य को तिलांजलि देकर अपना अभीष्ट सिद्ध करना नहीं। वंश मर्यादा के विरुद्ध गान्धर्व विवाह-प्रस्ताव का निषेध करने में हम उसके चरित्र का पूर्ण विकास देखते हैं । यहीं भारतीय तथा पाश्चात्य कुल कामिनियों में क्या अन्तर है, इसका भी हमें पूर्ण आभास मिलता है ।

मालती के इस चरित्रिक वैशिष्ट्य की तुलना न केवल भास कालिदास के नाटकों की श्रेष्ठ नायिकाओं से, अपितु शेक्सपियर की मिरेण्डा के इस वाक्य से की जा सकती है जो उसने फर्डिनेण्ड से कहा था -

"I am your Wife, if you will merry me/if not, I'ill die your maid: to be your fellow, you may deny me, I'll beyour servent whether you will or not."

यह कैसी प्रगल्भतापूर्ण उक्ति है । कैसा धृष्ट एवं निर्लज्ञ आत्मसमर्पण है । भारतीय त्यागमय प्रणय भाव और इसमें कितना वैषम्य है । यहां इस उपर्युक्त कथन में कैसी अधीरता तथा धृष्ट आग्रह है ।

संक्षेप में मालती का चरित्र आदर्श है । उसमें उदारता, शालीनता, निश्छलप्रेम, लज्ञापूर्ण विनम्रता, सुग्धत्व के साथ कुलीनता आदि नाना गुणों का अद्भुत सांकर्य है ।

नायिका मालती के भावगत अलंकार

विवेच्य प्रकरण की नायिका मालती में रस के आधारभूत भागवत [3] अनेक अलंकार विद्यमान हैं । इन अंगज, अयलज तथा स्वाभाविक अलंकारों से मुग्धा परकीया नायिका मालती के रूप, लावण्य, सद्‌गुणसूचक व्यक्तित्व का और निखार हुआ है ।

प्रिय सखीबस जतन ऐसो साजियो नित प्रीति सों,
जो हृदय निज हारे नहीं मम प्राणप्रिय या रीति सों ।। "

२. मालती माधव की सं. समालोचना, (पं. चन्द्र शेखर पाण्डेय), ऋतम्भरा (स्वर्ग जयन्ती स्मारिका, वि. सि. सनातन धर्म कालेज, कानपुर) १६७१ पृ. ३४.

३. नाट्यशज । २४/८

१. मा. मा., अंक ४, (पं. शेषराज शर्मा, चौ. सं. सी. संस्करण) वाराणसी, १६७१, पृ. १६१-१६२

२. ना. शा. २४/६-१०, दश. २/५१

३. ना. शा. २४/११, दश. २/५२ स एव हेला सुव्यक्त-श्रंगाररस सूचिका ।

आंगिक अलंकार

भाव - प्रकरणं के चतुर्थ अंक में मालती के लवंगिका के प्रति कथन में मनः स्थिति औत्सुक्य, निराशा, निर्वेद आदि अनेक भाव व्यक्त होने से भाव नामक अलंकार है । यथा -

मालती - (अपवार्य) महानुभाव लोचनानन्दकर एतावद् दृष्टोऽसि ....परिणतमिदानीं जीविततृष्णायाः फलम् । परिनिष्ठतो देवहतकस्य दारुणसमारम्भ परिणामः । ....कं वाअशरणा शरणं प्रतिपद्ये । '' [१]

हाव - मालती के अंगों में विकार उत्पन्न करने वाला रतिभाव (श्रृंगार) हाव [२] रूप से अधोलिखित पद्य में अभिव्यक्त है ----

''स्खलयति वचनं ते संश्रयत्यंगमंग,
जनयति मुखचन्द्रोद्भासिनः स्वेदविन्दून् ।
मुकुलयति च नेत्रे सर्वथा सुभ्रु खेदम्,
- त्वयि विलसति तुल्यं बल्लभालोकनेन । । मा. मा. ३/८

यहां मालती के अंगों में श्रंगारिक विकार (शब्दों का लड़खड़ाना, नेत्रों का सुकुलित होना, मुख पर पसीना आना आदि) से हाव नामक आंगिक भाव है ।

हेला - जब उपरिवर्णित हाव स्पष्ट रूप से मालती में रतिभाव को सूचित करने लगता है तो वहां उसका हेला [३] नामक भावगत अलंकार है ।

यथा - इस ''स्खलयति वचनं ....वल्लमालोकनेन'' ३/८ के पश्चात् ''मालतीं लज्ज्ञां नाटयति'' [४] में हेला अलंकार है ।

विच्छित्ति - स्वल्प वेशरचना (आकल्प रचना) मालती की प्रिय-समागम की अनुभूति में उसकी शोभा को प्रस्तुत पद्य में सम्वर्धित होने के कारण विच्छित्ति [५] नामक अलंकार है --

''नीवीबन्धोच्छ्वसनमधर संस्पन्दनं ....चेतना च । मा. म. २/५

भय का समवेत रूप से होना किलकिंचित [६] भाव है । प्रकरण के तृतीयांक में कामन्दकी मालती के इस आंगिक भाव को लक्ष्य कर कहती है -

---

४. मा. मा . अंक, पृ. १३७, तथा मालती - नाहं किमपि जानामि
इसी प्रकार अंक ८ में श्लोक ५ के पूर्व ''इत्यर्धोक्ते लज्ज्ञां नाटयति'' में 'हेला' भावगत अलंकार है ।

५. ना. शा. २४/१२, दश. २/६२ आकल्परचना अल्पा अपिविच्छित्तिः कान्तियोजकृत्

६. ना. शा. २४/१८, दश. २/६४

१. मा. मा. ६/१२ एकीकृतस्त्वचि निषिक्त इवाक्यीड्य, निर्भग्नयीनकुचकुड्मल यानया मे । ... के पश्चात् पृ. २८३

२. ना. शा. २४/२०, दश. २/६६,

रहसि रमते, प्रीत्या वाचं ददानुवर्तते ।
गमनसमये कण्ठे लग्ना निरुध्य मां,
सपदि शपथैः प्रत्यावृत्तिं प्रणम्य च याचते ।। मा. मा. ३/२

कुट्टमित - मालती का माधेव द्वारा गाढ़ आलिंगन किये जाने पर लवंगिका के समक्ष उससे जो क्रोध प्रकट कर वह यह कहती है ---

"अहो लवंगिकया मालती विप्रलब्धा ।" इसमें नायिका का कुट्टमित [१] अलंकार प्रकट है।

ललित -नायिका मालती का ग्रीवा, सुख, नेत्रादि अंगों को स्निग्धतापूर्वक चलाना ही उसका ललित [२] अलंकार है । यथा --

"यान्त्या मुहुर्वलितकन्धरमाननं तदावृत्त वृन्तशतपत्रनिभं वहन्त्भ । दिग्धो अमृतेन च विषेण च पक्ष्मलाक्ष्या । गाढ़ं निखात.इव मे हृदये कटाक्षा ।। मा. मा. १/३०

अयत्नज अलंकार

शोभा - मालती के रूप उपभोग तथा तारुण्य से उसके अंगों का सौन्दर्य सम्वर्धित हो जाना ही उसका शोभा [३] नामक अयत्नज अलंकार है । -- यथा --

माधव - सम्प्रति रमणीयतरा मालती -

ज्चलयति मनोभवाऽग्निं मदयति हृदयं कृतार्थयति चक्षुः ।
परिमृदित चम्पकावलि विलासलुलिता लसैरंगै : ।

यहां माधव की दृष्टि में मालती के अलसाये चंपा से गोरे अंगों की सम्वर्धित शोभा सम्वर्धित होने से उसके हृदय को मदयुक्त एवं संतप्त कर रही है । अतः यहां नायिका का शोभा [४] अलंकार है ।

धैर्य - नायिका मालती की विषम परिस्थिति में चंचलता से रहित तथा आत्मश्लाघा - शून्य चित्रवृत्ति ही उसका धैर्य [५] नामक अलंकार है । यथा - अपनी प्रिय सखी लवंगिका से बिना धैर्य छोड़े मालती अपनी अविचल कुलनिष्ठा को इन शब्दों में व्यक्त करती है - ज्चलतु गगने रात्रौ .... कुलममलिनं न त्वेवार्था जनौ न च जीवितम् ।। मा. मा. २/२

---

३. ना. शा. २४/२२, दश. २/६८
४. ना. शा. २४/२५, दश. २/५३
५. ना. शा. २४/२८, दश. २/५६ चापला अविहता धैर्य चिद्वृत्तिरवित्कथना ।
१. भवभूति के नाटक, भोपाल, १६७३, पृ. १२० ।
२. मा. मा. ४/८ के पूर्व मालती की उक्ति-परिणतमिदानीं जीविततृष्णायाः
३. सा . द. ३/१६५ हर्षस्त्विष्टावाप्ते मनः प्रसस्त्विऽश्रुगदगदादिकरः ।
मा. मा. ६/८ - म्लानस्य .....वचोऽमृतानि ।

.... कुलममलिनं न त्वेवार्था जनी न च जीवितम् ।। मा. मा. २/२

इस प्रकार हम देखते हैं, भवभूति के प्रकरण मालतीमाधव'' की नायिका मालती आंगिक, अयत्नज और स्वाभाविक अलंकारों से युक्त है । डा. वृजवल्लभ [१] शर्मा मालती के इन उपर्युक्त भावगत अलंकारों से उसके रूप यौवनपूर्ण व्यक्तितत्व को अत्यन्त आकर्षक मानते हैं । मालती [२] द्वारा अभिव्यक्त निर्वेद, हर्ष, व्याधि, दैन्य, अवहित्था, चिन्ता, औत्सुक्य आदि अनेक भावों की ध्वनि उसके इन्द्रधनुषी व्यक्तित्व को अत्यन्त रमणीय रूप प्रदान करती है । भवभूति ने अनेक स्थलों पर मालती के उन सात्विक भावों की व्यंजना भी अत्यन्त चारुतापूर्वक की है, जिन्हें काव्यशास्त्र [३] के आचार्यों ने इस प्रकार गिनाया है -

''स्तम्भः स्वेदनुऽथरोमांचः स्वरभंगो ऽथवेपथुः ।
वैवणर्यमश्रु प्रलय इत्यष्टौ सात्विकाः स्मृता ।। ''[४]

इन सात्विक भावों के अतिरिक्त रस के आधारभूत अन्य [५] भावों की भी ध्वनि से मालती के व्यक्तित्व का भवभूति [६] ने सुन्दर निरुपण [७] कालिदास के समान किया है,[८] जिसका अनेक अध्येताओं[९] ने अपनी दृष्टि से अध्ययन करते हुए हमारा ध्यान आकृष्ट किया है ।

संक्षेप में नायिका मालती धीरा, कुलीना, कन्या, परकीया के सभी गुणों से अभिमण्डित है ।

महावीर चरित की नायिका

भवभूति के वीर रस प्रधान नाटक ''महावीर चरितम्'' की नायिका सीता की गणन स्वकीया नायिका की श्रेणी में की जाती है । सामान्यतः वीर रस प्रधान नाटक में स्त्रीपात्रों की बहुलता नहीं पाई जाती है तथा नाटककार को भी इतना अवकाश नहीं प्राप्त हो पाता कि वह उनके चरित्र चित्रण का अधिक विस्तार कर सके । डा. वृजवल्लभ [१०] शर्मा के अनुसार इसी कारण नाटक की नायिका

---

१. भवभूति के नाटक, भोपाल, १९७३, पृ. १ २० ।
२. मा. मा. ४/८ के पूर्व मालती की उक्ति-परिणतमिदानीं जीविततृष्णायाः
३. सा . द. ३/१९५ हर्षस्त्विष्टावाप्ते मनः प्रसत्त्विऽश्रुगदगदादिकरः ।
मा. मा. ६/८ - म्लानस्य .....वचोऽमृतानि ।
४. सा. द. ३/१९४, मा. मा. २/२ मनोरोगः विषमिव ...... न भवती ।
५. सा. द. ३/१४५ - मा. मा. २/१ ज्वलतु गगने ....जीवितम् ।
६. सा. द. ३/१, मा. म आ., अंक ७, पृ. ३२२''उद्विग्नाअस्मि सहवासिन्यामालत्या''
७. सा. द. ३/१७१, मा. मा. १/१६ गाढोत्कण्ठा लुलितलुलितैरंगकैस्ताम्यतीति
८. सा. द. ३/१५९, मा. मा. १/१६
९. पारिजातम् २/४, नवम्बर, कानपुर १९८३ द्रष्टव्य ''मालती माधवेभावध्वनिः'' - शिवबालक द्विवेदी का लेख पृ. २६-३३
कालिदास और भवभूति के नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन, डा. सुरेन्द्रदेव शास्त्री, मेरठ, १९६९ पृ. १४६-१४७,
१०. भवभूति के नाटक, भोपाल १९७३, पृ. ११३

सीता के चरित्र का क्रमिक विकास नाटक में परिलक्षित नहीं होता है । इसका तात्पर्य यह नहीं है कि सीता का चरित्र चित्रण प्रस्तुत नाटक में अच्छा अंकित नहीं है । डा. वासुदेव विष्णुमिराश्री [१] की दृष्टि में यद्यपि इस नाटक में नारी पात्र प्रमुख नहीं हैं, तथापि सीता का चरित्र चित्रण पर्याप्त प्रवीणता पूर्वक भवभूति ने किया है ।

१. ''महावीरचरितम्'' की नायिका सीता स्वकीया नायिका की श्रेणी में आती है, जिसमें नाट्यशास्त्रीय [२] दृष्टि से उत्तमा प्रकृति की स्वकीया नायिका के समस्त सद्‌गुण विद्यमान हैं ।

(अ) सीता अपने परिवेश के परिजनों या प्रियजनों से कदापि अप्रिय स्भाषण नहीं करती। नाटक में सर्वत्र उसके प्रिय संभाषण प्राप्त होते हैं ।

(ब) सीता अदीर्घरोषा नवयुवती है । वे किसी पात्र पर सामान्यतः कुपित नहीं होती, यदि किसी पर क्रुद्ध होती है तो कारण विशेष पर थोड़ी देर के लिए ।

(स) उनकी ललित कलाओं संगीत, नृत्यचित्र कलादि में भी पूर्णअभिरुचि प्रतीति होती है।

(द) वे अपने अनिन्द्य सौन्दर्य के कारण नायक राम द्वारा काम्य हैं । स्वयं भी राम के सौम्य रूप को देख कर वे महर्षि विश्वामित्र के आश्रम में प्रसन्न हुई ।

(ध) सीता की उत्तमा [३] प्रकृति उनकी उदारता, विनम्रता अकुटिलता पतिव्रत आदि अनेक उत्तम गुणों के कारण है ।

२. आचरण की शुद्धता या अशुद्धता के आधार पर सीता कुलीना कन्या (राजपुत्री) होने के कारण आभ्यान्तर कोटि [४] के अन्तर्गत आती है ।

३. सामाजिक प्रतिष्ठा को दृष्टि में रखते हुए सीता मिथिलाधिपति के राजवंश में उत्पन्न है तथा इक्ष्वाकुवंश की वधू (नृप पत्नी) होने से समादृत है।

४. नृप पत्नी होने से सीता शील के चारों गुणों, ललिता, उदात्ता, निभृता, धीरा से सम्बन्धित [५] हैं ।

५. अंग रचना एवं अन्तः प्रकृति की दृष्टि से दिव्य सत्तवादि २१ प्रकार की नारियों में से सीता नाट्यशास्त्रानुमोदित [६] मानवी कोटि की नारी के सामान्य गुणों से समन्वित हैं ।

''महावीरचरितम्''[७] के प्रथम अंक में राम द्वारा धनुष भंग के पूर्व तक सीता कन्या रूप में, किन्तु इसके पश्चात् सर्वत्र नाटक में स्वकीया रूप में दृष्टिगत होती है । वह शील, लज्ञा, विनम्रता,

१. Bhavabhuti, Dr. V.v. Misashi, Delhi, 1974, P. 11_12.
"The female characters are not prominent in the present play but Bhavabhuti has depicted Sita's persenality with fair skill .

२. ना. शा. २५/३७ - ३६

३. ना. शा. २४/१४३

४. ना. शा. २४/१४५-१४६

५. ना. शा. ३४/२४

६. ना. शा. २४/११०-१११

७. महा. च.कन्या - ''सौम्यदर्शनौ खल्वेतौ'', पृ. १८

पातिव्रंत, सच्चरित्रता, अकुटिलता, उदारता आदि अनेक गुणों से सम्पन्न है । राम से उसे प्रारम्भ से प्रेम है । नाटक के प्रथम अंक में जब वह विश्वामित्राश्रम में राम का दर्शन करती है तब सन्तुष्ट होकर कहती है - सौम्यदर्शनोअयं (महा. च. । अंक)

यही सीता का सुकुमार भाव बीज रूप में आगे स्नेह का रूप प्राप्त कर लेता है ।

राम को ताडकावध के लिए जब विश्वामित्र आज्ञा देते हैं तभी सीता दुःखी एवं हताश होकर कह उठती हैं -

"हा धिक् (एष एवात्र नियुक्तः)" [१] सीता का यही स्नेह एवं चिन्ताभाव आगे उद्दाम प्रणय का रूप धारण कर लेता है । राम की ताडका विजय पर उन्हें आश्चर्य के साथ हर्ष हुआ । धर्नुभँग के समय मनोवांछित सिद्धि पर उर्मिला द्वारा बधाई देने के साथ आलिंगन किये जाने पर वे प्रहृष्ट ही नहीं अपितु लज्जित भी हुई । कन्या मुग्धा नायिका की यह लज्जा डा. वृजवल्लभ शर्मा [२] के मतानुसार स्वाभाविक है । उर्मिला के लक्ष्मण द्वारा पाणिग्रहण पर उनकी प्रसन्नता और बढ़ जाती है जिसके सम्बन्ध में म. म. मिराशी का विचार दृष्टव्य है -

At the prospect of Urmila's marriage with Lakshman she is filled with joy, for she would not now be separated from her." [3]

सीता के विवाह के पश्चात् परशुराम के कन्यान्तःपुर प्रवेश कर राम को द्वन्द्वयुद्ध की चुनौती देने पर सीता की चिन्ता के साथ व्यग्रता बढ़ जाती है । वे राम को आगे बढ़ता हुआ देखकर घबरा जाती हैं तथा परशुराम की क्रूर प्रकृति से परिचित होने के कारण अपना शील, संकोच छोड़कर राम को रोकने के लिए पकड़ लेती हैं । इस विषम परिस्थिति ने मुग्धा सीता को प्रौढा के समान आचरण करने को विवश कर दिया । [४] इस प्रकार राम के प्रति सीता का अन्य प्रेम परिलक्षित होता है ।

सीता पूर्ण सच्चरित्रा, पतिव्रता, सरला एवं विनम्रा है । कहीं भी कुटिलता उनके चरित्र में दृष्टिगोचर नहीं होती । नाटक के [५] सप्तांक में देवगण उनके सच्चारित्र्य का साभिनन्दन समर्थन करते हैं तथा अग्निपरीक्षा में खरी उतरी सीता का समादर करने के लिए राम से निवेदन करते हैं ।

सीता की सखियों के इस सम्वाद "उद्धर्तितमिदानीं प्रियसख्या रसान्तरेण लज्जालुत्वम्" (अर्थात् हमारी प्रिय सखी की स्नेहाधिक्य के कारण लज्जा ढीली पड़ रही है) से सीता का सलज्ज होना स्वयं सिद्ध तथ्य है ।

यद्यपि सीता की करुण कथा का विस्तार विवेच्य नाटक में नहीं है, तथापि इतना अवश्य स्पष्ट है कि राम से पृथक् के अपने अस्तित्व की कल्पना भी नहीं करतीं । लंका - विजय के उपरान्त प्रत्यागमन के समय राम के उन वियोगावस्था के विलाप किये जटायु वध आदि स्थलों को देखकर सम्पूर्ण दोष वे अपने ऊपर लेकर उदारता दिखाती हैं ।

इस प्रकार "महावीरचरितम्" नाटक में सीता के स्वभाव की सुकुमारता तथा उदारता, प्रेम के अतिरिक्त अन्य गुणों पर अधिक प्रकाश नहीं डाला गया है ।

---

१. म. च., अंक १, पृ. ३५ सीता की उक्ति

२. भवभूति के नाटक, भोपाल, १९७३ पृ. ११४

३. Bhavabhuti, Miradhi. v. v., Delhi. 1974. p. 150

४. महा. च, पृ. ७६-८४ सीता के संवाद

५. महा. च. ७/३

नायिका के भावगत अलंकार

नाटककार, भवभूति भावांभिव्यंजना में कालिदास से किसी प्रकार कम नहीं हैं । नायिका सीता में सभी प्रकार के भावों [१]- चिन्ता, उद्वेग, हर्ष विस्मय, भय, लज्ज़ा, अनुराग, रोमांच, स्वेद आदि का चित्रण नाटककार ने अत्यन्त सिद्धहसतूतापूर्वक किया है, जिससे प्रकारान्तर में नायिका के अंगज, अयत्नज तथा स्वाभाविक भावगत अलंकार भी स्वतः अभिव्यक्त हो उठे हैं, जिनमें हाव, भावविच्छिति, किलकिंचित, ललित, शोभा, धैर्य आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

इन आंगिक, अंयत्नज एवं स्वाभाविक भावगत विविध [२] अलंकारों से अभिमण्डित सीता सती-साध्वी, पति परायण तथा आदर्श भारतीय नारी के रूप में संसार के लिए पूजनीया बनी हुई हैं। नाट्यशास्त्रीय दृष्टिकोण के अनुसार भी सीता स्वकीया, धीरा, मुंग्धा, उत्तमा, आदर्श नायिका कहलाये जाने के सर्वथा योग्य हैं । म. म. मिराशी [३] प्रभृति विद्वानों ने स्वकीया नायिका के भावगत रूपों की हृदयंगम करते हुए ये समीचीन विचार व्यक्त किए हैं --

"Bhavbhuti has sepicted Sita's personality with fair skill............All the emotions are skilfully depited in the narrative." [3]

संक्षेप में सीता स्वकीया आदर्श नायिका के रूप में भवभूति के ही नहीं अपितु कालिदास के नाटकों की नायिकाओं से गुणों में न्यून नहीं है । [४]

उत्तररामचरित की नायिका

"उत्तर रामचरित" नाटक की नायिका सीता है तथा विशिष्ट गुणयुक्त होने के कारण प्रमुख स्थान रखती है । [५] सीता की गणना स्वकीया नायिका की श्रेणी में करना ही समीचीन प्रतीत होता है, क्योंकि स्वकीयां नायिका के नाट्य शास्त्रानुमोदित सभी गुण उसके चरित्र में प्राप्त होते हैं । वह नायक राम की विवाहिता पत्नी है तथा शीलवती, सुकोमल स्वभावा एवं लज्ज़ावती गुण से युक्तहै । १. उसकी उदारता एवं उत्तम प्रकृति के कारण सीता उत्तम प्रकृति की नायिका है, क्योंकि वह अपने प्रियजनों, परिजनों आदि से अप्रिय सम्भाषण नहीं करती । सर्वत्र प्रिय सम्भाषण नाटक में उसके

---

१. महावीरचरितम् -पृ. ८० (प्रथम पंक्ति)

२. ना. शा. २४/५ "आदौ त्रयो अंगजा प्रोक्ता दश स्वाभाविका परे ।
अयत्नजास्तथा सप्त रसभावोपवृंहिताः ।। "
दश. २/४७ यौवने सत्त्वजाः स्त्रीणामलंकारास्तु विशतिः ।

३. Bhavbhuti, Delhi, 1974. P. 150

४. इस सम्बन्ध में ए. वी. कीथ का मत समीचीन नहीं प्रतीत होता है । वह सीता को कालिदास के सांचे में ढलाहुआ गुणों की छाया से रहित मानते हैं । "संस्कृत नाटक" (अनु. उदयभानु सिंह), दिल्ली १९६७ पृ. २००, २०७.

५. Bhavbhuti, V. V. Mirashi. Delhi, 1974. p. 278 .
"Sita is the principal female character. She loves Ram deeply and for his company shares the hardships of forest life."

पाये जाते हैं । वह अदीर्घरोषा रमणीमणि है तथा संगीत नृत्यादि में दक्ष तथा अभिरुचि सम्पन्न हैं । अपने अनिन्द्य सौन्दर्य के कारण राम द्वारा काम्य भी है तथा देशकाल के अनुकूल आचरण करने वाली है ।

२. आचरण की शुद्धता अथवा अशुद्धता के आधार पर सीता राजपुत्री तथा राजवधू होने के कारण आभ्यन्तर कोटि के [1] अन्तर्गत आती है जिसके रूप सौन्दर्य के श्रव्य-दर्शन एवं अंग की लीलामय चेष्टाओं [2] से नायक राम में काम समुत्पत्ति दृष्टिगत होती है ।

३. सामाजिक प्रतिष्ठा को ध्यान में रखते हुए सीता राजा जनकनन्दिनी राजवंशोद्भवा तथा राजा राम की सहधर्मचारिणी होने से राजपत्नी कुलजा रूप में प्रतिष्ठित है ।

४. राजकन्या एवं राजवधू होने से सीता ललिता, उदात्ता, निभृता एवं धीरा इन चारों गुणों से युक्त हैं ।

६. नायिका की कामदशा की अवस्था को ध्यान में रखते हुए सीता नाटक के प्रारम्भ में स्वाधीन[3]पतिका तदुपरान्त प्रोषितपतिका दृष्टिगत होती है ।

७. अंगरचना एवं अन्तः प्रकृति के आधार पर दिव्यसत्त्वादि २१ प्रकार की नारियों में सीता मानवी कोटि की नारियों के सभी सामान्य गुणों से समन्वित हैं ।

उत्तररामचरित की नायिका सीतारम की प्राणप्रिया सहधर्मिणी है, राम के प्रति उनका असीम अनन्य एवं निश्चल प्रेम ही उनके महान चरित्र का द्योतक है । डा. सुरेन्द्रदेव [4] शास्त्री की दृष्टि में सीता नितान्त आमत्मचिन्ता शून्य है, ऐसा प्रतीत होता कि मानो उनका अस्तित्व ही राम में लीन हो चुका हो । नाटक के प्रारम्भिक अंक में चित्रदर्शन [5]- प्रसंग में उनका ध्यान सदैव राम की ओर अतीत की घटनाओं में आकृष्ट होता है । इसमें सर्वत्र एक अप्रतिम भाव की प्रधानता परिलक्षित होती है और वह है राम के प्रति सीता का अतुलनीय एवं अगाध प्रेम ।

यद्यपि राम लौकापवाद के कारण सीता को निर्वासित कर देते हैं, तथापि वे उनके चरित्र में पूर्ण विश्वस्त हैं । सीता के चरित्र की पावनता के सम्बन्ध में विलाप करते हुए स्वयं पति राम कहते हैं --

---

१. दश. २/२४, कालिदास और भवभूति के नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन, डा. सुरेन्द्रदेव शास्त्री, मेरठ, १६६६ पृ. १५०

२. उत्तर. ३/१६ भ्रमिषु कृतपुटान्तमर्ण्डिलावृत्तिचक्षु ..... कर-किसलयतालैमुग्धया नर्त्यमानं......

३. उत्तर. १/२७ किमपि किमपि मन्दं मन्दमासक्तियोगात् ....रात्रिरेवं व्यरंसीत्
१/३८ इयं गेहे लक्ष्मी रियमृतवर्ति.........परमसह्यस्तु विरहः ।

४. कालिदास और भवभूति के नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन, मेरठ, १६६६ पृ. १५०

५. उ. रा. च. सीता - " क एते उपरि निरन्तर स्थिता उपस्तुवन्ति आर्युपुत्रम्' पृ. २६, २७ उ. रा. च. सीता - अहो । दलन्नवनीलोत्पलश्यामल ....आर्युपुत्र आलिखितः पृ. २६
"सीता - अहो, दिनकरकुलनन्दन एवमपि मम् कारणात् क्लान्त आसीत् । "

"राम - हे देवि ! यजनसम्भवे ! हा स्वजन्मानुग्रह पवित्रित वसुन्धरे ! ....हा ...... पावक वशिष्ठारुन्धती प्रशस्तशील शालिनि ।

त्वया जगन्ति पुण्यानि त्वय्यपुण्या जनोक्तयः ।

नाथवन्तस्त्वया लोकास्त्वमनाथा विपद्यते ।। " उ. रा. च. १/४३

पिता राजा जनक भी सीता के पवित्र आदर्श चरित्र की महिमा गान करते हुए पृथ्वी को निर्दय बताते हुए अपनी वेदना इस प्रकार व्यक्त करते हैं -

"त्वं वह्निर्मुनयो वशिष्ठगृहिणी गंगा च यस्या विदु --

र्माहात्म्यं यदि वा रघोः कुलगुरुर्देवः स्वयं भास्करः ।

विद्यां वागिव यामसूत भक्ता शुद्धिं गताया पुनः --

स्तस्यास्त्वददु हितस्तथा विशसनं किं दारुणे मृष्यथाः " उ. च. ४/५

पति-पिता के अतिरिक्त गुरुपत्नी अरुन्धती की वेदनामयी यह उक्ति भी सीता के उज्ज्वल गुणयुक्त चरित्रको उजागर करती है --

"अग्निरिति वत्सां प्रति लघूं-न्यक्षराणि । सीतेत्येव पर्याप्तम् । वत्से ।

शिशुर्वा शिष्या वा.........गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिंग न च वयः । " उ. च. ४/११

इतना ही नहीं गंगा एवं पृथ्वी भी उन्हीं के सम्पर्क से अपने को पवित्र मानती हैं ।[1] गंगा स्वयं समुपस्थित होकर जनसाधारण के मध्य घोषणा करती हुई अरुन्धती से सीता के सच्चरित्र के सम्बन्ध में कहती हैं -

अरुन्धति ! जगद्वन्द्ये ! गंगापृथ्व्यो जुषस्व नौ ।

अर्पितेयं तवौताभ्यां सीता पुण्यव्रता वधूः ।। उ. रा. च. ७/८

उपर्युक्त उद्धरणों से सीता के पावन आचरण का स्पष्ट परिचय प्राप्त हो जाता है ।

इसके अतिरिक्त सीता सुकोमल स्वभावा है । उनके नेत्र राम की पीड़ा को देखकर अश्रुपूर्ण हो जाते हैं । तृतीय अंक में वे राम को मूर्च्छित देखकर स्वयं भी मूर्च्छित हो जाती हैं । वे अत्यन्त सलज्ज भी हैं । अपने गुरुजनों के उपस्थित होने के कारण एकाएक मूर्च्छित राम को चैतन्य करना नहीं चाहती तथा एतदर्थ तमसा से प्रार्थना करती हैं । सप्तम[2] अंक में भी मूर्च्छित राम को अरुन्धती की आज्ञा से चेतनता प्रदान करती हैं ।

सीता का हृदय विशाल तथा उदार है । वन के पशु पक्षियो, वृक्ष आदि के लिए भी उनके हृदय में कालिदास के "अभिज्ञान शाकुन्तलम" की शकुन्तला के समानपूर्ण प्रेम है । वे गम्भीर स्वभावा होने पर भी विनोदशीला भी हैं । चित्रदर्शन प्रसंग में लक्ष्मण से वे उर्मिला की ओर संकेत करके विनो दपू र्व क पू छती हैं -- "वत्से इयमपरा का' इससे उनकी परिहास प्रियता का पत्ताचल है । डा. इन्द्रपाल सिंह "इन्द्र"[3] के मतानुसार भवभूति ने सीता की आत्मिक पवित्रता, निश्छल प्रेम,

---

१. उ. रा. च. ७/८, आवयोरपि यत्संगात्यवित्रत्वं प्रकृष्येते । पृ. ४६

२. उ. रा. च. ७/१६

३. संस्कृत नाटक समीक्षा, कानपुर , १६७७ पृ. २५३

अभूतपूर्वसहनशीलता दृढ़ता एवं मृदुता का अत्यन्त कुशलता से चित्रण किया है, यह सर्वथा तथ्यपूर्ण है कि स्वकीया नायिका के रूप में वे सभी गुणों एवं विशेषताओं से युक्त है ।

नायिका के भावगत अलंकार

"उत्तर रामचरित [१] " में भवभूति के द्वारा नायिका के अनेक अंगज, [२] स्वाभाविक [३] तथा अयत्नज भावगत [४] अलंकारों को कुशलतापूर्वक व्यक्त किया गया है, जिससे सीता का व्यक्तित्व और उद्भासित हो उठा है । इन भावगत अलंकारों [५] में, भाव, हाव, विच्छिति, किलकिचिंत्, ललित, शोभा आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

इन भावगत अलंकारों से विशेषतः नाटक के तृतीय [६] अंक में नायिका सीता के अन्तः सौन्दर्य की श्री वृद्धि हुई है तथा भाव-व्यंजना भी रसानुकूल दृष्टिगत [७] होती है । म.म. वासुदेव विष्णु मिराशी का इस सम्बन्ध में यह विचार समीचीन प्रतीत होता है --

"Bhawabhuti has drawn lovely pen pictures of all these in the3 act of uttar Ram carita. she is deeply distressed, because she was separated from her c hildren. she isoverwhelmed, because she was separated from her children. she is overwhelmed with grief to see his mental angu ish and his deep love for herself. Bhavabhuti has very skil Fully shown his gradual psy chological change in sita ."(Bhavabhuti. p. 279)

कालिदास तथा भवभूति की नायिकाओं की तुलनात्मक समीक्षा

कालिदास तथा भवभूति ने अपने नाटकों में जिन नायिकाओं का चित्रम किया है, उनमें परस्पर पर्याप्त समता एवं असमता पायी जाती है । प्रच्छन्नकाम्या तथा [८] प्रच्छन्नरूपा मालविका के समान दोनों नाटककारों की कोई भी नायिका नृत्यकला में पारंगत नहीं परिलक्षित होती है ।

विक्रमोर्वशीयम् की नायिका उर्वशी जैसी दिव्या वेश्या कोटि की अन्य कोई भी नायिका इन दोनों नाटककारों के नाटकों में नहीं पाई जाती है । उर्वशी के दिव्य सौन्दर्य की प्रतिच्छवि अथवा भावानुकृति भवभूति ने मालती में प्रदर्शित करने का प्रयास किया है । उर्वशी तथा मालती के सौन्दर्यस्त्रोत की समता अधोलिखित छन्दों में की जा सकती है -----

---

१. उ. रा. च. (स. शारदारं, रे) चतुर्थ सं. १६३४, पृ. ६०
२. उ.रा. च. १/पृ. ८१ सीता-भवतु आर्य पुत्र भवतु एहि प्रेक्षामहे तावत् ते चरितम् ।
३. उ. रा. च. १/२० ललित ललितैः ज्योंत् स्नाप्रायैरकृत्रिमविभ्रमैरकृत मधुरैम्बानां मे कुतूहलमं कै : । १२०
४. उ. रा. च. ३/४ परिपाण्डुदुर्बलक्पोल सुन्दरविलोलकबरीकमाननम् ।
५. उ. रा. च. ३/२८ त्रस्तैकहायनकुरंगविलोल .....
६. उ. रा. च. ३/१६ भृमिषु कृतपुरान्तर्मण्डिला वृत्तिचक्षुः प्रचलित चतुरभूताण्डवैर्मडयन्त्या ।
७. उ. रा. च. १/२७ किमपि किमपि मन्दं मन्दमासक्तियोगात्
८. सागरिका, २२/४, सं. २०४०, नायक नियोगानुशीलनम्- डा. रामजी उपाध्याय, नायिका - (प्रच्छन्नकाम्या, विप्रलब्धा) पृ. ११७

"अस्या सर्गविधौ प्रजापतिरभूच्चन्द्रो नु कान्तिप्रदः .... रूपं पुराणो मुनिः । विक्रमो १/१० सा रामणीयनिधेरधिदेवता वा सौन्दर्यसारसमुदायनिकेतनं वा ....ज्योत्स्नादि कारणमभून्मदनश्च वेधाः ११ मा. मा. १/२२

उर्वशी के विरह से उन्मत्त एवं व्याकुल जिस प्रकार पुरुरवा विक्रमो. के चतुर्थ अंक में चित्रित है, ठीक उसी प्रकार मालती के विरह में माधव प्रकरण के नवम अंक में विरहव्यथित एवं उन्मत्तप्राय चित्रित है ।

मालविकाग्निमित्रम् जैसी प्रगल्भा नायक को रसना से पीटने वाली मदिरा से मदमत्त कनिष्ठा नायिका इरावती या नायक पर स्वामित्व रखने वाली ज्येष्ठा धारिणी जैसी कोई नायिका भवभूति के नाटकों में नहीं पाई जाती । इरावती तो सर्वथा अतुलनीय कनिष्ठा है ।

कालिदास और भवभूति के नाटकों की प्रायः सभी नायिकाएं उत्तमा प्रकृति की कुलीना उर्वशी के अतिरिक्त आभ्यन्तरा कोटि की हैं ।

यद्यपि शकुन्तला जैसी अनिन्द्य सुन्दरी निसर्गकन्या भवभूति के नाटकों में नहीं पाई जाती, तथापि उन्होंने सीता की प्रतिच्छवि शकुन्तला के आधार पर प्रतिविम्बित करने का श्लाघनीय प्रयास किया है --

शकुन्तला एवं सीता दोनों का प्रकृति-प्रेम [२] तुलनीय है । इन दोनों को नायक द्वारा गर्भावस्था में प्रत्याख्यात या परित्याग कर दिया गया है तथा दोनों नायिकाओं के शिशुओं का प्रसव ऋषि आश्रम में होता है । भवभूति कालिदास की रघुवंश की सीता या "अभिज्ञान शाकुन्तलम्" नाटक की शकुन्तला से विशेष प्रभावित प्रतीत होते हैं । इस सम्बन्ध में श्री शारदारंजन [३] रे का यह दृष्टिकोण सर्वथा समीचीन ज्ञात होता है --

"Both sita and sakun tala are described when with child at the time of abandonment. Both the queens, sita and sakuntala depart leaving no trace behind and their husbands meet their sons unexpectedly after the lapse of years in a hermitage ."

धीरा मालती वंश मर्यादा का ध्यान रखने वाली कुलकन्या के रूप में नाना अन्तः वाह्य गुणों में यद्यपि बढ़ी चढ़ी दृष्टिगत होती है । तथापि उसका सौन्दर्य अनेक स्थलों पर उर्वशी का अनुकरण करता प्रतीत होता है । मूर्च्छित उर्वशी और मालती का चेतना लाम करते हुए यह समान चित्रण दृष्टव्य है - उर्वशी को चेतनतालाभ करते देखकर राजा पुरुरवा कहता है --

"आविर्भूते शशिनि तमसा मुमुच्यप्यमानेव रात्रिर्नैशस्यार्चिहुतभुज इइवं छिन्नभूयिष्ठ धूमा ।

मोहेनान्तर्वरतनुरियं लक्ष्यतेमुक्तकल्पा, गंगारोधः पतनकुलषा गच्छतीव प्रसादम् । । वि. १/६

इसी प्रकार प्रत्यापन्नचेतना मालती को देखकर माधव कहता है --

---

१. उ. मा. मा. ६/४२, ४३, ४४ आदि ३/२१ - एतत्तदेव कदलीदलमध्यवर्ति -

२. अभि. शा. ४/६ पातुं न प्रथमं, उ. रा. ३/२५ करकमलवितीर्णैरम्बुनीवारशष्पैः - सीता - ते एव जाति जाति निर्विशेष मृगपक्षिपादपाः सा एव चाहम् उ. च. ३, पृ. १५४

३. उ. रा. च. Introduction, P. 33.

भवति विततश्वासो ....श्रिया सरसीरहम् ११ माल. मा. १०/१५

आदर्श कुलकन्या एवं गुरुजनों के प्रति आस्थायुक्त होने पर भी भवभूति की मालती [१] कामन्दकी द्वारा कालिदास की नायिका शकुन्तला एवं उर्वशी का आदर्श प्रस्तुत किए जाने पर माधव से गान्धर्व विवाह हेतु प्रवृत्त होती है ।

उत्तर रामचरित [२] की नायिका सीता रघुवंश चतुर्दश सर्ग की चित्रित सीता से प्रकृत एवं गुणों में पर्याप्तसाम्य युक्त संलक्षित होती है । यथा --

''राजर्षिवंशस्य रवेर्प्रसूते रूपस्थितः पश्यत कीदृशो ऽयम् ।
मत्तः सदाचारशुचेः कलंकः पयोदवातादिव दर्पणस्य ।। '' रघु. १४/३७

तुलनीय उत्तर रामचरित की सीता --

''यत् सावित्रैर्दीपितम् भूमिपालै र्लोकि श्रेष्ठैः साधु शुद्धं चरित्रम् ।
मत् सम्बन्धनात् कश्मला किंवदन्ती स्याच्चेदस्मिन् हन्त धिङ् मामधन्यम् । ''

संक्षेप में कहा जा सकता है कि भवभूति के नाटकों की नायिकाएं बहुत कुछ कालिदास के नाटकों की नायिकाओं से नारीगत्त गुणों में समानतायुक्त है, तथापि आन्तरिक अनेक गुणों में मालती या सीता पर्याप्त वैशिष्ट्यपूर्ण हैं । कालिदास की शकुन्तला, उर्वशी, इरावती जैसी नायिका भवभूति की नायिकाओं से सर्वथा भिन्न या गुणातिशायिनी हैं ।

नायिका की सखियाँ एवं सेविकाएं

आचार्य भरत ने नाट्यशास्त्र में नायिका के अतिरिक्त नाना प्रकार के नारी पात्रों की नियोजना निर्दिष्ट की है, जिनमें प्रतिवेश्या, सखी, सेविका, कुमारी कारु, शिल्पिनी, धात्री, आदि उल्लेखनीय हैं--

''प्रतिवेश्या सखी दासी कुमारी कारु शिल्पिनी ।
धात्री पाषाण्डिनी चैव रंगोपजीविनी मता ।। '' ना. शां. २३/६

नायिका की प्रणय प्रसंगों या सामान्य दुःख सुख की घटनाओं में सहायता एवं मनोविनोद करने वाली नारी उसकी सखी बन जाती है । ये उत्तमा, मध्यमा एवं अधमा कोटि की होती हैं तथा नायिका की सखी रूप में अध्यन्त अन्तरंग एवं विश्वासपात्र होती हैं । नायिका के प्रणय-सम्बन्धी मनोभावों को उसकी प्रतिनिधि रूप में नायक तक पहुँचाने [३] तथा नायक को नायिका के प्रति अधिक

---

१. मा. मा. अंक २, पृ. १११ कामन्दकी - तच्च किल कौशिकी शकुन्तला दुष्यन्तमप्सराःपुररव चकमं उर्वशीत्याख्यानविद आचक्षते । ''

२. Uttar Ram charitam, Ed. S. R. Ray 4 Ed. 1934. P. 33.

३. नाट्यशास्त्रीयानुसस्थानम्, ''नायकनियोगानुशीलनम्'' - डा.रामजी उपाध्याय, सागरिका, २२/४ सं. २०४० वि. पृ. १२८-१२६
''प्रतिनिधीमय सखीनायिकाया मनोभावं नायकं प्रतिचर्चति । नायकयोः प्रणय प्रर्वतनप्रक्रियासु सखी इति भवति । यथा - विक्रमोर्वशीये चित्रलेखा नायकमुपसृत्योर्वशयासन्देभुपनयति ।

अनुकूल एवं अनुरक्त बनाने में उसकी सखी की ही सेविका रूप में महत्वपूर्ण भूमिका नाटक में रहती है । कालिदास तथा भवभूति के नाटकों में नायिकाओं की सखियों एवं सेविकाओं के तुलनात्मक अध्ययन से यह तथ्य परिपुष्ट होता है ।

मालविका की सखी वकुलावलिका उससे भावात्मक रूप से जुड़ी अत्यन्त अन्तरंग होकर राजा के प्रणय संवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करती है । इस सम्बन्ध में श्री के. ए. स. रामास्वामी का दृष्टिकोण सर्वथा समीचीन प्रतीत होता है -

"of the many female attandance in the play वकुलावलिका deserves a prominent mention, she is passionately attached toमालविकाand promotes her fortunes with assiduous love." [1]

इसी प्रार उर्वशी की सखी चित्रलेखा नायिका के प्रेममयमनोभावों को प्रवीणतापूर्वक पुरुरवा[२] तक पहुंचाती है, जिसकी भूमिका कुलावलिका या प्रियंवदा-अनसूया से कम महत्वपूर्ण नहीं है । वह नायक के समीप प्रणयसन्देशवाहिका में इसी रूप में भी दृष्टिगत होती है । इस दूती का वैशिष्ट्य मालविकाग्निमित्रम् में नायक के द्वारा इस प्रकार व्यक्त हुआ है --

''भावज्ञानान्तरं प्रस्तुतेन प्रत्याख्याने दत्तयुक्तोत्तरेण ।
वाक्येनेयं स्थापिता स्वे निदेशे स्थाने प्राणाः कामिनां दूत्यधीनाः ।।''माल. ३/१४

उर्वशी की सखी चित्रलेखा में प्रियम्वदा-अनसूया के समान पर्याप्त प्रत्युत्पन्नमति एवं बुद्धिचातुर्य विद्यमान हैं । श्री के.एस. शास्त्री [३] की इस सम्बन्ध में यह धारणा द्रष्टव्य है --

''चित्रलेखा is admirably described throughout the play . she is like वयुलावलिका in मालविकाग्निमित्रम् andप्रियम्वदा is in sakuntla she has wit and scintilliating speech and deeply attached to her Friend" [3]

उर्वशी के प्रणयपथ को प्रशस्त करने में चेरी या प्रतिहारीवत् उसकी निर्देशिका भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं ।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् में शकुन्तला को दोनों प्रियसखियां-प्रियंवदा एवं अनसूया-प्राणों के समान हैं । प्रियंवदा ''यथानाम तथा गुणः को सार्थक करती हुई अत्यन्त प्रियंभाषिणी है, परिहासप्रिय प्रसन्नचित्त तथा सरलहृदया है जबकि अनसूया गम्भीर, दूरदशिनी एवं व्यवहारकुशल है । यद्यपि कालिदास [४] ने चतुर्थ अंक के पश्चात् इन दोनों स्नेहमयी सखियों का चरित्रांकन नहीं किया तथापि नायिका की कल्याणकामना, प्रणयसिद्धि, कुशलक्षेम आदि में इनकी परिपूर्ण एवं

---

१. Kalidada, Srirangam. 1960 P. 244.
२. विक्रमो. उर्वशी - ''प्रियतमस्य ते दूत्यस्मि संवृता ।''
उर्वशी (चित्रलेखाप्रति) तेनादिश्यांमार्गो येन तत्र गच्थन्त्योरन्तराये न भवेत् (द्वितीय अंक) पृ. ३५७
३. Kalidasa, srirangam. 1960. p. 267
४. संस्कृत साहित्य की रूपरेखा, पं. चन्द्रसेखर पाण्डेय, कानपुर १९५८, पृ. १३१

महत्वपूर्ण भूमिका परिलक्षित होती है । शकुन्तला की इन दोनों सखियों के सम्बन्ध में श्री के. एस. शास्त्री का यह कथन महत्वपूर्ण है ---

"The poet has taken great pains to delineate fully the two friends and forest playmates of sakuntala. They are both lovely and loveable and playful but each has some special traits." [1]

नायिका की इन सखियों में रम्भा, मेनका, अप्सरा आदि के अतिरिक्त कालिदास ने अपने नाटकों में निपुणिका, मधुकरिका, कौमुदिका, चतुरिका, परभृतिका प्रभृति प्रमदवन (उद्यान) पालिका अनेक सेविकाओं (चेटियों) की सुन्दर नियोजना की है, जो नाट्यटशास्त्रीय दृष्टि से सर्वथा समीचीन है । [२]

कालिदास के समान भवभूति ने भी अपने नाटकों में नायिका की सखियों की सुन्दर भूमिका प्रस्तुत की है, जिनमें लवंगिका, मदयन्तिका, सौदामिनी, वासन्ती, आदि उल्लेखनीय हैं ।

मालती की प्रिय सखी लवंगिका अत्यन्त वाक्पटु, विदग्ध एवं बुद्धिमती है तथा कामन्दकी द्वारा निर्दिष्ट नायिका विषयक कार्य अपने ढँग से करती हैं । मालतीं की वह इतनी अधिक अन्तरंग एवं विश्वस्त है कि वह अपने हृदय की बात केवल उसी से बताती है । म.म. मिराशी[३] लवंगिका के व्यक्तित्व के परिचय में उसके चातुर्य तथा वैदग्ध्य को ठीक ही रेखांकित करते हैं ।

मदयन्तिका - मदयन्तिका अमात्य नन्दन की बहिन तथा प्रकरण की नायिका मालती की प्रियसखी है । वह आकर्षक एवं रूपयौवन से सम्पन्न है । यह जानते हुये भी कि मालती माधव से असाधारण प्रेम करती है, नन्दन के साथ विवाह की योजना से संभवतः इसीलिए प्रसन्न है कि आजीवन उसे अपनी प्रिय सखी के साथ रहने का अवसर सुलभ होगा । वह अपने प्रेम को अपनी सखियों के समक्ष अभिव्यक्त करने में कुछ भी संकोच नहीं करती । अपनी तीव्र तथा अदम्य अभिलाषाओं के कारण उसे अपनी सखियों में परिहास का पात्र भी बनना पड़ता है ।

अपनी सखी मालती का कपालकुण्डल द्वारा अपहरण किये जाने पर मदयन्तिका चिन्तित हो जाती है तथा कामन्दकी एवं लवंगिका के साथ उसके अन्वेषण में व्यस्त हो जाती है । मालती का पता न लगने पर वह अपने प्राणों का परित्याग करने के लिए पर्वत शिखर से मधुमती में कूदने को तत्पर हो जाती है । अपनी सखी के प्रति मदयन्तिका का यह त्यागपूर्ण प्रेम अप्रतिम होने से समालोचकों [४] की दृष्टि में प्रशंसनीय है । वस्तुतः इतना उत्सर्गमय प्रेम कालिदास के नाटकों में

---

१. Kalidasa, P. 304.

२. ना. शा. २२ /१६६, २३/६, १०

३. Bhavabhuti, lavangika is the dearest friend of malati. she as court esan is very clever in conversations.

आश्रमकन्यकाः परस्परयौविनोचितं श्रंगारितपरिहासेनात्मानमनुरञ्जयन्ति - डा. रामजीउपाध्याय, पृ. १२६

सागरिका २२/४ नायकनियोगानुशीलनम्, डा. रामजी उपाध्याय पृ. १२६ .

४. भवंभूति के नाटक, भोपाल, १६७३. पृ. १२५.

नायिकाओं की किसी भी सखी में दृष्टिगत नहीं होता है ।

वासन्ती - उत्तर रामचरित की नायिका सीता की प्रिय सखी है । सीता के प्रति राम के कठोर व्यवहार से वह विस्मित हो जाती है । वन में त्याग कर लक्ष्मण के लौट आने पर वह चिंतित हो जाती है और राम द्वारा यज्ञ में सीता की स्वर्णिम प्रतिमा को सहधर्मचारिणी बनाये जाने की बात जानकर उसे सन्तोष होता है । सारांश यह है कि सीता के प्रति वासन्ती [१] के प्रेम की अभिव्यक्ति उत्तर रामचरित में विशेष रूप से हुई है । राम के साथ सम्यक् वार्तालाप [२] में यह वह दण्डकारण्य के उन्हीं स्थलों एंव पशुपक्षियों का स्मरण कराती है, जिनका सीता के साथ विशेष साहचर्य या सम्बन्ध रहा । वह राम के सीता परित्यागजन्य अनुचित कृत्य पर तीव्र उपालम्भ राम को देती है, किन्तु उसे राम के स्वयं सीतावियोग से व्यथित होने का पता जब चलता है तो उनके प्रति सहानुभूतियुक्त हो जाती हैं तथा उन्हें शान्त्वना [३] देने लगती हैं ।

वासन्ती की व्यथा राम के प्रलापों से तीव्रतर हो जाती है । राम की उन्मादावस्था से चिन्तित होकर वह संवेदना सहित कहती हैं --**"देव स्वेनैव लोकोत्तरेण धैर्येण संस्तम्भयातिभूमिं गतमात्मानम्"** ।

अन्त में वासन्ती दण्डकारण्य में राम के आगमन के लिए आभार व्यक्त करती हुई उनके कल्याण की कामना करती है ।

तुलनात्मक समीक्षा

कालिदास तथा भवभूति के नाटकों में चित्रित नायिका की सखियों एवं सेविकाओं में पर्याप्त समता एवं असमता उनके विशिष्ट गुणों एवं प्रकृति के कारण प्राप्त होती है । "मालविकाग्निमित्रम्" की नायिका मालविका की सखी सेविका वकुलावलिका की वाग्विदग्धता में समता "मालतीमाधव" की नायिका मालती की प्रियसखी लवंगिका से करना सर्वथा समीचीन प्रतीत होता है ।

उर्वशी की सखी चित्रलेखा अप्सरा (दिव्या) उत्तमा कोटि की होने के कारण भवभूति के ही नहीं, अपितु कालिदास के अन्य नाटकों की नायिकाओं की सखियों में सर्वथा बेजोड़ है । वह प्रियसखी के साथ दूती के दायित्व का निर्वाह कुशलता पूर्वक करती है ।

शकुन्तला की दोनों प्रियसखियाँ प्रियम्बदा और अनसूया मध्यमा कोटि की आश्रम-वासिनी ऋषिकन्या होने के कारण प्रकृति प्रेम, निश्छल प्रेम, त्याग, औदार्य आदि गुणों में भवभूति के नाटकों की नायिकाओं की सखियों से सर्वथा अतिशायिनी और अतुलनीय है । यदि कुछ गुणों में समीप है तो वह है सीता की प्रियसखी वासन्ती ।

कालिदास तथा भवभूति दोनों नाटककारों ने नायिका के मुग्धत्व, शील-संकोच,

---

१. उत्तर. ३/१८, २१, २७

२. उत्तर. ३/२६, २७

३. उ. रा. च. अंक ३, पृ. ६८
इस सम्बन्ध में म. म. मिराशी की टिप्पणी द्रष्टव्य हैं --
" When vasanti shows Rama the trees beasts and birds of panchvati and the spots where he formorly enjoyed her company, his grief is intensiified and he becomes unconcious.", Bhavbhuti. p. 279.

लज्जा-शीलता की रक्षा करने के लिए भारतीय मर्यादावादी दृष्टिकोण के अनुसार उसकी सखियों या सेविकाओं की नाटक में नियोजना [१] की है । चित्रलेखा, प्रियंवदा-अनसूया,लवंगिका, मदयन्तिका, वासन्ती आदि की नाटक में भूमिका इसी पृष्ठ भूमि को पुष्ट करती है । प्रतीत होता है, दोनों नाटककारों ने नाट्यशास्त्रीय दृष्टिकोण को भी अनुसरण कर अपनी नाट्य कृतियों में नायिका की सखियों या सेविकाओं का सन्निवेश समुचित रूप में किया है ।

नायिका के दुःख-सुख में सहभागी एवं सहानुभूतिपूर्ण, वियोग में उसका विविध रूपों में मनोरंजन करना, प्रणयसम्बन्धी परामर्श तथा प्रेमसन्देश का आदन-प्रदान आदि कतिपय विशेष कार्य इन नायिकाओं की सखियों या सेविकाओं के दोनों नाटककारों ने निर्दिष्ट किये हैं । भवभूति ने तो नायिका की सेविका रूप में "निःसृष्टार्थदूती" का उल्लेख कामन्दकी के शब्दों में किया है, जबकि कालिदास ने ऐसा कहीं नहीं उल्लेख किया । निः सृष्टार्थदूती का प्राविधान नाट्यशास्त्रीय [२] दृष्टि से आचार्य विश्वनाथ कविराज प्रभृति ने भी प्रतिपादित किया है --**" निष्टार्यर्थे मितार्थश्च तथा सन्देशहारकः । कार्यप्रेष्यस्त्रिधा दूतोदूत्यश्चापि तथा विधाः । उभर्योभावसुन्नीय स्वयं वदति चौत्त रम् । सुश्लिष्टं कुरुते कार्यं निःसृस्टार्थस्तु ३ स स्मृतिः । । " (साहित्यदर्पण)** [३]

इस प्रकार दोनों नाटककारों का नायिका की सखियों याआ सेविकाओं का सन्निवेश नाट्यशास्त्रीय दृष्टिकोण से सर्वथा समुचित एवं समीचीन प्रतीत होता है ।

नायिका के सहायक

अन्य नारी पात्रों की भूमिका

नायिका की सखियों एवं सेविकाओं (चेटी, दूती, प्रतिहारी, प्रमदवन, उद्यान (पालिका, धात्री, आदि) के अतिरिक्त कथावस्तु के अनुसार अन्य अनेक नारी पात्रों की भी सुन्दर नाट्यशास्त्रीय[४] दृष्टि से नाटकों में नियोजना कालिदास तथा भवभूति ने की है, जिनमें तपस्विनी, भिक्षुणी, कपालिनी, योगिनी, कारुशिल्पिनी आदि उल्लेखनीय हैं । इनका तुलनात्मक दृष्टि से संक्षिप्त विवेचन यहां किया जा रहा है -

तपस्विनी (तापसी) --

कालिदास की "मालविकाग्निमित्रम्" कृति के अतिरिक्त अन्य दो नाट्यकृतियों में तापसी की विशिष्ट भूमिका प्रदर्शित है, जबकि भवभूति ने ऋषिपत्नी रूप में अरुन्धती का चित्रण सामान्य

---

१. माल. - "दूत्या वाग्वैदग्ध्यं मालविकाग्निमित्रे विलसति । तथा - वकुला. अरुणशतपत्रमिव शोभते ते चरणे .... विमर्दसुरभिर्वकुलावलिका खल्वहम् । "
तुलनीयम् मालतीमाधवे, प्रथमाङ्के-लवगिका - समासादयतु सरस एंष भर्तृदारिकायाः कण्ठावलम्बन महार्घताम् उदयत सागरिका २२/४ पृ. १२७

२. ना. शा. २३/६, १० २३-१५-

३. मा. मा. - "निपुणं निःसृष्टार्थदूती कल्पस्तंत्रोयित्तदा" १/१७ के पूर्व कामन्दकी, पृ. ३४

४. सागरिका २२/४ द्रष्टव्य - "नाट्यशास्त्रीयानुसन्धीने, नायक नियोगानुशीलनम् -डा. रामजी उपाध्याय, २०४० वि. पृ. १३२-१३३

रूप में किया है ।

विक्रमोर्वशीयम् के पंचमांक में तापसी उर्वशी पुत्र कुमार आयु को न्यास रूप में ग्रहण कर उसका पालन करती है तथा च्यवन ऋषि की अनुमति से उसे उर्वशी को अर्पित करती है । आश्रमवासिनी तपस्विनियों यथा समय स्वस्तिवाचनिकाओं के रूप में दृष्टिगत होती है ।

''अभिज्ञानशाकुन्तलम्'' में ये तापसियाँ शकुन्तला को यथासमय प्रस्थानोचित स्वस्तिवाचन पूर्वक अभिनन्दित भी करती है ।

अभिज्ञान शाकुन्तलम् '' के चतुर्थ-पंचमांक में तापसी गौतमी शकुन्तला को पति के समीप ले जाती हैं । नाटक के सप्तमांक में तापसी शकुन्तला के शिशु सर्वदमन का लालन पालन भी करती अंकित हैं ।

उत्तररामचरित में भी वशिष्ठऋषि पत्नी अरुन्धती और आत्रेयी उदात्त, वात्सल्य, भावपूर्ण एवं गरिमामय व्यक्तित्वयुक्त हैं । उनकी वाणी में अधिकारपूर्ण गौरव है । जनक को दिये गये कल्याणमय आशीर्वाद की भाषा और भाव ऋषिपत्नी के अनुरूप है --

''अक्षरं ते ज्योतिः प्रकाशताम् । '' सत्वां पुनातुदेवः परो रजसां य एष तपति । '' [1]

इसी प्रकार द्वितीयांक के विषकम्भक में अध्वगतेषा तापसी [2] आत्रेयी भी दृष्टव्य हैं ।

भिक्षुणी (परिव्राजिका) - कालिदास ने ''मालविकाग्निमित्रम्'' में परिव्राजिका कौशिकी का उल्लेख [3] किया है । भिक्षुणी कौशिकी का व्यक्तित्व भी अत्यन्त आकर्षक है । श्री के. एस. शास्त्री की दृष्टि कौशिकी के विषय में इस प्रकार है - ''The picture of kaushika alone remails to be considered. kalidasa has tried his uttermost to make it full and attractive. she is however not an ascetic hating life and human beings but ascetic full of love of art and friendlyhess to all. she is an expertin medical knowledge as well as aesthetic knowledge and artistic appreciation. she is a part master in decorative skill. '' [4]

वस्तुतः कौशिकी कलात्मक अभिरुचि सम्पन्न, नृत्य संगीत, औषधिज्ञान में विशेषज्ञता प्राप्त सहृदया परिव्राजिका है, जिसकी तुलना में भवभूति के मालतीमाधव की कामन्दकी एवं अवलोकिता भी हल्की पड़ती है ।

कामन्दकी - मालती माधव में नायिका के सहायक सभी नारी पात्रों में अत्यन्त महत्वपूर्ण पात्र कामन्दकी है, जो पतिजीवनधारिणी परिव्राजिका होती हुई भी अपने मित्र भूरिवसु एवं देवरात की पूर्व प्रतिज्ञा को कार्यान्वित करने में कटिबद्ध है । इसके लिए अपने धर्म के विरुद्ध आचरण करने के लिए भी वह उद्यत होकर निसृंष्टार्थ दूती का कार्यभार भी कुशलतापूर्वक वहन करती है ।

---

१. उत्तर. अंक ४, अरुन्धती की उक्ति, पृ. १३२

२. उत्तर . २/१

३. माल. १/१६

४. Kalidasa, k. s. ramashwami shastri. shrirangam. 1960. P. 245

मालती-माधव को एक प्रेमसूत्र में बांधने के लिए अनेक प्रकार की योजनाओं का निर्माण करती है।

कामन्दकी अत्यन्त वाकविदग्ध, नीतिशास्त्र में पारंगत, देशकाल के अनुकूल समझबूझ कर कार्य करने वाली, सहृदय एवं वात्सल्यभावपूर्ण है । म. म. [1] मिरीशी के मतानुसार भवभूति कामन्द की जैसी नारी पात्र के चरित्र चित्रण में विशेष सिद्ध हस्त है । उनका यह विचार समीचीन प्रतीत होता है --

"But if is move in characterisation of woman, that Bhavabhuti excels the foremost among them is Kamandaki Bhavabhuti may have derived a suggestion about her name from the sanskrit work" Kamandakiya Nitisara.' on political science."

कामन्दकी की नीति की सबसे बड़ी सफलता समालोचकों [2] की दृष्टि में मालतीवेशधारी मकरन्द के साथ नन्दन का विवाह सम्पन्न करना है । इस साहसिक योजना से वह न केवल मालती को नन्दन के जाल से मुक्त कर माधव के साथ विवाह के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करती है, अपितु मकरन्द के साथ मदयन्तिका के पलायन की परिस्थिति प्रस्तुत करती है । इस प्रकार समस्त घटना चंक्र का बुद्धिंचातुर्य एवं नीति से सफलता पूर्वक संचालन कर अफनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय देती है ।

अवलोकिता तथा बुद्ध रक्षिता - नायिका के मध्यम कोटि के सहायक नारी पात्रों में अवलोकिता एवं बुद्धरक्षिता अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं । परिव्राजिका कामन्दकी की सेविका, शिष्या एवं सखी रूप से उसकी समस्त योजनाओं को सफल बनाने में अपनी चतुरता, वाक्पटुता एवं कार्य तत्परता से सहायता करती है । म.म.वासुदेवविष्णु मिराशी का इनकी नाटक से भूमिका के सम्बन्ध में विचार है --- "Two other female characters, Avalokita and Budharakshita have also been well portrayed by Bhavabhuti, both helps kamandaki in her plans, they have a gift of conversation. "4.

इस प्रकार ये दोनों नारी पात्र नायिका मालती के नायक माधव से मिलन की परिस्थितियों के निर्माण द्वारा दोनों के प्रेम भाव में अभिवृद्धि कर कामन्दकी के उद्देश्य की पूर्ति में सहायक सिद्ध होती है ।

कपालिनी (कापालिकी)

कालिदास ने अपनी नाट्यकृतियों में किसी कपालिनी (कपालिकी) को नायिका की सहायक

---

१. Bhavabhuti, V. V. Misashi, Delhi. 1974. P. 204.

२. भवभूति के नाटक, डा. वृजवल्लभ शर्मा, भोपाल, १९७३, पृ. ११८

३. उत्तर. ६/१५ पुरश्चक्षूरागतदनुमनसो ....सकामोअस्तुमदनः ।।
"१/१७ शरज्योत्सना ....कुमुदमिव तां नन्दयतु सा ।
सुजातं कल्याणी भवतु कृतकृत्यः स च युवा ।। "

४. Bhavabhuti, P. 207

या प्रतिकूल रूप में चित्रित नहीं किया है, जबकि भवभूति ने ''मालती-माधव'' में मालती के प्रतिकूल कपालकुण्डला की भूमिका प्रस्तुत की है ।[1]

कपाल कुण्डला - अघोरघण्ट की अन्तेवासिनी कपालकुण्डला अपने काम, क्रोध एवं भयंकर हास्ययुक्त कपालयुक्त भीषण स्वरूप के साथ प्रकरण में अपनी अद्‌भुत उत्पन्न शक्ति का परिचय देती है --

''उदवृत्तस्खलित कपालकण्ठमाला संघट्टकणित करालंकिंकिंणीकः ।
पर्याप्तिं मयि रमणीडामरत्वं सन्धत्ते गगनतलप्रयाणवेगः ।।'' मा. मा. ५/३

वह कापालिक के साथ चामुण्डा पूजा हेतु सुषुप्त कुमारी मालती को श्मशानभूमि ले जाने का दुःसाहस करती हुई मालती माधव को मारने के लिए कपालिक को आदेश देती है । अस्त्र चलाने में स्वयं भी निपुण वह निर्दयतापूर्वक मालती को मारने काटने के लिए श्रीपर्वत पर ले जाने के संकल्प को व्यक्त करती है ।

मालती पर उसका भीषण क्रोध भी अनेक स्थलों[2] पर प्रकट हुआ है । इस प्रकार नायिका की सहायिका न होकर कपालकुण्डला प्रतिकूल आचरण करने वाली नारी पात्र है ।

योगिनी (योगीश्वरी) -

कालिदास के नाटकों में योगिनी नारी पात्र परिलक्षित नहीं होते, जबकि भवभूति के प्रकरण ''मालती माधव'' में नायिका के सहायक नारी पात्रों में बौद्ध सन्यासिनी कामन्दकी तथा उसकी पूर्व शिष्या सौदामिनी सिद्धयोगिनी के रूप में अपनी यौगिकी सिद्ध स्वयं वर्णित करती है -- ''भोः तथाहमुत्पतिता यथा सकल एवं गिरि नगर ग्रामस रिदरण्य -- व्यक्तिकरश्चक्षुषा परिषिच्यते । अन्यच्च --

''गुरुचर्यातपस्तंत्र मंत्र योगाभियोगजाम् ।
इमामकर्षिणी सिद्धिमातनोति शिवाय कः ।।'' मा. मा. ६/५३

अपने योग प्रभाव से सौदामिनी माधव को अर्न्तधान कर मालती के समीप लाती है । बौद्धकापालिकी (भिक्षुणी) कामन्दकी अपनी आत्मकथा कहने के सन्दर्भ[3] में वर्तमान उसके योगीश्वर रूप को प्रकट करती है । माधव को श्रीपर्वत से सकुशल वापस लाने, मित्रों से मिलाने में उसकी भूमिका सराहनीय है ।[4] कामन्दकी के कथनानुसार योगिनी सौदामिनी स्पृहणीय सिद्ध सम्पन्न है ।

दिव्य एवं अर्द्धदिव्य (नारी) पात्र -

कालिदास तथा भवभूति दोनों नाटककारों ने अपनी कृतियों में दिव्य पात्रों के साथ अर्द्ध

---

१. मा. मा. १/१६ के पश्चात् पृ. ३२ अघोर घण्टस्यान्तेवासिनी (कपालकुण्डला)
२. मा. मा. अंक ८, पृ. ३५६, ८/८ श्येनाववपात चिकितानवर्तिकेव । ६/५० अभि.
३. मा. मा. १०/५ स्तन्यत्यागात्प्रभृति ....युक्तस्तवापि ।।
४. सागरिका २२/४ नाट्यशास्त्रीयानुसन्धान् (नायकनियोगानुशीलनम्) डा. रामजी उपाध्याय पृ. १३३

दिव्य पात्रों की भी सुन्दर नियोजना की है । विक्रमोर्वशीयम् में पुरुरवा विद्याधर कन्या उदयवती को निर्निमेष दृष्टि से जब देखता है तो खण्डिता नायिका सी कुंपित उर्वशी कुमार वन में प्रविष्ट हो[1] जाती है । शकुन्तला की विदा वेला पर उसे वनदेवता (वनदेवियों) से मांगलिक उपहार दिये गये हैं ।[२]

इसी प्रकार भवभूति ने भी उत्तररामचरित के षष्ठांक के विष्कम्भक में विद्याधर -- विद्याधरी मिथुन का सुन्दर संन्निवेश किया है, लवकुश के द्वन्द्व-युद्ध के पश्चात् उनके एवं चन्द्रकेतु के शान्त होने की सूचना दी गई है[३] ।

वनदेवता की भूमिका भवभूति ने उत्तर रामचरित के द्वितीयांक के प्रारम्भ में की है । इसी प्रकार पृथ्वी भी दिव्य पात्र के रूप में राग को धर्म की मर्यादा (सीता के पाणिग्रहण) को उल्लंघन करने के कारण उपालम्भ देती है ।

दिव्य अथवा अर्द्ध दिव्य (नारी) पात्र में प्रतीकात्मक नदीद्वय तमसा-मुरला के अतिरिक्त गोदावरी-गंगा आदि की उत्तर रामचरित में अभिनयात्मक[४] भूमिका श्लाघनीय है । ये नदी देवता दिव्य शक्तिसम्पन्ना होते हुए भी मानुषी प्रकृति को धारण करते हैं । अतः इन्हें अर्द्ध दिव्य (नारी) पात्र मानना समीचीन है । यथा - तमसा सीता को सखी के समान परामर्श देती है ---

''त्वमेव ननु कल्याणि संजीवय जगत्पतिम् ।
प्रियस्पर्शो हि पाणिस्ते तत्रैव निरतो जनः ।। उ. रा. ३/१०

गंगा तथा पृथ्वी का भी सीता के साथ संवाद उत्तर-रामचरित में प्राकृत पात्रों के समान ही चलता है । यथा - ''सीता - भगवत्यौ के युवाम्' पृथ्वी-इयं ते श्वसुरकुल देवता भागीरथी। भागीरथी - इयं ते जननी विश्वम्भरा । पृथ्वी - एहि, पुत्रि। वत्से सीते । (उभौ आलिंग्य मूर्च्छितः) (प्रथम अंक में)

अप्सराएँ - कालिदास ने विक्रमोर्वशीयम् एवं अभिज्ञानशाकुन्तलम् (षष्ठांक) में क्रमशः रम्भा, मेनका, सहजन्या तथा सानुमती अप्सराओं की नायिका के सहायक (नारी) पात्र की भूमिका प्रभावी रूप से प्रस्तुत की है जबकि भवभूति ने नहीं । इन अप्सराओं की मर्त्यलोक में गतिविधियाँ मानवों के पूर्वजों के सम्बन्ध से सम्पन्न होती हैं, जिनमें इनकी तिरस्करणी शक्ति के अतिरिक्त स्वर्गलोक से पृथ्वी पर अवतरण शक्ति के साथ तिरोहित होकर सभी कुछ जानने की शक्ति ज्ञात होती है ।

इस प्रकार दोनों नाटककारों ने नायिका के सहायक अन्य नारी पात्रों में तापसी (ऋषिपत्नी)

---

१. विक्रमो. ४. अंक (प्रवेशक) चित्र. तत्र खलु मन्दाकिन्याः पुलिनेषुगता सिकतापर्वत - केलिभिः क्रीडन्ती विद्याधरदारिका उदयवती नाम तेन राजर्षिणा निध्यातेति कुपिता उर्वशी। पृ. ३८७

२. अभि. ४/५ अन्येभ्यो वनदेवता करतलैः..................दत्तान्याभरणानि तत् किसलयोद्‌भेद प्रतिद्वन्द्विभिः । ४/५

३. उत्तर. ६/७ शान्तो लवः प्रणत एव च चन्द्रकेतुः ....राज्ञः ।।

४. उत्तर . ७/५, ७.

भिथुकी, योगिनी, कपालिनी, दिव्या या अर्द्धदिव्या विविध पात्रों का सुन्दर प्रयोग किया है ।

कालिदास एवं भवभूति के रूपकों में नारी पात्रों की अभिनेयता

नाट्यकृतियों में उसके पुरुष अथवा नारी पात्रों के अभिनय तत्व पर विचार करना अत्यन्त आवश्यक प्रतीत होता है, क्योंकि नाट्शास्त्र [१] में नाट्य के प्रमुख चार तत्वों --- १. पाठ्य (संवाद) २. गीत ३. अभिनय तथा ४. रस में अभिनय तत्व प्रत्यक्ष रूप से पुरुष एवं नारी पात्रों की सभी नाटकीय अवस्थाओं या विशिष्टताओं को व्यक्त करने के कारण विचारणीय है, जिसमें अन्य शेष नाट्य तत्वों का समाहार हो जाता है ।

नाट्यशास्त्र के आधार पर आचार्य विश्वनाथ [२] सदृश परवर्ती नाट्यशास्त्रियों ने नायक की अवस्थाओं के अभिनय में ४ तत्व समाविष्ट किये हैं --

१. आंगिक २. वाचिक ३. आहार्य - तथा ४. सात्विक । [३]

कालिदास तथा भवभूति ने अपनी नाट्य कृतियों में नारी पात्रों की अभिनेयता उपर्युक्त ४ रूपों में प्रभावी ढंग से प्रस्तुत की है जिसकी तुलनात्मक संक्षिप्त समीक्षा यहाँ दोनों नाटककारों की कृतियों के आधार पर की जा रही है ।

१. आंगिक (कायिक) अभिनय - शरीर के बाहु आदि अंगों से नारी पात्रों का सम्पन्न होने वाला अभिनय आंगिक या कायिक है, जिसमें कालिदास तथा भवभूति के रूपकों [४] के सभी नारी पात्र पारंगत हैं। जैसे - ''मालविकाग्निमित्रंम्'' में मालविका का नृत्य करने के साथ यह आंगिक अभिनय कितना स्वाभाविक एवं हृदयावर्जक है ---

''वचनमभिनयन्त्या स्वांगनिर्देशपूर्वम्'' माल. २/५

वामं सन्धिस्ति मितक्लयं न्यस्य हस्तं नितम्बे । कृत्वा श्यामाविटपसदृशं

स्रस्तमुक्तं द्वितायम् । पादांगुष्ठलुलितकुसुमे कुट्टमे पातिताक्षम्,

नृत्यदस्या:, स्थितमतितरां कान्तमृज्चायताधर्म् । । माल. २/६

इस प्रकार भ्रमर बाधा निरूपितं करने में शकुन्तला का आंगिक अभिनय दृष्टव्य है ।

भवभूति ने अभी अपने रूपकों में नारी पात्रों की आंगिक अभिनेयता की अच्छी प्रस्तुति की है । [५] जैसे उत्तररामचरित में '' कौशल्या -- (क्रोडे कृत्वा) ----

''अहो न केवलं ....रामभद्रमनुहरति । जात ! प्रेक्षे तव मुखचन्द्रम् । (चिबुकमुन्नमयूय निरूप्य च सवाष्पाकूतम्)'' मालतींमाधव [६] में इसी प्रकार आंगिक अभिनय कामन्दकी का द्रष्टव्य है --

''कामन्दकी - (उथाप्यालिंग्य मूर्ध्नुपाप्राय) इसी प्रकार मालती का आलिंगन करने में उसका

---

१. ना. शा. १/१७

२. सा. द. ६/२ भवेदभिनयो अवस्थानुकारः स चतुर्विधः ।

३. अभि. १/२१ तथा पूर्वापर । आंगिको वाचिकश्चैवमाहार्यः सात्तिवकस्तथा । । ''

४. उत्तर . अंक ४/ २२ के पूर्व, पृ. ४३०

५. मा. मा.पृ. २६८

६. मा. मा. ५/२६ के पूर्व पृ. २३८

आंगिक अभिनय व्यक्त हुआ है ।

२. वाचिक अभिनय - नारी या पुरुष पात्रों के द्वारा बाणी के द्वारा किये जाने वाला अभिनय वाचिक या वाच्य होता है । इसे ही पाठ्य के नाम से अभिहित किया गया है । यह वाचिक अभिनय स्त्री या पुरुष पात्रों के संवाद की प्रस्तुति पर आधृत होता है । यह संवाद नाट्य तत्व की आत्मा है तथा बाणभट्ट जैसे गद्य कवियों के विचार से आलाप से अभिन्न होकर सरस, सरल एवं सुकुमार होना चाहिए । [१]

आनन्दवर्धनाचार्य [२] ने संवादों की बहुलता एवं विविधता आचार्य भरत ने संवाद को उक्ति प्रत्युक्ति अर्थ में संलाप से भिन्न नहीं स्वीकार किया है [३] । प्रस्तुति की दृष्टि से यह सर्वश्राव्य नियतश्राव्य तथा आश्राव्य रूपों में विविध प्राकृत या संस्कृत में पाया जाता है ।

कालिदास तथा भवभूति दोनों नाटककारों ने वाचिक अभिनय में संवाद को संलाप अर्थात् उक्ति एवं प्रत्युक्ति के अर्थ में ग्रहण करते हुए विविधतापूर्वक पुरुष एवं नारी पात्रों द्वारा प्रयुक्त किया है ।

कालिदास द्वारा अभिज्ञानशाकुन्तलम् [४] में शकुन्तला, प्रियंवदा-अनसूया आश्रमकन्याओं के स्वं संवादों में सरसता, सरलता तथा स्वाभाविकता का सन्निवेश किये जाने से वाचिक अभिनय के श्रेष्ठ निदर्शन है । इसी प्रकार पंचम अंक में कण्व के शिष्य शर्ङ्गरव तथा शारद्वत के साथ आर्या गौतमी तथा शकुन्तला के राजा दुष्यन्त से अत्यन्त मार्मिक संवाद स्वाभाविक वाचिक अभिनय को प्रस्तुत [५] करते हैं । कालिदास ने नायिका एवं अन्य नारीपात्रों के संवाद की भाषा (शौरसेनी) प्राकृत प्रयुक्त की है जबकि संस्कृत भाषा में संवाद व्यक्त किए हैं । यथा - "मालतीमाधव" में मालती, बुद्धरक्षिता आदि पात्रों द्वारा संवादों में कहीं कहीं संस्कृत का प्रयोग किया गया है । -- इस सम्बन्ध में यह मान्यता नाट्यशास्त्रों द्वारा निर्दिष्ट की है -- "

"योषित् सखी बालवेश्याकितवा अप्सरसां तथा ।
वैदग्ध्यार्थ प्रदातव्यं संस्कृत चान्तरा अन्तरा ।। " (सा. दर्पण ६)

---

१. कादम्बरी "स्फुरतकलालापविलासकोमला, करोति रामं हृदि कौतुकाधिकम् ।
रसेन शय्याम् स्वयमभ्युपागता कथा जनस्याभिनवा बधूरिव ।। " पृ. ८

२. ध्वन्यालोक ४/११५ संवादास्तु भवन्त्येव बाहुल्येन सुमेधसाम् ।
नैकरूपतया सर्वे मन्तव्या विपश्चिता ।। "

३. नाट्यशास्त्र २२/५६ उक्तिप्रत्युक्तिसंयुक्तः संलाप इति कीर्तितः ।

४. अभि. शा ५/२१ के पश्चात २५ श्लोक तक

५. साहित्यदर्पण की यह उक्ति कामशास्त्रानुंसारि प्रतीत होती है । यथा -
"दिव्याया गणिकायाश्च शिल्परकार्यास्तथैव च ।
विदग्धायाः स्त्रिया भाषां संस्कृतेनाअपि योजयेत ।। " (मा. मा. दृष्टव्य टीका शेषराज शर्मा कृत, पृ. ३०७)

यद्यपि कालिदास के नारी पात्रों के भावपूर्ण, सुगठित, सरल, सरस, साभिप्राय संवाद वाचिक अभिनय की दृष्टि से आदर्श है, जिसकी तुलना में भवभूति के नाटकों में ये नारी संवाद अत्यन्त दीर्घ तथा समासबहुल होने के कारण भावपूर्ण होने पर नाटकीयता (अभिनेयता) की दृष्टि से सशक्त प्रतीत नहीं होते हैं । यथा - मालती माधव के सप्तमांक [१] में बुद्धरक्षिता तथा मदयन्तिका के लम्बे समासों वाले उबाऊ संवाद वाचिक अभिनय की दृष्टि से सर्वथा अनुपयुक्त है । इसी प्रकार तृतीयांक में लवंगिका का ३६ पंक्तियों का बहुत लम्बा संवाद काव्यात्मक होते हुए भी व्यर्थ होता है । [२]

संक्षेप में कालिदास की अपेक्षा भवभूति के नारी पात्रों का वाचिक अभिनय प्रभावी नहीं होता है ।

३. आहार्य अभिनय - नाट्य के अनुरूप वस्त्र अलंकरणों के द्वारा पात्र द्वारा जो अभिनय होता है उसे आहार्य कहते हैं ।

कालिदास तथा भवभूति दोनों के नाटकों में नारी पात्रों का नाट्य एवं पात्रानुरूप आहार्य अभिनय दृष्टिगत होताहै । यथा-कालिदास ने एक साथ रानी धारणी तथा परिव्राजिका कौशिकी का आहार्य अभिनय अधोलिखित छन्द द्वारा प्रस्तुत किया है --

"मंगलालंकृता भाति कौशिक्या यतिवेषया ।
त्रयीविग्रहवत्येव सममध्यात्मविद्यया ।। माल. १/१४

इसी प्रकार आश्रमवासिनी शकुन्तला वल्कलधारिणी[३] रूप में सुन्दर आहार्य अभिनय प्रस्तुत करती है ।

शकु. - हला अनसूये ! अतिपिनद्धेन वल्कलेन प्रियंवदया दृढ़ं नियंत्रितास्मि । शिथिलय तावदेतत् । "

आगे शकुन्तला का प्रोषित पतिका नायिका के अनुरूप आहार्य अभिनय प्रस्तुत हुआ है, जो निम्नलिखित पद्य में द्रष्टव्य है ---

(ततः प्रविशतिएक वेणी धरा शकुन्तला) -"

वसने परिधूसरे वसाना, नियमक्षाममुखी धृतैकवेणिः ।
अतिनिष्करुणस्य शुद्धशीला, मम दीर्घं विरहव्रतं बिभर्ति ।। " अभि. ७/२१

कालिदास के समान भवभूति ने भी कुशलता पूर्वक नारी पात्रों का आहार्य अभिनय

---

१. मा. मा. ७ अंक प्रारंभ प्रवेशक तथा इसके बाद पृ. ३००-३०२, ३१३-३१५

२. मा. मा. - लवंगिका - भगवत्येवं .....प्रियसख्याः । पृ. १४५-१५५ तक)३६ पंक्तियों का संवाद) माल. ५/७ अनतिलम्बदुकूल निवासिनी बहुभिराभरणैः प्रतिभाति में ।

३. अभि. अंक १, १०० श्लोक के पूर्व पृ. ४३४
१/१० में " इयमधिक मनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी" से भी आहार्य अभिनय पुष्ट होता है।

अधोलिखित रूप में प्रस्तुत किया है ---

मालतीमाधव में अवलोकिता [१] की इस उक्ति से कामन्दकी का आहार्य अभिनय अभिव्यक्त है-- '' अव. यदिदानीं चीरचीवरमात्रविग्रहा पिण्डपात मात्रप्राण वृत्तिमपि '

इसी प्रकार उत्तररामचरित [२] में ''अध्वंगवेषा तापसी'' आदि आहार्य अभिनय के अच्छे निदर्शन प्राप्त होते हैं । इस प्रकार दोनों नाटककारों ने नारीपात्रों का सुन्दर आहार्य अभिनय प्रस्तुत किया है ।

४. सात्त्विक अभिनय - किसी पात्र या व्यक्ति के सुखदुःख की भावना से भावित अन्तःकरण को ''सत्व'' कहते हैं तथा सत्व से सिद्ध होने वाले भाव को सात्त्विक कहा जाता है । इन स्तम्भस्वेद आदि विविध सात्त्विक भावों के द्वारा किए गये अभिनय को सात्त्विक की संज्ञा दी जाती है । [३]

कालिदास तथा भवभूति दोनों नाटककारों ने अपनी नाट्य कृतियों में नारी पात्रों का सुन्दर सात्त्विक अभिनय यथास्थान प्रस्तुत किया है । यथा - कालिदास ने अभिज्ञानशाकुन्तलम् [४] में शकुन्तला का सात्त्विक अभिनय अधोलिखित पद्य में इस प्रकार प्रस्तुत किया है --

''इतः प्रत्यादिष्टा स्वजनमनुगन्तुं व्यवसिता,
स्थिता तिष्ठत्युच्चैर्वदति गुरुशिष्ये गुरु समे ।
पुनर्दृष्टिम् वाष्प प्रसरकलुषामर्पितवती,
मयि क्रूरे यत् तत् सविषमिव शल्यं दहति माम् ।। अभि. शा. ६/६

प्रतीत होता है कालिदास की अपेक्षा नाटककार भवभूति सात्त्विक अभिनय को सशक्त रूप में प्रस्तुत करने में अधिक निपुण हैं ।

वे एक साथ अनेक सात्त्विक भावों को अभिनय में व्यक्त करने में अत्यन्त सिद्धहस्त है ।

यथा - मालती का लज्ञाभिनय अनेक सात्त्विक भावों को इस पद्य में इस प्रकार प्रकट किया गया है - ***''स्खलयति वचनं ते संश्रयत्यंगमगं, जनयति मुखचन्द्रोद्भासिनः स्वेदविन्दून् । मुकुलयति च नेत्रे सर्वथा सुभ्रु खेदस्त्वयि विलसति तुल्यं वल्लभालोकनेन ।। मा. मा. २/८***

मालती का स्वेद-रोमांच भाव इस प्रकार व्यक्त है --

---

१. मा. मा. १/६ के पश्चात् अवलोकिता का कथन, पृ. २० १०/४ के पश्चात् - ''मदीयचीवराश्चालोकणैव प्रगुणतानि ।

२. उत्तर. अंक २, पृ. ३६ ।

३. ''स्तम्भः स्वेचाऽथ रोमांचः स्वरभंगोअथ वेपथुः ।
वैवर्णमश्रुप्रलय इत्यष्टौ सात्त्विकाः स्मृताः ।। ''

४. अभि शा. ४१५उत्पक्ष्मणोर्नयनयोपरुबद्ध वृत्तिं वाष्पं कुरु स्थिरतया विरतानुसन्धं अस्मिनलक्षितनतोन्नतभूमिमार्ग मार्गे पदानि खलु ते विषमीभवन्ति ।।

"आमूलकण्टकित कोमलबाहुनालमार्द्रांगुलीदलमनंग निदाधतप्तः ।
अस्याः करः .... । " मा. मा. ६/२०

इसी प्रकार उत्तर [१] - रामचरित में सीता के सात्त्विक भावों को अत्यन्त प्रभावी रूप से प्रस्तुत किया गया है यथा --

"..........स्विद्यन्निः सह विपर्यस्ती वेपते अवश इव में हस्तः । "
सस्वेदरोमांचित कम्पितांगी जाता प्रियस्पर्श मुखेन वत्सा ।
मरुन्नवाम्भः प्रतिधूत सिक्ता कदम्बयष्टिः स्फुटकोरकेव । । " उ. रा. ३/४२

सात्त्विक अभिनय का अन्य उदाहरण [२] भीं दृष्टव्य है -- "तमसा - (सस्नेहास्त्र परिष्वज्य) विलुलितमतिपूरैरवाष्पमानन्दशोकप्रभवभवसृजन्ती तृष्णयोन्तानदीर्घा । स्नपयति हृदयेशं स्नेह-निष्यन्दिनी से धवल - वहल मुग्धादुग्धकुष्ल्येव दृष्टि : । ।

तुलनात्मक समीक्षा

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि कालिदास तथा भवभूति के नाटकों में नारी पात्रों की अभिनेयता अभिनय के समस्त अंगो को आत्मसात् करने के कारण सर्वथा पूर्ण तथा प्रभावी हैं ।

कार्यिक तथा आहार्य अभिनय में दोनों नाटककारों के नारी पात्र सशक्त हैं, किन्तु भवभूति के नारीपात्रों के वाचिक अभिनय में बहुत लम्बे लम्बे सामासिक शैली के वाक्य सरस-सरल संवादों के सर्वथा अनुपयुक्त प्रतीत होते हैं ।

जहाँ तक सात्त्विक अभिनय का प्रश्न है, कालिदास के समर्थ महाकवि एवं नाटककार होते हुए भी उनके नारी पात्र भवभूति के नारी पात्रों की अपेक्षा सशक्त प्रतीत नहीं होते हैं । भवभूति सात्त्विक अभिनय में कालिदास की अपेक्षा अधिक सिद्धहस्त है ।

नाटकीयताकी दृष्टि से दोनों नाटककारों के नारी पात्रों की अभिनेयता श्लाघनीय है तथा इससे यह सिद्ध होता है कि उन्हें इस काल में नाट्यशास्त्र आधृत अभिनय शिक्षा पर्याप्त रूप से प्राप्त होती होगी ।

इस प्रकार हम यह भी तथ्य पाते हैं कि दोनों नाटककारों ने अपनी नाट्यकृतियों में नारी पात्रों के अन्तर्गत अनेक प्रकार की नायिकाएं, नायिका की सखियाँ एवं सेविकाएँ, नायिका की

---

१. उत्तर. ३/३६ के पश्चात्-तमसा की उक्ति ।
२. उत्तर . ३/२३
परिजातम् २/४ अंक १९८३ पृ. २६-३३ "मालतीमाधवे भावध्यवनिः " डा. शिवबालक द्विवेदी का लेख ।

सहायक या प्रतिकूल अन्य विविध नारी पात्र तथा उनकी सर्वांग अभिनेयता नाट्यशास्त्रीय दृष्टिकोण से सर्वथा अनुकूल ही प्रस्तुत की है ।

इनकी प्रस्तुति में हम दोनों नाटककारों में मौलिकता एवं विशिष्टता पाते हैं, जिससे इन दोनों को मूर्धन्य नाटककारों में सम्मानित स्थान देते हैं ।

द्वितीय परिच्छेद:

नारीपात्रों का सामाजिक एवं पारिवारिक अध्ययन

द्वितीय परिच्छेद

सामाजिक और पारिवारिक जीवन की दृष्टि से कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों की गतिविधियाँ एवं स्वरूप चित्रण

सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन में नारी की विविध रूपों में महत्वपूर्ण भूमिका [1] हमारे देश में प्राचीन काल से रही है, जिसका कालिदास तथा भवभूति ने अपनी कृतियों में सुन्दर चित्रण किया है । इस सम्बन्ध में तुलनात्मक अध्ययन यहां किया जा रहा है ।

कन्या - नारी जीवन का प्रादुर्भाव- प्रथम अवस्था- कन्या रूप में होता है, जिससे प्रत्येक भारतीय परिवार प्रमुदित तथा परितुष्ट हो [2] हो जाता है । कालिदास तथा भवभूति ने अपनी कृतियों में सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन में कन्या के जन्म स्वरूप एवं उसकी विविध गतिविधियों, क्रीडाचेष्टाओं [3] आदि का मनोहर वर्णन किया है । अपने रम्य शैशव में पितृगृह में सामान्यतः सभी कन्याएं निश्चित अपनी सखियों के साथ जहाँ नाना प्रकार की क्रीडाएं [4] करतीं वहाँ कुछ बड़े होने पर परिवार के दायित्वपूर्ण कार्यों को भी समय पर सम्पन्न करतीं थी । यथा -

कण्वाश्रम में शकुन्तला, प्रियम्बदा, अनसूया जैसी ब्रह्मचारिणी तपस्विक न्याएं अपनी आयु या शरीर के अनुरूप घड़ों से आश्रम के छोटे पौधों को नियमित रूप से जल से सींचा करती [5] थीं --

राजा -- ''एतास्तपस्विकन्यकाः स्वप्रमाणानुरूपैः सेचनघटैर्बालपादमेभ्यः पयो दातुमित एवाभिवर्तन्ते । '' (अभि. । अंग, पृ. ४३३)

परिवार के मुखिया (पिता या माता) की अनुपस्थिति में अतिथि सत्कार का दायित्वपूर्ण कार्य कन्याएं ही सम्पन्न करती थीं जैसा कि ''अभिज्ञान शाकुन्तलम्'' में वैखानस के इस कथन से यह

---

१. कुमार . १/२८ पार्वती के जन्म से पिता हिमवान् पवित्रएवं विभूषित हो गये -- तया स पूतश्च विभूषितश्च ।

२. कुमार ६/६२ कन्येयं कुलजी वितम् । कन्या ही परिवार का जीवन एवं आनन्द थी ।

३. कुमार ० १/२६ मन्दाकिनी सैकतवेदिभिः सा कन्दुकैः कृत्रिमपुत्रकैश्च ।
रेमे मुहुर्मध्यगता सखीनां क्रीडारसं निर्विशतीव बाल्ये ।।

४. विक्रमो. ....सिकतापर्वतकेलीभिः क्रीड़न्ती विद्याधरदारिकोदयवती नाम ....

५. अभि. । पृ. १२ त्यत्तोअपि तातकण्वस्याश्रमवृक्षकाः प्रियतरा इति तर्कयामि येन नवमालिका - कुसुमपेलवा त्वमाप्येतेषां आलवालपूरणे नियुक्ता ।

तथ्य पुष्ट होता है -- "वैखानसः - इदानीमेव दुहितरं शकुन्तलामतिथिसत्काराय नियुज्य दैवमस्याः प्रतिकूलं शमयितुं सौमतीर्थ गतः ।" [१]

ब्रह्मचारिणी - कन्याओं को यथासमय समुचित शिक्षा भी दी जाती थी । शास्त्रीय विद्याओं इतिहास [२] निबंन्ध आदि के साथ उसे विविध ललित कलाएं भी सिखाई जाती थीं । यथा -- शकुन्तला काव्य रचना में निष्णात थीं, जिसका उदाहरण उसका प्रणय पत्र [३] लेखन है । इसी प्रकार प्रियंवदा अनसूया भी प्रसाधनकला में निपुण थीं, जिसे उन्होंने चित्रकला के आधार पर सीखा है था। [४]

कालिदास के समान भवभूति ने कन्याजीवन का विविध क्रियाओं से पूर्ण विस्तृत वर्णन न करते हुए उसके शैशवकालीन स्वरूप एवं बालसुलभ चेष्टाओं का स्वाभाविक चित्रण किया है । "उत्तर - रामचरित" में जनक सीता के शिशुरूप का स्मरण उसकी बालचेष्टाओं का वर्णन करते हुए विषादपूर्वक कहते हैं --

अनियतरुदित स्मितं विराजत् कतिपयकोमलदन्तकुड्मलाग्रम् ।
वदनकमलकं शिशोः स्मरामि स्खलदसमंजसमुग्धजल्पितं ते ।। उ. रा. ४/४

सीता का यह शिशु स्वरूप-चेष्टावर्णन कालिदास के अभिज्ञान शाकुन्तलम् में सर्वदमन की बालचेष्टाओं[५] के सर्वथा अनुरूप प्रतीत होता है ।

इसी प्रकार 'मालतीमाधव' [६] में कामन्दकी कन्या मालती के शैशव - स्वरूप का स्मरणं करती हुई करण शब्दों में कहती है, जो उत्तररामचरित की सीता के शैशवअचित्रण में जनक द्वारा वर्णित शब्दों की पुनरुक्तिमात्र है । आगे कन्या मालती के सम्बन्ध में उसका यह कथन द्रष्टव्य है --

स्तन्यत्यागात्प्रभृति सुमुखी दन्तपांचालिकेव, क्रीडायोगं तदनुविनयं प्रापिता वर्धिता च ।
लोकश्रेष्ठे गुणवति वरे स्थापिता त्वं मयैव, स्नेहो मातुर्मयि समधिकस्तेन युक्तस्तवापि ।। मा. मा. १०/५

और भी मालती का कन्या रूप कितना आकर्षक कामन्दकी की दृष्टि में है --
वह स्मरण करती हुई कहती है --

अकारणस्मेरमनोहराननः शिखा ललाटार्पित गौर सर्षपः ।
तवांकशायी परिवृत्तभाग्यया, मया न दृष्टस्तनयः स्तनन्धयः ।। मा. मा. १०/६

---

१. अभि. १/१३ के पश्चात् वैखानस की उक्ति, पृ. ४३२ ।
२. अभि २/७ के पश्चात् अनसूया - किन्तु यादृशी इतिहास निबन्धेषु कामयमानानामवस्था श्रूयते, तादृशीं तव पश्यामि ।
३. अभि. ३/१४ तव न जाने हृदयं मम पुनः कामो दिवाअपि रात्रिमपि । निर्घृण तपति बलीयस्त्वयि बृत्तमनोरथान्यंगानि ।। "
४. अभि. ४ अंक "चित्रकर्मपरिचितेनांगेषु ते आभरणविनियोगं कुर्वः । पृ. ६७
५. अभि. ७/१६, १७,
६. मालती. १०/२ अनियत रुदित ....मुग्ध जल्पितं ते ।

इसी प्रकार कन्या मालती की माधव के प्रति आकर्षण जन्य अवस्था का वर्णन करती हुई उसकी सखी लवंगिका [१] कहती है, जिससे उसकी कला-क्रीड़ाओं की अभिरुचि का आभास प्राप्त होता है ।

कुल कन्या के कमनीय सौन्दर्य का चित्रण कालिदास तथा भवभूति दोनों नाटककारों ने करते हुए इनके विवाह के सम्बन्ध में धर्मशास्त्रीय सामाजिक दृष्टिकोण भी प्रस्तुत किया है । [२] कालिदास के कण्व की दृष्टि में कन्या विवाह के पूर्व तक पराया (निक्षेप रूप में) धन है [३] उस (शकुन्तला) कन्या को उसके गुणों के अनुरूप वर को प्रदान करने का संकल्प [४] था, किन्तु परिस्थितिवश एवं शकुन्तला को दुष्यन्त द्वारा पूर्व क्षत्रिय कन्याओं के गान्धर्व विवाह करने तथा उनके गुरुजनों द्वारा उन्हें अभिनन्दित करने का उदहारण दिये जाने पर गान्धर्व विवाह हेतु प्रेरित किया गया --

गान्धर्वेण विवाहेन वहव्यो राजर्षिकन्यकाः ।

श्रूयते परिणीतास्ताः पितृभिश्चाभिनन्दिताः ।। अभि. शा. ३/२०

प्रतीत होता है, कालिदासकालीन उच्चवर्ग के समाज में गान्धर्व विवाह कन्याओं के प्रचलित थे, जिसका अनुमोदन मनु [५] याज्ञवल्क्य जैसे धर्मशास्त्रकारों [६] ने भी किया है । सामान्यतः कन्या के विवाह का दायित्व अथवा अधिकार परिवार में उससे माता पिता गुरुजनों को ही था किन्तु कभी कभी राजपरिवार भी कन्या विवाह सदृश सामाजिक संस्कार में अवांछनीय हस्तक्षेप करने लगते थे जो धर्मशास्त्रीय दृष्टि से सम्मत नहीं था । भवभूति ने कन्यादान में राजा की अपेक्षा माता पिता के वचन को ही प्रामाणिक मानते हुए मालती के कन्यादान के सम्बन्ध में सत्य ही लिखा है --

"न खलु महाराजस्य निज कन्यका मालती । कन्यका प्रदाने च नृपतयः प्रमाणमिति नैवंविधो धर्माचारसमयः । " [७]

कालिदास [८] के समान भवभूति ने भी समाज में सन्तानाभाव होने पर किसी अन्य के पुत्र या कन्या को अपनी कन्या के समान (Adopted Daughter) रूप में गोद लेने का उल्लेख किया है--

---

१. मालती. - ३ अंक लवंगिका - अस्माकमपि भर्तृदारिका ....नाभिनन्दति कला क्रीडाः। विदग्ध सहचरी चित्तसंशयति कौमारभावा भवति । पृ. १४६-१४७

२. मालविका. २/३ अहो सर्वस्थानानवद्यता रूप विशेषस्य --दीर्घाक्षं शरदिन्दु तथास्या वपुः। अभि. २ /१० अनाघ्रा नं पु ष्पं किसलयमलू नं कररुहै." ।
मालती. ७/१ विशुद्ध मुग्धः कुलकन्यकाजनः

३. अभि. ४/२२ अर्थो हि कन्या परकीया एव, तामप संप्रेष्य परिगृहीतुः ।

४. अभि. १/२४ के पश्चात् प्रियंवदा - गुरो : पुनरस्या अनुरूपवरप्रदाने संकल्पः ।

५. मनुस्मृतिः ३/३२

६. याज्ञ. १/६१

७. मालती. ४/५ के पूर्व, पृ. १८७

८. अभि. १/२२३ के पूर्व अनसूया - "उज्झितायाः शरीर संवर्धिनादि भिस्तातकाश्यपापऽस्याः पिता । " अंक ४/१४ (पुत्रकृतकः) उ. मे. यस्योपान्ते कृतकतनयः........

"कन्यां दशरथो राजा शान्तां नाम व्यजीजनत् ।
उपेत्य कृतकां राज्ञे लोमपादाय यां ददौ ।। " उत्तर. १/४

इस प्रकार दोनों नाटककारों ने सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन में कन्या के अस्तित्व को पर्याप्त महत्व प्रदान किया है ।

युवती - कालिदास की नाट्य एवं काव्य कृतियों की सभी नायिकाएं सामान्यतः अनिनद्यसौन्दर्य समन्वित युवतियाँ ही है । मालविका के यौवन-सौन्दर्य का चित्रण अधोलिखित पद्य पंक्तियों में कितना प्रभावपूर्ण है --

"विपुलं नितम्बदेशे मध्ये क्षामं समुन्नतं कुचयोः ।
अत्यायतं नयनयोर्मम् जीवितमेतदायाति ।। माल. ३/७
दीर्घाक्षं शरदिन्दुकान्तिवदनं बाहू नतावंसयोः ।
संक्षिप्तं मध्यः निविडोन्नतस्तनमुरः पार्श्वे प्रमृष्टे इव ।
पाणिमितौ नितम्बिजघनं पदावरालांगुली,
छन्दो निर्तयितुर्यथैव मनसि श्लिष्टं तथास्याः वपुः ।। माल. २/३

कालिदास ने उर्वशी [1] एवं शकुन्तला [2] जैसी युवतियों के अनिर्वचनीय सौन्दर्य-सृष्टि की अद्‌भुत कल्पना करते हुए उन्हें अलौकिक सुन्दरी रूप में चित्रित किया है । कुमारी युवती के अनुपयुक्त एवं अस्पृष्ट यौवन एवं रूप का वर्णन भी कवि कुशलतापूर्वक करता है -- "अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं.......समुपस्थास्यति विधिः (अभि. २/११)

कालिदास ने अपनी नाट्य कृतियों में नायिकाओं को परिपक्व अवस्था की उपभोग क्षमपूर्ण युवती रूप में प्रस्तुत किया है, जिनका मांसल शारीरिक सौन्दर्य ही आकर्षक रूप में अंकित है । यथा - "प्रियंवदा (सहासम्) अत्र पयोधर विस्तारयितृ आत्मनो ।यौवनंसुपालम्भस्व । मां किसुपालभसे । [3] "

तथा - अभ्युन्नता पुरस्तादवगाढ़ा जघनगौरवात्पश्चात् ।। (अभि. ३/६) इसी प्रकार मालविका [4] की पूर्ण युवावस्था को "संक्षिप्तं निबिडोन्नतस्त नमुरः.......मध्यः पाणिमितौ नितम्बि जघने" आदि अनेक स्थलों पर व्यक्त किया गया है । नवयौवना के नखशिख-सौन्दर्य चित्रण में कालिदास [5] अत्यन्त सिद्धहस्त हैं, जबकि भवभूति युवती के मांसल शारीरिक सौन्दर्य का चित्रण न

---

१. विक्रमो. १/१० अस्याः सर्गविधौ प्रजापतिरभूच्चन्द्रो नु कान्तिप्रदः ,
श्रृंगारैकरसः स्वयं नु मदनो मासो न पुष्पाकरः ।
वेदाभ्यासजडः कथं नु विषयव्यावृत्तकौतूहलो,
निर्मातं प्रभवेन्मनोहरमिदं रूपं पुराणोमुनिः ।।

२. अभि. २/१० चित्रे निवेश्य ....धातुर्विभुत्वमनुचिन्त्य वपुश्च तस्याः ।।

३. अभि. शा. अंक १, पृ. १३

४. माल. २/३

५. कुमार. १/३८ तस्याः प्रविष्टा नतनाभिरन्ध्रः रराज तन्वी नवलोमराजिः ।
१/३६....बलित्रयं चारु बभार वाला, १/४० .. स्तनद्वयं पाण्डुतया प्रवृद्धम् ।

करते हुए उसकी स्वाभाविक रम्य चेष्टाओं, आंतरिक सद्गुणों एवं आंगिक गतिविधियों की विशेषतापूर्ण रमणीयता को उजागर करने में अत्यन्त निष्णात [1] हैं । यथा - मालती के अन्तः सौन्दर्य[2] को मूर्तमान करते हुए भवभूति माधव के मुख से कहलाते हैं -

''सा रमणीयकनिधेरधिदेवता वा, सौन्दर्यसारसमुदायनिकेतनं वा ।

तस्याः सखे नियतमिन्दुकला-मृणाल-ज्योत्स्नादि कारणभूतमदनश्चवेधाः ।। माल.मा.१/२२

तथा - परिमृदितमृणालीम्लानमंगप्रवृत्तिः,
कथमपि परिवार प्रार्थनाभिः क्रियासु ।
कलयति च हिमांशोर्निष्कलं कस्य लक्ष्मी -
रभिनव करिदन्तच्छेदकान्तः कपोलः ।। मा. मा. १/२३

इसी प्रकार नायिका की आंगिक चेष्टाओं - भ्रूविलास, कटाक्ष सत्त्विक-भाव-व्यंजना आदि का सुन्दर चित्रण ३ भी उन्होंने स्थान-स्थान पर अपनी कृतियों में किया है । यथा - नायक के अन्तः करणं को विकसित करने वाली मालती [4] की रमणीयता इस प्रकार वर्णित है --

''परिमृदित चम्पकावलि विलासलुललितालसैरंगेः ''सम्प्रति रमणीयतरा मालती ।

''आविर्भवन्ती प्रथमं प्रियायाः सोच्छ्वासमन्तः करणं करोति ।
निदाघसंतप्त शिखण्डियूनो वृष्टेः पुरस्तादचिरप्रभेव ।। '' मा. मा. ३/६

इसी प्रकार उत्तर रामचरित में गर्भवती सीता के सौन्दर्य को इस प्रकार चित्रित किया गया है-

''त्रस्तैकहायनकुरंगविलोल दृष्टेस्तस्याः परिस्फुरित गर्भ भरालसायाः ।

ज्योत्स्नामयीव मृदुबालमृणालकल्या, क्रव्यादिरंगलतिका तमसा विलुप्ता ।। उत्तर.३/१६

राम के प्रति सीता की सतृष्ण सार्शु सात्त्विक प्रेम-भावपूर्ण सृष्टि का तमसा द्वारा वर्णन इस छन्द में द्रष्टव्य है --

'विलुलितमतिपूरैर्वाष्यमानन्दशोक,
प्रभवम वसृजन्ती तृष्णयोत्तान दीर्घा ।
स्नपयति हृदयेशं स्नेहानिष्यन्दिनी ते,
धवलबहुलमुग्धा दुग्धकुल्येव दृष्टिः ।। उत्तर. ३/२३

युवती का आदर्श - भारतीय नारी के समस्त उदात्त गुणों से परिपूर्ण होकर मनोवांछित [5] पति तथा उसका एकनिष्ठप्रेम प्राप्त करना प्रतीत होता है । कालिदास तथा भवभूति के नाटकों में चित्रित

---

१. मा. मा. १/२६ सभ्रूविलासमथ .....
२. मा. मा. १/२६ हृदयमशरणं में पक्ष्मलक्ष्याः कटाक्षैः, १/२८ स्तिमित विभसित
३. मा. मा. २/५ नीवीबन्धोछवद्वसनमधरस्पन्दनं १/२८. . पात्रमालोकितानाम् दोर्विषादः..।
४. मा. मा.. ३/६ तथा इसके बाद. पृ. १४३
५. कुमार. ३/६३ अनन्यभाजं पतिमाप्नुहीति सा तथ्यमेवाभिहिता भवेन ।

युवतियों का उच्च आदर्श था, जिससे वे आदर्श दाम्पत्य जीवन को प्राप्त करने में सफल होती थीं । यद्यपि युवतियां अपनी हृदयगति प्रेम की बात सामान्यतः व्यक्त नहीं करतीं थीं, तथापि अपनी अन्तरंग सखियां [१] से इसे छिपा भी नहीं पातीं थीं, क्योंकि उनकी बाह्य शारीरिक अवस्था ही इसका आभास देने लगती थीं जैसा कि प्रियंवदा शकुन्तला की दुष्यन्त विषयक प्रेजन्य शारीरिक अवस्था को लक्ष्य कर उससे कहती है -

"सखि शकुन्तले । सुष्ठु एषा भणति । किमात्मान आतंकमुपेक्षे
अनुदिवसं खलु परिहीयसेअंगैः । केवलं लावण्यमयी छाया त्वां न मुंचति ।

शकुन्तला की यह कामपीड़ित स्थिति स्वयं दुष्यन्त से भी नहीं छिपी थी, जैसा कि उसकी उक्ति [२] से प्रकट होता है ।

अन्ततः अपंनी प्रेमाकांक्षा को प्रेयसी युवती अपनी अन्तरंग सखी से एकान्त में लज्ज्ञापूर्वक प्रकट कर ही देती थी । यथा - शकुन्तला का यह कथन दृष्टव्य है --

"सखि । यतः प्रभृति मम दर्शनपथमागतः स तपोवनरक्षिता राजर्षिः (अर्धोक्ते लज्ज्ञां नाटयति) ततः आरभ्य तद्गतेनाभिलाषणैतदवस्थास्मि संवृता ।

तद् यदि वामनुमतम् तदा तथा वर्तेथाम् यथा तस्य राजर्षेर नुम्पनीया भवामि । अन्यथा सिंचतं मे तिलोदकम् ।" [३]

लज्ज्ञाशील युवती की यही हृदयगत प्रेमाभिलाषा "विक्रमोर्वशीयम्" [४] में चित्रलेखा से कहे उर्वशी के इन शब्दों से प्रकट होती है - "उर्वशी - (जनान्तिस्म्) सखि चित्रलेखे । उपकारिणं राजर्षि न शक्नोभ्यामंत्रयितुं तत् त्वमेव में मुखं भव ।" तथा सखि । तदा हेमकूटशिखरे लता विटपेन क्षणविघ्न-ताकाशगमनां मासुपहस्य किमिदानीं पृच्छसि; क गम्यते इति ! अथ किम् । अयं में अपहस्तितलज्ज्ञो व्यवसायः ।" [५]

मालविका की भी प्रियतम-प्राप्ति-विषयक अभिलाषा इस प्रकार प्रकट हुई है --

दुर्लभः प्रियो मे तस्मिन् भव हृदय निराशम हो,
अपांगो में परिस्फुरति किमपि वामः ।
एष स चिरदृष्टः कथं पुनरुपनेतव्यो,
नाथ मां पराधीनां त्वपि परिगणय सतृष्णाम् ।। " माल वि. २/४

---

१. अभि. २/८ के पूर्व प्रियंवदा की उक्ति, पृ. ४६३
२. अभि. २/८ क्षाम-क्षाम कपोलमाननमुरः काठिन्यमुक्तस्तनं,
मध्यः क्लान्ततरः प्रकाम विनतावंसौ छविः पाण्डुरा ।
शोच्या च प्रियदर्शना च मदन क्लिष्टेयमालक्ष्यते,
पत्राणामिव शोषणेन मरुता स्पृष्टा लता माधवी ।।
३. अभि. शा. ३/१० पूर्वापरकथोपकथन पृ. ४६४
४. विक्रमो. १/१७ के बाद उर्वशी पृ. पृ. ३४७
५. विक्रमो. २/६ के पश्चात् पृ. ३५५-५६

अपनी हृदयगत इसी अभिलाषा को वकुलावलिका से प्रकट करती हुई इसकी आपूर्ति में देवीधारिणीजन्य बाधा की भी आशंका व्यक्त करती हुई उससे कहती है --

माल. "सखि । देवीं चिन्तयित्वा न में हृदयं विश्वसिति । त्वं तावद्, दूघाति गच्छतः सहायिनी भव ।" [1] तथा - " सखि । मम पुर्नमन्दभाग्यया: स्वप्नसमागमेअमूर्तदुर्लभ आसीत् ।'[2]

भवभूति ने भी कालिदास के समान अपनी कृति मालती माधवं में प्रेयसी युवती मालती की कौतूहलपूर्ण प्रेमाभिलाषा को सखी लवंगिका से इस प्रकार व्यक्त किया है - "मालती (जनान्तिकम्) अस्ति मे कौतूहलम् ?

सखि ! लवंगिके ! श्रुतं महाकुलप्रसूतो महाभाग इति । सुष्ठु भणितं प्रियसख्या कुतो [3] वा महोदधिं वर्जयित्वा पारिजातसुमनोद्गमः ति । अपि नाम तं पुनरपि प्रेक्ष्ये ।' [4]

पतिविप्रयुक्ता सीता की अनन्य प्रेमाभिलाषा उत्तरचरित में तृतीय २ अंक के अनेक श्तलों में तमसा एवं वासन्ती से इस प्रकार अभिव्यक्त हुई है । यथा -

"**सीता** - (सास्त्रम्) ...... अहमेतस्य हृदयं जानामि, मम एषः इति । ......एतस्य एवं विधेन दर्शनेन कीदृश इव में हृदयानुबन्ध इति न जानामि । .. भगवति, प्रसीद क्षणकामपि तावत् दुर्लभं जनं प्रेक्षे । " [5]

इस प्रकार हम देखते हैं कि कालिदास तथा भवभूति दोनों नाटककारों ने युवती के आदर्श रूप अनन्य पावन प्रेम की अभिलाषाको अपनी कृतियों में प्रकट किया है ।

विवाह संस्कार - सामान्यतः धर्मशास्त्रानुमोदित [6] सजातीय युवतियों से विवाह संस्कार कालिदास तथा भवभूति के समय सम्पन्न होते थे, किन्तु मनु [7], वशिष्ठ [8] जैसे स्मृतिकारों की इस अनुमति कि अपने वर्ण से नीची वर्ण की कन्या से विवाह किया जा सकता है - को दृष्टि में रखते हुये अर्न्तजातीय युवतियों से भी विवाह यदा-कदा उस समय सम्पन्न हो जाते थे । कालिदास की कृतियों में अर्न्तजातीय विवाह सम्पन्न होने का संकेत प्राप्त होता है । [9] उदाहरणार्थ "मालविकाग्निमित्रम्"

---

१. माल. ३ /१४ के पूर्व, पृ. २६३
२. माल. ४/१२ के पूर्व, मालविका की नकुलावलिका से उक्ति, पृ. ३११
३. मा. मा. १/१६ भूयोभ्यः सविधनगरीरथ्यया पर्यटन्तं दृष्ट्वा दृष्ट्वा भवन वलभीतुंगवातायनस्था साक्षात्कामं नवमिव रतिर्मालती माधवं यद् गाढोत्कण्ठा लुलित-लुलितैरंगकैस्ताम्पतीति ।
४. मालती. अंक २/१२ पूर्वापर पृ. ११६-१२०
५. उत्तर . च. अंक ३, पृ. २८५, २८७, ३६७ ।
६. आपस्तमूवधर्मसूत्र २/६/१, ३ मानवगृह्य सूत्र १/७/८, गौतमधर्मसूत्र ४/१ धर्मशास्त्र का इतिहास (पी. वी. काणे) पृ. ४४८
७. मनु. ३/१२/, १३
८. वशिष्ठधर्मसूत्र १/२५, वौधायन १/८/२
९. कालिदास के ग्रन्थों पर आधारित तत्कालीन भारतीय संस्कृति, डा. गायत्री वर्मा, वाराणसी, १९६३, पृ. ९०

में ब्राह्मण सेनापति पुष्यमित्र शुंग के पुत्र अग्निमित्र ने क्षत्रिय कन्या मालविका से विवाह किया था। इसी प्रकार शकुन्तला के पिता विश्वामित्र क्षत्रिय मानव थे, जबकि माँ मेनका अप्सरा अमानवी ! दोनों के असमान जाति के होने पर गान्धर्व-विवाह आगे दुष्यन्त शकुन्तला का भी सम्पन्न हुआ, जबकि दुष्यन्त द्वारा शकुन्तला के ऋषि कन्या होने से "असवर्णसम्भवा" होने का सन्देह इस प्रकार प्रकट किया गया था --

"अपि नाम कुलपतेरियमसवर्णसम्भवा स्यात् । अथवा कृतं सन्देहेन । असंशयं क्षत्र परिग्रह क्षमा यदार्यमस्याममिलाषि से मनः ।"

विधूषक स्वयं राजा को शकुन्तला से शीघ्र विवाह करने का इसलिए परामर्श [१] देता है कि ऐसा न हो यह किसी तपस्वी के हाथ जा पड़े, क्योंकि उसका विवाह किसी तपस्वी के साथ भी संभव था। [२]

"मालविकाग्निमित्रम्" के प्रथम अंक में प्राप्त "वर्णावरो" [३] शब्द से यह प्रमाणित होता है कि उस समय निम्न वर्ण या दूसरे वर्ण की युवती के साथ विवाह सम्पन्न हो जाता होगा । कालिदास की काव्य नाट्य कृतियों में बहु विवाह प्रथा का परिचय प्राप्त होता है । रघुवंश में दिलीप तथा दशरथ की अनेक पत्नियों [४] का अभि. शाकुन्तल में "बहु बल्लभा राजानः श्रूयन्ते" "किमन्तः पुरविरहपर्युत्सुकस्य राजर्षेरूपरोधेन" वाक्यों के साथ हंसपदिका एवं वसुमती नामों का, मालविकाग्निमित्रम्' में इरावती एवं धारिणी दो पत्नियों के होते हुए मालविका से विवाह करना विक्रमोर्वशीयम् में काशिराज की पुत्री औशीनरी के होने पर प्रेयसी उर्वशी के साथ परिणय का उल्लेख तत्कालीन सम्पन्न समाज में बहु विवाह प्रथा को पुष्ट करता है । पुरुष की अनेक पत्नियाँ होने पर भी स्त्री का एक ही पति होता [५] था, एक पत्नीव्रत की व्याख्या टीकाकार मल्लिनाथ ने इस प्रकार की है -- "एकः पतिर्यस्याः सैकपत्नी पतिव्रता ।"

यद्यपि युवती के विवाह प्रकारों में कालिदास ने सामायतिः धर्मशास्त्रकारों [६] द्वारा अनुमोदित ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य जैसे विधि पूर्वक सम्पन्न होने वाले उत्तम विवाहों को ग्रहण किया है, तथापि स्वयंवर या गान्धर्व जैसे विवाहों का भी अनुमोदन उन्होंने किया है । इन्दुमती [७] - अज तथा सीता-राम का स्वयंवर के साथ विधि पूर्वक ब्राह्म विवाह, वस्त्रालंकृता पार्वती का शिव के साथ

---

१. अभि. १/२० तथा इनके पूर्व राजा की उक्ति पृ. ३४
२. अभि. अंक १ विधूषक - तेन हि लघु परित्रायतामेनां भवान् । मा कस्यापि तपस्विन इंगुदी तैलमिश्रचिक्कणे शीर्षस्य हस्ते पतिष्यति । पृ. ३४
३. माल. " अस्ति देव्या वर्णावरो भ्राता वीरसेनो नाम । स भर्त्रा नर्मदातीरे अन्तपाल दुर्गे स्थापितः । " अंक १ पृ. २३
४. रघु. १/३२ कलत्रवन्तमात्मानमवरोधेमहत्यपि । सर्ग १०/५५, ५६, ५७, ६६, ७०, ७१।
५. कुमार. ३/७ कामेकपत्नीव्रतदुःखशीलां ....पर मल्लिनाथ की टीका ।
६. मनु. ३/२४
७. रघु. ७/१६, २०, २१, (पाणिग्रहण)

प्राजापत्य विवाह, शकुन्तला का दुष्यन्त तथा उर्वशी का पुरुरवा के साथ गान्धर्व विवाह [१] इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं । कभी-कभी प्रतापी सबल राजा से डर कर दूसरा कम शक्तिशाली राजा अपनी कन्या उसे उपहार स्वरूप भी दे देता था जैसे कुमुद द्वारा कुमुद्वती कुश को उपाहृत कर विवाहित [२] हुई थी ।

कभी-कभी स्वयंवर या विवाह समारोह में घमण्डी कामी राजा दूसरे की नवपरिणीता को भी ब्लात् छीनने का भी प्रयास करते थे । [३]

यद्यपि कालिदास ने आसुर विवाह का उल्लेख अपनी कृतियों में कहीं नहीं किया , तथापि इसका संकेत एक स्थल पर इस प्रकार अवश्य किया है --

"स्वं विचिन्त्य च धनुर्दुरानमं पीडितो दुहितृशल्कसंस्थया । (रघु. ११/३८)

यद्यपि कालिदास के समान भवभूति ने अन्तर्जातीय बहुविधि विवाहों के निदर्शन अपने नारी पात्रों के प्रस्तुत नहीं किये हैं, तथापि स्वयंवर या गान्धर्व विवाह का स्पृहणीय रूप में उल्लेख [४] अवश्य किया है, इससे यह प्रतीत होता है कि भवभूति भारतीय संस्कृति में मनु आदि धर्मशास्त्रियों द्वारा आचार्यों के प्रचलन हेतु मान्यता प्राप्त सजातीय ब्राह्म प्रजापत्य जैसी उत्तम श्रेणी की विवाह [५] - विधि के पक्षपाती थे, जिसका उन्होंने अपने रूपकों में स्पष्ट उल्लेख किया है --

"सीता - एते खलु तत्काल कृतगोदानमंगलाः चत्वारो भ्रातरो विवाहदीक्षिता : यूयम् । रामः-समयः वर्त्तत इवैष यत्र मां समनन्दयत् सुमुखि गौतमार्पितः । अयमुद्गृहीत कमनीयकंकणस्तव मूर्तिमानिव महोत्सवः करः ।। " (उत्तर. च. १/१८) [६]

विवाहार्थ युवती के अनुरूप वर के रूप, आयु, कुल आदि अनेक गुणों की अपेक्षा रखना भवभूति की दृष्टि में महत्वपूर्ण है । रूप तथा वय आदि वरगुणों की अपेक्षा न रखने वाले वैषम्यपूर्ण विवाह की शोचनीय स्थिति राजा द्वारा होते हुए मालती और नन्दन के विवाह के समान होती है । इस सम्बन्ध में लवंगिका कामन्दकी का कथन द्रष्टव्य है --

"लवंगिका - अस्त्येतद्यन्नरेन्द्रवचनानुरोधेन नन्दनस्य प्रतिपन्ना मालतीति सकलो जनोऽमात्यं जुगुप्सते । " [७]

---

१. अभि. ३/२० गान्धर्वेण विवाहेन बहव्यो राजर्षिकन्यकाः । श्रूयन्ते परिणीतास्ताः पितृभिश्चामि नन्दिताः ।

२. रघु. १६/८५-८७

३. रघु. ७/३१ आदास्यमानः प्रमदामिषं तदावृत्य पन्थानमजस्य तस्थौ ।

४. उत्तर. "सीता - .....अनादरखण्डितशंकरशरासनः शिख्ण्डकमुग्धमुखमण्डलः ....अंक १, पृ. ८ ८५

५. मा. मा. - कामन्दकी- "यच्च किल कौशिकी शकुन्तला दुष्यन्तमप्सराः ।
पुरुरवसं चकमे उर्वशीत्याख्यानविंद आचक्षते वासवदत्ता पिता संजयाय । ६/१६
राज्ञे दत्तमालानमुदयनाय प्रायच्छदित्यादि, अंक २, पृ. १११-११२, मा. ३/३ के पूर्व पृ. २८६

६. उत्तर. १/१८ तथा पूर्व, ३/४० गृहीतो यः पूर्व परिणयविधौ कंकणधरः ।

७. मा. मा. २/७ के पूर्व, पृ. १०८

स्वयं मालती की स्वगतोक्ति देखिए - "कथमुपहारीकृतास्मि राज्ञतातेन ।"[१]

कामन्दकी का आश्चर्यपूर्ण आक्षेप इस प्रकार के वैषम्ययुक्त विवाह के सम्बन्ध में प्रकट किया गया है --'

"गुणापेक्षाशून्यं कथमिदमुपक्रान्तमथवा,
कुतोऽपत्यस्नेहः कुटिलनयनिष्णातमनसाम् ।
इदं त्वैदम्पर्यं यदुत नृपतेर्नर्मसचिवः,
सुतादानान्मित्रं भवतु स भवान्नन्दन इति ।।" मा. मा. २/७

वस्तुतः कन्यादान (विवाह संस्कार) में राजा की अपेक्षा कन्या के माता-पिता धर्मशास्त्रीय दृष्टि से भवभूति प्रमाण मानते हैं, जिसे कामन्दकी की उक्ति में इस प्रकार व्यक्त किया है -- "कामन्दकी - न खलु महाराजस्य निजकन्यका मालती । कन्यका-प्रदाने च नृपतयः प्रमाणमिति नैवंविधो धर्माचारसमयः ।"[२]

संक्षेप में कालिदास के समान भवभूति भी[३] पुरुष और युवती के गुणानुरूप समागम या विवाह को जीवन का कल्याण रूप मानते हैं ।

वधूवेशभूषा - विवाह के शुभ अवसर पर वधू के आत्मीय सभी सम्बन्धी आशीर्वाद[४] देते हुए अलंकृत करते थे । उस दिन प्रातः काल से ही वधू का श्रृंगार होने लगता था[५] सौभाग्यवती स्त्रियां बधू का श्वेत सर्षप तथा दूर्वाकरों से श्रृंगार करती थी उसे 'निर्नाभिकौशेय'[६] पहनाकर वाण खोंस कर अलंकृत कर दिया जाता था । वधू के शरीर पर पुत्रवती एवं सौभाग्यवती स्त्रियां लगे तैल को लोध्र[७] के चूर्ण से सुखाकर सुगन्धित द्रव्यों का अंगराग लगाती थीं तत्पश्चात् उसको स्नान के लिए ले जाकर स्नानार्थ पृथक् वस्त्र दिया जाता था ।[८]

वधू को चौकी पर आसीन कर मंगलगान सहित स्नान कराया जाता था; तदुपरान्त उसे पूर्वाभिमुख कर उसका वैवाहिक श्रृंगार होता था ।[९]

---

१. मा. मा. २/७ के पूर्व पृ. १०८
२. मा. मा. ४/५ के पूर्व कामन्दकी की उक्ति, पृ. १८७ ।
धर्मशास्त्र (स्मृति ग्रन्थों) में कन्यादान का अधिकार पित्रादि को प्राप्त है, अन्य को नहीं! जैसा कहा गया है - पिता पितामहो भ्राता सकुल्यो जननी तथा ।
कन्याप्रदः पूर्वाभावे प्रकृतिस्थः परः परः । (याज्ञवल्क्य.)
३. मा. मा. १०/२४
४. कुमार. ७/५ अंकाद्यावंकमुदीरिताशीः सा मण्डनान्मण्डनमन्वयुक्तं ।
५. कु. ७/६, ७
६. कु. ७/७ निर्नाभिकौशेयमुपात्तवाणमभ्यंगनेपथ्यमलंचकार ।
७. कु ७/६
८. कु. ७/१०
९. कु. ७/१३.

मंगलवेदिका पर आसन बिछा कर बधू को बैठाकर अगरु और चन्दन के धुएं से केश सुखाकर [१] उनमें पुष्प गूंथ दिए जाते थे । केशपाश में दूर्वा-मिश्रित मधूक -पुष्पों की माला लपेट दी जाती थी । [२] बधू के शरीर पर श्वेत अग रु निर्मित अंगराग लगाकर गौरोचन से अंग पर पत्ररचना[३] की जाती थी । कानों में यवांकुर धारण करादिये जाते [४] थे तथा पैरों में महावर [५], आंखों में अंजन,[६] होठों पर लाली [७] लगाकर स्वर्ण रजत, मुक्ता आदि के आभूषणं पहना दिये जाते थे । [८] हरताल तथा मैनसिल का तिलक [९] वधू के माथे पर लगा दिया जाता था । [९]

बधू को विवाह के दिन माँ द्वारा ''ऊणार्मय कौतुक हस्तसूत्र'' [१०] (कंगन) भी धारण कराया जाता था, जिसे कालिदास ने अन्यत्र विवाह कौतुक [११] तथा 'ऊर्णावलय' [१२] शब्दों से अभिहित किया है । सामान्यतः इसे वर वधू दोनों के हाथों में बांधा जाता था ।

वधू के वैवाहिक वस्त्र क्षौम [१३] के प्रयुक्त होते थे, जिनकी शुक्लता राशि की शुभ्रता के सदृश व्यक्त की गई [१४] है । क्षौम वस्त्र पर कलहंस के चिह्नांकित रहते थे । सामान्यतः बधू को क्षौम-युगल पहिनाया जाता था । अन्यत्र बधू या युवती के कलहंस दुकूल का भी कालिदास ने उल्लेख [१५] किया है । (कु. ५/६७)

क्षौम वस्त्र धारण करने के पश्चात् बधू के हाथ में नवीन दर्पण भी रखने की लौक परम्परा प्रचलित थी । (कु. ७/२६ सा भूयो बभौ दर्पणमाधाना)

बधू की वैवाहिक वैशभूषा पूर्ण हो जाने के पश्चात् वह कुल क्रमागत-रीति-अनुसार कुल-देवताओं, तत्पश्चात् अन्य सौभाग्यवती स्त्रियों को प्रणाम करती थी, जिनसे उसे पति का अखण्ड प्रेम प्राप्त करने का शुभाशीर्वाद प्राप्त होता था । कु. ७/२७, २८) पतिगृह प्रस्थान के समय

---

१. कु. ७/१४ धूपोष्मणा . . . . .दूर्वावता पाण्डुमधूकदाम्ना ।
२. कु. ७/१५
३. कु. ७/१७ कर्णार्पितो लोध्रं कषायरुक्षे ....प्ररोहः ।
४. कु. ७/१७
५. कु. ७/१६ सा रंजयित्वा चरणौ कृताशीमर्ल्लियेन ....
६. कु. ७/२० न चक्षुषोः कान्तिविशेषबुद्धया कालांजनं मंगलमित्युपात्तम् ।
७. कु. ७/१८ रेखाविभक्तः ....विभृष्टरागः ।
८. कु. ७/२१ .... आभरणा चकासे
६. कु. ७/२३ अथांगुलिभ्यां हरितालमार्द्र ....विवाहदीक्षातिलकं चकार ।
१०. कु. ७/२५ धात्र्यंगुलीभिः प्रतिसार्यमाणमूर्णामयं कौतुकहस्तसूत्रम् ।
११. रघु. ८/१ अथ तस्य विवाहकीतुकं ललितं विभ्रत एव पार्थिवः ।
१२. रघु. १६/८७ मांगल्योर्णावलयिनि ....।
१३. कु. ७/२६ नवंक्षौमनिवासिनी सा
१४. अभि. शा. ४/५ क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डुतरुणा ....
१५. अभि., पृ. ६८

वधू की वेशभूषा -- प्रातःकाल वधू शिर से शीघ्र स्नान कर लेती [१] थी तथा उसकी सखियाँ उसका मंगल श्रृंगार [२] करतीं थीं । गोरोचन, तीर्थमृत्तिका, दूर्वाकिसलय, केशरमालिका आदि मांगलिक श्रृंगार के लिए प्रमुख सामग्री [३] थी । चरणों में आलक्त [४] तथा अन्य अंगों में आभूषण प्रयुक्त होते थे । [५] वस्त्रों में क्षौमयुगल धारण किया जाता था, जिसमें उत्तरीय भी रहता था । प्रतीत होता है, उत्तरीय का प्रयोग पति या गुरुजनों के समक्ष अवगुण्ठन हेतु किया [६] जाता था । शकुन्तला दुष्यन्त की राजसभा में अवगुण्ठनवती आयी थी, जिसको दुष्यन्त के पहचानने के लिए गौतमी ने अवगुण्ठन हटाते हुए उससे कहा था --

"अपनेष्यामि तावत्ते अवगुण्ठनम् ततस्त्वां भर्ता ऽभिज्ञास्यति ।"[७]

इससे तत्कालीन समाज में स्त्रियों की पर्दा प्रथा का आभास प्राप्त होता है ।

कालिदास के कुमारसम्भव के समान भवभूति ने अपनी नाट्यकृतियों में वधू की वैवाहिक परम्परागत प्रसाधन विधियों का विस्तार में वर्णन तो नहीं किया है तथापि अनेक स्थलों पर वधू की वैवाहिक वेशभूषा का प्रसंगानुसार उल्लेख [७] अवश्य किया है । यथा -

सीता तथा मालती के कमनीय कंकण (वैवाहिक कर-सूत्र Nuptial thread) का समान शब्दों में समुल्लेख द्रष्टव्य है --- "समयः वर्त्तत.........".

" अयमुद्गृहीत (स्वयमागृहीत) कमनीय कंकणस्तवमूर्त्तमानिव महोत्सवः करः । " (उत्तररामचरित १/१८, मालती. ६/६)

मालती की नववधू रूप में वैवाहिक वेशभूषायुक्त शोभा का वर्णन करता हुआ मकरन्द माधव से कहता है --

"इयमवयेवपाण्डुक्षामैरलंकृतमण्डना, कलितकुसुमाबालेवान्तर्लता परिशोषिणा ।
वहति च वरारोहा रम्यां विवाहमहोत्सव श्रियमुदयिनीमुद्भूतां च व्यनक्ति मनोरुजम् ।" (मा. मा. ६/६)

भवभूति के समय में बधुओं को अलंकृत करने के लिए आभूषण की पेटिका [८] (मंजूषा)

---

१. अभि. अंक ४, "एषा सूर्योदय एव शिखामज्जिता ....शकुन्तला तिष्ठति । पृ. ६५
२. अभि. ४, " दुर्लभमिदानीं में सखीमण्डनां भविष्यतीति । पृ. ६६
३. अभि ४ अंक, पृ. ६४
४. अभि. ४/५ निष्ठयूतश्चरणोपभोगसुलभो लाक्षारसः के नचित् ।
५. अभि. ४/५ दत्तान्याभरणानि .... ।
६. अभि. अंक ५, पृ. ८८
७. मा. मा. अंक ६, वैवाहिक अलंकरणों में विविध आभूषण (मोतीहार, चन्दनादि) सभी अंगों में प्रयुक्त होते थे - "इमे च सर्वांगिका आभरणसंयोगाः , इमे च मौक्तिक हाराः , एतच्चन्दनम् एष सितकुसुमापीड इति । " पृ. २६७
८. मा. मा. अंक ६ प्रतिहारी (प्रविश्यभूषण पटलकहस्ता) पृ. २६७

अवश्य प्रयुक्त होती होगी । प्रतीत होता है, विवाह जैसे मांगलिक अवसर पर वधू को परिवार के इष्टदेवता की प्रतिमा के समक्ष वैवाहिक वेश से समलंकृत किया जाता था । कालिदास ने जिस प्रकार शकुन्तला के अलंकरण में क्षौम-युगल धारण कराये जाने का उल्लेख किया है, उसी प्रकार भवभूति ने भी मालती के प्रयोगार्थ एक जोडा श्वेत रेशमी वस्त्र तथा उत्तरीय के लिए लाल वस्त्र अन्यान्य अंगानुरूप अलंकारों के साथ उल्लिखित किये हैं --

प्रतिहारी-एतत्तावद्धवल पट्टां शुक्युगम् । एतच्चोत्तरीयरक्तवर्णांशुकम् ।

इमें च सर्वांगिका आभरणसंयोगाः, इमे च मौक्तिकहाराः । एतच्चन्दनम् एष सितकुसुमापीड इति । ''[१]

कालिदास के समान भवभूति ने भी विवाह मंगल के आरम्भ में कल्याण सम्पत्ति के लिए वधू द्वारा देवता की पूजा किए जाने के प्राविधान का उल्लेख किया है - ''लवंगिका -- अस्मिन्पाणिग्रहणमंगलारम्भे कल्याण सम्पत्ति निमित्तं देवता पूजयेत्यम्बयानुप्रेषिता । ''[२]

पतिगृह विदा के समय वधू को परिवार के सभी गुरु जन शुभाशीर्वाद देते थे । कालिदास ने कुमारसम्भव एवं अभिज्ञान शाकुन्तलम्[३] में प्रसंगानुसार इस स्वस्थ परम्परा का उल्लेख किया है। यथा - ''अखण्डितं प्रेमलभस्व पत्युः ''(कुमार. ७/२८), ''जाते भर्तुः' बहुमान सूचकं महादेवी शब्दं लभस्व[४], ''भर्तुर्बहुमता भव (अभि. ४/७) तथा वधू के गर्भिणी होने पर ''वीर प्रसविनी भव ।'' जैसा आशीर्वाद दिया जाता था । भवभूति ने भी इसी प्रकार उत्तर रामचरित में वशिष्ठ का सीता को आशीर्वाद अष्टावक्र द्वारा इस प्रकार कहलाया है --

''तत किमन्यदाशास्महे, केवलं वीरप्रसवा भूयाः ।[५]

बधू को पतिगृह विदा करते समय परिवार के लोग उसके साथ कुछ दूर तक जाते थे । इन्दुमती को अज के साथ विदा करते हुए विदर्भराज उनके साथ दूर तक गये थे ।[६] इसी प्रकार महर्षि कण्व तथा शकुन्तला की प्रिय सखियाँ आश्रम के बाहर दूर तक पहुंचाने गईं थीं । प्रतीत होता है, जलाशय के पास तक वधू के सम्बन्धी परिवारीजन विदा करने[७] के लिये जाया करते थे

---

१. मा. मा., ६ अंक ''प्रतिहारी - एतेन नरेन्द्रानुप्रेषितविवाहनेपथ्येन देवतायाः पुरतोऽलंकर्तव्या मालती । '' पृ. २६७
२. मा. मा., ६ अंक, पृ. २७० ।
३. अभि. अंक, पृ. ६५ ।
४. अभि. शां. अंक ५, पृ. ६५
५. उत्तर . १/६ के पश्चात् , पृ. ७२
६. रघु ७/३२ .. प्रास्थापयद् राघवमन्वगात् च ।
   ७/३३ तिसृस्त्रिलोकप्रथितैन सार्धमजेन मार्गे वसतीरुषित्वा ।
   तस्मादपावर्तत कुण्डिनेशः पर्वात्यये सोम इवोष्णरश्मे ।।
७. अभि. ४/१५ के पश्चात् शार्ङ्गरवः - भगवन । ओदकान्तं स्निग्धो जनोअनुगन्तव्य इति श्रूयते । तदिदिं सरस्तीरीम् । अत्र संदिश्य प्रतिगन्तुमर्हसि । '' पृ. ४८६

प्रायः वधू को परिवार की सम्पन्नता के अनुसार पालकी [१] या हाथी पर [२] चढ़ाकर विदा किया जाता था तथा उसके साथ वयस्क लड़कियां नहीं भेजी जाती थीं । अतएव कण्व ने शकुन्तला के साथ प्रियंवदा एवं अनसूया को न भेजते हुए उससे इस सम्बन्ध में कहा था -- ''वत्से ! इमे अपि प्रदेये । न युक्तमनयोस्तत्र गन्तुम् ।'' [३]

प्रतीत होता है उस समय समाज में बधुएं पतिगृह (ससुराल) से शीघ्र अपने पिता के घर नहीं आ पाती थीं क्योंकि कण्व से शकुन्तला आकुलता पूर्वक जब इस सम्बन्ध में पूछती है (तात ! कदा नु भूयस्तपोवनं प्रेक्षिष्ये) तो उसे वानप्रस्थ आश्रम में आश्रम देखने की बात इस प्रकार कहते हैं -'' भूत्वा चिराय चतुरन्तमहीसपत्नी, दौष्यन्तिमप्रतिरथं तनयं निवेश्य ।

भर्त्रा तदर्पित कुटुम्बभरेण सार्धं, शान्ते करिष्यसि पदं पुनराश्रमे ऽस्मिन् ।। अभि. ४/२०

कालिदास के समान यद्यपि भवभूति ने अपने रूपकों में वधू की पति गृह विदा का अभिज्ञानशाकुन्तल जैसा मार्मिक तथा स्वाभाविक वर्णन नहीं किया है तथापि नववधू विषयक अवान्तर [४] प्रसंगों (उसकी सुकुमारता, प्रथम समागम में आविश्वस्त रूप से बल पूर्वक संभोग करने पर उनका विद्वेषिणी होना, नववधू-वर की माताओं द्वारा विशेष देखरेख [५] रखा जाना आदि) का उन्होंने उल्लेख अवश्य किया है ।

खान-पान

सामान्यतः संस्कृत नाटकों में नाट्य शास्त्रीय निर्देशों को दृष्टि में रखते हुए रंग मंच पर खान-पान पात्रों द्वारा प्रदर्शित नहीं किया जाता है । अतः कालिदास तथा भवभूति के नाटकों में भी खान-पान के दृश्यों के न होने के कारण नारी पात्रों के खाद्य एवं पेय पदार्थों का उल्लेख भी अत्यन्त अल्प हुआ है ।

समाज की प्रथम अपरिहार्य आवश्यक आवश्यकता के अन्तर्गत खान-पान, चाहे पुरुष हो या नारी, सभी के द्वारा अपरिहार्य रूप से ग्रहण किया जाता है । अतएव इन दोनों नाटककारों की नाट्य कृतियों में यत्र तत्र प्रसंगगत बिखरे उल्लेख के आधार पर नारियों के खान पान का तुलनात्मक अध्ययन यहां किया जा रहा है ।

पुरुष या नारियों के खान पान प्रकार में कालिदास [६] कात्यायन के इस दृष्टिकोण ''

''अभ्यवहारस्य पंचविधित्वं भक्ष्यभोज्यलेह्यचोष्यपानीय भेदेन'' [६] समर्थक एवं प्रतिपादक प्रतीत होते हैं क्योंकि उन्होंने अपनी नाट्यकृति ''विक्रमोर्वशीयम्'' में स्पष्ट रूप से ''पंचविधि

---

१. रघु. ६/१० मनुष्यवाह्यं चतुरस्रयानमध्यास्य कन्या ....क्लृप्त विवाहवेशा ।

२. कुमार . ५/७० इयं च ते अन्या ....यद्वूढया वारणराजहार्यया ।

३. अभि. ४, अंक, पृ. ७५

४. मा. मा. अंक ७ ''बुद्धरक्षिता - कुसुमधर्माणी हि योषितः सुकुमारोपक्रमाः । तास्वनधिगतविश्वासैः प्रसन्भमुपक्रम्यमाणाः संयोगविद्वेषिण्यो भवन्ति । '' पृ. ३०८ ।

५. उत्तर. १/१६ ....नवदारपरिग्रहे । मातृभिश्चन्त्यमानानां ।

६. विक्रमो. अंक २, ''विदूषकः - तत्र पंचविधस्य अभ्यवहारस्य उपनत संभारस्य योजनां प्रेक्षमाणाभ्यां शक्यमुत्कण्ठां विनोदयितुम् '' । पृ. ३५२

अव्यवहार'' पद का प्रयोग करते हुए उपर्युक्त इन्हीं ५ प्रकार के खाद्य पेय पदार्थों को निर्दिष्ट किया है । भक्ष्य वर्ग में दातों से काट कर सम्पूर्ण खाद्य पदार्थ (रोटी, मोदक आदि) भोज्य वर्ग में दातों के परिश्रम बिना निगले जाने वाले ओदनादि उबले पदार्थ, लेह्य में गाढ़े-द्रव मधु या चटनी आदि पदार्थ चोष्य में आम्र गन्ना आदि चूस कर खाये जाने वाले पदार्थ तथा पानी में दूध, शर्बत, सुरा, पानी, आदि पदार्थ उल्लेखनीय [१] हैं । प्रतीत होता है, इन पंचविध सुस्वाद्य खाद्य पदार्थों को महानस (रसोईघर) में गृहणियां तैयार करती थीं जिनको देखने मात्र से विदूषक जैसे पुरुष पात्रों की उदासी दूर हो जाती होगी तथा मन प्रसन्न हो जाता [२] होगा ।

यद्यपि कालिदास ने नारी पात्रों के खानें योग्य छोटी छोटी वस्तुओं का वर्णन नहीं किया है तथापि अपने काव्य में यव, [३] शालि [४], कलम, [५] नीवार, [६] श्यामाक, [७] तिल [८] आदि अनाजों, दूध, [९] दही, [१०] मक्खन, [११] मधु [१२], गुड़, मोदक , [१३] मत्स्यंडिका [१४] आदि का उल्लेख अवश्य किया है ।

उस समय सामिष तथा निरामिष दोनों प्रकार के भोजन का प्रचलन था । सामान्यतः मांसाहार बुरा नहीं समझा जाता था क्योंकि सामाजिक आजीविका के साधनों में शिकार एवं मछली पकड़ना भी प्रचलित था, जिसे कालिदास ने अभिज्ञान शाकुन्तल के क्रमशः द्वितीय तथा षष्ठ अंक में अंकित

---

१. विक्रमो. अंक २ (कालिदास ग्रन्थावली - सं डा. रेवाप्रसाद द्विवेदी (बनारस, १६७६, पृ. ३५२
२. वही - विदूषक की उक्ति, अंक. २.
३. कुमार. ७/१७ (यवप्ररोहः), ७/८२ (बधूमुखं क्लान्तयवातंस) रघु. १७/१२
४. ऋतु ३/१, १०, १६, ४/१, ८, १६, ५/१, १६
रघु. १५/७८ . . . . . . फलिता इव शालयः । १७/५३ गर्भशालिसधर्माणः
५. रघु. ४/३७ आपाद पद्मप्रणताः कलमा इव ....उत्खातप्रतिरोपिता ।
कुमारं . ५/४७ . . . . . कलमाग्रपिंगलाः ।
६. अभि. अंक २ नीवारषष्ठभागमस्माकसुपहरन्त्विति, पृ. ३५
अंक ४ प्रतिष्ठितनीवारहस्ताभि, पृ. ६५, अभि. ४/२१ नीवरबलिं विलोकयतः
७. अभि. ४ /१४ श्यामाकमुष्टिपरिवर्धितको . . . . . ।
८. अभि. अंक ३ सिंचतं मे तिलोदकम्
६. रघु. २/६३ न केवलानां पयसां प्रसूतिमवेहि मां कामदुघां प्रसन्नाम् ।
अभि. ६/२८ क्षीर (दुग्धनिर्मितखीर) १३ द्रष्टव्य कालिदास के ग्रन्थों पर आधारित तत्कालीन भारतीय संस्कृति, पृ. १ ५४
१०. कुमार . ७/७२
११. माल. अंक ३, (नवनीत) पृ. ३०६, रघु. १/५४ (हेवंगवीन)
१२. कु. ७/७२
१३. विक्रमो. ३ अंक. पृ. १६७
१४. माल., पृ. २६६ (मत्स्यण्डिका)

किया है । "विक्रमोर्वशीयम्" के विदूषक के अधोलिखित कथन से यह स्पष्ट तथ्य व्यक्त होता है कि उसे हरिणी का मीठा मांस भोजन अच्छा लगता है --

"अहमपि प्रार्थ्यमानो यदा मिष्ठहरिणीमांसभोजनं न लभे,
तदैतत्संकीर्तयन्नाश्वासयाम्यात्मानम् । " (विक्रमो. अंक ३, पृ. २०१)

इस विदूषक के उपर्युक्त कथन से डा. गायत्री [१] वर्मा की अवधारणा समीचीन प्रतीत होती है कि ब्राह्मणों में भी कुछ लोग माँस भक्षण किया करते थे तथा क्षत्रिय लोग तो शिकार के शौकीन होने से प्रायः मांसाहारी होते ही थे । अभिज्ञान शाकुन्तल के द्वितीय अंक में "शकुनि लुब्धक" के संदर्भ से ज्ञात होता है कि समाज में शिकारियों के द्वारा चिड़ियां या पक्षी आदि भी मार कर लाये जाते थे जिन्हें सभी स्त्री पुरुष चाव से खाते थे । इसी प्रकार धीवरों द्वारा मछली पकड़ने और खाने का समाज मे प्रचलन था जिसे अभिज्ञान शाकुन्तल (षष्ठांक) के अतिरिक्त "विक्रमोर्वशीयम्" के अधोलिखित उल्लेख से पुष्ट पाते हैं - "भिन्नहस्ते मत्स्ये पलायिते निर्विण्णो धीवरो भणति,
गच्छ धर्मो मे भविष्यति । " विक्रमो. अंक ३, पृष्ठ २०६)

मांसाहार में मांस प्राप्ति सीधे शिकार से अथवा माँस की दूकानों (सूना)[२] से होती थी, जहाँ लुब्ध गीध मंडराते रहते थे । [३]

खाद्य पदार्थों में विविध प्रकार के फलों - आम, जामुन, द्राक्षा [५], खर्जूर [६], नारियल, [७] बीजपूरक [८] आदि का भी प्रचुर मात्रा में सेवन किया जाता था । तपोवनवासी तपस्वियों तथा तपस्विनों के आहार के अवलम्ब तो फल ही होते थे । आश्रम के अतिथियों का सत्कार फलों के द्वारा ही किया जाता था । कण्वाश्रम में दुष्यन्त के लिए अर्ध्य के फलों को विशेष रूप से लाने के लिए अनसूया ने शकुन्तला को यह निर्देश दिया था --

"अनसूया - हला शकुन्तले । गच्छोटजम् फलमिश्रमर्ध्यनुपहर । "[९]

प्रतीत होता है खाद्य पदार्थ को सुस्वादु बनाने के लिए स्त्रियों द्वारा भोजन में मसालों का भी

---

१. कालिदास के ग्रन्थों पर आधारित भारतीय संस्कृति, पृ. १५४ .
२. माल. अंक २, भवानपि सूनापरिसरचर इव ग्रर्धे आमिषलोलुपो भीरवश्च पृ. २८६
३. अभि. १ अंक, पृ. १४, अंक ३, पृ. ४७, अंक ६, पृ. ११५, ६/२ पू. मे. १८ माल. ४/१३, कुमार. ४/३८
४. विक्रमो. अंक ४, पृ. २२०, ४/२७
५. रघु. ४/६५ द्राक्षावलयभूमिषु
६. रघु. ४/५७ खजूरी स्कन्धनद्धानां । अभि. २ अंक, पृ. ३३
७. रघु ४/४२ नारिकेलासवं ।
८. माल. अंक ३, पृ. २६०, २६१
९. अभि. (प्रथमोऽङ्कः)

प्रयोग किया जाता था जिनमें इलायची [१], कालीमिर्च, [२] लौंगें, [३] नमक [४] आदि उल्लेखनीय हैं ।

मधु [५] एवं मिष्ठान्न प्रयोग भी प्रायः नारियों द्वारा होता था । कालिदास के अभिनव मधु का उपयोग मधुपर्क में होता था जिसे वैवाहिक अवसर पर वर के अथवा अतिथि के आगमन पर उसके स्वागत में प्रस्तुत किया जाता था । मधुपर्क में मधु, शालि एवं दूर्वा प्रमुखतया रहते थे ।

भवभूति के मतानुसार ऋषि आश्रमों में मधुपर्क के साथ मांस को विशेष महत्व दिया जाता था । जैसा कि वाल्मीकि आश्रम के शिष्य माण्डायन की एतद्विषयक उक्ति से यह तथ्य प्रमाणित होता है -

माण्डायनः - समांसो मधुपक्र इत्यामनाय बहु मन्यमानाः श्रोत्रियाभ स्वागताय वत्सतरीं महोक्षं वा महाजं वा निर्वपत्ति

गृहमेधिनः इति हि धर्मसूत्रकाराः समामनन्ति । "[६] (उत्तररामचरितम्, चतुर्थाङ्क)

कालिदास के समान भवभूति ने भी प्रिय खाद्य पदार्थों में नीवार [७] या चावल के भात का मॉड, घी युक्त भात, बेर मिश्रित शाक, फलादि का बाल्मीकि आश्रम के संदर्भ में एक तापस के माध्यम से उल्लेख किया है ।

कालिदास ने कामक्रीडारता नारियों के पेय पदार्थों में सुरा का "अनंगदीपन"[८] कामरतिप्रबोधक [९] अबलामण्डनम् [१०], "स्मरसखम्" [११] आदि अनेक अभिधायानों से अभिहित किया है। मधु कवि की दृष्टि में स्त्रियों के नयनों को विभ्रम की शिक्षा देने में दक्ष हैं (वासश्चित्रं मधु नयनयो र्विभ्रमादेश दक्षं - उ. मे. १२) इसके सेवन से नारी के नेत्र घूमने लगते हैं एवं वाणी भी स्खलित होने लगती है । जैसा कि मदिरा मत्त प्रमदा का चित्रण रति विलाप के ब्याज से प्रस्तुत करता हुआ कवि वर्णन करता है --

"नयनान्यरूणानि घूर्णयन्वचनानि स्खलयन्पदे पदे ।
असति त्वयि वारुणीमदः प्रमदानामधुना विडम्बना ।। (कुमार. ४/१२)

---

१. रघु. ६/६४, ४/४७
२. रघु ४/४६ मारीचोद्भ्रान्तहारीता . . . .
३. कुमार. ८/२५ आचचाम सलवंगकेसरश्चाटुकार इव दक्षिणानलः ।
४. रघु. ५/७३ लेह्यानि सैन्धवशिला शकलानि वाहाः ।
५. कुमार. ७/७२ मधुमच्च गव्यम्
६. उत्तर. अंक ४, पृ. ३८२
७. उत्तर . ४/१ नीवारौदनमण्डमुष्णमधुरं ।
८. कुमार. ८/७७ सखीजमः सेव्यतामिदमनंगदीपनम् ।
९. ऋतु. ५/१० मनोहरं कामरतिप्रबोधकं ।
१०. माल., अंक ३. मदः किल स्त्रीजनस्य विशेषमण्डनम् । पृ. ३०१
११. रघु. ९/३६ स्मरसखे रसखण्डनवर्जितम् ।

कालिदास ने [1] अनेक स्थलों पर स्त्रियों के सुरायन का अपनी नाट्य-काव्य कृतियों में उल्लेख किया है । यथा --

"निशासु हृष्टाः सह कामिभिः स्त्रियः पिबन्ति मद्यं मदनीयसुत्तमम्" ऋतु ५/१०

"सुवासितं हर्म्यतलं मनोहरं प्रियासुखोच्छ्वास विकम्पित मधु ।" ऋतु. १/३

"घूर्णमान नयनं स्खलत्कथं स्वेदबिन्दु मदकारणस्मुतं ।....उमामुखं पपौ ।। कुमार.८/८०

पतिषु निर्विविशुर्मधु मंगनाः स्मरसखं रसखण्डन वर्जितम् ।। रघु. ६/३६

"मदिराक्षिमदाननार्पितं मधु पीत्वा रसवत्कथं नु मे ।। " रघु. ८/६८

कालिदास ने अपने नाटकों में भी नारी पात्रों द्वारा पर्याप्त मात्रा में मदिरा सेवन करना प्रदर्षित किया है । "मालविकाग्निमित्रम्" में कनिष्ठ रानी इरावती का उदाहरण इस सम्नब्ध में देना पर्याप्त प्रतीत होता है - जिसमें इतनी अधिक मात्रा में मदिरा पी है कि ठीक से आगे चल नहीं पाती -

"चेटि ! मदेन क्लाम्यमानमात्मानमार्यपुत्रस्य दर्शने हृदयं त्वरयति,

चरणौ पुनर्न मम प्रसारतः । (माल., अंक ३, पृ. २६०)

प्रतीत होता है, भवभूति कालिदास के समान [2] शालीन स्त्रियों का सुरापान चित्रित करना भारतीय संस्कृति को ध्यान में रखकर समुचित नहीं समझते । अतः यही कारण है, कालिदास के नाटक जैसे नारीपात्रों का सुरापान उन्होंने अपने रूपकों में प्रदर्शित नहीं किया है । हां कहीं कहीं देश काल पात्र को ध्यान में रखकर मानवी की अपेक्षा पिशाचिनियों द्वारा श्मशान में रात को सुरापान का वीभत्स दृश्य चित्रित अवश्य किया है --

"एताः शोणित पंक कुंकुम जुषः सम्भूय कान्तैः पिबन्त्यस्थिस्नेहसुरां

कपालयाचकैः प्रीताः पिशाचांगनाः ।। (मा. मा. ५/१८)

इस कालिदास और भवभूति के नारी पात्रों में खान पान गत पर्याप्त साम्य के साथ ही सुरापान[3] जैसे कतिपय विषयों में वैषम्य दृष्टिगत होता है, जिसके लिए तत्कालीन सामाजिक एवं

---

१. प्रतीत होता है, कालिदास के नारीपात्र अपने मुख को सुवासित करने के लिए मधुपान करते थे जैसा कि ऋतुसंहार ४/१२ के इस श्लोक से प्रमाणित होता है -
"पुष्पासवामोदसुगन्धिवक्त्रो निश्वासवातैः सुरभीकृतांगः । "

२. विक्रमो २/१३ उत्पक्ष्मणा मम सखे मदिरेक्षणायाः तस्या समागत मिवाननमाननेन । ४/४२ मधुकर मदिराक्ष्याः तस्याः प्रवृत्तिं ।

३. कालिदास ने सुरा के स्वरूप विषयक अधोलिखित अन्य अनेक अभिधान भी प्रयोग किये हैं -
मधु (ऋतु ५/१०), आसव (रघु. ४/४२ नारिकलासव), वारुणी (कुमार. ४/१२)
कादम्बरी (अभि. अंक ६, पृ. १०१ कादम्बरीसाक्षिकं .... तच्छौण्डिकापणमेव गच्छामः)
शीधु (रघु. १६/५२ पुराणे शीघ्रं नव पाटलं च),
माल. अंक ३ सीधुपानोद्वेजितस्य मत्स्यण्डिकोपनता, पृ. २६६

धार्मिक परिस्थितियाँ ही विशेष प्रभावी प्रतीत होती हैं । प्रतीत होता है, भवभूति की अपेक्षा कालिदास कालीन भारतीय समाज अधिक समृद्ध एवं वैभवशाली था, जिसमें उच्च कुल की ऐश्वर्य शालिनी महिलाएं वैलासिक जीवन में आकण्ठ निमज्जित होकर मधुपान करती थीं । शुंगयुगीन अग्निमित्र के विदिशा के रम्य अन्तःपुर में इरावती ऐसी ही सुरापायनी नारी का निदर्शन कालिदास ने मालविकाग्निमित्रम् में प्रस्तुत किया है ।

दाम्पत्य जीवन

वधू युवती का एक दाम्पत्य जीवन समाज में स्नेह एवं सम्मानपूर्ण था । उसके मुग्धत्व तथा यौवन के मध्य की अल्हड [१] अवस्था अत्यन्त स्पृहणीय एवं रमणीय होती थी । विवाहिता युवती के विभ्रम एवं प्रणय चेष्टाओं से समस्त सामाजिक तत्व पति एवं प्रियजन प्रसन्न हो उठते थे । अतः उसको अपने यौवन का उपभोग करने, प्रिय पति से कलह न कर मान [२] न करने का सखियों द्वारा परामर्श दिया जाता था ।

दाम्पत्य जीवन का केन्द्र बिन्दु विवाहिता युवती पत्नी धर्म [३] पत्नी, सहधर्मचारिणी रूप में होती थी जिसे सामाजिक आदर्शों एवं पारिवारिक परम्पराओं का पति के अनुशासनपूर्वक निर्वाह करना पड़ता था । विवाहिता नारी के लिए स्वच्छन्दचारिता [४] सम्मानजनक नहीं समझी जाती थी । दुष्यन्त के साथ स्वेच्छया गान्धर्व विवाह करने तथा उसके द्वारा राज्यसभा में प्रत्याख्यात होने पर आश्रम लौटने वाले कण्व शिष्यों के स्वेच्छया अनुगमन करने पर शारंगरव ने रोषपूर्वक शकुन्तला को झिडकते हुए कहा -- "किं पुरोभागे । स्वातंत्र्यमवलम्बसे ।"

पत्नी के प्रमुख कर्त्तव्यों में पति के अभीष्ट [५] प्रत्येक कार्य में उसके द्वारा सहायता देना, परिवार के गुरुजनों की [६] परिचर्या करना, पति के क्रोधित होने पर भी विपरीत आचरण न करना, सेवकों पर अनुकूल रहना गृह अवस्था में संचालन करना आदि सुलक्षणी गृहणी के उल्लेखनीय लक्षण थे । इन्हीं का अनुशासन कण्व द्वारा शकुन्तला को भी पति गृह प्रस्थान के समय दिया गया था । पति प्रत्येक पत्नी के लिए उसका सर्वस्व था जिसके घर में दास्यवृत्ति [७] रखना पितृगृह रहने की अपेक्षा अधिक अच्छा समझा [८] जाता था । पत्नी पर पति का पूर्ण अधिकार था, किन्तु पत्नी अपने अनन्य

---

१. विक्रमो. २/७ मुग्धत्वस्य च यौवनस्य च सखे मध्ये मधुश्री स्थिता ।
२. रघु. ६/४७ त्यजत मानमलं वत विग्रहैर्न पुनरेतिगता चुतरंवयः ।
३. कुमार. ७/८३ शिवेन भर्त्रा सहधर्मचर्या कार्या त्वया मुक्त विचारयेति ।
४. अभि. शा ५ अंक, पृ. ५०८
५. कुमार. ६/८६ भवन्त्यभिचरिण्यो भर्तुरिष्टे पतिव्रताः ।
६. अभि. शा. ४/१८ "शश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखींवृत्तिं सपत्नीजने,
पत्युर्विप्रकृता ऽपिरोषणतया मास्म प्रतीपं गमः ।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी,
यान्त्येवं गृहिणीपीदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः ।। "
७. अभि. ५/२६ पतिकुले तव दास्यमपि क्षमम् ।
८. अभि. ५/२६ उपपन्ना हि दारेषु प्रभुता सर्वतोमुखी ।

प्रेम से उसको जीत लेती थी, उसके अखण्ड प्रेम को प्राप्त करना ही उसका चरम लक्ष्य था।[१]

पतिप्रेम के लिए पतिपरायणा नारियाँ सर्वस्व त्याग हेतु तत्पर रहतीं थीं चाहे उन्हें अपनी सौत भी क्यों न बुलाना[२] पड़े। पतिव्रता पत्नियों के पति देवतास्वरूप थे जिनके पाप पर ध्यान न देती हुई वे अपने को ही अपराधिनी मानकर अपने भाग्य की निन्दा करती थीं।[३] सीता ने राम द्वारा निर्वासित होने पर उनकी निन्दा न करते हुए अपने भाग्य को ही कोसा तथा अगले जन्म में राम को पुनः पति रूप में प्राप्त करना चाहा जिनसे आगे वियोग नहो।[४]

पतिव्रता नारियों को अपने पति का अनादर असह्य था उनके पातिव्रत का यही आदर्श था कि अपने पति की सम्मान की प्राण पण से[५] रक्षा करें। पिता दक्ष द्वारा पति शंकर का अपमान किए जाने पर सती ने योग से अपना शरीर त्याग दिया था। पति की प्रसन्नता हेतु अपना अहंकार एवं स्वार्थ छोड़ कर पति या प्रिय जिसे प्यार करे उसे भी प्यार करने को प्रस्तुत हो जाना कालिदासीय (भारतीय) नारी के त्याग की पराकाष्ठा थी। इस आदर्श का निदर्शन विक्रमोर्वशीयम में काशिराज कन्या देवी औशीनरी के इन शब्दों में दृष्टव्य है --

"अद्यप्रभृति यां स्त्रियभार्यपुत्रः प्रार्थयते, या चार्यपुत्रस्य संमागम प्रणयिनी तया सह मया प्रीतिबन्धेन वर्तितव्यम् इति।"[६]

सती साध्वी भारतीय नारी के त्याग एवं सेवाधर्म[७] का यही श्रेष्ठ निदर्शन् हमें कालिदास की अन्य नाट् य कृ तियों में भी प्राप्त हो ता है[८] वे पति की प्रसन्नता हे तु नारियों के समक्ष प्रकृ ति के अम्य जड़ पदार्थों का यह आदर्श प्रस्तुत किया गया है --

"शशिना सह याति कौमुदी सह मेघेन तडित्प्रलीयते।
प्रमदाः पतिवर्त्मगा इति प्रतिपन्नं हि विचेतनैरपि॥" कुमार, ४/३३.

कालिदास की दृष्टि में भारतीय नारी का आदर्श पत्नीत्व[९] एवं मातृत्व है। यही कारण है सीता, शकुन्तला, पार्वती, मेना, अरुन्धती आदि नारी पात्र उस समय और आज भी माननीय हैं[१०]

---

१. कुमार . ७/२८ अखण्डितं प्रेम लभस्व पत्युः।
२. माल. ५/१६ प्रतिपक्षेणापि पतिं सेवन्ते भर्तृवत्सलाः साध्व्यः।
अन्य सितामपि जलं समुद्रगा प्रापयन्त्युदधिम्॥
३. रघु. १४/५७ आत्मानमेवास्थिरदुःखभाजं पुनः पुर्नदुष्कृतिनं निनिन्द।
४. रघु. १४/६६ साहं तपः ..... भूयो यथा मे जननान्तरेऽपि त्वमेव भर्ता न च विप्रयोगः
५. कुमार. १/५३ यदैव पूर्वे जनने शरीरं सा दक्षरोषात् सुदती ससर्ज।
१/२१ अथावमानेन पितुः प्रयुक्ता दक्षस्य कन्या भवपूर्वपत्नी।
सती सती योगविसृष्टदेहा तां जन्मने शैलवधूं प्रपेदे॥
६. विक्रमो. अंक ३/१४ के पूर्व, पृ. ३८०।
७. माल. ५/१६ प्रतिपक्षेणापि पतिं सेवन्तेभर्तृवत्सलाः साधव्यः।
८. विक्रमो. अंक ३ भर्तः प्रियानुप्रसादनं नाम (व्रतम्) पृ. २०४
९. कुमार. १/१८ मेनां मुनीनामपि माननीयामात्मानुरूपां विधिनोपयेमे।
१०. कुमार. ६/८५ शै लः सम्पू र्ण कामो ऽपि मे नामु खमु दै क्षत। प्राये ण गृ हिणीने त्रः कुटुम्बिनः।

सामाजिक विविध कार्यों (विवाहादि विषयों) में पत्नी का परामर्श प्राप्त करना, पत्नी को पति द्वारा गृहिणी, सचिव, सखी, शिष्या कहा[1] जाना उसके प्रति सम्मान भावना को प्रकट करता है।

आदर्श पत्नीत्व का निर्वाह करती हुई दाम्पत्यजीवन को मधुर बनाये हुए बुद्धिमती एवं सच्चरित्रा स्त्रियां अपने पति को कर्त्तव्य मार्ग से विरत पाकर [2] उसे कर्त्तव्योन्मुख करने की भी चेष्टा करती थी। राजा अग्निमित्र की विलासप्रियता तथा मालविका प्राप्ति के लिए उसे प्रयासशील देख कर देवी धारिणी राजा को राज्य कार्यों में प्रवृत्ति तथा प्रवीणता उत्पन्न करने का परामर्श देती हुई कहती है -

देवी - " यदि राजकार्येषु ईदृश्युपाय निपुणतार्यपुत्रस्य ततः शोभनं भवेत्। " [3]

दाम्पत्य जीवन को मधुर सरस एवं सुखमय बनाए रखने के लिए स्त्रियां अपने पति पर प्रायः अकारण क्रोध नहीं करती थीं तथा अपनी सास ननन्द से भी विनम्र व्यवहार [4] करती थीं। वे लज्जाशील [5] होने के कारण गुरुजनों के समक्ष भी पति के साथ जाती हुई संकुचित होती थी।

कालिदास की कृतियों में नारी का मातृरूप अत्यन्त उज्ज्वल एवं आदर्श चित्रित है। वीरपति के समान नारियाँ वीर पुत्र की माता [6] बनने की स्पृहा रखती थी। अतः इन्हें वीर पुत्रवती होने का गुरुजनों द्वारा आशीर्वाद दिया जाता था। "मालविकाग्निमित्रम्" में परिव्राजिका वसुमित्र की यवन विजय पर उसकी माता धारणी को जब बधाई देती हैं तो धारिणी कहती है कि मुझे यही सुख है कि मेरा पुत्र पिता सदृश पराक्रमी निकला - "भर्तासि वीरपत्नीनांश्लाध्यानां स्थापिता धुरि। वीरसूरिति शब्दोऽयं तनयात्त्वामुपस्थितः।। (माल. ५/१६) भगवति परितुष्टामि यत्पितरमनुजातो में वत्सकः। पृ. ३३६

नारी के मातृरूप का सम्मान समाज में सर्वत्र होता था। [7] पति उसके दोहद की पूर्ति प्राणपण से करता था १। उसमें मातृत्व तथा वात्सल्य भाव को परिपुष्ट करने के लिए घड़े से पौधों को सींचना मृगादि पशु या पक्षी पालन प्रायः उनसे होता रहता था। सीता, शकुन्तला, पार्वती आदि वात्सल्यमयी नारियाँ इसका श्रेष्ठ निदर्शन प्रस्तुत करती हैं। "विक्रमोर्वशीय" में उर्वशी का स्त्रीजनोचित मातृत्व प्रकट हुआ है। उसमें उदारता भी है। वह आयु से कहती हैं " एहि वत्स

---

१. रघु. ८/६७ गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ।
२. माल. अंक १, पृ. २७६।
३. माल. १/१८ प्रभवन्त्योऽपि हि मर्तृषु कारणकोपाः कुटुम्बिन्यः।
४. रघु. १४/५५ वधू र्ववन्दे।
५. अभि. ७ अंक, जिहेमि आर्यपुत्रेण सह गुरु समीपं गन्तुम्। पृ. १४३
६. अभि. अंक ४ "वत्से वीरप्रसविनी भव। " पृ. ६५ कुंमार. ७/८७, रघु. १४/७१
७. रघु. ३/५ न मे हिया शंसंति किंचिदीप्सितं स्पृहावती वस्तुषु केषु मागन्धी।
इति स्म पृच्छत्यनुवेलमादृतः प्रियासखोत्तरकोशलेश्वरः।।
विश्व भारती पत्रिका .XXIV. 3-4. अक्टूबर-मार्च. १६७६-८०
द्रष्टव्य - "विक्रमोर्वशीय और उर्वशी का तुलनात्मक अध्ययन - श्री दादूरामशर्मा का शोधलेख पृ. ४४

ज्येष्ठ-मातरमाभिवन्दस्व ।'' समान वह अपने ही नहीं बड़ी मां के वात्सल्य से भी अपने पुत्र को अभिसिंचित करना चाहती है ।

कालिदास के समान भवभूति ने भी अपनी नाट्य कृतियों में दाम्पत्य जीवन के विविध महत्वपूर्ण पक्षों का भावपूर्ण सुन्दर उद्घाटन किया है । नारी का मंगलमय उदार रूप गृहलक्ष्मी के रूप में भारतीय परिवार के सामाजिक जीवन में सतत ग्राह्य एवं काम्य है, जिसकी प्रस्तुति भवभूति ने राम के शब्दों में इस प्रकार की है --

''इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिनयनयोरसावस्या स्पर्शो वपुषि बहुलश्चन्दनरसः ।
अयं कण्ठे बाहुः शिशिरमृसणो मौक्तिकसरः किमस्या न प्रेयो यदि परमसह्यस्तु विरहः ।।

उत्तर. १/३८

यहां सीता का सर्वांग स्वरूप गृह लक्ष्मी रूप में सरस, सीतल, सुखद होने से प्रियतम राम को सर्वांगतः प्रियहै, यदि उन्हें परम असह्य है तो उनका विरह । दाम्पत्यजीवन के मधुर एवं आदर्श रूप का इससे श्रेष्ठ निदर्शन और क्या हो सकता है भवभूति के अनुसार अधुर एवं आदर्श दाम्पत्य जीवन के मूल में परस्पर प्रेम, विश्वास, त्याग, आनन्द आदि अपरिहार्य रूप से होना आवश्यक है। चाहे अरुन्धती वशिष्ठ [१] हो या कौशल्या - दशरथ [२], सीता-राम हों [३] या मालती माधव - इनके दाम्पत्य जीवन में उपर्युक्त तत्वों का समावेश सर्वत्र सर्वदा संलक्षित होता है - यथा --
मालती के वचन माधव को कैसे आनन्ददायक, [४] तृप्त तथा विकसित करने वाले हैं, इसका वर्णन करता हुआ नायक माधव कहता है --

'म्लानस्य जीवकुसुमस्य विकासनानि,
सन्तर्पणानि सकलेन्द्रिय मोहनानि ।
आनन्दनानि हृदयैकरसायनानि,
दिष्ट्या मयाप्यधिगतानि वचोऽमृतानि ।। मा. मा. ६/८

''उत्तर रामचरित'' [५] में भी इसी प्रकार लगभग इन्हीं शब्दों में सीता के अमृत जैसे सुवचनों का परिचय इस प्रकार राम द्वारा दिया गया है --

---

१. अरुन्धती का आदर्श. उत्तर. ४/१० यया पूतम्मन्यो निधिरपि पवित्रस्य महसः ....जगद्वन्धां देवीमुषसमिव वन्दे भगवतीम् ।।

२. कौशल्यके मधुर दाम्पत्य जीवन का निदर्शन उत्तर . ४/१४(कौशल्या दशरथ का प्रणय कलह) कौशल्या गृहश्री रूप में वर्णित - उत्तर . ४/६ आसीदियं दशरथस्य गृहे यंथाश्रीः श्रीरेव वा किमुपमानपदेन सैषा ।

३. उत्तर. ३/२६ राम की सीता विषयक अनुभूति - त्वं जीवितं त्वमसि में हृदयं द्वितीयम् त्वं कौसुदी नयनयोओरमृतं त्वमंगे । सीता की मृदुभाषिता - उत्तर. १/३६ एतानि ते सुवचनानि सरोरहाक्षि कर्णामृतानि मनसश्च रसायनानि ।

४. मा. मा. ६/८ म्लानस्य जीवकुसुमस्य ....

५. उत्तर. च. ३/३२ न किल भवता स्थानं देव्या गृहेऽभियातं
तर्तस्तृणमिव वने शून्ये त्यक्ता न चाप्यनुशोचिता ।
उत्तर . २/२८ यस्यां ते दिवसास्तया सह नीता पुनः स्वे गृहे ।

"म्लानस्य जीव - कुसुमानि विकासनानि संतर्पणानि सकलैन्द्रिय मोहनानि ।
एतानि ते सुवचनानि सरोरुहाक्षि,
कर्णामृतानि मनसश्च रसायनानि ।। " उ. च. १/३६

सीता के समागम सहित राम के द्वारा स्वयं अपने उद्याम श्रृंगारमय मधुर दाम्पत्य जीवन [१] का संस्मरण इस प्रकार किया गया है --

"किमपि किमपि मन्दं मन्दमासक्तियोगा-
दविरलितकपोलं जल्पतोरक्रमेण ।
आशिथिलपरिरम्भ व्यापृतैकेकदोष्णो -
रविदितगतयामा रात्रिरेवं व्यरंसीत् ।। " उत्तर. १/२७

आदर्श दाम्पत्य जीवन में पति पत्नी चाहे राजप्रसाद में हो या पर्ण कुटी में उनके प्रेम, आनन्द, परस्पर विश्वास आदि में किंचित शिथिलता या न्यूनता नहीं आती । अयोध्या के राजभवनों में निवास के उपरान्त राम सीता के पंचवटी एवं दण्डकारण्य में निर्वासनजन्य साहचर्य को स्मरण करते हैं । भवभूति के राम की दृष्टि में प्रियगृहिणी ही गृह की शोभा है । पत्नी के अनन्य गुणों के कारण पति का प्रेम परिवर्धित होता है । सीता राम के आदर्श दाम्पत्यजीवन को प्रस्तुत करती हुई ये पंक्तियां द्रष्टव्य हैं --

"प्रकृत्यैव प्रिया सीता रामस्यासीन्महात्मनः । प्रिय भावः स तु तया, स्वगुणैरेव वर्धितः ।। ६/३१
तथैव रामः सीतायाः प्राणेभ्योऽपि प्रियो ऽभवत् । हृदयं त्वेव जानाति प्रीतियोगम परस्परम् । ।उ च.६/६२

बधू के चरित्र में अविश्वास पति के द्वारा करना मानो दाम्पत्य जीवन रूपी द्रुम पर कुठाराघात करना है । चाहे सीता के शुद्धाचरण के प्रति अविश्वासमूलक सीता का बनवास हो अथवा नववधू मालती वेशधारी मकरन्द से प्रथम समागम के समय बलात्कार पूर्ण नन्दन का कौमार बध्या" पुरुष से चरित्रलांछित करते हुए परस्पर सम्बन्ध विच्छेद करना - पति पत्नी में अविश्वास की अपेक्षा मधुर दाम्पत्य जीवन में परस्पर प्रेम एवं अविश्वास का होना अनिवार्य है ।

कालिदास के समान भवभूति [२] भी दाम्पत्य जीवन में सफल मातृत्व को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं । उनकी उत्तर रामचरित [३] की कौशल्या सीता जैसे नारी पात्र मातृत्व की मनोमोहक गरिमा से अभिमण्डित दृष्टिगत होते हैं । राम माता कौशल्या का मातृत्वपूर्ण वात्सल्य इस चित्रण में दृष्टव्यहै - कौशल्या - (क्रोड़े कृत्वा) अहो न केवलं ......रामभद्रमनुहरति । जात प्रेक्षे ते मुखचन्द्रम्। (चिबुकमुन्नम्य निरूप्य च सवाष्पाकूतम्)"

---

१. उत्तर . १/४६ विश्रम्भादुरसि निपत्य लब्धनिद्रामुन्मुच्य प्रियगृहिणीं गृहस्य शोभाम् ।
उत्तर. ४/६ आसीदियं दशरथस्य गृहे यथा श्रीः ,
श्रीरेव वा किमुपमानपदेन सैषा ।।

२. मा. मा. ७ अंक, बुद्धरक्षिता की उक्ति - "न मे साम्प्रतमनया " कौमारवर्धक्या "प्रयोजनमिति" सशपथं प्रतिज्ञां कृत्वा वासभवनान्निर्गतः । पृ. ३०१-३०२

३. उत्तर. अंक ४/२२ के पूर्व, पृ. ४३० ।

माँ के रूप में अपने पुत्र की कल्याण कामना पुत्र दर्शन की आकुलता, [१] उनके ममत्व में अपने अस्तित्व को समाहित [२] करना, स्तन्य त्याग पर्यन्त सन्तान का स्वयं लालनपालन करना, [३] बच्चों के संस्कार करने की चिन्ता [४] आदि अनेक मातृत्व विषयक स्पृहणीय प्रवृत्तियों का भवभूति ने सुन्दर चित्रण किया है ।

दाम्पत्य जीवन के विविधि पक्षों को दृष्टि मे रखते हुए कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों में पर्याप्त समानता पाई जाती है । पति के प्रति अगाध प्रेम, निष्ठा, पातिव्रत, दुर्भाग्यवश पति द्वारा गर्भिणी अवस्था में निर्वासित या प्रत्याख्यात, निर्वासनकाल में ऋषि आश्रम में पुत्रोत्पत्ति प्रभृति समान दशाओं को ध्यान में रखते हुए द्विजेन्द्रलालराय, शारदारंजनराय, प्रभृति समीक्षकों नें इन दोनों नाटककारों की शकुन्तला तथा सीता की समानता अनेक दृष्टियों से की [५] है । शारदारंजनराय की दोनों पात्रों की तुलनात्मक समीक्षा सर्वथा समीचीन है -

"Both sita and sakuntala are abondoned when with child at the time abondonment. Both the paires pine away after separation and suffer in their person. Kalidasa's sakuntala explains "सखल्वार्यपुत्र इव" and Bhavabhutis sita remarks "हा कथं प्रभातचन्द्रमण्डलाकृतिः". both the Queens sita and sakuntla depart leaving no trace behind and their husbands meet their sons unexpectedly after the lapse of years in a hurmitage. " (Ultar Chartam, Introduction)[६]

संक्षेप में दोनों नाटककारों का दाम्पत्य जीवन चित्रण विविध पक्षों [७] से समन्वित स्वाभाविक

---

१. उत्तर. ३ अंक/ १६ श्लोक के बाद सीता - पुनर्न जानामि कुशलवौ एतावता कालेन कीदृशौ इव भवतः । पृ. २६० ।

२. उत्तर . अंक ३ - "भगवति तमसे । एतेन अपत्यस्मरणेन उच्छ्वसित प्रस्तुतस्तनीव तयोश्च पितुः सन्निधानेन क्षणमात्रं संसारिणी अस्मि संवृत्ता । पृ. ३०२

३. उत्तर . ७/१६ के पूर्व, पृथ्वी - वत्से स्तन्यत्यागं यावत्मन्नियोगातः पुत्रयोरपेक्षस्व ।

४. उत्तर. ७/१३ तथा इसके पूर्व - "भगवत्यौ क एतयोः क्षत्रियोरुचतं कर्म करिष्यति रामोक्तिः कष्टं सीतापि सुतयोः संस्करिं न विन्दति ।

५. कालिदास और भवभूति, द्विजेन्द्रलालराय, बम्बई १६५६ ई. पृ. ५६

६. उत्तर रामचरितम शारदारंजनराय, १६३४ कलकत्ता, पृ. ३४

७. अभि. शा. ४/१८ "शुश्रूस्व गुरून कुरु प्रियसखी वृत्तिं सपत्नीजने,
भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः ।
भूयिष्ठं भव दक्षिणापरिजने भोगेष्वनुत्सेकि नी ,
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः । । "
अभि. ४/१४ यस्य त्वया ब्रणविरोपणमिंगुदीनां तैलं न्यसिच्यत मुखे कुशसूचिविद्धे ।
श्यामाकमुष्टिपरिवर्धितको जहाति, सोऽयं न पुत्र कृतकः पदवीं मृगस्ते ।।
उत्तर . ३/२५ कर कमल वितीर्णैरम्बुनीवारशष्पैस्तरु शकुनि कुरंगान् मैथिली यानपुष्यत ३/६ सीतादेव्या स्वकरकलितैः शल्लकी पल्लवाग्रैरग्रे लोलः करिकरभको यः पुरापोषितोऽभूत् ।

सुन्दर एवं आदर्श समन्वित है । कालिदास की कृतियों में दाम्पत्य जीवन का विलासमय पक्ष धार्मिक एवं सामाजिक पक्ष से कहीं अधिक प्रबल और व्यापक है जबकि भवभूति की कृतियों में विलास व्यापक म होकर समन्वित धार्मिक एवं सामाजिक पक्ष के साथ है ।

दैनिक गृहस्थ जीवन से सम्बन्धित विविध क्रियाकलाप एवं उत्तरदायित्व

दैनिक गृहस्थ जीवन में उत्तरदायित्वपूर्ण विविध क्रिया कलापों में नारी की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है । कालिदास तथा भंवभूति दोनों नाटककारों ने इस सम्बन्ध में संक्षिप्त रूप से प्रकाश वर्ण्य विषय के संदर्भ के आधार पर डाला है ।

गृहिणी के रूप में नारी अपने आश्रम अथवा गृह में गुरुजनों की सेवा शुश्रुषा करती थी, परिजनों एवं सेवकों पर अनुकूल एवं उदार भाव रखती हुई गृह आश्रम के पशुपक्षियों का पालन पोषण करती थी । पति के निर्देशानुसार उसे गृहस्थी के सम्पूर्ण कार्य सम्पन्न करती थीं तथा कभी कभी महत्वपूर्ण विषयों पर पति को परामर्श भी देती थी । कालिदास और भवभूति की क्रमशः शकुन्तला एवं सीता के चरित्र-चित्रणों गृहस्थ जीवन से सम्बन्धित उपर्युक्त विविध क्रिया कलाप तथा उत्तरदायित्व परिलक्षित होते हैं ।

''अतिथिदेवो भव'' का उच्च आदर्श एव अतिथि सत्कार का उत्तरदायित्व प्रत्येक परिवार की गृहिणी समाज में सदैव पालन करती थीं । इस उत्तर दायित्व की अपेक्षा से गृहिणी गुरुजनों की दृष्टि से गिर जाती थी तथा उसे अनेक कोप या अभिशाप का पात्र भी होना पड़ता था । कालिदास ने ''अभिज्ञान शाकुन्तलम्'' के प्रथम अंक में शकुन्तला को आश्रम के अतिथियों का सत्कार करने का उत्तरदायित्व सौंप कर महर्षि कण्व सोमतीर्थ [१] उसके प्रतिकूल दैव के प्रकार को दूर करने हेतु गये थे, किन्तु दुष्यन्त के चिन्तन में ध्यानमग्न होने के कारण उसके द्वारा आश्रम में अभ्यागत अतिथि महर्षि दुर्वासा की अनजान में अवहेलना कर दी गई तो उसे उनके शाप का भाजन बनना पड़ा था। [२]

अतिथि का स्वागत-सत्कार करना अपना कर्तव्य समझ कर पार्वती तपस्विनी [३] होते हुए भी ब्रह्मचारी वेशधारी शिव के आश्रम में आने पर उनके स्वागत सत्कार करने से विमुख नहीं होती । वस्तुतः गृहिणी के गृहस्थ जीवन का सच्चा पल अतिथि को सन्तुष्ट एवं प्रसन्न करना था । [४]

कालिदास के समान भवभूति ने भी अपनी नाट्य कृतियों में नारी पात्रों के अतिथि सत्कार भावना को सुन्दर रूप में चित्रित किया है । वाल्मीकि आश्रम में कौशल्यादि रानियों सहित वैदेह जनक के अतिथि रूप में पधारने पर उनके स्वागत सत्कार का उत्तरदायित्व कुलगुरु वशिष्ठ ने अपनी

---

१. अभि. १ अंक - इदानीमेव दुहितरं शकुन्तलामतिथिसत्काराय नियुज्य दैवमस्याः प्रतिकूलं शमयितुं सौमतीर्थं गतः । पृ. ५६

२. अभि. अंक ४ ''आः अतिथि परिभाविनि । विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा तपोधनं .... कृतामिव ।। '' ४/१

३. कुमार. ५/३१ तमातिथेयऽयी बहुमानपूर्वया सपर्यया प्रत्युदियाय पार्वती । भवन्ति साम्येऽपि निविष्ट चेतसां वपुर्विशेषेष्वतिगौरवाः क्रियाः ।।

४. कुमार. ६/८८ एहि विश्वात्मने वत्से भिक्षासि परिकल्पिता । अर्थिनो मुनयः प्राप्तं गृहमेधिफलं मया ।। ''

धर्म पत्नी अरुन्धती को सौंपा था जैसा कि अरुन्धती स्वयं कहती हैं -

"नुन व्रवीमि" द्रष्टव्यः स्वयमुपेत्य वैदेहः", "इत्येष वः कुलगुरोरादेशः अतएवाहं प्रेषिता।" [१]

उस समय गृह परिवार में नारी के उपर सन्तान का लालन पालन, पति एवं गुरुजनों की देखरेख सम्बन्धी उत्तरदायित्वपूर्ण अनेक कार्य तो सौंपे गये ही थे, बाह्य क्षेत्र में नारियों को अपने पति का साथ आमोद-प्रमोद, सैर सपाटों, उद्यान एवं जल क्रीडाओं [२] उत्सवादि में देना पड़ता था। इन्दुमती, सीता, कौशल्यादि नारी पात्र इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। अज के साथ इन्दुमती का उद्यान विहार वर्णन करता हुआ रघुवंश का महाकवि कहता है --

"स कदाचिदवेक्षितप्रजः सह देव्या विजहार सुप्रजाः।
नगरोपवने शचीसखो मरुतां पालयितेव नन्दने।। रघु. ८/३२

उत्तर रामचरित में भी महाराज दशरथ के देहावसान तथा राम द्वारा सीतापरित्याग के पश्चात् कौशल्यादि रानियों तथा अरुन्धती के साथ वशिष्ठ तथा जनक के ऋष्यश्रंगाश्रम से घूमते हुए वाल्मीकि आश्रम पधारने का चतुर्थ अंक के विषकम्भक में उल्लेख हुआ है।

प्रतीत होता है, कालिदास सम्पन्न कालीन समाज में साधारण वर्ग की स्त्रियाँ आजीविका हेतु, धान, ईख के खेत [३] उद्यानादि में भी खेत रखवाली करती हुई श्रम[४] पूर्ण कार्य किया करती थी।

यथा - ***"इक्षुच्छायानिषादिन्यस्तस्य गोप्तुर्गुणोदयम्।***
आकुमार कथोद्घातं शालिगोप्यो जगुर्यशः।।" *रघु ४/२०*

उद्यानों की देख रेख भी प्रायः उद्यान पालिकाएं किया करती थीं। ऐसी स्त्रियां प्रायः पुष्पों को भी चुनने का कार्य करती हुई "पुष्पलावी" [५] कहलाती थी। तत्कालीन सम्पन्न समाज में अल्प आर्थिक स्तर की स्त्रियाँ धन समृद्ध परिवारों में परिचारिका या सेविका रूप में सेवा कार्य से आजीविका निर्वाह करती थीं।

यद्यपि कालिदास के समान भवभूति ने लोक जीवन के समाज में श्रमपरायणा नारी का चित्रण

---

१. उत्तर. अंक ४/७ के बाद पृ. ३८७.
विक्रमो. ५/१२ इयं ते जननी प्राप्ता त्वदालोकनततपरा। स्नेह प्रस्रवनिर्भिन्नमुद्वहन्ती स्तनांशुकम्।।

२. रघु. १६/६८ - ७०, (जलक्रीडा), माल. अंक ३, "इच्छाम्यार्यपुत्रेण सह दोलाधिरोहणमनुभवितु मिति। तत्प्रमदवन मेव गच्छावः।" पृ. २६३ (उपवन क्रीडा

३. रघु. ४/२० पू. मे. २८

४. माल. अंक ३ उद्यानपालिका, पृ. २६० अभि. अंक ६ (उद्यानपालिका) पृ. १०३

५. पू मे. २८ गण्डस्वेदापनयनजरुजा क्लान्तकर्णोत्पलानां,
छायादानात्क्षणपरिचितिः पुष्पलावीमुखानाम्।।

नहीं किया है, तथापि उत्तररामचरित में महारानी सीता जैसी निर्वासिता [१] तपस्विनी के आश्रम पादपों को पुत्र के समान पालन करने के उल्लेख से प्रतीत होता है कि गृह समाज के बाह्य श्रमपूर्ण कार्यों में भी जनसामान्य की नारी भाग अवश्य लेती होगी ।

दैनिक गृहस्थ जीवन में वात्सल्यमयी, पतिव्रता, तथा कर्तव्यपरायणा भारतीय नारी का एक साथ आदर्श स्वरूप हमें उसके परिवार के कर्तव्यमय नानाप्रकार के सम्बन्धों में संलक्षित होते हैं ।[२] इस सम्बन्ध में प्राध्यापिका डा. रवीन्द्र कौर की यह अवधारणा [३] सर्वथा समीचीन प्रतीत होती है । कि भवभूति तथा कालिदास के आदर्श नारी पात्र विविध कर्तव्यपूर्ण सामाजिक सम्बन्धों से कहीं भी अपूर्ण नहीं दिखाई देती ।

अन्य विविध सामाजिक रूपों में नारी का चित्रण

महाकवि कालिदास तथा भवभूति ने अपनी नाट्य कृतियों में नारी का कन्या, युवती, धर्मपत्नी (वधू) माता भगिनी [४] के अतिरिक्त, सखी शिष्या, प्रेयसी, भाभी, ननन्द, सास, गुरुपत्नी, तापसी परिव्राजिका, गणिका आदि विविध सामाजिक सम्बन्धों के आधार पर भी नारी का सुन्दर चित्रण किया है ।

सखी (सहचरी) - प्रायः नायिका के साथ उसकी सखियों का भी समावेश संस्कृत नाटकों में हुआ है । इसी नाटक एवं नाट्यशास्त्रीय परम्परा के अनुसार इन दोनों नाटककारों ने भी अपने रूपकों में नायिका की सखियों की समाविष्ट करते हुए उनका सुन्दर चरित्रांकन किया है । इस दृष्टि से कालिदास के अभिज्ञान शाकुन्तलम् की प्रियम्बदा - अनसूया, विक्रमोर्वशीयम् की चित्रलेखा, रम्भा, मेनका एवं सहजन्या, मालविकाग्निमित्रम् की वकुलावलिका तथा भवभूति के मालती माधव की लवंगिका बुद्धरक्षिता, मदयन्तिका, उत्तररामचरितम् की वासन्ती आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

---

१. उत्तर. ३/२२ के पूर्व सीता (जात निर्विशेषा मृगपक्षिपादपाः), पृ. ३१ ।
३/२५ करकमल वितीर्णरम्बुनीखारशष्पैस्तरुशकुनिकुरंगान् मैथिली यानपु ष्यत् तुलनीय कालिदास की सीता - रघु १३/२४ पूजा त्वया पेशलमध्याऽपि घटाम्बुर्सवधितबालचूताः। १४/७८
रघु. १४/७८ पयोघटैराश्रम बालवृक्षान् संवर्धयन्ती स्वबलानुरूपः ।
असंशयं प्राक तनयोपपत्तेः स्तनन्धयप्रीतिमवाप्स्यसि त्वम् । ।

२. रघु. ८/६७ गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ ।

३. सागरिका २४/१ सं. २०४२ वि.पृ. ४६-५४ "कुत्रापि नार्याश्चित्रणमपूर्णं न दृश्यते यतस्तेन दुहित्रा सह पितुः, पत्न्या सार्थ पत्युः, मात्रा सह पुत्रस्य च चित्रणमनिवार्यतः कृतम । अनेन तस्यैषा धारणा प्रकटीभवति यद नारी नरश्चान्याऽन्यं बिना अपूर्णाविति। (रघुः १/१ जगत)
"कालिदासस्य नाट्यकृतिस्वादर्शभूतानि नारीपात्राणि" शीर्षक शोध लेख, पृ. ४६

४. माल. १/६ के पूर्व बकुलावलिका की उक्ति "भगिन्यादेव्या उपायनं प्रेषिता (पृ. २६३" अंक ५/१० से पूर्व " उभे - तस्ये यं कनीयसी भगिनी मालविका नाम" पृ. ३२६ अभि. अंक ४/१२ के पश्चात् - शकुन्तला - "लताभगिनीं वनज्योत्स्नां", पृ. ४८८

सखियों में सौहार्दपूर्ण परस्पर परिहास[1], मनोविनोद [2] करने के साथ सखी (नायिका) की हितकारी [3] मंगलकामना, प्रणय प्रसंग में नायिका की सहायता करने की प्रवृत्ति होती[4] थी । इस अवस्था में तो नायिका की अन्तरंग सखी कभी कभी दूती का भी आचरण करती[5] हुई नायक नायिका के प्रणय सन्देशों का आदान प्रदान भी करती थी । विक्रमोर्वशीयम् में चित्रलेखा राजा पुरुरवा के प्रणय को उर्वशी से निवेदन करती हुई कहती है - ''प्रियतमस्य ते दूत्यस्मि संवृता'' इस रूपक के द्वितीय अंक में तो चेटी के अतिरिक्त प्रतिहारीवत् उर्वशी का पथ प्रदर्शन करती उसकी सखी चित्रलेखा चित्रित है -- तेनादिश्यतां मार्गो येन तत्र गच्छन्त्योरन्तरायो न भवेत। (विक्रमो. अंक २, उर्वशी की उक्ति) यही स्थिति मालती माधव के तृतीय अंक में मालती की सखी लवंगिका की है जो अप नी सखी की अवस्था दूती के समान माधव से वर्णित करती है ।

शिष्या - सामाजिक सम्बन्धों में शिक्षा या विद्या के आदान प्रदान विषयक पावन सम्बन्ध गुरु और शिष्य-शिष्या का कालिदास तथा भवभूति द्वारा अपनी कृतियों में वर्णित है । अभिज्ञान शाकुन्तल के चतुर्थ अंक के प्रारम्भ [6] में प्रियंवदा अनसूया को विषकम्भक में कण्वाश्रम की शिष्या रूप में प्रस्तुत किया गया है । ललित कलाएं भी पत्नियाँ पति से [7] शिष्या रूप में सीखती थीं । अरुन्धती (गुरु पत्नी) की दृष्टि में सीता शिशु या शिष्या ही है । [8] इसी प्रकार मालती माधव में [9] सौदामिनी (योगिनी) कामन्दकी की पूर्व शिष्या रूप में प्रस्तुत की गई है । - ''सौदामिनी-भगवति ।

स एष चिरन्तनोऽन्तेवासी जनः प्रणामति ।

सा भगवत्याः पक्षपातस्थानमाद्यशिष्या सौदामिनी । ''

---

१. अभि. १/१८ के पूर्वे प्रियम्बदा - अत्र पयोधर विस्तारयितृ आत्मनो यौवनमुपालभस्व १/१६ के पूर्व प्रियं. - यावत् त्वयोपगतया लतासनाथ इवाश्यं के सर वृक्षकः प्रतिभाति। पृ. ४३५ उत्तर. ३/२२ के पूर्व वासन्ती सखि सीते कथं न पश्यामि रामस्यावस्थाम् । पृ. ३१२

२. उत्तर. ३/३६ के पूर्व - प्रिय सखी विनोदनोपाय इति मन्यते । पृ. ३३९

३. अभि. ३/१६ के पश्चात् अनसूया - यथा इयं नौ प्रियसखी बन्धुजनशोचनीया न भवति तथा निर्वर्तय । '' पृ. ४६९

मा. म. - अंक ३, लवंगिका की उक्ति - अनर्थकारिणो भवन्ति रजनीपरिणाहश्च प्रिय सख्याः । बकुलमाला संजीवनं प्रियसख्याः १ पृ. १५५, १५६

४. दृष्टव्य सागरिका २२/४ अंक सं. २०४० वि. १२८-१२९ ''नायर्कनियोगानुशीलमम्'' डा. रामजी उपाध्याय का शोध लेख (सखी सहचरी वा) पृ. १२९

५. मा. मा. अंक ३. लवंगिका - अस्माकंमपि भर्तृदारिका भऽनासन्नरथ्यामुख पृ. १४५

६. अभि. ४/४ ''वत्से सुशिष्यपरिदत्ता विद्येव अशोचनीया संवृता उक्ति ।

७. रघु. ८/६७ गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ ।

८. उत्तर. ४/११ शिशुर्वा शिष्या वा यदसि मम् तत् तिष्ठतु तथा ।

९. मा. मा. १०/० के पूर्व, पृ. ४६४

प्रेयसी (प्रेमिका) - नारी के प्रेयसी रूप का चित्रण भवभूति की अपेक्षा कालिदास ने अधिक किया है । प्रतीत होता है , कालिदास कालिक समाज में यौवनजन्य आकर्षण पर नियंत्रण होने पर भी युवक युवतियों की प्रेमपूर्ण गतिविधियों का अभाव नहीं था । चाहे पूर्व मेघ में वर्णित चोरी छिपे अपने प्रियतमों के पास राजमार्ग सजाती उज्ञयिनी की प्रेयसियां अभिसारिका [१] हों, प्रियतम के अन्यत्र रात्रि यापन करने से संतप्त खण्डिता हों । [२]

प्रणय पथ पर प्रकृत प्रेयसियाँ सामाजिक एवं नैतिक बन्धनों से विवश होकर विविध प्रकार के कष्ट अनुभव करती थी, तथापि पुनः पुनः अपने प्रियतम से मिलने का प्रयास करती थीं । विक्रमोर्वशीयम् की नायिका उर्वशी [३] पुरुरवा की प्रेयसी होकर अभिसारिका रूप में सामाजिकों को अभिसार प्रणय के श्रृंगारभावयुक्त बनाती हैं । इसी प्रकार मालविका राजा अग्निमित्र की प्रेयसी है जो ज्येष्ठ रानी धारिणी के रूप में प्रच्छन्न या निगूढ़ रूप से प्रेम [४] करती है तथा सपत्नी के भय से उससे मिलती है । शकुन्तला भी दुष्यन्त से प्रच्छन्न रूप से प्रणयभाव रखकर उसे अपनी सखियों से व्यक्त करती है तथा प्रेमी से मिलन के लिए सखियों के परामर्श पर प्रणय पत्र (मदन लेख) भी नखों से नलिनी पत्र लिखती हैं । [५] इससे प्रतीत होता है, प्रेमिकाएं उस समय भी अपना प्रणय निवेदन प्रेम पत्रों के द्वारा प्रकट करती थी ।

भवभूति ने भी कालिदास के समान मालती को प्रच्छन्नकाम्या प्रेयसी [६] प्रस्तुत किया है । प्रेयसी मालती अपने प्रेमी माधव का चित्र विरचित करती हैं । [७] प्रेमिकाएं (प्रेयसियाँ) परिवार में गुरुजनों के भय से चुपचाप अपनी काम परवशता अथवा प्रिय मिलन अभिलाषा को सखी अथवा चेटी के माध्यम से व्यक्त करती थी । प्रेयसी की विरहावस्था का सुन्दर चित्रण कालिदास के साथ भवभूति ने भी किया है ।

---

१. पू मे. ३७ "गच्छन्तीनां रमणवसतिं योषितां तत्र नक्तं
रुद्धालोके नरपतिपथं सूचिभेद्यैस्तमोभिः । सौदामन्या कनकनिकर्ष स्निग्धया दर्शयोर्वीसं,
तोयोत्सर्गस्तमितमुखरो मा स्म भूर्विकलवास्ताः ।। "
उत्तर मेघ. ६ नैशोमार्गोः सवितुरुदये सूच्यते कामिनीनाम् ।।

२. पू. मे. ३९ - तस्मिन् काले नयनसलिलं योषितां खण्डितानां, शान्तिं नेयं प्रणयिभिरतो वर्त्मभोनास्त्यजाशु ।।

३. विक्रमो. ३/६ के पश्चात् "उर्वशी-हला चित्रलेखे । अपि रोचते ते अयं मम मुक्ताभरण-भूषितः नीलांशुकपरिग्रहः अभिसारिकावेषः ।। " पृ. ३७४

४. सागरिका २२/४ स. २०४० वि. "प्रच्छन्नकाम्या नायिका प्रेमिका) पृ. ११६
द्रष्टव्य - " नायकनियोगानुशीलनम्" डा. रामजी उपाध्याय का शोध लेख ।

५. अभि. ३/१३ तव न जाने हृदयं . . . . त्वपि वृत्तमनोरथान्यंगानि ।
तथा इसके पूर्व प्रियंवदा - ननु एतस्मिन् शुकोदर सुकुमारे नलिनीपत्रे पत्रच्छेदमत्तया नखै निक्षिप्त वर्णं कुरु । "

६. मा. मा. अंक २/३ तथा पूर्व कामन्दकी की उक्ति पृ. १०२

७. मा. मा. २/३, ४, ५,

भ्रातृजाया (भाभी) - सरस सामाजिक सम्बन्धों में नायिका को भाभी रूप में भी काव्य एवं नाट्य में चित्रित किया गया है । कालिदास ने रघुवंश, [१] मेघदूत [२] आदि कृतियों में भ्रातृजाया (भाभी) का उल्लेख किया है । ननन्द या देवर के साथ भाभी के हास परिहास पूर्ण सरस सामाजिक सम्बन्ध का संकेत भवभूति भी अपनी नाट्य कृति ''उत्तररामचरित'' [३] में करते हैं । चित्रदर्शन प्रसंग में भाभी रूप में सीता अपने देवर लक्ष्मण से चित्र में उर्मिला की ओर संकेत कर परिहासपूर्वक पूछती हैं --

सीता - ''वत्स ! इयमपि अपरा का ? '' (वच्छ इअं वि अवरा का)

ननन्द - भाभी के समान सामाजिक सम्बन्धों में पति की बहिन [४] ननन्द भी उल्लेखनीय है । कालिदास ने किसी भी नारी पात्र को ननन्द रूप में प्रस्तुत नहीं किया है, जबकि भवभूति ने उत्तर रामचरित में सीता की पूज्या ननन्द शान्ता का अनेक स्थलों पर समुल्लेख किया [५] है । सीता अपनी ननन्द की कुशल क्षेम पूछती हैं । - ''अपि कुशलं मे सकल गुरुजनस्य आर्यायश्च शान्तायाः । ''

कंचुकी के द्वारा भी कौशल्या - दशरथ की संतान के रूप में सीतादि चारों बधुओं के समान प्रेमपात्री शान्ता का उल्लेख किया गया है । [६]

सास - नायक (पति) की माँ सास (श्वश्रू) का कालिदास [७] तथा भवभूति ने अपनी कृतियों में उल्लेख किया प्रतीत होता है, उस समय स्नेहमयी सास अपनी बहू का श्रृंगार भी करती थी । बहुएं भी अपने सास को माँ के समान पूज्य मानकर असाधारण श्रद्धा रखती थी । पति द्वारा परित्यक्ता सीता ने क्रमानुसार अपनी तीनों सासें को सश्रद्ध प्रणाम [८] निवेदन करने का लक्ष्मण से अनुरोध किया था । भवभूति ने [९] भी सीता की सास कौशल्या का सुन्दर चरित्र चित्रित किया है, जिनके लिए वधू सीता दुहिता के समान स्नेहभागिनी थी ।

तापसी-ऋषिका - गुरुपत्नी -गुरु के समान आदरणीया ऋषिका गुरुपत्नी कालिदास तथा भवभूति द्वारा अपनी नाट्य कृतियों में चित्रित की गई है । ऋषिका गौतमी अभिज्ञान शाकुन्तल में

---

१. रघु. १४/५२ रथात् स यंत्रा निगृहीतवाहात् तां भ्रातृजायां पुलिनेऽवतार्य ।

२. पू. मे. १० तां चावश्यं दिवसगणनातत्परामेकपत्नीमव्यापन्नामविहतगतिर्द्रक्ष्यसि भ्रातृजायाम् ।

३. उत्तर . १/१६ के पूर्व पृ. ६० ।

४. उत्तर. १/४ कन्यां दशरथो राजा शान्तां नाम व्यजीजनत् ।

५. उत्तर . १/६ के पूर्व सीता, पृ. ७० ।

६. उत्तर. ४/१६ बधूचतुष्केऽपि यथाहि शान्ता प्रिया तनूजस्य तथैव सीता ।

७. रघु. १४/१३ श्वश्रूजनानुष्ठितचारुवेषां कर्णीरथस्थां रघुवीरपत्नीम् ।

८. रघु. १४/६० श्वश्रूजनं सर्वमनुक्रमेण विज्ञापय प्रापितमत्प्रणामः । प्रजानिषेकं मयि वर्तमानं सूनोरनुध्यायत चेतसेति । ।

९. उत्तर. अंक ४/१६ तथा इसके पूर्व कौशल्या की उक्ति - ''एषा रघुकुल महत्तराणां बधू : अस्माकं पुर्नजनकसम्बधेन दुहिता एव । '' पृ. ४१४

शकुन्तला की अभिभाविका रूप में प्रस्तुत की गई है, [१] जिसकी देख रेख में आश्रम की मुनि कन्याएं रहती होंगी । प्रियंवदा के द्वारा दुष्यन्त के समक्ष असम्बद्ध वार्तालाप करने पर शकुन्तला गौतमी से ही शिकायत [१] करने की धमकी देती है । शकुन्तला के सन्ताप समाचार को सुनकर यज्ञिय शान्तोदक शरीर पर छिड़कने [२] तृतीय अंक में गौतमी रंगमंच पर आती है । पंचम अंक में भी गौतमी[३] शकुन्तला के साथ दुष्यन्त के पास पहुंच कर शार्ङ्गरव-शारद्वत के संवादों से कम प्रभावपूर्ण व्यावहारिक बात दुष्यन्त से नहीं कहती हैं । [४] ऋषिका होते हुए भी उसका स्नेहमय वात्सल्य शकुन्तला के प्रति कम नहीं है ।

अभिज्ञान शाकुन्तलम् के सप्तम अंक के अतिरिक्त विक्रमोर्वशीयम् के पंचम अंक में चित्रित तापसी आश्रमवासिनी ऋषिका होते हुए अत्यधिक वात्सल्यभावपूर्ण है ।

कालिदास के समान भवभूति ने भी [५] ऋषिका अरुन्धती को गुरुपत्नी के रूप में सुन्दर चित्रित किया है, जो राम सीता के परिवार तथा सम्बन्धियों से [६] पूर्ण परिचित हैं । सीता उनकी शिशु या शिष्या समान हैं तथा समस्त घटित घटनाओं के प्रति चिन्तित भी हैं । वे कौशल्या को शुभाशीर्वाद देती हैं [७] तथा भावी घटना का संकेत देती हुई कहती हैं -

"कल्याणोदर्क भविष्यतीति । "

तथा स्नेहाकुल होकर सीता को भी समझाती हैं -

"त्वरस्व वत्से वैदेहि मुंचशालीनं शीलताम् [७]
एहि जीवय मे वत्सं प्रियस्पर्शेन पाणिना । । उत्तर. ७/१६

राम को स्वर्ण-प्रतिमा स्थापित कर यज्ञ पूर्ण करने का भी परामर्श उन्हीं का ही है । [८]

---

१. अभि. १ अंक/२५ श्लोक के बाद. शकुन्तला-इमामसंबद्ध प्रलापिनीं प्रियंवदाभार्यायै गौतम्यै निवेदयिष्यामि । " पृ. ४४२
२. अभि. ३/२२ के पूर्व - गौतमी - "अनेन दर्भोदकेन निरबाधमेव ते शरीरं भविष्यति । (शकुन्तलामभ्युक्ष्य) वत्से परिणतो दिवसः । एहि उटजमेव गच्छामः । " पृ. ४७४
३. अभि. ५/१६ नापेक्षितो गुरुजनाऽनया न त्वयापि पृष्ठो बन्धुजनः ।
एकैकस्मिन्नेव चरिते भणामि किमेकमेकस्य । ।
५/५२ के पूर्व-तपोवनसंवर्धितः अनभिज्ञोऽयं जनः कैतवस्य । ।
४. अभि. ५/२७ के पूर्व-वत्स शर्ङ्गरव अनुगच्छतीयं ....किं वा मे पुत्रिका करोतु।
५. उत्तर. ४/११
६. उत्तर. ४/१२ स राजा तत् सौख्यं ....
७. उत्तर . अंक ७, पृ. ६३५.
८. उत्तर. ७/१६ नियोजय यथाधर्मं प्रियां त्वं धर्मचारिणीम् ।
हिरण्मय्याः प्रतिकृतेः पुण्यप्रकृतिमध्वरे । ।

परिव्राजिका - (प्रव्राजिका = संन्यासिनी) - कालिदास तथा भवभूति ने अपने रूपकों में परिव्राजिका (प्रव्राजिका) [१] को सांसारिक विषयों में लिप्त नायक नायिका के सामाजिक प्रणय सम्बन्ध को सिद्ध करने के प्रयास में निरत चित्रित किया है । ''मालविका ग्निमित्रम्'' [२] की कौशिकी तथा मालती माधव की [३] कामन्दकी, जिसे प्रकरण की प्रस्तावना में ''सौगत जरत प्रव्राजिका'' कहा गया है, क्रमशः नायक अग्निमित्र तथा माधव की प्रणय सहायिकाएं [४] सिद्ध होती है । अतएव डा. रामजी उपाध्याय के मतानुसार इनकी भूमिका पीठमर्दि - कोचिता मानना समीचीन प्रतीत होता है।

कौशिकी के इसी पीठ मर्दिकोचित स्वरूप को देखकर देवी धारणी असूयासहित उसपर मन ही मन कुपित होकर कटु शब्द कहती है - ''मूढ़े परिव्राजिके । मां जाग्रतीमपि सुप्तामिवकरोषि (सासूयं परावर्तते) परिव्राजिका होते [५] हुए सामाजिक रागद्वेषपूर्ण कुटुम्बिनी नारी के सम्बन्धों को लक्ष्य करती हुई चाटुकारितापूर्वक वह देवी से जो कहती है, वह उसके स्वरूप तथा स्तर के अनुरूप नहीं है।

ठीक इसी प्रकार भवभूति ने कूटोपाययुक्त कामन्दकी से कैसी उच्च प्रतिज्ञा करवाई है - ''प्रतार्यो राजनन्दनौ'' वह प्रणयाचार में चाणक्य के समान दूरदर्शिता दर्शाती दृष्टिगत होती है । यथा -

वरेचास्मिन् दोषः पितरि विचिकित्सा च जनिता,
पुरावृत्तोद्‌गारैरपि च कथिता कार्यपदवी ।
स्तुतं महाभाग्यं यदभिजनवतौ यच्च गुणतः,
प्रसंगाद् वत्सस्येत्यदं खुल विधेयः परिचरः ।। मालती.)

पीठमर्दिका के रूप में प्रणय कार्य सिद्ध करने हेतु वह मकरन्द से भी कहती है तथा निर्देश भी देती है - ''पर्यवष्टभ्यतामेतत्करालायतनम् । नाधोर घण्टादन्यस्मात् कर्म्रेत दादूरंणभूत् (मा. मा. ५/ ३३) । वस्तुतः वह अपने द्वारा प्रकाशित स्वरूप के अनुरूप अप्रतिहत प्रज्ञाचक्षु सिद्ध होती है।

प्रतीत होता है, बौद्ध धर्म के ह्रास काल में पतनोन्मुख परिव्राजिकाओं के सामाजिक वैवाहिक

---

१. सागरिका २२/४ सं. २०४० वि. नायकनियोगानुशील ''प्रच्छन्न प्राव्राजिका'' पृ. १२२
२. मालविका. १/१८ अनिमित्तमिन्दुवदने मित्र भवतः परांमुखी भवसि ।
प्रभवन्त्योऽपि हि भर्तृषु कारणकोपाः कुटम्बिन्यः । ।
३. मा. मा. १/१४ अनुराग प्रवादस्तु वत्सयोः सार्वलौकिकः । त्रयो ह्यस्माकमेकं हि प्रतार्यौ राजनन्दनौ (मा. मा. १/१४)
४. मा. मा. - ''कामन्दकी - तत्सर्वथा संगमनाय यत्नः प्राणव्येनादि मया विधेयः । पृ. १५३
५. मा. मा. १/१५ बहिः सर्वाकार प्रगुणरमणीयं व्यवहरन् पराभ्यूहस्थानान्यपि - तनुतराणि स्थगयति । जनं विद्वानेकः सकलमतिसन्ध्याय कपटैस्तटस्थः स्वानर्थान् घटयति च मौनं च् भजते । (मा. मा. १ /१५) .

प्रणय सम्बन्धों में रुचि लेते इन दोनों नाटककारों ने देखा होगा, तभी तो इनका नाटकों में यथार्थ तथा प्रभावी चित्रण प्राप्त होता है ।

गणिका - समाज में गुणगणशालिनी सर्वसामान्यरमणी नगरश्री जैसी अपने रूप एवं धनवैभव से सर्वत्र सार्वजनिक स्थलों में विचरण करती हैं । अतः अपने काव्य एवं संस्कृत नाटकों में कालिदास [१] तथा भवभूति ने इसका वर्ण्यविषय के साथ यथास्थान उल्लेख किया है । श्री दादूराम[२] शर्मा प्रभृति कतिपय विद्वानों ने उर्वशी को स्वर्गलोक की वरवधू या गणिका कहा है ।

भवभूति के समय में गणिका या वेश्या [३] सामाजिको द्वारा विवाहादि समारोहों अथवा मांगलिक सुअवसरों पर नृत्यगान हेतु बुलाई जाती होंगी । मालती माधव के षष्ठ अंक में कलहंस द्वारा पान चबाने वाली रत्नाभरणभूषिता मांगलिक नृत्यगान से कोलाहल करने वाली गणिका अथवा वारसुन्दरियों का उल्लेख हुआ है । इससे समाज में गणिकाओं का स्पष्ट आभास प्राप्त होता है ।

चेटी [४] (परिचारिका, दासी) दूती [५], प्रतिहारी (द्वार [६] रक्षिका), उद्यानपालिका [७], यवनी, कपालिनी योगीश्वरी, तापसी आदि विविध रूपों में भी नारी का चित्रण सामाजिक पृष्ठभूमि पर कालिदास [८] अथवा भवभूति ने अवश्य ही अपनी नाट्य कृतियों में किया है ।

समीक्षा - इस प्रकार हम देखते हैं कि कालिदास तथा भवभूति ने अपने रूपक ग्रन्थों में भारतीय संस्कृति के आदर्शों पर आघृत व्यापक सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन की दृष्टि से नारी के विविध स्वरूपों तथा उनकी महत्वपूर्ण गतिविधियों का अनुरूप चित्रण किया है । शैशवकाल से वृद्धावस्था तक कन्या, शिष्या, युवती, प्रेयसी, धर्मपत्नी, माता, धात्री, भगिनी, परामर्शदात्री सखी, गुरुपत्नी, प्रव्राजिका आदि अनेक रूपों में सामाजिक (गृहस्थ) जीवन में उसकी भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है तथा इनके विना गृहस्थ एवं दाम्पत्यजीवन शून्य एवं निराधार है । इनकी

---

१. पू मे. २५ (पण्यस्त्री), पू. मे ३५. वेश्या स्त्वत्तो ....मधुकरश्रेणिदीर्घान् कटाक्षांन्
ऋतु. २/५ विभाति शुक्लेतररत्नभूषिता वारांगनेव क्षितिरिन्द्रगोपकै : ।
रघु. ३/१६ सुखश्रवा मंगलतूर्यनिस्वनाः प्रमोदनृत्यैः सहवारयोषिताम् ।
रघु. १६/१४ लौल्यमेत्य गृहिणीपरिग्रहान्नर्तकी स्वसुलभासु तद्वपुः ।
२. विश्वभारती २०/३-४, १९७९ - ८० शान्तिनिकेतन "विक्रमोवशीय" और उर्वशी का तुलनात्मक अध्ययन" लेख प. २५
३. मा. मा. ६/५ के पूर्व, कलहंस का कथन पृ. २५९-२६० ।
४. विक्रमो. २ अंक (निपुणिका-सुशिक्षिता -, गीतवाद्यनिपुणा)
५. माल. ३/१४ (प्राणाः कामिनां दूत्यधीना) वकुलावलिका (वाग्विदग्धा)
६. माल. ५ अंक तथा ४ अंक अभि. ५ अंक ।
७. अभि. अंक ६/३ (मधुकरिका)
८. विक्रमो. अंक ५ अभि. अंक २१

वेशभूषा, खानपान क्रियाएं एवं उत्तरदायित्व सामाजिक गृहस्थ जीवन के सर्वथा अनुकूल देशकालपात्र के रूप में इन दोनों नाटककारों द्वारा लगभग एक सी चित्रित है । हाँ, कही कहीं वर्ण्य विषयगत भिन्नता के कारण स्वरूप चित्रण में भी पर्याप्त अन्तर पाया जाता है ।

तृतीय परिच्छेद

नारी पात्रों का सांस्कृतिक अध्ययन

तृतीय परिच्छेद

कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों की तुलनात्मक सांस्कृतिक भूमिका

किसी भी महान् राष्ट्र अथवा समाज की सांस्कृतिक समुपलब्धियों में आचार विचार, विविध धार्मिक क्रियाएं, अध्यात्म-दर्शन, आमोद प्रमोद, संस्कार, समारोह आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । मानव जीवन की भूषणभूत भव्य भावपूर्ण क्रियाओं को सांस्कृतिक परिवेश में सम्पन्न कराने में साधना सम्पन्न नर के साथ नारी की भी अपरिहार्य भूमिका आदि काल से रही है । इस तथ्य को दृष्टि में रखते हुए कालिदास तथा भवभूति ने अपनी नाट्य कृतियों में नारी पात्रों की सांस्कृतिक भूमिका को वर्ण्य विषय के साथ प्रस्तुत किया है, जिसका संक्षेप में यहां तुलनात्मक विवेचन किया जा रहा है।

यज्ञादि विविध धार्मिक क्रियाएं एवं नारी

दैनिक जीवन में कालिदास काव्य में वर्णित नारी की प्रवृत्ति विविध धार्मिक क्रियाओं में परिलक्षित होती हैं । नारियाँ - यम-नियमों को ग्रहण करती हुई संयम पूर्वक विविध व्रतों का सोद्देश्य अनुष्ठान किया करती थीं । कालिदास ने नारियों के व्रत को मुख्य अंग उपवास का उल्लेख किया है जिसे स्वल्पाहार के द्वारा निश्चित समय में समाप्त किया जाता था । हस्तिनापुर में राजमाता के भेजे करभक नामक दूत से दुष्यन्त को उनके पुत्र पिण्डपालन व्रत (उपवास) की सूचना संप्रेषित की गई है, [१] जिसकी पारणा चतुर्थ दिवस सम्पन्न होने का उल्लेख किया गया है । पुत्रवती माताएं प्रतीत होता है, पुत्र के दीर्घायुष्य हेतु इस व्रत को उपवास रखकर किया करती थी, जिसकी पारणा के समय मां को समाहत करने के लिए पुत्र की उपस्थिति आवश्यक समझी जाती थी । सामान्यतः स्त्रियां व्रत के समय शरीर पर श्वेत परिधान एवं मांगलिक आभूषण धारण करती थी तथा केशों में दूर्वा दल खोंसती थीं । [२] व्रत के कारण उनके मन का अहंकार दूर होने से शरीर प्रसन्न निष्कलुष हो जाता था ।

---

१. अभि. अंक २/१६ के पूर्व -करभक आगामि चतुर्थ दिवसे पुत्रपिण्डपालनो नाम । प्रवृत्तपारणो उपवासो भविष्यति । तत्र दीर्घायुषा अवश्यं संभावनीया इति ।

२. विक्रमो. ३ /१२. सितांशुका मंगलमात्रभूषणा,

पवित्रदूर्वांकुरलांछितालका ।
व्रतापदेशोजिम्मतगर्ववृत्तिना,
ायि प्रसन्ना वपुषैव लक्ष्यते ।।

प्रायः पतिव्रता पत्नियां पति को प्रसन्न रखने के लिए ''प्रियानुप्रसादन व्रत'' [१] का पालन करती थी । विक्रमोर्वशीयम् में काशिराजपुत्री औशनरी देवी द्वारा राजा पुरुरवा को प्रसन्न एवं अनुकूल रखने के लिए इसी व्रत के पालन किए जाने का उल्लेख हुआ है । इसके प्रभाव से देवी का गर्वरहित प्रसन्न मन तथा सुकुमार शरीर क्षीण [२] एवं म्लान हो जाता था ।

संतान लाभादि कामनावश स्त्रियाँ भी अपने पति के साथ गोसेवा व्रत पालन [३] करती थीं । सुदक्षिणा के साथ दिलीप ने नन्दिनी गोसेवा व्रत का पालन किया था जिसमें वे गाय की गन्ध माल्यादि अक्षत से प्रातः सम्पन्न कर चरने हेतु पीछे चलकर उसे विदा करती थी तथा सायं स्वागत करते हुए उसकी पुनः आरती प्रदक्षिणा सहित [४] पूजा में उसे बलि प्रदीप अर्पित करती थी ।

कभी कठिन संयमपालनार्थ स्त्री पुरुष एक शैया पर शयन करते हुए कामोपभोग छोड़कर असि धारावृत धारण [५] करते थे । भरत द्वारा निःस्पृह होकर प्राप्त राज्यश्री का अंकगता युवती का युवक द्वारा उपभोग न करने के समान मानो अमिधा व्रत का अभ्यास करना है । वस्तुतः संयमित जीवन में इस व्रत के निर्वाह करने में शीलमयी नारी की शालीनतापूर्ण भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

सामान्यतः सांसारिक कामनाओं की सिद्धि हेतु धार्मिक पर्वों पर या संकल्प सिद्धि होने पर व्रत अनुष्ठान आदि स्त्री पुरुषों द्वारा घर के एक निश्चित भाग में संपन्न होते थे जिसे ''मंगलगृह'' कहा जाता था । कालिदास ने ''मालविकाग्निमित्रम्'' में पंचम अंक के प्रवेशक में सारसिक के शब्दों में इस व्रत उपवासादि धार्मिक कार्यों में प्रयुक्त होने वाले मंगलगृह का उल्लेख किया है -- ''मंगलगृह'' कहा जाता था । ''मंगलगृहे आसनस्थाभूत्वा विदर्भविषयाद्भ्रात्रा वीरसेनेन प्रेषितं लेखकरैर्वाच्यमानं श्रृणोति । '' (माल. अंक ५. प्रवेशक, पृ. ३२०)

पतिव्रता, सती साध्वी स्त्रियाँ पति से प्रत्याख्यात या वियुक्त होने पर ''पति के विरह व्रत'' को धारण करती थीं । शकुन्तला द्वारा इसी व्रत को धारण [१] करने का कालिदास ने उल्लेख किया

---

१. विक्रमो. अंक ३/१४ के पश्चात् देवी - यथानिर्दिष्टं सम्पादितं मया प्रियानुप्रसादनं नाम व्रतम् । पृ. ३८१

२. विक्रमो. ३/१३ अनेन कल्याणि मृणालकोमलं व्रतेन गात्रं ग्लपनस्य कारणम् ।
प्रसादमाकांक्षति यस्तवोत्सुकः,
स किं त्वया दासजनः प्रसाद्यते ।।

३. रघु. २/१.....जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्याम् । वनाय पीतप्रतिवद्धवत्सां यशोधनो धेनुमृषेर्मुमोच ।

४. रघु. २/२१ प्रदक्षिणीकृत्य पयस्विनीं तां सुदक्षिणा साक्षातपात्रहस्ता।
प्रणम्य चानर्य विशालमस्याः श्रृंगान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः ।।
२/२३ तामन्तिकन्यासबलिप्रदीयामन्वास्य गोप्ता गृहिणीसहायः ।

५. रघु. १३/६७ इयन्ति वर्षाणि तया सहोग्रम्भ्यस्यतीव व्रतमासिधारम् ।

है, जिसमें वह अत्यन्त मलिन वस्त्र, एक वेणी धारण करती हुए कठिन नियमों के कारण क्षीण मुखी हो गयी थी --

''वसनं परिधूसरे वसाना नियमक्षाममुखी धृतैकवेणिः ।
अतिनिष्करुणस्य शुद्धशीला मम दीर्घ विरहव्रतं बिभर्ति ।।''-अभि.शा.७/२१

प्रतीत होता है इस व्रत को धारण करने में भी स्त्री को अनेक नियमों का पालन करना पड़ता था क्योंकि द्वितीय तापसी पहली तापसी युव्रती से इस अंक के नियमों में लगी हुई शकुन्तला से मारीचाश्रम में दुष्यन्त के आगमन का वृतान्त निवेदन करने का अनुरोध करती है । ''विक्रमोर्वशीयम्'' में [२] अल्पकालिक वियोग पति से न हो तथा वह उसपर सदैव सन्तुष्ट (प्रसन्न) रहे-एतदर्थ औशीनरी द्वारा धारित व्रत में नियमों के पालन करने का उल्लेख हुआ है । प्रतीत होता है, ''करवा चौथ'' व्रत [३] भी उस समय स्त्रियाँ रखती होंगी जिसमें चन्द्र पूजा के साथ पति प्रसादन व्रत भी पूर्ण हो जाता था । रानी औशीनरी देवी का इस संदर्भ में कथन इस तथ्य को पुष्ट करता है-

''देवी - आनयत औपहारिकं यावन्मणि हर्म्य पृष्ठगतांश्चन्द्रपादानर्चामि ।
परिचारिका - एष गन्ध कुसुमाद्युपहारः ।''

''अतिथि देवो भव'' की पावन धर्म भावना से अनुप्राणित आदर्श भारतीय नारी अतिथि पूजा से कभी विमुख नहीं होती । अनसूया के [४] द्वारा अतिथि सेवाधर्म सहज रूपमें समझाने पर भी शकुन्तला को अनजाने ही आश्रम के अतिथि दुर्वासा की अवहेलना हो जाने के कारण उनसे शापित हो जाना पड़ा [५] आतिथेयी, ब्रह्मचारिणी तथा तपस्विनी पार्वती ने वटु वेशधारी शँकर का समुचित स्वागत सत्कार अतिथि के रूप में क र मनोवांछित फल प्राप्त किया था । [६]

विविध धार्मिक अनुष्ठानों, पूजा तथा बलिकर्म में नारियाँ निरन्तर निरत रहती थीं । भूतयज्ञ सम्पादनार्थ सामान्यतः ऋषिआश्रम के नैसर्गिक सुषम्क-सम्पन्न रम्य परिसर में ऋषिकाएं या आजमकन्याएँ नीवार के दाने आश्रम की कुटिया के द्वार पर बिखेर देती थीं । शकुन्तला द्वारा विकीर्ण नीवार बलि आश्रम द्वार पर उगी देखकर कण्व के और अधिक सन्तप्त होने का उल्लेख प्राप्त

---

१. अभि. अंक ७, द्वितीय - ''सुव्रते इमं वृतान्तं नियमव्यापृतायै शकुन्तलायै निवेदयावः १ पृ. ५५२

२. विक्रमो. अंक ३ '' कंचुकी-आदिष्टोअस्मि सनियमया काशिराजंपुत्रया-व्रत-सम्पादनार्थ मया मानमुत्सृज्य निपुणिकामुखेन याचितो महाराजः । पृ. ३७६
- वही - चित्रलेखा - विहितनियमवेशा राजर्षिमहिषी दृश्यते । ३/१२ के पूर्व, . ३७८

३. विक्रमो. अंक ३ देवी - एसाहं देवता मिथुनं रोहिणी मृगलांछन साक्षी कृत्यार्थ पुत्रं प्रसादयामि ।

४. अनसूया - शकुन्तले । कच्छोटजं पलमिश्रमर्धपुपहर, इदं पादोकं भविष्यति उचितं नः पर्युपासनमतियीनाम् ।। अभि. । अंक - शा. १

५. अभि. अंक ४ अष्ठि अतिथि परिभाविनिः ......विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा . . .४/१

६. कुमार . ५/३१ तमातिथेयी बहुमानपूर्वया सपर्यया प्रत्युदियाय पार्वती ।

होता है ।[१] बलि या पूजा कर्म में पुष्पों का प्रयोग प्रायः होता था ।[२]

सामान्यतः ऋतु परिवर्तन नारियाँ अपने इष्ट देवता की पूजाअर्चना किया करतीं थीं । वसन्त के अवसान होते ही ग्रीष्म ऋतु में भगवान सूर्य की उपासना पूजा का उल्लेख कालिदास ने चित्रलेखा के माध्यम से किया है --

"वसन्तान्तरमुष्ण समये भगवान् सूर्यो मयोपचरितव्यः ।"[३]

अभ्यागत अतिथि के अतिरिक्त मृतात्माओं (पितरों) को जलदान की दैनिक अंजलि क्रिया नारियाँ भी सम्पन्न करती थीं । इस अंजलि क्रिया में[४] तिल का भी प्रयोग होता था[५] तथा शास्त्रानुसार ही पूजा विधियों का परिपालन किया जाता था ।

हवन-यज्ञ जैसे धार्मिक अनुष्ठानों में पुरुष के साथ नारी का सहभागित्व अपरिहार्य रूप से था तथा विना धर्म पत्नी के यज्ञ कार्यपूर्ण नहीं समझा जाता था, यही कारण है श्रीरामचन्द्र को अश्वमेघ यज्ञ सम्पन्न कराने में सीता के निर्वासित होने के कारण उसकी यज्ञ स्थल पर स्वर्णमयी प्रतिमा स्थापित करनी पड़ी थी ।

कालिदास द्वारा वर्णित उपर्युक्त[६] तथ्य का प्रतिपादन प्रसंगानुसार भवभूति ने भी किया है । उत्तर रामचरित में देवयजनसम्भवा धर्मचारिणी सीता का यही यज्ञिय स्वरूप इस प्रकार व्यक्त है -- "वासन्ती - का तर्हि यज्ञे सहधर्मचारिणी आत्रेयी-हिरण्यमयी सीताप्रतिकृतिः । (उत्तर.तृतीयांक पृ. ३६८)" नियोजय यथाधर्म प्रियां त्वं धर्मचारिणीम् । हिरणमयूयाः प्रतिकृतेः पुण्यप्रकृतिमध्वरे ।।" उत्तर. ७/१६

उत्तर रामचरित की प्रस्तावना[७] से यह पता लगता है कि ऋष्यश्रृंग के आश्रम में सम्पन्न होने वाले यज्ञ में भाग लेने के लिए गर्भवती होने से सीताविरहित राम की तीनों माताएँ भी आमंत्रित थीं

---

१. अभि. ४/२१ शममेष्यति मम शोकः कथं नु वत्से । त्वयारचित पूर्वम्
उटज द्वार विरुढं नीवारबलिं विलोकयतः ।

२. अभि. - अंक ४ प्रियंवदा - अवचितानि बलिकर्मपर्याप्तानि कुसुमानि ।
पति या अतिथियों की पूजा में भी पुष्पों का प्रयोग होता था - "ननु सख्याः शकुन्तलायाः सौभाग्यदेवता अर्चनीयाः, पृ. ४७७ ।

३. विक्रमो. अंक ३, चित्रलेखा की उक्ति, पृ. ३८३ ।

४. कुमार. ८/४७ अद्रिराजतनये तपस्विनः पावनाम्बुविहितांजलिक्रियाः ।

५. अभि. ३/१० के पश्चात् शकुन्तला की सखियों से उक्ति-अन्यथाअवश्यं सिंचतं में तिलोदकम् । पृ. ४६४ ,

६. रघु. १५/६१ श्लाध्यस्त्यागोअपि वैदेह्याः पत्युः प्राग्वंश वासिनः ।
अनन्यजानेः सैवऽऽसीद यस्माज्ञाया हिरण्मयी ।।

७. उत्तर. १/३ वशिष्ठाधिष्ठिता देव्यो गता राघवमावतरः ।
अरुन्धतीं पुरस्कृत्य यज्ञे जमातुराश्रमम् ।।
१/४ के बाद नटः - तेन च साम्प्रतं द्वादशवार्षिकं सत्रमारब्धम् । तदनुरोधात कठोरगर्भामपि बधूं जानकीं विमुच्चय गुरुजनस्तत्रगतः । पृ. ५६

तथा अरुन्धती को आगे कर महर्षि वशिष्ठ उन्हें यज्ञ में वहाँ ले भी गये थे । इससे नारियों की यज्ञ कार्य में प्रवृत्ति पूर्णतया पुष्ट होती है ।

कालिदास के नारीपात्रों द्वारा सम्पन्न विविध प्रकार के व्रतों, अनुष्ठानों आदि का भवभूति ने अपनी नाट्य कृतियों में उल्लेख नहीं किया है, इससे यह निष्कर्ष निकालना अनुचित होगा कि भवभूतियुगीन नारियाँ कम धार्मिक व्रतादि धारण करती थी । पूजा-स्थान मंगलगृह [1] के उल्लेख से यह प्रतीत होता है कि भवभूति के समय भी स्त्रियाँ व्रत, उपवास आदि विविध धार्मिक क्रियाएँ किया करतीं थीं । तमसा के द्वारा "पतिविरह व्रत" परायणा सीता का वर्णन अभिज्ञान शाकुन्तलम् (७/२१ वसनेपरिधूसरेवसाना....) की शकुन्तला से साम्य रखता है —

"परिपाण्डु दुर्बल कपोल सुन्दरं दधती विलोकबरीकमाननम् ।
करुणस्य मूर्तिरिव वां शरीरिणी विरह व्यथेव वनमोति जानकी ।। उत्तर. ३/४

प्रतीत होता है, भवभूति के समय शैव तथा शाक्त सम्प्रदाय के प्रभावी होने से नारियों में भी यौगिक क्रियाओं, तंत्र-मंत्र आदि से सिद्धि प्राप्त करने का प्रचुर प्रचलन हो गया था । [2] मालती माधव में योगिनी सौदामिनी के द्वारा, गुरु सेवा विशिष्ट अनुष्ठान, तपस्या तथा तंत्र-मंत्र तथा योग-प्रभाव से आकर्षिणी सिद्धि प्रकाशितकरने का उल्लेख हुआ है —

"गुरुचर्या तपस्तंत्र मंत्रयोगाभियोगजाम् ।
इमामाकर्षिणीं सिद्धिमातनोमि शिवाय वः ।। मा. मा. ६/५३

इस आकर्षिणी सिद्धि के प्रभाव से नारी पुरुष का अपहरण करने में सक्षम हो जाती थी । इसी संदर्भ में मंत्रसिद्धि से प्रभावशालिनी सौदामिनी का श्रीशैल पर वामाचार व्रत - "कापालिक व्रत" धारण करने का भी उल्लेख हुआ है । [3] अवलोकिता कामन्दकी से कहती है — "भगवति, सेदानीं सौदामिनी समासादिताश्चर्यमंत्रसिद्धिप्रभावा श्री पर्वते कापालिक व्रतं धारयति । " योगिनी के द्वारा योगेश्वर्य भी यथासमय प्रदर्शितकिया जाता था । [4] वस्तुतः समस्त यौगिक सिद्धियों के मूल में विविध धार्मिक क्रियाओं - दान पुण्यादि - को धारण करना अत्यावश्यक माना जाता था । इस संदर्भ में पूर्वशिष्या सौदामिनी से प्रव्राजिका कामन्दकी का कथन द्रष्टव्य है —

"एह्येहि भूरिवसुजीवितदानपुण्य, संभारणधारिणी चिरादसि हन्तदृष्टा ।
दत्त प्रमोदमभिनन्दय में शरीरमालिंग्य सौहृदनिध विरमप्रणामात् ।।मा.मा.१०/२०

---

१. मा. मा. ५/६ तत्पश्येमनंगमंगलगृहं भूयोऽपि तस्यामुखम् ।

२. मा. मा. ६/५४ प्रभवति हि महिम्ना स्वेन योगीश्वरीयम् ।
(योगीश्वरी सौदामिनी स्वेन महिम्ना = आत्मीयेन महत्वेन माधवमाहर्तुं समर्था भवति । इससे सौदामिनी का अतुल योगबल माधवापहरण करने की क्षमता से प्रकट होता है), पृ. ४४०

३. मा. मां. अंक १, पृ. ३१.

४. मा. मा. १०/१७ सा योगिनी यमतिरयविघटितजलदाम्भयुपैति नौ यस्याः ।
वागमृतजलासारो जलद्जालसारमतिशेते ।।

प्रतीत होता है, जातक कथाओं तथा बौद्ध धर्म का प्रभाव मालतीमाधव के रचयिता पर पर्याप्त रूप से पड़ा था ।[१] अतः उन्होंने कामन्दकी सौदामिनी प्रभृति पात्रों को जातक कथा से अनुप्राणित प्रस्तुत किया है । कामन्दकी सौदामिनी से कहती है –

"वन्था त्वमेव जगतः स्पृहणीय सिद्धिरेवं विधैर्विलसितैरति बोधसत्वैः ।
यस्याः पुरा परिचय प्रतिबुद्धबीजमुद्भूतभूरिफलशालि विंजृम्भितेन ।।"(मा. मा. १०/२१)

सीता द्वारा भूति बलि कर्म नित्य प्रति पंचवटी में करने का राम स्मरण करते हुए वासन्ती से कहते हैं कि सीता अपने कर कमलों से जल एवं बिखेरे नीवार से तरुपक्षियों एवं हिरणों को नियमित पोषित करती थीं ।[२]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र विविध धार्मिक क्रियाओं (व्रत, उपवास, यज्ञादि के पालन) में परस्पर पर्याप्त साम्य रखते हैं ।

सांस्कृतिक समारोह एवं नारी

समारोह किसी भी समाज अथवा राष्ट्र के सांस्कृतिक उत्कर्ष के द्योतक होते हैं । प्राचीनकाल से मानव उत्सवप्रिय रहा है, इस तथ्य को कालिदास भी पुष्ट करते हैं । इन आह्लादकारी विविध सांस्कृतिक उत्सवों या समारोहों के स्वरूप निर्धारण एवं प्रचलन में पुरुषों के साथ नारियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है जिसे अधोलिखित प्रमुख समारोहों के विवेचन से पुष्ट किया जा रहा है ।

पुत्रजन्मोत्सव - कालिदास के वर्णनानुसार पुत्र जन्म के शुभ अवसर पर नर-नारियों द्वारा आमोद प्रमोद पूर्वक उत्सव मनाया जाता था जिसमें वीरांगनाओं का नृत्यगीत[३] भी होता था । मंगलवाद्य बजते थे तथा पुत्रजन्म के परमानन्द[४] में वन्दियों को कारागार से मुक्त कर दिया जाता था ।

भवभूति ने यद्यपि पुत्र पुत्री के जन्मोत्सव का वर्णन नहीं किया है तथापि इनके जन्म के साथ जातकर्म संस्कार, वर्षगांठ उत्सव करने का उल्लेख अवश्य किया है ।[५] सीता से लव कुश की मंगलमयी वर्ष गांठ को भागीरथी के समीप चल कर सम्पन्न करने के लिए तमसा आश्वस्त करती हुई अनुरोध करती हैं -

---

१. डा. वृजवल्लभ शर्मा के मतानुसार भवभूति ने जातक कथाओं का अध्ययन किया था - भूवभूति के नाटक, भोपाल, १९०३ पृ. ३१४ ।

२. उत्तर. ३/२५ कर कमल वितीर्णैरम्बुनीवारशष्पैस्तरु शकुनिकुरंगान्, मैथिलीयानपुष्यत् । भवति मम विकारस्तेषु दृष्टेषु कोऽपि, द्रव इव हृदयस्य प्रस्तरोद्भेदयोग्यः ।।

३. रघु. ३/१९. सुखश्रवा मंगलतूर्यनिस्वनाः प्रमोदनृत्यैः सह वारयोषिताम् । न केवलं सद्मनि मागधीपते पथि व्यजृम्भन्त दिवौकसामपि ।।

४. रघु. ३/२० न संयतस्तस्य बभूव रक्षितु र्विसर्जयेद्यं सुतजन्सहर्षितः । ऋणा भिधानात्स्वयमेव केवलं तदा पितृणां मुमुचे स बन्धनात ।।

५. उत्तर. १/४ कन्यां दशरथो राजा शान्ता नाम व्यजीजनत । अपत्यकृतिकां राज्ञे लोकपादाय याददौ ।
७/१३ एषा वशिष्ठ गुप्तानां रघूणां वंशवर्धिनी । कष्टं सीतापि सुतयोः संस्कर्तारं न विन्दति ।।

"तमसा-ननु आवामपि आयुष्मतोः कुशलवयोर्वर्षग्रन्थिमंगलं सम्पादयितुं भागीरथी पादातिकमेव गच्छावः । (उत्तर. ३/४५ के बाद, पृ. ३६०)

प्रतीत होता है भवभूतिकालीन नारियां प्रतिवर्ष अपने पुत्र-पुत्रियों का वर्षगांठ उत्सव मनाती थीं जिसमें आयु के प्रतिवर्ष संख्यानुसार क्रमशः एक सूत्र में माताएं गांठ लगाती रहती थीं । सूर्यादि इष्टदेवता की पुष्पों से पूजार्चना भी होती थी । तमसा द्वारा एक स्थल पर कुश लव की बारहवीं वर्ष ग्रन्थि मनाने मंगल सूत्र में बारहवीं गांठ बांधने के साथ भगवान सूर्य की पुष्पों से पूजा करने का उल्लेख किया गया है ..." सीते अद्यखलु आयुष्मतोः कुशलवयोर्द्वादश संवत्सरस्य संख्यामंगल ग्रन्थिरभिबध्यते । तत आत्मनः पुराणश्वशुरगुरुं. . . . सवितारं अपहतपाप्मानं देव स्वहस्ता वचितैः पुष्पैरयतिष्टस्व । (उ. रा. अंक ३, पृ. २५९)

आज भी स्त्रियां शिशु के वर्षगांठ उत्सव को पुत्रजन्मोत्सव रूप में मांगलिक गीतों ढोलक वाद्यों के साथ मिलजुल कर मनाती हैं ।

विवाहोत्सव - पूर्व अध्याय में वधू (युवती) के विवाह संस्कार का वर्णन किया जा चुका है । विवाहोत्सव की तैयारी तथा सजावटी पर्याप्त रूप से निवास गृह तथा नगर की होती [1] थी । इन्द्रधनुष सदृश रंगबिरंगे तोरण तथा पताकाओं से नगर को सुसज्जित किया जाता था ।

पुरसुन्दरियां अन्य सभी कार्यों को छोड़कर वर कन्या को देखने के लिए अट्टालिकाओं के झरोखों से पास आ जाती थीं [2] । देखने की उत्सुकता और व्यग्रता उन्हें इतनी प्रबल रहती थी कि किसी का केश पाश खुल जाता [3] था तथा उसे बांधने का भी ध्यान नहीं रहता था । खुले केशों से गुंथे हुए पुष्प भी नीचे बिखर जाते थे । [4] यदि कोई रमणी अपने पैरों में आलक्त तक लगवा रही होती थी तो वह भी पैर खींच गवाक्ष जाल की ओर दौड़ [5] जाती थी, जिससे वहां तक लाल पैरों के चिह्न अंकित हो जाते थे । यदि कोई स्त्री अपनी आंखों में अंजन आंज रही होती तो बिना दूसरे नेत्र में अंजन लगाए शलाका लिए अधीर होकर दौड़ पड़ती थी । वरकन्या को देखने की हड़बड़ी में उसका नीवीबन्ध खुल जाता था तो अधोवस्त्र को हाथ से थामें झरोखों के पास खड़ी हो जाती थी

---

१. रघु. ७/४ तावत्प्रकीर्णाभिनवोपचारमिन्द्रायुधद्योतित् तोरणांकम् ।
वरः स बध्वा सह राजमार्गं प्राप ध्वजच्छाय निवारितोष्णम् ।।

२. रघु. ७/५ ततस्तदालोकनतत्पराणां सौधेषु चामीकरजालवत्सु ।
बभूवुरित्थं पुरसुन्दरीणांत्यक्त्वाऽन्यकार्याणि विचेष्टितानि ।।

३. कुमार. ७/५७, रघु. ७/६ आलोक मार्गं सहसा व्रजन्त्या कयाचिदुद्वेष्टनवान्तमाल्यः ।
बंद्धु न सम्भावित एवं तावत्करेण रुद्धोऽपि च केशपाशः ।।

४. कुमार. ७/५८, रघु ७/७, प्रसाधिकालम्बितमग्रपादमाक्षिप्य काचिद् द्रवरागमेव ।
उत्सृष्ट लीलागतिरागवाक्षादलक्तकांका पदवीं ततान ।।

५. कुमार. ७/५९, रघु. ७/८ विलोचनं दक्षिणमंजनेन सम्भाव्य तद्वंचितवामनेत्रा ।
तथैववातायन संनिकर्षं ययौ शलाकामपरा वहन्ती ।।

६. कुमार. ७/६०, रघु. ७/९ जालान्तर प्रेषित दृष्टिरन्या प्रस्थानभिन्नां न बबन्ध नीवीम् ।
नाभिप्रविष्टाभरणप्रभेण हस्तेन तस्थाववलम्ब्यवासः ।।

जिससे आभूषणों की द्युति नाभि तक पहुंच जाती थी । [६] यदि कोई बाला मणियों की करधनी गूंथ रही होती थी तथा एक छोर को पैर के अंगूठे से बांध रखा होता था तो अर्द्धपिरायी होने पर अधीरतापूर्वक वर कन्या को देखने की व्यग्रता में मणियां बिखर जाती थीं और केवल सूत्र पैर में बंधा रह [१] जाता था । इस प्रकार वर कन्या झरोखों पर बैठी पुरवासिनियों के द्वारा देखे जाते हुए विवाहमहोत्सव स्थल पर [२] पहुंचते थे, जहां उनका विधिवत विवाह संस्कार सम्पन्न होता था ।

विवाह के पश्चात् वर कन्या पर अक्षत या खीलें छोड़ी जाती थीं तथा उनके मनोरंजनार्थ ललित नाटक का अभिनय भी होता था । [३]

भवभूति ने कालिदास के कुमारसंभव तथा रघुवंश के सप्तमसर्ग के समान यद्यपि इस प्रकार वर कन्या या बारात को देखने का विस्तृत वर्णन तो नहीं किया तथापि उन्होंने विवाह का महोत्सव रूप में अपने नाटकों का उल्लेख अवश्य किया है ।

उत्तर रामचरित के प्रथम अंक में चित्र दर्शन संदर्भ में सीता तथा राम अपने विवाह महोत्सव का स्मरण करते हैं जिसमें उस समय गोदान करने से मंगलमय विवाह दीक्षित चारों भाइयों तथा गोतम ऋषि के द्वारा कमनीय कंकण युक्त सीता के कर को गृहण कराने का उल्लेख किया गया है--

"सीता - एते खंलु तत् कालकृतगोदानमंगलाः चत्वारो भ्रातरो विवाहदीक्षितायूयम् । अहों जानामि तस्मिन्नेव काले वर्ते ।" [४]

राम-एवम्-समयः वर्तत इवैष यत्र मां समनन्दयत्सुमुखि गोतमार्पितः ।
अयमुद्गृहीत कमनीय कंकणस्तव मूर्तिमानव महोत्सवः करः" । । उत्तर. १/१८

महाकवि भवभूति ने इसी प्रकार विवाहोत्सव का वर्णन "मालतीमाधव" [५] में किया है, जिसमें पुष्पाभरण भूषिता, नवलतासदृशं मनोहर मालती की वैवाहिक शोभा का सुन्दर चित्रण इस प्रकार हुआ है --

इयमवयवैः पाण्डुक्षामैरलंकृतमण्डना, कलित कुसुमा वाले वान्र्तलता परिशोषिणी ।
वहति च वरारोहा रम्यां विवाहमहोत्सव श्रियमुदयनी सुद्भूतां च व्यनक्ति मनोरुजंम। । मा.मा. ६/ ६

देवता के सामने वधू के विवाहोत्सवानुकूल अंकरण करने, वैवाहिक वेशभूषा [६] तथा

---

१. कुंमार. ७/६१, रघु. ७/१० अर्धाचिता सत्वरमुत्थितायाः पदे पदे दुर्निमिते गलन्ती । कस्याश्चिदासीद्रसना तदानीमंगुष्ठमूलार्पितसूत्रशेषा । ।

२. रघु. ७/२८ तौ स्नातकैर्बन्धुमता च राज्ञा ---------------------म न्वभूताम् ।

३. कुंमार. ७/६१ तौ संधिषु ललितांगहार ।

४. उत्तर. १ अंक. पृ. ८६ ।

५. मा. मा. ६ अंक - एतेन नरेन्द्रानुप्रेषित विवाहनेपथ्येन देवतायाः पुरतो अलंकर्तव्यामालतीति

६. मालती माधव अंक ६, "प्रतिहारी - एतत्तावद्धवलपट्टांशुकमं । एतच्योत्तरीय रक्तवर्णाशुकम् । इमे च सर्वांगिका आभरणसंयोगः इमे च मौक्तिक्र हाराः एतच्चन्दनम् । एष सितकुसुमापीड इति । " पृ. २६८

पाणिग्रहण के मांगलिक कार्य के प्रारम्भ में वधू की मां द्वारा उसे देवता की पूजार्चना के लिए प्रेषित करना [1] आदि विवाह उत्सव के विविध कार्यभी भवभूति ने प्रसंगानुसार वर्णित किए हैं । प्रतीत होता है, विवाहोत्सव सम्पन्न होने पर नववधू के गृहप्रवेश होने से कभी कभी विवाहोत्सव [2] कौमुदीमहोत्सव का भी रूप ग्रहण कर लेता था ।

डॉ. वृजवल्लभ शर्मा की यह अवधारणा समीचीन प्रतीत [3] होती है कि मालती माधव के अष्टम अंक के आरम्भ में विवाहोत्सव के बाद नवविवाहिता मालती की सभी आंगिक चेष्टाएं तथा उसकी सखी अवलोकिता का असत्य भाषण भी कामसूत्र के नियमों के अनुसार ही है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भवभूति का विवाहोत्सव का मौलिक वर्णन कालिदास के वर्णन से भिन्न होता हुआ भी कम स्वाभाविक एवं प्रभावी नहीं है । जहां कालिदास ने विविध वैवाहिक क्रियाओं (हवन, देवपूजन, सप्तपदी, अश्मारोहण आदि) का वर्णन किया है, वहां भवभूति ने भी विवाहोत्सव के विविध विषयों का सुन्दर चित्रण किया है ।

विविध ऋतूत्सव - प्रकृति - परिवर्तन पर पुष्पों को खिला देखकर स्त्री पुरुष अनेक प्रकार के उत्सव मनाते [4] थे जिनमें क्रमशः शरद, वसन्त आदि ऋतुओं के परिवर्तन के अनुसार नारियाँ निम्नलिखित उत्सवों में आमोद प्रमोद पूर्वक भाग लेती थीं जिनमें कौमुदी महोत्सव, वसन्तोत्सव, मदनमहोत्सव, अशोक-दोहद दोलोत्सव आदि उल्लेखनीय हैं --

(क) कौमुदी महोत्सव - शरदपूर्णिमा को सामान्यतः कौमुदी महोत्सव मनाया जाता है, जिसको वात्स्यायन ने [5] "कौमुदीजागरणः" तथा भोज ने "कौमुदी प्रचार" कहा है । कालिदास [6] ने महोत्सव का अपनी काव्य नाट्य कृतियों में उल्लेख नहीं किया है जबकि भवभूति ने इसको नववधू के गृह प्रवेश के समय असमय में प्रमत्त परिजनों द्वारा मनाने का उल्लेख किया है -- "अयं च नववधू गृहप्रवेश विरचिताकाल कौमुदी महोत्सव प्रमत्तपर्याकुलाशेष-परिजनः ।"(मा.मा., अंक ७ पृ.३००)

प्रतीत होता है कालिदास के काल में कौमुदी महोत्सव का स्त्री पुरुषों में कम प्रचलन रहा होगा जबकि भवभूति के समय शरदृतु में इनको बन्धु समूह के द्वारा अत्यधिक प्रेम एवं आनन्दपूर्वक मनाया जाता होगा । जैसा कि मकरन्द का कथन है - बन्धुता हृदय कौमुदी मही मालतीनयनचन्द्रमाः । (मा.मा. ६/२१) .

---

१. मा. मा., अंक ६, "लवंगिका - सखि, अस्मिन्पाणिग्रहणमंगलारम्भे कल्याणसम्पत्ति निमित्तं देवता पूज्येत्यम्बयानुप्रेषिता । " पृ. २७०
२. मा. मा. अंक ७ "बुद्धरक्षिता - "अयं च नववधू गृहप्रवेशविरचिताकाल कौमुदीमहोत्सव प्रवृत्तपर्याकुलाशेषपरिजनः । " पृ. ३००
३. भवभूति के नाटक, भोपाल १६७३, पृ. ३१३.
४. अभि. ४ /६ आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः ।
५. कमसूत्र - १/४/४२, श्रृंगार प्रकाश (भोज कृत)
६. अभि. अंक ६"किं नु खलु ऋतूत्सवे अपि निरुत्सवारम्भनिव राजकुलं दृश्यते । रघु. ६/४६ अनुभवन्नवदोलमृतूत्सवं ....पृ. १०६

(ख) वसन्तोत्सव - कालिदास ने इसका मधूत्सव [१], ऋतूत्सव, वसन्तावतार [२], वसन्तोत्सव [३], आदि अभिधानों से उल्लेख किया है जिससे ज्ञात होता है कि वसन्त ऋतु में स्त्री पुरुषों द्वारा यह उत्तसव धूमधाम से कई दिनों तक मनाया जाता था जिसमें बौराये आम के वृक्षों पर पड़े झूलों पर स्त्रियाँ झूला करती थीं । कभी-कभी किसी विशिष्ट विषादजनक घटना के कारण इस उत्सव का मनाया जाना रोक भी दिया जाता था । इस उत्सव का वैविध्य अनेक उत्सव क्रीड़ाओं में दृष्टिगत होता है ।

यद्यपि भवभूति ने संयोगवश वसन्तोत्सव का उल्लेख नहीं किया है तथापि इससे सम्बन्धित मदन महोत्सव [४] आदि अन्य रूपों का उन्होंने उल्लेख किया है जिससे ज्ञात होता है उस समय नर नारियाँ वसन्तोत्सव तथा इससे सम्बन्धित विविध उत्सव उल्लास पूर्वक मनाती थीं ।

(ग) मदनमहोत्सव - वसन्त ऋतु मनाये जाने वाले इस उत्सव का उल्लेख कालिदास ने अभिज्ञान शाकुन्तलम् में "रतोत्सव" [५] नाम से किया है । नाटक षष्ठ अंक में चेटियां आम की मंजरी लेकर उनमें कामदेव की पूजा करती हैं । [६] इससे प्रतीत होता है, इस उत्सव में कामिनियों द्वारा कामदेव की आम्र मंजरियों से पूजा की जाती थी । कामसूत्र में [७] मदनोत्सव को "सुवसन्तक उत्सव" कहा है तथा टीकाकार यशोधर ने "सुवसन्तक" को "मदनोत्सव" ही माना है जो नृत्यगीत वाद्य क्रीड़ा प्रधान उत्सव है । [८]

भवभूति ने मालती माधव में मदनमहोत्सव का जो उल्लेख किया है उससे ज्ञात होता है कि

---

१. अभि. अंक ६ अनालब्धे देवेन प्रतिषिद्ध वसन्तोत्सवे त्वमानकलिकां भगं किमारभसे किसी किसी पाठ भेद में वसन्तोत्सव के स्थान पर 'मधूत्सव' कम प्राप्त होता है । पृ. १०३

२. माल. अंक ३. अद्यैव प्रथमावतारसुभगानि रक्तकुखकाण्युपायनं प्रेष्य-नववसन्तावतार -व्यपदेशेनेरावत्या निपुणिकामुखेन प्रार्थितोभवान् - इच्छाम्यार्यपुत्रेण दोलाधिरोहणमनु-भवितुमिति । " पृ. २६३

३. अभि., अंक ६/३ के पश्चात् पृ. १०३- कंचुकी-देवेन प्रतिषिद्धे वसन्तोत्सवे त्वं चूतमालिकाभंगमारभसे । ६/५ के पश्चात्-कंचुकी-अस्मात् प्रभवतो वैमनस्यादुत्सवे प्रत्याख्यात ।

४. मा. मा. १ अंक अवलोकिता की उक्ति. पृ. ३० "मया प्रवृत्तमदन महोत्सवं मदनोद्यानं प्रभाते अनुप्रेषितः । "

५. अभि. ६/२० अक्लिष्ट बालतरुपल्लवलोभनीयं पीतं मया सदयमेव रतोत्सवेषु । विम्बाधरं स्पृशसि चेद् भ्रमर प्रियायाः त्वां कारयामि कमलोदरबन्धनस्थम् । ।

६. अभि. अंक ६. . .सखि, अवलम्बस्व मां यावदग्र पादस्थिता भूत्वा चूतकलिकां गृहीत्वा कामदेवार्चनं करोमि । पृ. १०३

७. कामसूत्र १/४/४२ तथा द्रष्टव्य "जयमंगला" टीका (१/४/४२) "सुवसन्तो मदनोत्सवः तत्र नृत्य गीताद्यप्रायाः क्रीडाः ।'

८. कालिदास ग्रन्थावली - सं. डा. रेवाप्रसाद द्विवेदी, वाराणसी १९७६ पृ. ५१७

प्रातःकाल से ही नगर के बाहर मनोद्यान में युवक प्रेमीं तथा प्रेमिकाएं एकत्रित होर कामदेव का पूजन करते होंगे और प्रणय हेतु कौतूहलवश परस्परएक दूसरे का दर्शन कर विवाहार्थ पसन्द भी करते होंगे। अवलोकिता का इस संदर्भ में यह कथन द्रष्टव्य है -- "माधवोअपि कौतूहलमुत्पाद्य मया प्रवृत्त मदनमहोत्सवं मदनोद्यानं प्रभाते अनुप्रेषितः । तत्र किल मालती गमिष्यति । ततो अन्योन्यदर्शनं भविष्यतीति ।" [१]

६. **अशोक दोहद** - वसन्तोत्सव के साथ ही उत्सव रूप में सम्पन्न होने वाले "अशोक दोहद" का उल्लेख कालिदास ने मालविकाग्निमित्रम् में किया है । यह उत्सव उद्यान अथवा अन्तःपुर के समीप प्रमदवन में मनाया जाता था, जिसके सम्बन्ध में मान्यता थी कि सुन्दरी स्त्री के पद प्रहार से अशोक वृक्ष पुष्पित हो जाता था ।

प्रमदा युवती का यही पदाघात दोहद कहा जाता था । पदप्रहार करने वाली सुन्दरी युवती पहले अशोक के पल्लवों का अवतंस धारण करती थी, तदुपरान्त बायें पैर से अशोक पर पैर का आघात करती थी । [२] यह क्रीडामय उत्सव बड़े धूमधाम से मनाया जाता था जिसमें अन्तःपुर की रानियाँ एवं राजा सम्मिलित होते थे ।

मालविकाग्निमित्रम् [३] के तृतीय अंक के प्रवेशक में मधुकरिका द्वारा देवी धारणी के लिए अशोक दोहद मनाने की सूचना दी जाती है --

"अहमप्यस्य चिरायमाण्कुसुमोद्‌गमस्य तपनीयशोकस्य दोहद निमित्तं देव्यै निवेदयामि ।"

मालविका भी आहतचरणा देवी धारणी के द्वारा अशोक दोहद सम्पन्न करने सम्बन्धी निर्देश की सूचना देती हुई कहती हैं - "मालविके गौतम चापलाद्‌दोलापरिभ्रष्टायाः सरजौ मम चरणौ । त्वं तावद गत्वा तपनीया शोकस्य दोहदं निवर्तयेति ।" [४]

प्रतीत होता है सुन्दरी के द्वारा प्रियतम की मनोभिलाषा पूर्ति के साथ उसके प्रियतम द्वारा पुष्पित देखना इस उत्सव की सफलता का द्योतक था ।

प्रतीत होता है "अशोक [५] - दोहद" शब्द का उत्सव से अर्थ परिवर्तन कालान्तर में हो गया तथा यह अशोक से पृथक् होकर अकेला "दोहदशब्द" उत्सववाचक न रह कर गर्भिणी स्त्री की मनोभिलाषावाची हो गया । भवभूति ने कालिदास के समान [६] इसका उत्सव अर्थ में प्रयोग न कर गर्भिणी की हृदयगत इच्छा के अर्थ में प्रयोग किया है जिसे स्त्री का पति या आत्मीय परिवारीजन प्रत्येक स्थिति में पूरा करते थे । "उत्तररामचरित" में सीता द्वारा अपना दोहद भाव इस प्रकार व्यक्त

---

१. मा. मा. प्रथम अंक (१/१८ के पश्चात्) पृ. ३०
२. मालविका. अंक ३, पृ. २८२.
३. माल. ३/१८ किसलयमृदोर्विलासिनि कठिने निहतस्य पादपस्कन्धे ।
चरणस्य न ते बाधा सम्प्रति वामोरु वामस्य ।
४. मालविका. अंक ३, पृ. २८६
५. माल. ३/१६ धृतपुष्पमयमपि स्पर्शामृतेन पूरय दोहदमस्याप्यनन्य रुचेस्तपनीयाशोकस्य
६. १३. माल. अंक ५ देवी विज्ञापयति -
कुसुम सहदर्शनेन ममारम्भः सफलः क्रियताम इति ।"

किया गया है --

"आर्य पुत्र ! एतेन चित्रदर्शनेन प्रत्युत्पन्नदोहदया अस्ति से विज्ञाप्यम् - जाने पुनरपि प्रसन्न गम्भीरासु वनराजिषु विहरिष्यामि, पवित्र सौम्य शिशिरावगाहांच भगवतीं भागीरथीमवगाहिष्ये ।" (उत्तर. १ अंक,पृ. १२६)

ऐसा प्रतीत होता है कि गर्भिणी स्त्री की मनोभिलाषा को जानकर उसके आत्मीय पति को उत्सव से कम आनन्द एवं उल्लास न होता होगा ।

(ङ) दोला - वसन्तोत्सव के साथ कालिदास ने दोला का उल्लेख किया है । इससे ज्ञात होता है कवि के समय में वसन्त ऋतु में नारियों द्वारा दोला, उत्सव भी सम्नपन्न होता था । पति पत्नी या राजरानी दोनों ही दोलोत्सव प्रमवन [१] में जाकर मनाते थे । जहां दोला (झूले) प्रायः एक स्थान विशेष में सदैव पड़े रहते थे । इसे "दोलागृह" कहा [२] जाता था ।

राजाओं के दोले प्रायः उनके परिजन हिलाते थे । रानियां दोलाधिरोहण में निपुण होती थीं किन्तु कभी -कभी असावधानीवश फिसल कर नीचे [३] गिरने से उनके चरण आहत भी हो जाते थे किन्तु कभी कभी आलिंगन सुख प्राप्त करने के लिए गिरने से बचनें के ब्याज से दोला की रस्सी छोड़कर प्रियतम के गले में वे अपनी बाहें डाल देती थीं । [४]

भवभूति ने अपने नाट्य ग्रन्थों में कालिदास के समान दोला का उल्लेख नहीं किया है । प्रतीत होता है भवभूति के समय में वसन्त ऋतु या वसन्तोत्सव के साथ दोला का उत्सव रूप में प्रचलन समाप्त हो गया होगा तथा आज के समान पावस ऋतु में श्रावण मास में इसका प्रचलन उत्सव की अपेक्षा साधारणतः स्त्रियों में झूले झूलने में होने लगा होगा ।

नाटक - विशिष्ट समारोहों पर नाटकाभिनय समायोजित होता था जिसमें नारियों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रहती थी । कालिदास कृत मालविकाग्निमित्रम् नाटक वसन्तोत्सव [५] पर जनता के समक्ष सर्वप्रथम अभिनीत हुआ था । विक्रमोर्वशीयम् [६] में इस तथ्य का उल्लेख है कि "लक्ष्मीस्वयंवर" नाटक के अभिनय में लक्ष्मी की भूमिका में उर्वशी द्वारा पुरुषोत्तम के स्थान पर पुरुरवा शब्द प्रमादवश संवाद में कहा जाने के कारण भरत मुनि द्वारा शापित होना पड़ता था ।

---

१. माल. अंक ३ निपुणिकामुखेन प्रार्थितोभवान -इच्छाम्योर्यपुत्रेण सह दोलाधिरोहणमनु-भवितुमिति । भवताप्यस्यै प्रतिज्ञातम् तम्प्रमदवनमेव गच्छावः पृ. २६३

२. माल. अंक ३, "ननु सम्प्राप्ते स्वदोलागृहं' पृ. ३०१
३/१२ के बाद इरावती - "दोलागृहं गतो भर्ता न वेति ।

३. माल. ३ अंक "मालविके गोतमचापलाद् दोलापरिभ्रष्टायाः सरुजौ मम चरणौ, पृ. २८६

४. रघु. ९/४६ अनुभवनन्नवदोलमृतूत्सवं . . . . . . भुजलतां जलतामबलाजनः ।
१९/४४ ताः स्वमंकमधिरोप्य दोलया प्रेंखं यन्परिजनांपाविद्धया ।
मुक्तरज्जुनिविडं भयच्छलात्कण्ठबन्धनमवाय बाहुभिः ।।

५. माल. १ अंक-मालविकाग्निमित्रम् नाम नाटकमस्मिन वसन्तोत्सवे प्रयोक्तव्यमिति, पृ. २६१ (प्रस्तावना)

६. विक्रमो. ४ अंक, व - ततः पुरुषोत्तमेइति भणितव्ये पुरुरवसीति तस्य निर्गता वाणी । ....सा खनु शप्ता उपाध्यायेन । पृ. ३७०.

अभिज्ञानशाकुन्तलम् की प्रस्तावना में सूत्रधार नटी से प्रतिपात्र के अभिनय में प्रयत्न करने का निर्देश देता है ।

भवभूति ने भी अपनी नाट्य कृतियों में नाटक समारोह का उल्लेख किया है [१] जिसमें अनेक नारी पात्रों की महत्वपूर्ण भूमिका को प्रस्तुत किया गया है । उदाहरणार्थ उत्तर रामचरित के सप्तम अंकों में लक्ष्मण का यह कथन द्रष्टव्य है, जिसमें महर्षि वाल्मीकि विरचित रामचरितात्मक नाट्य कृति का अप्सराओं द्वारा किये अभिनय को अवलोकित करने का आमंत्रण दिया गया है – "आदिष्टश्चाहमार्येण - वत्सलक्ष्मण ! भगवता वाल्मीकिना स्वकृतिमप्सरोभिः प्रयुज्यमानां द्रष्टुमुपनिमंत्रिताः स्म । (उत्तर. अंक ७ पृ. ६०५)

भवभूति के नाटकों के आमुख (प्रस्तावना) के आधार पर कहा जा सकता है कि उस समय कालप्रियनाथ जैसे पावन स्थानों की यात्राओं में एकत्रित सभी पुरुषों के समूहद्वारा नाटकों का अभिनय समारोह पूर्वक किया जाता था ।

राज्याभिषेकोत्सव - कालिदास ने अपनी कृतियों में समारोह के रूप में राज्याभिषेक का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है ।इसके लिए चार स्तम्भों का [२] नया विमान (मण्डप) निर्मित किया जाता था । भद्रपीठ पर विराजमान राजा को समस्त तीर्थों के जल से [३] नहलाया जाता था । सूर्य, पुष्कर आदि मंगल वाद्यों की चारों ओर मधुर ध्वनि गूँजती रहती थी [४] दूर्वा, यवांकुर, बटमूल एवं मधूंक पुष्प से राजकुल के वृद्धजन राजा की आरती करते थे । [५]

राजा को आगे कर ब्राह्मण पुरोहित [६] अथर्ववेद के मंत्रों का पाठ करते हुए स्नान कराते थे । चारणगण राजा की स्तुति में गीत गाते थे । [७] अभिवेषेकोत्सव समाप्ति पर स्नातकों को दान दिया जाता था । वे भी राजा को आशीर्वाद देते थे । [८]

---

१. उत्तर. ७/२ के पश्चात लक्ष्मण-आर्य, नाटकमिदम् । पृ. ६१२

२. रघु. १७/९ ते तस्य कल्पयामासुरभिषेकाय शिल्पिमिः । विमानं नवमुधृदेदि चतुः स्तम्भ - प्रतिष्ठतम् ।

३. रघु. १७/१० तत्रैनं हैमकुम्भैषु सम्भृतैस्तीर्थवारिभिः ।
उपतस्थुः प्रकृतयो भद्रपीठोपशोभितम् ।।

४. रघु. १७/११ नदद्भिः स्निग्धगम्भीरं तूर्यैराहतपुष्करैः । अन्वमीयत कल्याणं तस्याविच्छिन्नसंततिः ।।

५. रघू. १७/१२ दूर्वांकुरयवाप्लक्षत्वगभिन्नपुटोत्तरान् । ज्ञातिवृद्धैः प्रयुक्तान्स भेजे - नीराजना विधीन् ।।

६. रघु. १७/१३ पुरोहित पुरोगास्तं जिष्णुं जैत्रेरथर्वभिः ।
उपचक्रमिरे पूर्वमभिषेक्तुं द्विजातयः ।।

७. रघु. १७/१५ स्तूयमानः क्षणे तस्मिन्नलक्ष्यत स बन्दिभिः ।
प्रवृद्ध इव पर्जन्यः सारंगैरभिनन्दितः ।।

८. रघु. १७/१७ स तावदभिषेकान्ते स्नातकेभ्यो ददौ वसु ।
यावत्तेषां समाप्येरन्यज्ञाः पर्याप्तदक्षिणाः ।।
रघु. १७/१८ ते प्रीतमनसस्तस्मै यमाशिषमुदैरयन् ।
सा तस्य कर्म निर्वृत्तैर्दूरं पश्चात्कृता फलैः ।

राज्याभिषेक के हर्ष में नवीन राजा द्वारा कारागार से बन्दियों को मुक्त कर दिया जाता था, बोझा ढोने वाले पशुओं के कन्धों से जुए उतार दिए जाते थे ।[१] गायों का दूध बछड़ों के लिये छोड़ दिया जाता था । क्रीडा पक्षी पिंजरों से मुक्त कर दिये जाते थे ।[२] विवाह में जिस प्रकार वर को सुसज्जित किया जाता है उसी प्रकार राज्याभिषेकोत्सव में राजा को भी सजाया जाता था । कस्तूरी तथा चन्दन का अगंराग लेपन[३] कर गोरोचन से राजा के मुख पर पत्र रचना की जाती थी । हंस चिह्नित दुकूल एवं माला धारण कर पुष्पाभरणों से अलंकृत राजा वर के समान दर्शनीय हो जाता था ।[४]

राज्याभिषेकोत्सव में नाना नारी पात्रों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रहती थी । परिचारिकाएं जय जयकार करती हुई पार्श्व भाग से चंवर डुलाती हुई राजा को सभामण्डप में लाती थीं जिसका वर्णन कालिदास ने इस प्रकार किया है --

स राजककुद्व्यग्रपाणिभिः पार्श्ववर्तिभिः ।
ययावुदीरितालोकः सुधर्मां नवमां सभाम् ।। रघु. १७/२७

राज्याभिषेक सम्पन्न हो जाने पर जब राजा गजारूढ़ होकर[५] नगर में घूमने निकलता था तो नारियाँ भवनों के झरोखों से उसे निर्निमेष दृष्टि से निहारती थीं ।[६]

कालिदास के समान यद्यपि भवभूति ने राज्याभिषेकोत्सव का सांगोपांग विस्तृत वर्णन नहीं किया है तथापि अपनी नाट्य कृति महावीरचरितम् में राम के आदेश से लंका में रावण के स्थान पर विभीषण के राज्याभिषेक सम्पन्न होने तथा लंका से अयोध्या पुष्पक विमान द्वारा आकर राम के राज्याभिषेक का वशिष्ठ द्वारा सम्पन्न कराने का उल्लेख सीता के मिलन के साथ फलागम रूप में करते[७] हैं । इसके पूर्व नाटक के तृतीयांक में भी युधाजित् तथा भरत द्वारा राम के राज्याभिषेक का प्रस्ताव किया जाता है किन्तु राम कैकेयी के सन्देशानुसार सीता लक्ष्मण सहित वन की तैयारी करते हैं । भवभूति की अपेक्षा कालिदास का राज्याभिषेकोत्सव वर्णन काव्यकृतिरघुवंश में[८] ही विशद हुआ है जबकि नाटकों में नहीं ।

---

१. रघु. १७/१९ बन्धच्छेदं स बद्धानां बधार्हाणा मवध्यताम् ।
धुर्याणां च धुरो मोक्षमदोहं चादिशद् गवाम् ।।

२. रघु. १७/२० क्रीडापतत्रिणोऽप्यस्य पंजरस्थाः शुकादयः ।
लब्ध मोक्षास्तदा देशाद्यथेष्टगतयोऽभवन् ।।

३. रघु. १७/२४ चन्दनेनांगरागं च मृगनाभिसुगन्धना । समापय्य तत्शचकुः पत्रंविन्यस्तरोचनम् ।

४. रघु. १७/२५ आयुक्ताभरणः स्रग्वी हंसचिह्नदुकूलवान् । आसीदतिशयप्रवेश्यः सराज्य श्री वधूवरः ।

५. रघु. १७/३२ क्रममाणश्चकार द्यां नागेनैरावतौजसा ।

६. रघु. १७/३५ तं प्रीतिविशदैर्नेत्ररन्वयः पौरयोषितः

७. द्रष्टव्य महावीरचरितम् सप्तम अंक (श्लोक ३६-४१) पृ. ३२६
महाराजरामश्च अयमभिषेक समयः उत्तररामचरित आमुखे सूत्रधार की उक्ति पृ. ५१,५२

८. रघु. २/७४ पुरन्दर श्रीः परमुत्पताकं प्रविश्यपौरै रभिनन्द्यमानः ।

राजा के बाहर से नगर लौटने का उत्सव - अपने राज्य से किसी कार्यवश बाहर गया राजा जब पर्याप्त समय पश्चात् अपने नगर लौटता था तो प्रजा उसके स्वागत सत्कार हेतु पताकाएं ऊँचा कर देती थीं [१] । राजा की अनुपस्थिति में राज्य का उत्तरदायित्व जिस पर रहता था वह ससैन्य नगर के बाहर आगे स्वागतार्थ आता था तथा राजा को नगर से कुछ दूरी पर उपवन में विश्रामार्थ ठहराया जाता था, जिससे उसके सभी ज्ञातबन्धु वहां आकर उससे भेंट कर सकें । [२]

राजा के नगर में प्रवेश करने के पूर्व नगर को वन्दनवारों आदि से पूर्णतया सजा दिया जाता था तथा राजा के शुभागमन पर श्वेत भवनों के झरखों से नगर की नारियों अथवा कन्याओं द्वारा खीलें बरसाई जाती थीं [३]। गवाक्षों पर बैठी पौरांगनाएं राजमहिषी [४] को प्रणाम करती थीं । मंगलवाद्य बजाये जाते थे तथा प्रजाजनों से अभिनन्दित एवं सत्कृत होता हुआ उत्सवपूर्वक राजा अपने राज प्रसाद में प्रवेश करता ता ।

कालिदास के उपर्युक्त वर्णन के समान भवभूति ने भी बनवास के बाद लंका विजय पर अयोध्या लौटे राम के स्वागत एवं अभिनन्दनार्थ कई दिन उत्सव मनाने में सम्मिलित होने वाले वानर, राक्षसों, सभाजनों, ब्रह्मर्षियों एवं राजर्षियों का इस प्रकार उल्लेख किया है --

नट-भाव, प्रेषिता हि स्वगृहान् महाराजेन लंकासमरसुहदो महात्मनः प्लवंगराक्षसाः, सभाजनोपस्थायिनश्च नाना दिगन्तपावना ब्रहमर्षयो रोजर्षयश्च यदाराधनाय इयतो दिवसान् उत्सव आसीत् । [५]

अन्य विविध उत्सव एवं समारोह

उपर्युक्त सांस्कृतिक एवं सामाजिक उत्सव समारोहों के अतिरिक्त कालिदास तथा भवभूति ने अन्य विविध उत्सवों का अपनी कृतियों में उल्लेख किया है जिनमें नववधू गृह प्रवेशोत्सव, नवगृहप्रवेशोत्सव पान भूमिरचना के अतिरिक्त पुरुहूत उत्सव तीर्थयात्रा, पवित्र नदी स्नानादि धार्मिक उत्सव उल्लेखनीय हैं ।

नववधूगृहप्रवेशोत्सव - नवपरिणींता वधू को बड़ी धूमधाम से गीतवाद्ययुक्त समारोह पूर्वक पतिगृह में प्रवेश कराया जाता था कालिदास तथा भवभूति ने नववधूगृहप्रवेशीत्सवका अपनी कृतियों में सन्दर्भानुसार वर्णन किया है । [६]

---

१. रघु. १३/६४ प्रत्युद्गतो मां भरतः ससैन्यः ।

२. रघु. १३/७६ क्रोशार्धं प्रकृतिपुरः सरेण गत्वा काकुत्स्थः . . . . साकेतोपवनमुदारमध्युवास ।

३. रघु. १४/१० समौलरक्षाहरिभिः ससैन्यस्तूर्यस्वनानन्दित पौरवर्गः ।
विवेश सौद्योद्गत लाजवर्षामुतोरणामन्व्ययराजधानीम् ।।
रघु. २/१० अवाकिरन् बाललताः प्रसूनैरा चारलाजैरिव पौरकन्याः ।

४. रघु. १४/१३ प्रासादवातायनदृश्यबन्धे साकेतनार्यो ऽजिलिभिः प्रणेमुः ।

५. उत्तर. अंक १ प्रस्तावना, पृ. ५५.

६. रघु. ७/६६ ७१ तथा रघु. १/६३ पुरमविशदयोध्यायां मैथिलीदर्शनीनां कुवलयितगवाक्षां लोचनैरंगनानाम् ।
मा. मा. अंक ७ बुंद्धरक्षिता - अयं च नपवधू गृहप्रवेशविरचिताकाल कौमुदीमहोत्सव प्रमत्तपर्याकुलाशेषपरिजनः । पृ. ३००

गृहप्रवेशोत्सव - प्रतीत हता है कालिदास तथा भवभूति के काल में भी नवनिर्मित गृहो में प्रथम प्रवेश के समय सोल्लास समारोह मनाया जाता था । नये गृहके निर्मित होने पर प्रथम विधिपूर्वक उसका पूजन होता था तत्पश्चात् पशुउपहार दिया जाता था । कालिदास [१] ने संकेत रूप में इस उत्सव का उल्लेख किया है जबकि भवभूति ने नहीं ।

पानभूमिरचना - यह एक प्रकार का सामूहिक रूप से सुरा पीने का समारोह था जो आजकल भी काकटेलपार्टी रूप में प्रचलित है । कालिदास तथा भवभूति दोनों महाकवियों ने इस सामूहिक सुरापान गोष्ठी समारोह का उल्लेख किया है। [२] प्रतीत होता है इसमें पुरुषों के साथ सुन्दरी नारियाँ भी भाग लेकर मदिरा पान करती थीं ।

पौरहूतोत्सव - इन्द्र के प्रति श्रद्धा तथा पूजा प्रकट करने के लिए प्रतीत होता है यह धार्मिक उत्सव कालिदास के काल में प्रायः पुरुष नारियों द्वारा मनाया जाता था । कालिदास ने इसका संकेत रूप में रघु. ४/३ में उल्लेख किया है जिसकी व्याख्या में मल्लिनाथ का कथन है - ''एवं यः कुरुते यात्रामिन्द्रकेतोयुधिष्ठिर । पर्जन्यः कामवर्षी स्यातस्य राज्ये न संशयः ।।। चतुरसम् ध्वजाकारं राजद्वारे प्रतिष्ठितम् आहुः शक्रध्वजम नान पौरलोकसुखांवहम् - (द्रष्टव्य रघु. ४/३ पर संजीवनीटीका)

डा. पी. वी. काणे ने इसे पुरहूत महोत्सव कहा है तथा डा. भगवतशरण उपाध्याय [३] के मतानुसार यह भाद्रपद शुक्लपक्ष की अष्टमी से द्वादशी तक ५ दिन मनाया जाता था । भवभूति ने इसका उल्लेख नहीं किया है ।

तीर्थ यात्रा एवं तीर्थ स्नान - प्रतीत होता है कालिदास तथा ने भवभूति के काल में नारियाँ समारोह (उत्सव) सहित तीर्थयात्रा अथवा नदी तीर्थस्नान में भाग लेती थीं । तिथि विशेष पर गंगा यमुना जैसी पावन नदियों के संगम पर पुरुषों के साथ स्त्रियाँ भी स्नान करती थीं । यथा -

''अथ तिथिविशेषइति भगवत्योगंगायमुनयोः संगमे देवीभिः सह कृताभिषेकः साम्प्रतमुपकार्यां प्रविष्टः । '' विक्रमो. अंक ५, पृ. २३६)

सीता द्वारा भी भागीरथी तटवर्ती कुश युक्तपावन तीर्थरूप आश्रमों को पुनः देखने की [४] सोल्लास कामना प्रकट की गई थी । शकुन्तला गौतमी तथा कण्व शिष्यों सहित पति गृह जाने के पूर्व पावन शची तीर्थ (शक्रावतार क्षेत्र में) की सलिल वन्दना करने गई थी । [५] जहां गंगा की धारा

---

१. रघु. १६/३६ ततः सपर्या सपशूपहारां पुरः परार्ध्य प्रतिमा गृहायाः उपोषितैर्वास्तु विधानविद्भिर्निवर्तयामास रघुवीरः ।।

२. रघु. ४/४२ ताम्बूलीनां दलैस्तत्र रचिताऽऽपानभूमयः । नारिकेलासवं योधाः शात्रवंचपपुर्यशः ।

मा. मा. ८/१० योद्धाओं द्वारा प्रियतमाओं को पीने से बची मदिरा का पान करना । अर्द्धेन्दुमयूखण्डनिचितं पीतं निशीथोत्सवे यैर्लीलापरिरम्भदायिदयिता गण्डूषशेषं मधु ।

३. इण्डिया इन कालिदासा. पेज ३२८. (India in Kalidas)

४. रघु. १४/२८ इयेष भूयः कुशवन्ति गन्तुं भागीरथी तीरतपोवनानि ।

५. अभि. अंक ५, ''गोतमी - नूनं ते शक्रावताराभ्यन्तरेशचीतीर्थसलिलं वन्दमानायाः प्रभृष्टमगुलीयकम् । '' पृ. ६०

में उसकी अंगूठी गिर पड़ी थी । शकुन्तला के अनिष्टकारी ग्रहों की शान्ति हेतु ऋषि कण्व भी सोमतीर्थ गये थे ।

भवभूति ने पावन तीर्थ स्नान गंगा में करने की अभिलाषा सीता के द्वारा व्यक्त करते हुए इस उत्सव का संकेत दिया है ।[1] प्रतीत होता है, इसे नर-नारियां धार्मिक आस्था से श्रद्धापूर्वक सम्पन्न करती थीं ।

उपर्युक्त वर्णित विविध सांस्कृतिक उत्सव समारोहों के आधार पर कहा जा सकता है कि कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रोंकी इन सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक समारोहों में विशेष अभिरुचि तथा उत्साहपूर्ण आस्था थी । बिना नारियों के सभी उत्सव समारोह निरानन्द एवं निरर्थक होते थे ।

नारी की मनोविनोदपूर्ण क्रियाएं

कालिदास तथा भवभूति दोनों नाटककारों ने अपनी नाट्य कृतियों में नारी को नाना प्रकार की मनोविनोदपूर्ण क्रीडाओं में निरत चित्रित किया है जिनमें निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं -

वन विहार - घनी बस्तियों के कोलाहलमय गृहों में रह कर वहां के कृत्रिम वातावरण से उब कर कभीं कभी नारियों प्राकृतिक वनस्पति छटा से परिपूर्ण रम्यवनों में विहार करती हुई अपना मनोविनोद करती थीं । पुरुरवा से उर्वशी ऊब कर उस कुमारवन में[2] विहारार्थ प्रविष्ट हो गई जहां स्त्रीजनों का प्रवेश प्रतिसिद्ध था ।

भवभूति ने भी अपनी नाट्य कृति में नारी पात्रों के वन विहार का मनोविनोद पूर्ण क्रिया के रूप में उल्लेख किया है । सीता ने अयोध्या के राजप्रासाद से ऊब कर अपना दोहद भाव पावन गंगा तटवर्ती वनराजि में विहार करने की अभिलाषा श्री राम से अभिव्यक्त की थी ।[3]

जलक्रीडा - सामान्यतः स्त्रियों द्वारा गृहदीर्घ[4], का, दीर्घिका[5] या नदी में जल क्रीडा[6] द्वारा ग्रीष्म ऋतु में मनोरंजन किया जाता था । नारियों के स्नान करने से उनकेशरीर पर लगा अंगराग

---

१. उत्तर. १ अंक "जाने पुनरपि प्रसन्नगम्भीरिषु वनराजिषु विहरिष्यामि, पवित्रसौम्य शिशिरावगाहां च भगवतीं भागीरथीमवगाहिष्ये । " पृ. १२६ ।

२. विक्रमो. अंक ४ प्रवेशक में चित्रलेखा की उक्ति -
"ततः सा भर्तुः अनुनयमप्रतिपद्यमाना गुरुशापसंमूढहृदया विस्मृतदेवता नियमां स्त्रीजनपरिहरणीयं कुमारवनं प्रविष्टा ।
प्रवेशान्तरं च काननोपान्तवर्तिलताभावेन परिणतमस्याः रूपम् । " पृ. ३८८

३. उत्तर. अंक १ "सीता - आर्युपत्र । एतेन चित्रदर्शनेन प्रत्युत्पन्नदोहदाया अस्ति में विज्ञाप्यम् - जाने पुनरपि प्रसन्नगम्भीरासु वनराजिषु विहारिष्यामि " पृ. १२६

४. रघु. ६/३७ विकचतामरसा गृहदीर्धिका मदकलोदकलोलविहंगमाः ।

५. रघु. १६/६ यौवनोन्नतविलासिनीस्तनक्षोभलोलकमलाश्च दीर्धिकः । रघु. १६/१३ आस्यगलितं यत्प्रमदाकराग्रै . . . श्रृंगाहतं कोशातिदीर्घ्रकाणाम् । माल. २/१२ दीर्घिकापद्मिनीनाम् ।

६. रघु. १६/५४ अथोर्मिलोलोन्मद राजहंसे रोधोलता पुष्पवहे सरटवाः। विहर्तुमिच्छा वनितासखस्य । तस्याऽभासि ग्रीष्मसुखे बभूव ।

सरिज्जल से धुल जाता था जिससे नदी की आधार रंगबिरंगी होकर मेघमयी संध्या सी सुन्दर लगती थी[१]। रानियों के स्तनों पर लगा चन्दन यमुना नदी की जलक्रीडा से जल में मिलकर प्रवाहित होने लगता था जिससे यमुना का धवल रंग ऐसा लगने लगता था मानो वहीं उसका गंगा की लहरों से संगम हो गया हो[२]।

जलविहार से युवतियों के सुगन्धित शरीर का संस्पर्श पाकर जल भी महकने[३] लगता था। जल की उठती हुई लोल लहरें सुन्दरियों के अंजन को धोकर मदपान के समय भी लालिमा उनके नेत्रों में भर देती[४] थीं। जलक्रीडा में कानो से खिसके शिरीष कर्णफूल नदी में तैरने लगते थे जिन्हें देख कर मछलियों को शैवाल का भ्रम हो जाता था।[५]

जलक्रीडा में युवतियां मृदंग बजाने के समान जल को ताडित करती थी। (रधितानुंग वारिमृदंगवाद्यम-रघुं. १६/६४ (आस्फालितं यत्प्रमदा कराग्रै मृदंगं धीर ध्वनिमन्वगच्छत्-रघु. १६/१३)। कभी कभी क्रीडारत कोई सुन्दरियां एक दूसरे के मुख पर पानी डालती थीं। जल क्रीडा का चित्रण कवि ने इस प्रकार किया है - "एताःकरोत्पीडितवारिधारा दर्पात् सखीभिर्वदनेषु सिक्ता।

वक्रेतराग्रैरलकैस्तरुण्यश्चूर्णारुणान्वारिलवान्वमन्ति।।" रघु. १६/६६

जल क्रीडा का एक प्रच्छन्न रूप गूढ मोहन गृहों में सुरतोत्सव भी था (रघु. १६/१)

कालिदास ने नारियों की जलक्रीडा का जितना विस्तृत वर्णन किया है उतना नाटकों में नहीं। नाटकों में तो यत्र तत्र संकेतात्मक रूप में इस जलावगाहन का उल्लेख किया है[६]।

भवभूति ने भी कालिदास के समान अपने नाटकों में नारियों की जलक्रीडा का विस्तृत वर्णन न कर संकेत रूप में "मालतीमाधव" के चतुर्थ अंक में वरदा तथा सिन्धु नदियों के संगम में बधुओं के जल क्रीडामय स्नान का समुल्लेख किया है[७]।

संगीत एवं लोक नृत्य - विविध प्रकार के गायन वादन एवं नर्तन से नारियों का मनोविनोद हुआ करता था। अभिज्ञानशाकुन्तलम् के पंचम अंक में रानी हंसपदिका[८] दुष्यन्त से उपेक्षिता होने पर संगीताभ्यास में उसे उपालम्भ भरा गीत सुनाकर अपना मन बहलाती है। सामान्यतः विरहिणी

---

१. रघु. १६/५८ सन्ध्यांदयः साभ्र इवैषवर्णैः पुष्पत्यनेकं सरयूप्रवाहः ।।

२. रघु. ६/४८ यस्यावरोधस्तनचन्दनानां प्रक्षालनाद्वारिविहारकाले कलिन्दकन्या मथुरां गतापि, गंगोर्मि संसक्त जलेव भाति ।

३. पू. मे. ३७/कुवलयरजोगन्धिभिर्गन्धवत्यास्तोयक्रीडानिरत युवतिस्नानातिक्तैमर्रद्भिः ।

४. रघु. १६/५६विलुप्तमन्तः पुरसुन्दरीणां यदंजनं नौर्लुलिताभिरद्भिः तद बघ्नतीभिर्मदरागशोभां विलोचनेष्ठ पतिमुक्तमासाम् ।

५. रघु. १६/६१ अमीशिरीष प्रसवावतंसाः प्रभ्रंशिनो वारिविहारिणीनाम् ।
परिप्लवः स्रोतसि निम्नगायाः शैवाललोलांश्छलयन्ति मीनान् ।।

६. अभि. अंक १/३ सुभगसलिलावगाहाः .... ।

७. मा. मा. ४/१० जलनिविदितवस्त्रव्यक्तनिम्नोन्नतामि ..... स्नानमात्रोत्थिताभिः ।
रुचिरकनककुम्भश्रमिदाभोगतुंगस्तनविनिहितहस्तस्वस्तिकाभिर्वधूभिः ।

८. अभि. ५/१ तथा इसके पूर्व विदूषक-जाने तत्र भवती हंसपदिका वर्णपरिचयं करोति।

नारियाँ संगीत से अपना मनोरंजन किया [१] करती थी । कालिदास ने मालविका के "छलिक" नाम के अभिनयात्मक लोक नृत्य के साथ ही रानी इरावती के नृत्य करने का उल्लेख किया है ।[२]

भवभूति ने भी कालिदास के समान अपने नाटकों के नारी पात्रों का मनोविनोद उनके द्वारा अनेक प्रकार के संगीतात्मक नृत्यों द्वारा कराया है । लवंगिका का मालती से बिना संगीत नृत्य करने तथा मालती मदयन्तिका लवंगिका का एक साथ विविध प्रकार के समूह नृत्य करने का उल्लेख मालतीमाधव [३] में हुआ है । अतः ज्ञात होता है कि उस समय नारियाँ संगीत तथा लोक नृत्य से अपना मनोविनोद किया करती थीं ।

चित्रकला - मनोरंजन के अनेक साधनों में संगीत के समान चित्रकला का भी नारियों में प्रचुर रूप में प्रचलन था । चित्रकला में निपुण विरहिणी नारियाँ अपने प्रियतम का चित्रपलक पर प्रतिरूप अंकित किया करती थी [४] मालविकाग्निमित्रम् में देवी धारिणी के चित्रशाला में जाने के इस उल्लेख से स्पष्ट है कि चित्रकला इनके मनोविनोद का अच्छा साधन था –

"चित्रशालां गता देवी यदा प्रत्यग्रवर्णरागां चित्रलेखामाचार्यस्यालोकयन्ती तिष्ठति ।" (माल. अंक १. पृ. २६४)

भवभूति ने उत्तररामचरित का प्रारम्भ सीता के चित्रदर्शन विषयक प्रथम अध्याय से किया है [५] जिसमें अतीत की घटनाओं का चित्र में अवलोकन कर उन्होंने अपना मन बहलाया था । मालती माधव [६] में भी लवंगिका द्वारा कलहंस की प्रणयिनी मन्दारिका का चित्रफलक उसको देने का उल्लेख किया गया है । इसमें स्पष्ट है, मन्दारिका चित्रकला में पारंगत थी जिसने मालती का चित्र बनाकर स्वयं अपना और मालती लवंगिका आदि का मनोवनोद किया था ।

कथा आख्यायिका - कथा-आख्यायिकाओं के कथन श्रवण से भी नारियां अपना मनोविनोद यथा समय एकान्त में किया करती थीं । कालिदास ने मालविकाग्निमित्रम् में धारिणी का मनोरंजन परिव्राजिका द्वारा कथा सुनाकर किये जाने का इस प्रकार उल्लेख किया है - "प्रभात शयने देवी निषंपणा रक्तचन्दनधारिणा परिजनहस्तगतेन चरणेन भगवत्या कथाभर्विनोद्यमाना तिष्ठति ।" (माल. अंक ४, पृ. ३१७)

---

१. उ. मे. २६ उत्संगे वा . . . वीणां .... तंत्रीमार्द्रा नयनसलिलै सारयित्वा कथंचिद् भूयोभूयः स्वयमपि कृतां मूर्च्छनां विस्मरन्ती ।।

२. माल. अंक २, गणदासः - देव शर्मिष्ठायाः कृतिर्तनुमध्या चतुष्पदा अश्ति । तस्यास्तु छलिक प्रयोगमेकमनाः श्रोतुमर्हति देवः । ' "पृ. २७४.

३. मा. मा. २/१ के पूर्व लवंगिका - तस्मिन्नवसरे असंगतीकं नर्तितासि ।
मा. मा. १० अंक ते (विविधं नृत्यं कृत्वा) पृ. ४७०

४. उ. मे. मत्सादृश्यं विरहतनु वा भावगम्यं लिखन्ती ।

५. उत्तर १ अंक आलेख्य (चित्र) दर्शनो नाम प्रथमोध्यायः १/१४ के बाद सीता .. . एहि प्रेक्षामहे तावत्ते, चरित्रम् १ पृ. १२६ उत्तर. ७/१० आलेख्यदर्शने देवोयथाह रघुनन्दनः।

६. मा. मा. २/१ के पूर्व - लवंगिका - तस्याश्चित्रफलकं प्रभाते हस्तीकृतामासीत् । " पृ. ६१, ६२

भवभूति ने मालती माधव के अष्टम अंक में मालती लवंगिका, मदयन्तिका आदि [१] का मनोविनोद मदयन्तिकाहरण वृतान्त विस्तारपूर्वक सुनाकर करने का उल्लेख किया है । प्रतीत होता है, उस समय उच्च घराने की स्त्रियाँ सामान्य या असामान्य अवस्था में इतिहासपुराण, कथा आख्यायिका सुनकर अपना मनोविनोद किया करती थीं । [२]

क्रीडा (पशु पक्षी, क्रीडा शैल, उद्यान आदि)

मनोविनोद के साधनों में क्रीडापक्षियों में शुक [३] सारिका, मयूर, हंस, आदि उल्लेखनीय हैं, जिनसे नायिकाएं या अन्य नारी पात्र क्रीडा करते हुए अपना मन बहलाया करते थे ।

शुकसारिका सामान्यतः मानव वाणी का अनुसरण करते हैं । अतः एकान्त में नारी पिंजरे में विद्यमान इससे वार्तालाप कर अपना मनोविनोद करती थी । कालिदास ने इनके सुन्दर बोलने का उल्लेख इस प्रकार किया है -

"अयमपि च गिरं नवत्प्रबोध प्रयुक्तामनुवदित शुकस्ते मंजुवाक् पंजरस्थः "रघु.५/७४

विरहिणी नायिका कभी-कभी इन क्रीडा पक्षियों से यह पूछ कर कि तुम अपने जिस स्वामी की सर्वाधिक प्रिय हो उसे कभी स्मरण करती हो [४] अथवा हाथों से तालियां बजा बजाकर मयूर आदि को नचाकर अपना मनोरंजन किया करती थीं । [५]

कालिदास [६] के समान भवभूति ने मयूर हंस आदि क्रीडा पक्षियों को नारी-मनोविनोद का महत्वपूर्ण साधन मानकर अपनी नाट्यकृति उत्तररामचरित में उल्लेखकिया है । पंचवटी प्रवास की अवधि में मुग्धा भगवती सीता मयूर को वात्सल्य भाव सहित कर-तालियों से नचाती थी, जिसे स्मरण करते हुए राम कहते हैं -

---

१. मा. मा. ८/११ के पूर्व "तदेहि मालती समक्ष मधुनी मदयन्तिकाहरण वृतान्त विस्तरतः कथ्यमानसुनुभऽवामः । मकरन्द - व्याकुलस्वादितस्ततो भ्रमन्त्रयस्ता अर्न्त्रेवत्मानं विनोदयन्ति । पृ. ३७०-३७१ .

२. अभि. शा. ३ अंक अनसूया - "किन्तु यादृशी इतिहास निबन्धेषु कामयमानानामवस्था श्रूयते तादृशीं तव पश्यामि । " पृ. ४६२

३. रघु. १७/२० क्रीडापतत्रिणोअयस्य पंजरस्थाः शुकादयः ।

४. उ. में. २५ पृच्छन्ती वा मधुरवचनां सारिकांपंजरस्थां ,
कच्चिद्भर्तुः स्मरसि रसिके त्वं हि तस्य प्रियेति ।

५. उ. में. १६ तालैः शिजावलयसुभगैर्नतितः कान्तया में,
या मध्यास्ते दिवसविगमे नीलकंठः सुहृद् वः । ।

६. कालिदास ने भी अपने नाटकों में दीर्घिकाओं में पर्ले हंसों सौधों में पले कबूतरों - मोरों आदि का मनोरंजनकारी पक्षियों का उल्लेख किया है । यथा -
पत्रच्छायासु हंसा मुकुलितनयना दीर्घिकापद्मिनीनाम्,
सौधान्यत्यर्थ तापाद्वलभिपरिचय द्वेषिपारावतानि ।
विन्दुक्षेपान् पिपासुः परिसरति शिखी भ्रान्तिमद्वारियंत्रम्,
सर्वैरुस्रैः समग्रैस्त्वमिव नृपगुंणैर्दीप्यते सप्तसप्तिः ।। माल. २/१२

"श्रमिषु कृत पुटोन्तर्मण्डलावृत्ति चक्षुः प्रचलित चतुर भ्रू ताण्डवैर्मण्डयन्त्या ।
कर किसलयतालैर्मुग्धया नर्त्यमानं सुतमिव मनसा त्वां वत्सलेन स्मरामि ।।
उत्तर. ३/१६

वासन्ती के शब्दों में सीता की हंस पक्षियों के साथ की गई कौतुकपूर्ण क्रीडा का उल्लेख इस प्रकार किया गया है –

अस्मिन्नेव लतागृहे त्वमभवस्त न्मार्गदत्तेक्षणः ।
सा हंसैः कृत कौतुका चिरमभूद् गोतावरी सैकते ।

आयान्त्या परिदुर्मनायितमिव त्वां वीक्ष्य वद्धस्तया, कातर्यादरविन्द कुड्मलनिभा मुग्धः प्रणामांजलिः ११ उत्तर ३/३७

भवभूति ने क्रीडा पक्षियों का ही नहीं अपितु क्रीड़ामय पशु शावकों का भी उल्लेख किया है। [1]

क्रीडापक्षियों के अतिरिक्त क्रीडा [2] शैल प्रमदवन [3] एवं उद्यान आदि भी नारियों के विहारार्थ मनोविनोद-साथी थे जिनका प्रसंगानुसार काव्य एवं नाट्य कृतियों में उल्लेख हुआ है ।

भवभूति के मालतीमाधव के तृतीय अंक में मालती तथा लवंगिका का रमणीय कुसुमाकर उद्यान में मनोविनोदार्थ विहार करने का वर्णन किया गया [5] है ।

कुमारियों की विविध क्रीडाएं - अनेक प्रकार की क्रीडाओं से भी नारी पात्रों का मनोविनोद वर्णित हुआ है जिनमें अधोलिखित उल्लेखनीय हैं -

---

१. उत्तर. ३/६ मनोविनोदा-एवं क्रीडार्थ करिशावक का सीता द्वारा लालन-पालन सीता देव्या स्वकरकलितैः शल्लकीपल्लवग्रैरग्रे लोलः करिकरभको यः पुरा पोषितो ऽभूत । ३/१६ लीलोत्खातमृणालाकाण्डकवलच्छेदेषु नलिनीपत्रातपत्रं घृतम् ।।
२. उ. में. १७ क्रीडाशैल "तस्यास्तीरे रचितशिखरः पेशलैरिन्द्रनीलैः क्रीडाशैलः कनककदलीवेष्ठनप्रेक्षणीयः" ।
३. अभि. अंक ६ प्रमदवन - "प्रत्यवेक्षितः प्रमदवनभूमयः यथाकाममध्यास्ते विनोदस्थानानि। पृ. १०७
माल. अंक ३ विदूषक - (प्रमदवनशोभावर्णन) भवन्तमिव लोभयितुकामया प्रमदवन लक्ष्म्यः युवतिवेषं लज्ञापयितृक वसन्तकुसुमनेपथ्यंगृहीतम । पृ. २८५
राजा - रक्ताशोकरचा . . . . श्री माधवीयोषितम् ।। ३/५ माल. विक्रमों अंक २......प्रमदवन मार्गमादेशयतु । पृ. १७२
४. पू. में. ३३ धूतोद्यानं कुवलयरजोगन्धभिर्गन्धवत्यास्तोयक्रीडानिरतयुवति स्नानातित्तैर्मरुद्भिः ।
५. मा. मा. अंक ३, लवंगिका - एषं खलु मधुर-मधुर सार्द्रमंजरी . . . . परिष्वजति कुसुमाकरोद्यान मारुतः । पृ. १३०
मदनोद्यान - मा. मा. अंक । पृ. ३०

कन्दुक क्रीडा - सामान्यतः कुमारिकाओं की कन्दुक क्रीडा का कालिदास तथा भवभूति ने अपनी कृतियों में उल्लेख किया है । पार्वती [१] वमुद्धती [२], बसुलक्ष्मी, मालती आदि सभी कलात्मक कन्दुक क्रीडा से मनोविनोद किया करती थी । कन्दुक को हाथ से मार मार कर तथा फेंक कर उसके पीछे दौड़ती थी । कुमुद्वती की कन्दुक [३] क्रीडा इस प्रकार वर्णित है -

"कराभिघातोत्थित कन्दुके यमालोक्य आलाति-कुतूहलेन ।
हृदात्पतत् ज्योतिरिवान्तरिक्षाददत्त जैत्राभरणं त्वदीयम् । । रघु. १६/८३

इसी प्रकार मालविकाग्निमित्रम् में कुमारी वसुलक्ष्मी की कन्दुक क्रीडा के समय पिंगलवानर से भयभीत होने का उल्लेख इस प्रकार हुआ है -

"कुमारी वसुलक्ष्मी : कन्दुकमनुधावन्ती पिंगलवानरेण बलवतत्रासितांकनिष्ण्णा देव्या प्रवातकिसलयमिव वेपमाना न किंचित प्रकृतिं प्रतिपद्यते । । माल विका. अंक ४, पृ. ३३५)

भवभूति ने "मालती माधव" में लवंगिका के द्वारा माधव के विरह में मालती की मनोविनोदात्मक नृत्यगीतादि कला-क्रीडाओं तथा कन्दुकादि से उदासीन होने का उल्लेख किया गया है । [४]

दोनों कवियों द्वारा वर्णित कन्दुक क्रीडा का प्रतिपादन वात्स्यायन ने भी किया है (दृष्टव्य कामसूत्र ३/३/१३ कन्दुकमनेकभक्तिचित्रमल्पकलान्तरितम् ।

पुत्तलिका - आज भी कन्याएं गुड्डा-गुड्डी का विवाह आदि पुत्तलिका-क्रीडा से मनोविनोद किया करती हैं । पुत्तलिका क्रीडा की परम्परा प्राचीन काल से आज तक अविछिन्न चली आ रही है । पार्वती कन्दुक के अतिरिक्त पुत्तलिका क्रीडा में कृत्रिम पुत्रकों से मनोरंजन किया करती थी । [५] प्राचीनकाल में पुत्तलिकाएं (गुडियाँ) सूत, लकड़ी, श्रृंग, हाथीदाँत, मोम एवं मिट्‌टी से निर्मित होती थी । [६]

मणियों को बालू में छिपाने की क्रीडा - पर्याप्त वयस्क कुमारियाँ (बालाएं जिनसे प्रणयीजन

---

१. कुमार. ५/१६ क्लमं ययौ कन्दुकलीलयापि या . . . ।

२. रघु. १६/८३.

३. मा. मा. अंक ३, पृ. १४६, १७५

४. कुमार. १ /२६ मन्दाकिनी सैकत बेदिकाभिः सा कन्दुकैः कृत्रिमपुत्रकैश्च ।
रेमे मुहुर्मध्यगता सखीनां क्रीडारसं निर्विशतीव बाल्ये । ।

५. कामसूत्र (वात्स्यायन) ३/३/१३ - सूत्रदारुगवस्त्रगजदंतमयी दुहितृका मधूच्छिष्ट मृण्मयोश्च ।

६. उ. में. - ६ मन्दाकिन्या . . . . .अन्वेष्टव्यैः कनकसिकतामुष्टि निक्षेपगूढैः, संक्रीडन्ते मणिभिरमरप्रार्थिता यत्र कन्याः ।

प्रार्थना कर सके) इस क्रीडा को खेला करती थी । मन्दाकिनी की स्वरणिम सिकता में छिपी मणियों को मुट्ठी से खोज निकालने का खेल अलका की देवजनों द्वारा प्रार्थित कन्याओं के द्वारा खेलने का उल्लेख उत्तरमेघदूत में हुआ है ।

सिकता पर्वत केलि - कुमारियां किसी सुरम्य सरित तट पर बालू या मिट्टी के ऊंचे टीले बनाकर खेला करती थीं । [1] सिकता पर्वत केलि नामक इस क्रीडा को भी कुमारी युवतियाँ (बालाएँ) ही खेला करती थीं । कालिदास ने उदयवती नाम की विद्याधर कुमारी की मन्दाकिनी की तटवर्ती बालू पर सम्पन्न इस क्रीडा का उल्लेख किया था, पुरुरवा के द्वारा उसे ध्यान से देखने पर उर्वशी क्रुद्ध हो गई थी ।

कालिदास के समान भवभूति ने कुमारियों की उपर्युक्त क्रीडाओं का प्रसंगगत प्रत्यक्ष रूप से उल्लेख न कर संकेत मात्र किया है । यथा - लवंगिका की यह उक्ति "अस्माकमपि भर्तृदारिका . . नाभिनन्दति क्रलाक्रीडा : । " (मा. मा. अंक ३, १४६)

इसका तात्पर्य यह नहीं है कि भवभूति के समय कुमारियों (युवतियों) में क्रीडा करने का प्रचलन था या कवि को इनका कम ज्ञान था या इनसे अरुचि थी । यह संयोग मात्र है कि कालिदास की अपेक्षा भवभूति ने कुमारियों की क्रीडाओं का कम उल्लेख अपनी कृतियों में किया है । [2]

युवती नारियों की क्रीडाएँ - युवतियों में अनेक प्रकार की क्रीडाएँ प्रचलित थीं,जिनका शालभंजिका, उद्यालक पुष्प भंजिका आदि रूप में कारिका वृत्ति (६/७४) में उल्लेख हुआ है । कालिदास ने इनमें से कतिपय क्रीडाओं का संकेत अपनी कृतियों में किया है । अभिज्ञान शाकुन्तलम् के षष्ठ [3] अंक में दो चेटियाँ सहकारमंजरी का भंजन करती हुई कामदेवार्चन हेतु प्रवृत्त प्रदर्शित की गई हैं । "सहकार भंजिका" क्रीडा इसी प्रकार की क्रिया से सम्बन्धित है ।

इसी प्रकार शालभंजिका भी मूल रूप में एक स्त्री क्रीडा थी किन्तु परवर्ती काल में अर्थ परिवर्तन होने से तोरणों पर अंकित तिरछी स्त्री मूर्तियों के लिए यह शब्द प्रचलित हो गया । बुद्ध की माता माया देवी लुम्बिनी वन में शालभंजिका मुद्रा में खड़ी थी तभी गौतम सिद्धार्थ का जन्म हुआ था । नारी की वही तिरछे खड़ी क्रीडात्मक मुद्रा स्थापत्य कला में ग्रहण की गई है ।कालिदास ने, स्तम्भ की शालभंजिकाओं (स्त्री प्रतिमाओं) का उल्लेख किया है । [4]

---

१. कुमार. १ /२६ मन्दाकिनी सैकतवेदिकभिः . . . . . रघुः १३/६२ यां सैकतोत्संग सुखोचितानां विक्रमो. "मन्दाकिन्याः पुलिनेषु गता सिकतापर्वतकेलिभिः क्रीडन्ती दारिकोदयवती नाम तेन राजर्षिणा निध्यातेति कुपिता उर्वशी । " अंक ४, पृ. २१३

२. मा. मा. १०/५ स्तन्यत्यागात्प्रभृति सुमुखी दन्तपांचालिकेव,
क्रीडायोगं तदनु विनयं प्रापिता वर्धिता च ।।

३. अभि. ६ अंक, सखि अवलम्बस्व माम यावदग्रपादस्थिता भूत्वा चूतकलिकां गृहीत्वा कामदेवार्चनं करोमि । पृ. १७६ । रघु. १६/१९ आवर्ष्य शाखाः सदयं च यासां पुष्पाण्युपत्तानि विलसिनीभिः ।

४. रघु. १६/१७ स्तम्भेषु योषितप्रतिमायतानामुत्क्रान्त वर्णक्रमधूसराणाम् ।

वृक्षों का विवाह - युवतियां परस्पर किसी स्थान में यह क्रीडा खेलती थीं, जिसमें किसी वृक्ष का दूसरी लता से विवाह रचाने का स्वांग सा करती थी तथा प्रसन्न होती थीं । अभिज्ञान शाकुन्तलम् में प्रियंवदा द्वारा शकुन्तला से छोटे सहकार के साथ वनज्योत्स्ना [१] का विवाह रचाने तथा रघुवंश में इन्दुमती [२] द्वारा प्रियंगुलता के विवाह कराने का उल्लेख हुआ है । भवभूति ने भी मालती माधव के अन्तर्गत वैवाहिक पृष्ठभूमि में गहन वृक्षों का उल्लेख कामन्दकी के कथोपकथन में किया है [३] । इससे प्रतीत होता है, तत्कालीन नारियाँ वृक्षों की वैवाहिक क्रीडा सम्पन्न करती होंगी ।

घने वृक्षों के वन-उपवनों में नारियां पुष्प तोड़कर उनसे विविध मनोविनोदात्मक क्रीडाएं करती थीं - यथा पुष्पशय्या, माला अलंकारादि रचना कर श्रृंगार प्रसाधन कर मनोविनोद करना । नारियों के पुष्पावचय प्रसंगों का कालिदास तथा भवभूति ने अनेक स्थलों पर मनोविनोद के साधन रूप में उल्लेख किया है । [४]

परस्पर सरस हास परिहासपूर्ण वार्तालाप द्वारा भी युवतियाँ अपना मनोविनोद किया करती थीं, जिसमें पति या प्रणयी के द्वारा सम्पन्न नैश रस विलास की बातें सानन्द सखियों से होती थीं । [५]

प्रतीत होता है, तत्कालीन नारियों की मनोरंजनात्मक विलासपूर्ण विविध क्रीडाएं आवास के विशिष्ट स्थल पर ही सम्पन्न होती थीं, जिसे कालिदास ने ''लीलागार'' [६] रूप में अभिहित किया है।

इस प्रकार ज्ञात होता है कि कालिदास तथा भवभूति के नारीपात्र सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर आधृत अनेक प्रकार की मनोविनोदात्मक क्रियाओं में पूर्णतया प्रवीण परिलक्षित होते हैं ।

---

१. अभि. अंक । हला शकुन्तले, इयं स्वयं वरवधूः बालसहकारस्य त्वया कृत नामधेया दनज्योत्स्नेति नवमालिका । पृ. १४

२. रघु ८/६१ मिथुनं परिकल्पतं त्वया सहकारः फलिनी च नन्विमौ ।
अविधाय विवाहसत्क्रियामन्योर्गम्यत इत्यसाम्प्रतम् ।

३. मा. मा. ६/१६ के पूर्व कामन्दकी - 'इतो निर्गव्य वृक्ष गहनेन गंम्यतासुद्वाहमंगला धर्म। . . . सुविहित तत्रैव वैवाहिकद्व्यजातमवलोकितया भूयश्च । पृ. २६६

४. अभि. अंक ४, ''ततः प्रविशतः कुसुमावचयं नाट्यन्त्यौ सख्यौ, पृ. ५६ ।
मालः ४, एषा कुसुमावचयव्यग्रहस्ता सख्यास्ते परिचारिका चन्द्रिकासंनिकृष्टमागच्छति -३२४
मा. मा. अंक ।. अथ प्रणयिनीभिरनुचरीभिः कुसुमसंचयावचयलीला - भिलाषवतीभिरभ्यर्थमाना तमेव वकुलपादयोद्देशमागतवती । पृ. ४७

५. ऋतु ३/२४ सुरतरसविलासः सत्सखीभिः समेताः असमशर विनोदं सूचयन्ति प्रकामम् अनुपसुखरागा रात्रिमध्ये विनोदं शरदि तरुणकान्ताः सूचयन्ति प्रमदान् ।।
मा. मा. अंक २ प्रथमा - नूनं तस्य महानुभावस्य संकथयात्मनं विनोदयति पृ. ८५

६. रघु. ८/६५ पूर्वाकाराधिकतर रुचा संगतः कान्तयाऽसौ,
लीलागारेष्वरमत् पुनर्नन्दनाभ्यन्तरेषु ।।

नारी का आध्यात्मिक दृष्टिकोण

जहां जगत् के विविध भौतिक विषयों में नारी की प्रभावी भूमिका दृष्टिगत होती है, वहां गहन एवं सूक्ष्म आध्यात्मिक विषय में भी नारी के स्पष्ट दृष्टिकोण को प्रसंगानुसार कालिदास तथा भवभूति ने अपनी कृतियों में अभिव्यक्त करने का समीचीन प्रयास किया है ।

इस सन्दर्भ में नारी का लोक परलोक, ब्रह्म, ईश्वर, माया आदि के विषय में व्यक्त दार्शनिक दृष्टिकोण उल्लेखनीय हैं -

लोक- परलोक - कालिदास तथा भवभूति ने नारीपात्रों का इस मर्त्यलोक के अतिरिक्त लोकान्तर या परलोक विषयक दृष्टिकोण व्यक्त किया है । दिलीप के साथ रानी सुदक्षिणा का भी तपोदानमूलक लोकान्तरसुख विषयक विचार वशिष्ठ मुनि के समक्ष व्यक्त हुआ है । [१]

मृत्यु के पश्चात् मर्त्यलोक छोड़कर आत्मा लोकान्तर या परलोक में प्रवेश करती है तथा पुण्य कार्य करने से स्वर्ग सुख प्राप्त होता है । इन्दुमती के [२] अकस्मात् देह त्याग कर परलोक चले जाने पर अज द्वारा गंगा सरयू के पावन तीर्थ में देहत्याग किये जाने पर स्वर्ग में उसे प्राप्त कर नन्दनवन के क्रीडागार में रमण किया । अपने पति काम के परलोक प्रयाण पर रति ने उसका अनुसरण करने का विचार व्यक्त किया था । [३]

भवभूति ने भी मालती के माध्यम से मर्त्यलोक के पश्चात् परलोक प्रस्थान करने का दृष्टिकोण अभिव्यक्त किया है --

"मालती - हा देव माधव । परलोकगतोऽपि युष्माभिः स्मृतव्योऽयं जनः [४] ।" इसी प्रकार मालती का यह कथन भी दृष्टव्य है -

"यथा च लोकान्तरगतामपि मासुद्दिश्य स जनः । मा. मा. अंक ५ पृ. २३७

कर्मवाद एवं पुर्नजन्म - कालिदास [५] तथा भवभूति को नारी के आध्यात्मिक दृष्टिकोण के अन्तर्गत कार्मवाद तथा पुर्नजन्म विषयक पर्याप्त जानकारी थी । इनके नारीपात्रों को आत्मा की अमरता सहित पुर्नजन्म तथा कर्मवाद पर भारी आस्था थी । "विक्रमोर्वशीयम" की उर्वशी को

---

१. रघु. १/६६ लोकान्तरमुखं पुण्यं तपोदानसमुद् भवम । संततिः शुद्धवंशया हि परत्रेह च शर्मणे ।
२. रघु. ८/४६ परलोकमसन्निवृत्तये यदनापृच्छ्य गतासि मामितः ।
   रघु. ८/६५ तीर्थेतोये व्यक्तिकरभवे . . . . संगतः कान्तयासौ लीलागारेष्वरमत पुनर्नन्दनभ्यन्तरेषु ।
३. कुंमार. ४/१० परलोकनवप्रवासिनः प्रतिपत्स्ये पदवीमहं तव ।
४. मा. मा. अंक ५, पृ. २३७
५. रघु. ८/८५ कर्मानुसार गति भिन्न होने पर परलोक स्थित मृत स्त्री या पुरुष की आत्मा नहीं मिल पाती - "रुदता कुत एव पुनर्भवता मानुमृतापि लभ्यते ।
   परलोकजुषां स्वकर्मभिर्गतयो भिन्नपथा हि देहिनाम् । ।

अपने अविधानपूर्ण कर्मो के कारण मृत्युलोक में आना पड़ा था । आत्मा के कार्यक्रमानुसार ही परलोक में मरणोत्तर गति मिलती है ।

उस समय नारी तथा पुरुष में कर्मवाद तथा पुर्नजन्म पर पूर्ण आस्था थी [१] । कालिदास के रघुवंश की सीता अपने जन्मान्तर के पातकों को ही इस जन्म के दुःख का कारण बताती हैं । [२] वे अन्य (आगामी) जन्मों में पतिवियोग न पाने हेतु इस जन्म में आत्मशुद्धि सहित कठोर साधना हेतु कृत संकल्प होकर लक्ष्मण से कहती हैं -

"साहं तपः सूर्यनिविष्टदृष्टि रूहर्वं प्रसूतेश्चरितुं यतिष्ये ।
भूयो यथा मे जनन्तान्तरेऽपि त्वमेव भर्ता न च विप्रयोगः ।। रघु. १४/६६

कुमारसंभव के पंचम सग में भी उमा की भी कठोर तपश्चर्या भी कुछ इसी प्रकार कीहै जो इस जन्म में यदि भगवान् शंकर को पति रूप में न पा सके तो आगामी जन्म में ही उनकी मनोकामना पूर्ण हो सके । "अभिज्ञान शाकुन्तलम्" के सप्तम [३] अंक में तपश्चर्या की कठोर साधनामयी पृष्ठभूमि (मारीचाश्रम) में तपस्विनी शकुन्तला के हमें दर्शन होते हैं ।

भवभूति [४] भी कालिदास के समान कर्मो के वैषम्य से किसी जन्म में प्रियसमागम न होने की कल्पना कामन्दकी के कथन के माध्यम से करते हैं तथा कामन्दकी के दार्शनिक कथन में ही कवि ने पनर्जन्म के सिद्धान्त को प्रतिपादित करने का प्रयास इस प्रकार किया है - जन्मान्तरादिव पुनः कथमपि लब्धासि यावदयमपरः ।

उपराग इव शशिकलां कवलयितुमुपस्थितो ऽनर्थः ।। (मा.मा. १०/१२)

---

१. रघु. १ /२० फलानुमेयाः प्रारम्भः संस्काराः प्राक्तना इव ।
रघु. ८/२०, ७/१५ मनो हि जन्मान्तर संगतिज्ञम् ।

२. रघु. १४/६२ममैव जन्मान्तरपातकानां विपाकविस्कूर्जथुर प्रसहयः ।
अभि. ५/२ तच्चेतसा स्मरति नूनमबोधपूर्व भावस्थिराणि जननान्तर सौहृदानि ।।

३. अभि. षष्ठ अंक में भी सानुमती की दृष्टि में शकुन्तला तपस्विनी ही है -
सानुमती - "तपस्विन्न्याः शकुन्तलायाअधर्मभीरोरस्य राजर्षेः ।
सानु. - "नन्वीदृशानि तपस्विन्याः भाग्यधेयानि" अंक ६ पृ. ५२० अभि ७/२१

४. मा. मा. १०/७ संगमः कर्मणां मेदाद्यदि न स्यान्न मनाम सः ।
प्राणानां तु परित्यागे संतापोपशमः फलम् ।।
मा. म. १०/१३ तुलनीय स्मृतिः वचन-"मृतोऽपि मानुषः शक्तोनानुगतन्तुं मृतं जनम् जायावर्जं च सर्वस्य याम्यः पन्था विसिद्धयते ।। "

इसी प्रकार सीता [१] तथा लवंगिका द्वारा भी अपने पुर्नजन्म को स्वीकृत किया गया है -

माया तथा मोक्ष - जीव की अज्ञान अथवा अविद्या से आहत जो शक्ति जगत् के विषय भोगों के बंधन में बाँधती है, उस माया को मोह ग्रन्थि मानकर कालिदास के समान भवभूति ने उसका प्रसंगानुसार अपनी कृतियों में उल्लेख किया है ।

भागीरथी की मां पृथ्वी की अपनी सन्तान (सीता) के सम्बन्ध में माया-मोह ग्रन्थि विषयक यह कथन दृष्टव्य है -

"विश्वम्भरापि नाम व्यथते इति, जितमपत्यस्नेहेन । यद्धा सर्वसाधरणी ह्येष मोह ग्रन्थिरन्तश्चरश्चेत् नावतामनुप्लवः संसारतन्तुः । "[२]

माया का ही रूप यह मोह न केवल पृथ्वी सीता को ही वरन् राम को भी धुएं के समान आवृत्त कर देता है । [३]

मोक्ष के [४] विषय में भी कालिदास के नारीपात्र पूर्णतः सजग दृष्टिगत होते हैं । कवि ने इसे मुक्ति, अपर्ग [५], अनपायिपद, [६] अनावृत्ति [७] अवस्था आदि अभियानों से व्यवहृत किया है । भवभूति ने [८] मायामय समस्त सांसारिक भावों से डरने वाले मनीषियों (आरण्यकों) द्वारा इसे अधिगत करने का स्पष्ट संकेत किया है ।

इसी प्रकार कालिदास तथा भवभूति ने अपनी नाट्य कृतियों में ब्रह्म [९], ईश्वर, [१०] आत्मा [११] आदि तत्वों को व्यक्त करते हुए इनके समान हेतु यौगिक सिद्धि का भी समुल्लेख किया है ।

समीक्षा - उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कालिदास तथा भवभूति की काव्य एवं नाट्य कृतियों में चित्रित नारी पात्र परिष्कृत सांस्कृतिक प्रवृत्तियों से सम्पन्न संलक्षित होते हैं, जिसमें समुन्नत

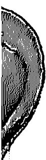
---

१. उत्तर. ७ अंक, पृ. ६४२, एहि जात लव चिराय परिष्वजेथां पुनर्जन्मान्तरयतां जननीम्।।
२. उत्तर. ७/५ के पूर्व, पृ. ६१६ ।
३. उत्तर. ३/६ उत्पीड इव धूमस्य मोहः प्रागावृणोति माम् ।
४. रघु. १०/८४ (मोक्ष), १०/२३ (विमुक्ति)
५. रघु ८/१६ (अपवर्गमहोदयार्थयोः)
६. रघु. ८/१७ (अनपायिपदोपलब्धये)
७. कुमार. ६/७७ अनावृत्तिमयं यस्य परमाहुर्मनीषिणः ।
८. उत्तर. अंक १/८ के पश्चात राम की उक्ति, पृ. ६८
६. १०. रघु. १०/२४, १८/१६, ११, १५, कुमार. २/४, ६, १४, १५
उत्तर. ३/१० संजीवय जगतपतिम् । ७/२० शब्द ब्रह्मविदः कवे ....मा. मा. १/३ (जगन्नाथ भगवान्)
११. मा. मा. ५/२, ३, ५ आदि .

समाज में प्रचलित यज्ञादि विविध धार्मिक प्रवृत्तियां, उच्च स्तरीय सांस्कृतिक समारोहों के साथ मनोविनोदपूर्ण क्रियाएं उल्लेखनीय हैं । इनके द्वारा नारियां अपनी अभिरुचि के अनुकूल गौण अथवा सामान्य आवश्यकताओं की आपूर्ति कर समाज को सांस्कृतिक उत्कर्ष प्रदान करती थीं ।

चतुर्थ परिच्छेद

नारी पात्रों का ललितकला के क्षेत्र में अध्ययन



चतुर्थ परिच्छेद

कालिदास एवं भवभूति के नारी पात्रों का ललित कलाओं के क्षेत्र में तुलनात्मक अध्ययन

मानव समाज में प्रतिभा सम्पन्न पुरुषों के अतिरिक्त नारियों ने भी अपनी सुकुमार तथा सात्विक कलात्मक भावनाओं को जहाँ कागज, धातु, प्रस्तर आदि के माध्यम से मूर्त रूप में चित्रकला मूर्ति कला के रूप में साकार किया वहीं स्वर आदि के द्वारा अमूर्त रूप में राज्य एवं संगीत कला के माध्यम से भी अभिव्यक्त किया है । पार्थिव पदार्थों में कला ही सौन्दर्य एवं सजीवता की सृष्टि कर सुकुमार मनोभावों को साकार रूप प्रदान करती है । कला अखण्ड रूप से लालित्य प्रधान होने के कारण ही ललित [1] कही जाती है जैसा कि कालिदास ने स्वयं सभीप्रकार की कलाओं को ललित रूप में अभिहित किया है -

"गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ । (रघु. ८/६७)

ललित कलाओं से कवि का अभिप्राय काव्य, संगीत, नृत्याभिनय चित्रकला आदि प्रतीत होता है । मालविका के नृत्य के सम्बन्ध में भी कवि ने ललित शब्द ही प्रयुक्त किया है । कला के इसी ललित शब्द के आशय के लिए शिल्प [2] शब्द का प्रयोग द्रष्टव्य है । कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र अधोलिखित ललित कलाओं के क्षेत्र में पारंगत परिलक्षित होते हैं -

काव्यकला - कालिदास के कतिपय नारीपात्र नाट्य एवं काव्य कला में अत्यन्त निष्णात हैं। शकुन्तला का दुष्यन्त को प्रणय निवेदनार्थ भावपूर्ण छन्द की रचना [3] करते हुए उत्कृष्ट काव्य कला का परिचय देना, मालविका का एक छन्द में अपने सुकुमारमनोभावों एवं प्रणय को व्यक्त करना [4],

---

१. माल. २/१३ " अव्याजसुन्दरीं तां विधानेन ललितेन योजयता ।
परिकल्पतो विधात्रा वाणः कामस्य विषदिग्धः ।।

२. माल. अंक २, विदू. भो वयस्य न केवलं रूपे शिल्पेऽप्य द्वितीया मालविका ।

३. अभि. ३/१२ *उन्नतिभ्रूलतमाननमस्याः पदानि रचयन्त्या ।*
कण्टकितेन प्रथयति मय्यनुरागं कपोलेन ।
अभि. ३/१३ तव न जाने हृदयं ....वृत्तमनोरथान्यंगानि ।

४. माल. २/४ दुर्लभः प्रियो ....सतृष्णाम् । (चतुष्पदवस्तुगायति)
"२/१३ लुब्धानुरागपिशुनं ....प्रियायाः ।

निपुणिका द्वारा उर्वशी के काव्य बन्ध का उल्लेख करना [१] आदि उदाहरण इस तथ्य को सर्वथा करते हैं ।

कालिदास के समान भवभूति के कतिपय नारी पात्र भी काव्य कला में पारंगत तथा अभिरुचि सम्पन्न दृष्टिगत होते हैं ।

''मालतीमाधव प्रकरण के अन्तर्गत मालती तथा कामन्दकी की काव्यकला निपुणता का स्पष्ट संकेत प्रसंगानुसार भवभूति ने किया है ।

नाट्यकला - काव्य कला में नाट्य कला की श्रेष्ठता सामान्यतः ''काव्येषु नाटकम रम्यम्' ''नाटकान्तं कवित्वम्'' आदिसूक्तियों के माध्यम से स्वीकृत की गई है । कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र नाट्य कला में निसर्गतः निपुण दृष्टिगत होते हैं । [२] उस समय उल्लास आनन्दपूर्ण विवाहादि महोत्सवों के अवसर पर नाटक का अभिनय प्रस्तुत किया जाता था जिसमें पुरुषों के साथ नारी पात्र भी सुन्दर सदृश हाव भाव तथा नृत्य के द्वारा अभिनय कर राग, रस, वृत्ति आदि का सामंजस्य समुपस्थित करते थे । कालिदास ने ''कुमारसंभव'' में अप्सराओं के ऐसे ही रस, राग, भावपूर्ण ललित अभिनय को शिव पार्वती द्वारा देखने का उल्लेख किया है । [३]

इसी प्रकार ''विक्रमोर्वशीयम्'' [४] में भरतमुनि प्रणीत ''लक्ष्मी स्वयंवरनाटक'' में उर्वशी मेनका आदि नारीपात्रों का लक्ष्मी-बारुणी का अभिनय करना इस तथ्य को प्राणित करता है कि विशिष्ट समारोहपूर्ण अवसरों पर समाज में नाटकों का प्रयोग (अभिनय) प्रदर्शित किया जाता था जिसमें नारीपात्रों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रहती थी । इन नारी पात्रों का अभिनय अत्यन्त सुन्दर सजीव एवं भावपूर्ण रहता था जिसमें हर्ष विषाद [५] लज्जा आदि की अभिव्यक्ति स्पष्ट रूप से होती थी किन्तु कभी कभी प्रमाद अथवा अन्यमनस्कतावश संवादों या अभिनय में स्खलन के कारण त्रुटि भी हो जाती थी जिससे नाट्य निर्देशकों या शिक्षक का उन्हें कोपभाजन भी होना पड़ता था । [६]

---

१. विक्रमो. अंक २ निपुणिका - उर्वश्याः काव्यबन्धः । पृ. ३६५

२. मालती. १/२७ अत्रान्तरे किमपि वाग्विभवातिवृत्तवैचित्र्यम् .....माविरासीत् ।
मा. मा. १०/१७ वागमृतजलासारो जलदजलासारभतिशेते ।

३. कुमार. ७/६१ तौ सन्धिषु व्यंजित वृत्तिं भेदं रसान्तरेषु प्रतिबद्धरागम् ।
अपश्यतामप्सरसां मुहूर्त्त प्रयोगमाद्यं ललितांगहारम् ।।

४. विक्रमो. २/१७ मुनिना भरतेन यः प्रयोगो भवतीष्वष्ट रसाश्रयो नियुक्तः ।
ललिताभिनयं तमद्य भर्ता मरुतां दृष्टुमनाः स लोकपालः ।।
अंक ३ लक्ष्मीभूमिकायां वर्तमाना उर्वशी, वारुणी भूमिकायां वर्तमानया मेनकया पृष्टा । पृ. ३६६

५. विक्रमो अंक ३ ''उर्वशी सविषादं रूपयति, '' पृ. ३६३, महेन्द्रेण पुनः प्रेक्षणावसाने लज्जावनतसुखी सा एवं भणिता, पृ. ३७० ।

६. विक्रमो. - ''ततःपुरुषोत्तमे इति भणितव्ये पुरुरवसीति तस्य निर्गता वाणी । सा खलु शप्ता उपाध्यायेन । पृ. ३७० .

"मालविकाग्निमित्रम्" में मालविका नाट्य कला में अत्यन्त निपुणा एवं मेधाविनी चित्रित की गई है । इस संदर्भ में आचार्य गणदास का यह कथन उल्लेखनीय है -

"भद्रे विज्ञाप्यतां देवी परमनिपुणा मेधाविनी च । किं बहुना - यद् यत् प्रयोग विषये भाविकमुपदिश्यते मया तस्यै ।

तद् तद् विशेषकरणात् प्रत्युपदिशतीव मे बाला ।। " माल. १/५

यहां एवं अन्य स्थलों पर बी मालविका का प्रयोग विषयक विशिष्ट उपादनों में उपयोग करने से नाट्य नैपुण्य अभिव्यक्त होता है [१] । आर्या कौशिकी नाट्य कला की पूर्ण ज्ञाता थीं । उनकी उक्ति इस तथ्य को पुष्ट करती है कि वे नाट्य कला के सूक्ष्म तत्वों से सुपरिचित थीं । उनके अनुसार यह पुस्तनीय ज्ञान मात्र नहीं अपितु सम्यक् भावाभिव्यक्ति सूचक हैं । कालिदास के समान भवभूति के नारी पात्र भी नाट्य कला में सिद्धहस्त प्रतीत होते हैं । उत्तर रामचरित की नायिका सीता अभिनय[२] की पूर्णता में कायिक, वाचिक आहार्य एवं सात्विक अभिनय में पूर्ण पारंगत परिलक्षित होती हैं । इस नाटक के सप्तम [३] गर्भांक के नेपथ्य में उनके द्वारा गंगा में कूद कर आत्म हत्या करने का वाचिक अभिनय के साथ सूत्रधार द्वारा भी सूचना प्राप्त होती है -

हा ! आर्यपुत्र, हा कुंमार लक्ष्मण । एकाकिनीं मन्दभागिनीम् अशरणामरण्ये आसन्नवेदनां हताशां श्वापदा अभिलषन्ति । तदिदानीं मन्दभागिनीं भागीरथ्यामात्मानं निक्षिपामि ।

इसी प्रकार मालती माधव [४] में मालती के अतिरिक्त लवंगिका [५] कामन्दकी [६] आदि नारी

---

१. माल. २/५ वचनमभिनत्या स्वांगनिर्देशपूर्वम् ।
२/६ वामं सन्धिस्तिमितवलयं न्यस्यहस्ते नितम्बे ।
कृत्वा श्याम् विटपसदृशं स्रस्तमुक्त द्वितीयंम् ।
पादांगुष्ठाललितकुसुमे कुट्टिमे पातिताक्षम नृत्यादस्याः स्थितमतितरां किमत्रवाग्व्यवहारेण। पृ. २७४
माल. अंक १ कौ. देव प्रयोगप्रधानं नाट्यशास्त्रम् कान्तमृज्ञवायताधर्म ।।
१/१६ शिल्ष्टि क्रिया कस्यचिदात्मसंस्था . . . . .प्रतिष्ठापयितव्य एव ।

२. उत्तर . ३ अंक सीता - (ससम्भ्रमं कतिचित पदानि दधती) आर्यपुत्र परित्रायस्व, परित्रायस्व ममं तं पु त्रकम । (स्मृ तिमभिनीय सवै कलव्यम) हा धिक् , हा (इतिमूर्च्छेति) पृ. २६८
३/४२ तथा इसके बाद सीता (सलज्ञमधोमुखी) सस्वेदरोमांर्चित कम्पितांगी जाता प्रियस्पर्श सुखेन वत्सा ।

३. उत्तर. ७/२ तथा इसके पूर्व "विश्वम्भरात्मजा देवी राज्ञा त्यक्ता महावने ।
प्राप्तप्रसवयात्मानं गंगदेव्यां विमुंचति १.१ उत्तर. ७/२ ।।

४. मा. मा. १/२६ (भ्रूविलास कटाक्ष) १/२७ संस्कृत में संभाषण १/२६ सात्विक, बकायिक अभिनय ३०, २/५

५. मा. मा. २/५ के पश्चात्, पृ. १०५, ११४ (जनान्तिकम्) पृ. ११८ (अपवार्य)

६. मा. मा. कामन्दकी (उत्थाप्यालिंग्य मूर्ध्नुपाध्रीय) पृ. ४६१, ४६८

पात्रों का परिपूर्ण अभिनय विविध प्रकार से प्रस्तुत किया गया है । भवभूति ने पात्रों के अनुकूल आहार्य अभिनय में वेश भूषा का भी पूर्ण ध्यान रखा है । महावीरचरितम् [१] में राक्षसी ताडका एवं शूर्पणखा का भयंकर वेश तथा मालती माधव [२] में भी कापालिकी कपालकुण्डला का भीषण उज्ज्वलवेश इसके सुन्दर उदाहरण हैं ।

अतः उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र काव्य एवं नाट्य जैसी ललितकला में पूर्ण पारंगत हैं ।

संगीत कला - प्राचीन भारतीय विचारकों की दृष्टि में भाषा साहित्य (काव्य) एवं संगीत एक ही विद्या के दो अंग हैं क्योंकि संगीत एवं व्याकरण के स्वरों के मूल तत्त्व सूत्र माहेश्वर सूत्र हैं । नाट्य कला के समान कालिदास तथा भवभूति ने संगीत कला को भी पर्याप्त महत्व प्रदान किया है । ललित कलाओं में जो स्थान काव्य एवं संगीत को मिला वह मूर्तकला, चित्रकला वस्तुकला को नहीं, संगीतकला का नाट्य कला से भी घनिष्ठ सम्बन्ध हैं क्योंकि संगीत के तीनों अंग गीत वाद्य एवं नृत्य के बिना नाट्य अधूरा ही है तथा भावों की अभिव्यक्ति सशक्त रूप में क़रने में असमर्थ हैं । यही कारण है इन दोनों महाकवियों ने अपनी नाट्य कृतियों में नाट्य कला के साथ संगीत कला के सभी अंगों का अपने नारी पात्रों में सन्निवेश किया है ।

गीत - प्रतीत होता है कालिदास तथा भवभूति के समय में विशिष्ट उत्सव समारोहों पर नारी पात्रों द्वारा गाये जाने वाले लय ताल मूर्च्छना आदि से समन्वित रागबद्ध शास्त्रीय गीत तथा प्राकृत में गाए जाने वाले लोक गीत प्रचलित थे । कालिदास ने अपनी कृतियों में अनेक स्थलों पर गीत शब्द को सामान्यतः सभी प्रकार के गीत के अर्थ में प्रयुक्त किया है । [३] वैसे अधिकांशतः नारियों द्वारा प्राकृत में ही हैं । [४]

---

१. म. च. १/पृ. ६३, अंक २, पृ. ६६,

२. मा. मा. अंक ५ पृ. १६८ ।

३. अभि. १ (आमुख) - आर्ये किमन्यदस्याः परिषदः श्रुतिप्रसादहेतोर्गीतात्करणीयमस्ति । पृ.४
अभि. १ अंक, तवास्मि गीतरागेण हारिणा प्रसंग हृतः पृ. ५
,, ३ अंक. , "हला चिन्तितं मया गीतवस्तु ।" पृ. ४६
,, ५ अंक कलविशुद्धायाः गीते स्वरसंयोगः श्रूयते ।
,, ५ अंक, अहो रागपरिवाहिनी गीतिः । पृ. ७६
विक्रमो. १/३" आकाशं सुरगणसेविते समन्तात् किं नार्थः कलमधुराक्षरं प्रणीताः । ऋतु, १/२८ व्रजतु तव निदाघः कामनीभिः समेतो ,
निशि सुललितगीते हर्म्यपृष्ठे सुखेन ।
रघु. ६/४५ सा शूरसेनाधिपतिं सुषेणमुद्दिश्य लोकान्तरगीत कीर्तिम् ।

४. माल. २/४ दुल्लहो पिओ मे ....परिगणय सीताण्हम् ।।
विक्रमो. २/१२ सामिअं संभाविआ . . . .अच्छुराहा सरीरए ।।
अभि. १/४ ईसीसि चुंबिआई . . . .सिरीसकुसुमाई ।।
अभि. ३/१४ तुजम्भण आणे हि अअं ....बुत्तमणोर हाइं अंगाइं ।।

कहीं कहीं कालिदास ने गीत के समान रूप में संगीत का [१] भी प्रयोग किया है जबकि इनमें अन्तर हैं। गीत में केवल कण्ठ संगीत है जबकि संगीत में गीत के साथ वाद्यादि [२] का प्रयोग होता है। कालिदास के नारी पात्रों द्वारा गाये प्राकृत गीतों से भी यह तथ्य पुष्ट हो जाता है। मालविका के गीत में नृत्य का भी योग था [३]। "मेघदूत" के यक्ष की प्रिया वीणा [४] बजा बजाकर पति के गुणों के गीत गाती थी।

प्रतीत होता है वन्य प्रदेश के लोकगीतों के साथ भी वाद्यों में वंशी का प्रायः प्रयोग हुआ करता था क्योंकि कालिदास ने अरण्य प्रदेश के स्त्री पुरुषों के गीतों के साथ वंशी वाद्य का वर्णन किया है। [५]

भवभूति के नारी पात्र भी संगीत कला की परिपूर्णता में गीत निपुणता प्रदर्शित करते हैं। कवि ने मालती माधव की प्रस्तावना [६] में ही सूत्रधार द्वारा सभी पात्रों को वेश रचना के साथ संगीत के अनुष्ठान में शीघ्रता करने का निर्देश दिलाया है जिससे इसमें गीत तत्व का भी समाहार हो जाता है। उस समय प्रतीत होता है, विशेष उत्सवों अथवा समारोहों में वेश्याओं द्वारा मांगलिक गीत गाये जाते थे। जैसा कि मालती माधव में भवभूति ने वर्णन किया है।

. . . . "इमा..... सविलास कवलिततताम्बूलाभिपूरितकपोलमण्डलाभोग व्यतिकर स्खलितमधुर मंगलोद्‌गीत बद्धकोलाहलैः.....।" (मा. मा. अंक ६, पृ. २६०)

---

१. माल. अंक । तदारभ्यतां संगीतम् । पृ. २६२
,, प्रेक्षागृहे संगीतरचनां कृत्वा तत्रभवतो इत प्रेषयत गर्भ्रतः संगीते अन्यन्तरे स्वः । पृ. २७८
,, अंक ५, मालविके । इतः पश्य । कतरा ते संगीत सहकारिणी रोचते । पृ. ३४६

२. पू. मे. ६० शब्दायन्ते मधुरमनिलैः कीचकाः पूर्यमाणाः संसक्ता भिस्त्रिपुर विजयो गीयते किन्नरीभिः । निर्ह्लादस्ते मुरजं इव चेत्कन्दरेषु ध्वनिः स्यात्, संगीतार्थो ननु पशुपतेस्तत्र भावी समग्रः ।

३. माल. २/८ अंगैरन्त र्निहितवचनैः सूचितः सम्यगर्थः पादन्यासो लयमनुगतस्तन्मयत्वं रसेषु । शाखायोनिर्मृद्वरभिनयस्तद्विकल्पानुवृत्तौ भावो भावं नुदति विषयाद्रागबन्धः स एव ।।

४. उ. मे. २६ उत्संगे वा मलिनवसने सौम्यनिक्षिव्य वीणां, मद्‌गोत्रांकं विरचितपदं गोयमुद्‌गातुकामा ।

५. रघु. २/१२ स कीचकैमर्चिरुत पूर्णरन्ध्रैः कूजद्भि-रापादितवंशकृत्यम् । शुश्राव कुंजेषु यशः स्वमुच्चैरद्‌गीयमानं वनदेवताभिः ।।
पूर्वमेघ. ६० शब्दायन्ते मधुरमनिलैः कीचकः पूर्यमाणाः संसक्ताभिस्त्रिपुर विजये गीयते किन्नरीभिः कुमार १/१८ यः पूरयन् कीचकरन्ध्रभागान् दरीमुखोत्थेन समीरणेन । उद्‌गास्यतामिच्छति किन्नराणां तानप्रदायित्वमिवोपगन्तुम् ।।

६. मा. मा. १/७ के पूर्व सूत्रधारः सर्वे कुशीलवा यथा - स्वसंगीतप्रयोगे वर्णिकापरिग्रहे च त्वर्यतामिति । पृ. १४

प्रतीत होता है पुरुषों की अपेक्षा सुन्दरियों के कोकिल जैसे मधुर कण्ठ से निकला सरस गीत विशेष रूप से पसन्द कर सुना जाता होगा । [१]

कभी कभी मृदंग आदि वाद्यों की गम्भीर ध्वनि से दबे हुए मधुर गीत के शब्दों को सुनने में व्याघात उत्पन्न हो जाता था जिससे उसे गीत संगीत में वैरस्य हो जाता था । उपर्युक्त तथ्यों के अनुसार कालिदास तथा भवभूति दोनों महाकवियों के नारी पात्र संगीत काव्य के अन्तर्गत गीत कला में सर्वथा सिद्धहस्त प्रतीत होते हैं ।

वाद्य - संगीत शास्त्र के अन्तर्गत वाद्यविदों ने तंत्रीगत-वीणादि आनद्ध (अवनद्ध) मुरज पटह आदि सुषिर-रन्ध्रयुक्त वंशी आदि तथा धातु निर्मित घन-मंजीर आदि रूपों में वाद्यों को विभाजित किया है । [२] कालिदास तथा भवभूति ने अपने नारी पात्रों को इनमें से अधिकांश के वादन में सिद्धहस्त चित्रित किया है । ये लोकप्रिय वाद्य अधोलिखित हैं -

तंत्री (तत) वाद्य - सामान्यतः इसमें वीणा नाम प्रयुक्त हुआ है । यद्यपि 'संगीत दामोदर' ग्रन्थ में २९ प्रकार की वीणाओं का आकार प्रकार के अनुसार उल्लेख हुआ है किन्तु कालिदास ने वीणा[३] तथा तंत्री शब्द [४] के अतिरिक्त संगीत दामोदर के निर्दिष्ट प्रकारों में वल्लकी,[५] परिवादिनी का भी उल्लेख किया है । टीकाकार मल्लिनाथ ने वल्लकी तथा परिवादिनी[६] को सात तारों की वीणा से अभिन्न माना है । जबकि श्री के.वी. रामचन्द्रन्[७] ने वायु प्रवाह से बजनें वाली विशिष्ट प्रकार की "एओलियन हार्य" नामक वीणा से इसे समीकृत किया है । जिसके वायु द्वारा कम्पन्न से उत्पन्न दिव्य संगीत को सुनकर इन्दुमती ने सदैव के लिए नेत्र निमीलित कर लिए थे । (रघु. ८/३७)

---

१. मा. मा. ८/४ मद्य श्रुतिः पिबतु किन्नरकण्ठिवाचम् ।

२. संगीत रत्नाकर में उपर्युक्त विभाजन को पुनः ४ भेदों में निरूपित किया गया है -
(१) शुष्क (२) गीतानुग (३) नृतानुग (४) द्वयानुग
" पुनस्चतुविधं वाद्यं वक्ष्ये लक्ष्यानुसारतः ।
शुष्कं गीतानुगं नृत्यानुगमन्यदद्वयानुगम् । ।"
कालिदास ने "गीतानुग" शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में किया है --
श्रोत्रेषु सम्मूर्च्छति रक्तमासां गीतानुंगवारिमृदंगवाद्यम् । (रघु. १६/६४)

३. पू. मे. २६ सिद्धद्वन्द्वैर्जलकणभयाद्वीणिभिर्मुक्तमार्गाः ।
रघु. १६/३५ वेणुना दशनपीडिताधरा वीणया नखपदांकितौरवः ।
शिल्पकार्य उभयेन वेजितास्तं विजिहय नायना व्यलोभ"यन् । ।

४. उ. मे. २६ "तन्त्रीमार्दां नयनसलिलैः सारयित्वा कथंचिद् ।
भूयो भूयः स्वमपिकृतां मूर्च्छनां विस्मरन्ती । । ऋतु १/३ सुतन्त्रिगीतं मदनस्य दीपनं ।

५. ऋतु. १/८ स वल्लकी काकलिगीतनिस्वनैर्विबोध्यते सुप्त इवाद्य मन्मथः ।
रघु. ८/४१ प्रतियोजितव्य वल्लकीसमवस्थामथ . . . . मंकमंगनाम् । ।

६. रघु. ८/३५ भ्रमरैः कुसुमानुसारिभिः परिकीर्णा परिवादिनीमुनेः ।

७. Journal of U.P. Historical society Vol. XXII pt. 1. 2., 1949.
Kalidasa and Music by. K. V. Ram chandran .

संगीत के विविध रूपों एवं कतिपय वाद्यों के नारी पात्रों में प्रचलन होने पर भी कालिदास के समान भवभूति ने अपनी नाट्य कृतियों में तंत्री वाद्य-वीणादि का उल्लेख संयोगवश नहीं किया है । इसका यह अभिप्राय नहीं है कि भवभूफतिकालीन नारियाँ वीणादि वाद्यों का प्रयोग कम अथवा नहीं करती थीं ।

सुषिर वाद्य- सुषिर अर्थात् रन्ध्र युक्त वाद्यों में शंख, श्रृंग, कीचक एवं वंशी आदि वाद्य आते हैं । कालिदास ने मांगलिक वाद्यों में शंख [१] तूर्य [२] तथा अन्य सामान्य सुषिर वाद्यों में वेणु[३] या वंशी कीचक [४] आदि का उल्लेख किया है जबकि भवभूति ने किसी भी स्थल पर अपने नारी पात्र का वेणु आदि किसी भी सुषिर वाद्य को बजाये जाने का उल्लेख नहीं किया है ।

अवनद्ध वाद्य - सभी प्रकार के वे वाद्य जो चर्म से मढ़े हुए बजते हैं आनद्ध अथवा अवनद्ध कहलाते हैं । कालिदास ने इस प्रकार के वाद्यों के अन्तर्गत पुष्कर,[५] मुरज, [६] मृंदग [७], मर्दल [८], पटह [९], दुंददुभिः [१०] आदि का उल्लेख किया है जिन्हें पुरुषों के साथ ही नारियां भी संगीत समारोहों मे बजाती थीं । यद्यपि कवि ने मुरज, पुष्कर तथा मृदंग में भेद को अपनी कृतियों में निर्दिष्ट नहीं

---

*कुमार. १/२३ शंखस्वनानूतर पुष्पवृष्टिः । रघु. ७/६३, ७/६४ शंखस्वनाभिज्ञतया।

१. रघु. ६/६ प्रमात शंखे परितो दिगन्तांस्तूर्यस्वने मूर्च्छति मंगलार्थे ।

२. रघु ३/३६ सुखश्रवा मंगलतूर्यनिस्वनाः प्रमोदनृत्यैः सह वारयोषिताम् ।

३. रघु. १६/३५ वेणुना दशंनपीडताधरा वीणया नखंपदांकितोरवः ।

४. रघु. २/१२, सकीचकैर्मारुतपूर्णरन्ध्रैः ....
कुमार. १/८ यः पूरयन् कीचकरन्ध्रभागान् दरीमुखोत्थेन समीरणेन ।
पू. में. ६० शब्दायन्ते मधुरमनिलैः कीचकाः पूर्यमाणाः ....।

५. उ. मे . ५ त्वद्गम्भीरध्वनिषु शनकैः पुष्करेस्वाहतेषु ।
माल. १/२१ जीमूतस्तनित विशकिनिर्मयूरैरदग्रीवैरनुरसितस्य पुष्करस्य
रघु. १६/१४ स स्वयं प्रहत पुष्करः . . . . ।

६. पू. मे. निर्ह्रदस्ते मुरज इव चेत्कन्दरेषु ध्वनिः स्यात
संगीतार्थो ननु पशुपतेस्तत्र भावी समग्रः ।
माल. १/२२ धैर्यावलम्बिनमपि त्वरयति मां मुरजवाद्यरागोऽयम् ।
कुंमार. ६/४० अनुगर्जितं संदिग्धाः करणैर्मुरजस्वनाः ।
उ. मे. १ संगीताय प्रहृतमुंरजाः स्निग्धगम्भीरघोषम् ।

७. रघु. १३/४० तस्यायमन्तहितसौधभाजः प्रसक्तसंगीत मृदंग घोषः ।
रघु. १६/१३ अस्यगलितं यत प्रमदाकराग्रैर्मृदंगधीर ध्वर्निमन्वगच्छत् ।
रघु. १६/६४ श्रोत्रेषु संमूर्च्छति रक्तमासां गीतानुंग वारिमृदंगवाद्यम् । रघु. १६/५ मृदंगनादेषु ।

८. ऋतु. २/१ अशनिशब्दमर्दलः २/४.

९. रघु. ६/७१ पटहध्वनिभिरपनीतनिंद्रः ।

१०. रघु. १०/७६.

किया है तथापि मृद्भाण्ड में मढ़े भिन्न आकार प्रकार के ये (Potprums) वाद्य्य बजाने के लिए प्रमदाओं को विशेष रूप से प्रतीत होते हैं । प्रायः प्रमदाएं प्रमोद पूर्ण जल क्रीडा या समारोह के समय सरोवरों के तट पर या सौधों में मृदंग बजाया करती थीं ।

रघुवंश के सोलवें सर्ग में जल क्रीडा के संदर्भ में प्रमदाओं के करतलों एवं अंगुलियों द्वारा बजाये मृदंग की गम्भीर ध्वनि का तथा मालविकाग्निमित्रम् के प्रथमांक में भी मृदंग ध्वनि का उल्लेख हुआ है । इससे प्रतीत होता है, यह नारियों का उस समय एक प्रिय वाद्य था ।

अवनद्ध वाद्यों में भवभूति ने ''मालती माधव'' में गंभीर मृदंग ध्वनि[१] का उल्लेख किया है जिसे मकरन्द ने वायु प्रेरित मेघ समूह के गर्जन का अनुकरण करने वाली एवं इसे अन्य शब्द श्रवण करने में बाधक बताया है -

''अस्माकमेकपद एव मराद्विकीर्ण जीमूत जालिरसितानुकृतिर्निनादः ।

गम्भीरमंगलमृदंगसहस्रजन्मा शब्दान्तर श्रवणशक्तिमपाकरोति ।।(मा.मा. ६/४)

मालती के विवाह महोत्सव पर जुलूसवद्ध वेश्याओं के मंगलगान, नृत्य के साथ इस गंभीर मृदंग वाद्य ध्वनि को शेषराज शर्मा जैसे टीकाकारों ने मूरज या पखावज से अभिन्न माना है ।

घनवाद्य - धातु से बने इन घन वाद्यों में कालिदास ने घंटा[२] एवं किंकिणीं[३] का जबकि भवभूति ने केवल कनक निर्मित किंकिणी[४] का ही उल्लेख किया है जिन्हें हथिनियां वेश्याओं के चढ़ने पर मंगलगान के समय शब्दायमान कर रही थीं ।

नृत्य कला - नृत्त (ताल लयाश्रित), नृत्य (मावाश्रित) एवं नाट्य[५] भावरस अभिनय से समन्वित नृत्य कला से संगीत कला को समग्रता या पूर्णता प्राप्त होती है । कालिदास ने नृत्यकला[६] को परिपूर्ण रूप में प्रस्तुत करने के लिए प्रायः इन तीनों अंगों (नाट्य, नृत्त एवं नृत्य) का अनेक

---

१. मालती माधव - ६/४ टीकाकार पं. शेषराज शर्मा - ''मृदंग सहस्रम - वहो मुरजाः (अनेक पखावज से उत्पन्न शब्द) पृ. २५६

२. रघु. ७/४१ रथो रथांगध्वनिना विजसे विलोलघण्टा क्वणितेन नागः ।
स्वभर्तुनाम ग्रहणादि बभूव सान्द्रे रजस्यात्मपरावबोधः ।।

३. रघु. १३/३३ अमूर्विमानान्तर लम्बिनीनां श्रुत्वा स्वनं कींचनकिंकिणीनाम् ।

४. मा. मा. ६/५ के पूर्व ''वारसुन्दरी कदम्बकरध्यासिता क्वणत कनककिंकिणीरगित झण झणत्कारिण्यः करिण्यः । पृ. २६०.

५. माल विका. १/४ नाटयं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधकम् ।
अभि. ४/१२ परित्यकतनर्तना मयूराः । रघु. ६/६ कलापिनामुद्धतनृत्यहेतौ ।
माल. २/६ वामं सन्धिस्तिमितवलयं . . . . नृत्तादस्याः स्थितमतितरां कान्तमृज्वायतार्धम ।
पू. मे. ४० नृतारम्भेहर पशुपतेरार्द्रनागाजिनेच्छां, शान्तोद्वेगस्तिमितनयनं दृष्टभक्तिर्भवान्यः
पू मे. ३६ पादन्यासैः क्वणितरशनास्तत्रलीलावधूतैः रत्नच्छायाखचित बलिमिश्चामरैःक्लान्तहस्ताः ।

६. रघु. ३/१६ प्रमोदनृत्यैः सह वारियोषिताम् । १६/४ नर्तकी रमिनयातिलंघिनीः पार्श्ववर्तिषु ।
रघु. १६/१५ वारनृत्य विगमे च तन्मुखं . . . १६/३६ . . . स्त्रीषु नृत्यमुपधाय दर्शयन् ।

स्थलों पर उल्लेख किया है । राजा के आमोद प्रमोद अथवा पुत्रजन्मोत्सव पर नृत्य कला में निपुण नर्तकियां नृत्य किया करती थीं ।

अभिनयात्मक नृत्य से चित्तवृत्ति का साधारणीकरण करना मालविका की नृत्य कला की विशेषता थी, क्योंकि उसने अभिनय के द्वारा अपने हृदय के अनुराग को अभिव्यक्त किया था ।

मालविकाग्निमित्रम् में नृत्यकला में पारंगत रानी इरावती के अतिरिक्त

मालविका [१] के पंचाभिनय (गीत, वाद्य-नृत्य, आंगिक, वाचिक तथा सात्विक अभिनय) से पूर्ण श्रेष्ठ नृत्य कला का निदर्शक ''छलिक'' जैसा नृत्य इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय है -

''परिव्राजिका देव, शर्मिष्ठायाः कृतिं चतुष्पदोत्थं ''छलिकं'' दुष्प्रयोज्यमुदाहरन्ति । ''वकुलावलिका (विषकम्भके) - आज्ञाप्तऽस्मि देव्या धारिण्या '' अचिरप्रवृत्तोपदेशम् छलिकं नाम नाट्यमन्तरेण कीदृशी मालविकेति नाट्याचार्यमार्यगणदासं प्रष्टुम् । '' (माल. २७१, २८१)

शकुन्तला की भ्रमरवाधा [२] को निरूपित करने में उसमें मूलतः नर्तकी की चेष्टाएं कवि ने व्यक्त की हैं । ''विक्रमोर्वशीयम्''[३] की नायिका उर्वशी ललित अभिनयपूर्ण नृत्य कला में निपुण चित्रित की गई हैं ।

कालिदास के समय में संगीत एवं नृत्य कला का इतना अधिक प्रचलन था कि संगीत ध्वनि से नगर सदैव प्रतिध्वनित रहा करते थे । [४] नृत्यकला की शिक्षा वारांगनाओं के अतिरिक्त कुलीन कन्याएं भी प्राप्त करती थीं । मालविका एवं रानी इरावती दोनों ने नृत्यकला, संगीत एवं नाट्य कला में निपुणता नाट्यशाला में प्राप्त की थी । इस प्रकार हम देखते हैं कि कालिदास के नारी पात्रों में विशेषतः नायिकाएं नृत्य एवं नाट्य कला में निपुणता प्राप्त किए हुए हैं ।

भवभूति के नारी [५] पात्र भी नृत्यकला में पारंगत परिलक्षित होते हैं । उत्तररामचरित के तृतीय अंक में नायिका सीता नृत्य कला में इतनी पारंगत प्रतीत होती हैं कि वह इसकी शिक्षा मयूर शावक को भी अपने वन प्रवास काल में देती थी । वासन्ती के द्वारा इसकी और इंगित किए जाने पर राम भी सीता द्वारा उसे नृत्य कला में शिक्षित किए जाने का स्मरण करते हैं । [६]

---

१. माल. २/५ जनमिमनुरक्तं बिद्धि नाथेतिगेये वचनमभिनयन्त्याः स्वांगनिर्देशपूर्वम् । प्रणयमतिमदृष्ट्वा धारणीसंनिकर्थषीदहमिव सुकुमारप्रार्थअव्याजमुक्तः ।।
माल. २/६ वामं सन्धिस्तिमित वलयं न्यस्य हस्तं नितम्बे, कृत्वाश्यामाविटपसदृशं स्रस्तमुक् तं द्वितीयम् । पादांगुष्ठलुलित कुसुमे कुट्टिमे पातिताक्षं नृत्यदस्याः स्थितिमतितरां कान्तमृज्वायतार्धम् ।।
माल. २/८ अंगैरन्तनिर्हितवचनैः सूचितः सम्यगर्थः पादन्यासो लयमनुगतस्तन्मयत्वं रसेषु शाखायोनिर्मृदुरभिनयस्तदविकल्पानुवृत्तौ भावो भावं नुदति विषयाद् रागबन्धः स एव।

२. अभि. २/२१ चलापांगा दृष्टिं . . . . . . .खलुकृती ।

३. विक्रमो. २/१७

४. माल. १ अंक संगीतशालान्तरे अवधानं देहि । पृ. २६२

५. उत्तर. ३/१८ अतरुणमदताण्डवोत्संगन्तेष्वयमचिरोदगत मुग्धलोलवर्हः । मणिमुकुट इवोच्छखः कदम्बे नदति स एषः वधूसखः शिखण्डी ।।

६. उत्तर. ३/१९ भ्रमिषु कृतपुटान्तर्मण्डलावृत्तिचक्षुः प्रचलित चतुरभूताण्डवैर्मण्डयन्त्या । करकिसलयतालैर्मुग्धया नर्त्यमानं सुतमिव मनसा त्वां वत्सलेन स्मरामि ।।

"मालतीमाधव"[१] में मालती नायिका तथा उसकी सखियाँ लवंगिका - मदयन्तिका नृत्य कला में निष्णात हैं जिसका प्रदर्शन ये अनेक स्थलों पर भावाभिभूत होकर स्वयं करती हैं । भवभूति के समय में भी सभी प्रकार के महोत्सवों में सामान्यतः नारियों के द्वारा नृत्य कला का सुन्दर प्रदर्शन करने का प्रचलन था जिसमें ये विविध प्रकार के नृत्य किया करती थीं । मालती, मदयन्तिका तथा लवंगिका द्वारा मा. मा. के दशम अंक में[२] विविध प्रकार के नृत्य प्रस्तुत करने के उल्लेख से यह तथ्य पुष्ट होता है ।

सामान्यतः नारी पात्रों की हार्दिक प्रसन्नता को व्यक्त करने में भी नृत्य एक प्रमुख साधन रहा है । मालती माधव के साथ ही मकरन्द एवं मदयन्तिका के विवाह रूप में प्रणय के सफल होने पर अवलोकिता तथा बुद्धरक्षिता भी आनन्द विभोर अभिव्यक्ति नृत्य के द्वारा होने का ध्यानाकर्षण मकरन्द द्वारा किया गया है । इसके विपरीत विरहावस्था जैसी दुःखद स्थिति में नारियों की नृत्यादि कला क्रीडाएं स्थगित हो जाती थीं ।[३]

कालिदास के नारी पात्रों के समान भवभूति के नारी पात्रों का भी नृत्यादि कला का शिक्षण एवं अभ्यास संगीत शालाओं में ही विधिवत होता था जहां नृत्य कला को सीखने नारियाँ प्रतिदिन जाया करती थीं । मालतीमाधव के द्वितीयांक में एक चेटी की उक्ति से यह तथ्य प्रतिपादित होता है ।[४]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कालिदास के नारी पात्रों के समान भवभूति के नारी पात्रों भी नृत्य कला में पूर्णतः पारंगत परिलक्षित होते हैं ।

चित्रकला - प्रायः चित्रकला का आधार समतल पट (कपड़ा, कागज काष्ठ आदि) रहता है जिस पर नारी या पुरुष चित्रकार अपनी तूलिका से विविध प्रकार की वस्तुओं एवं जीवों का स्वरूप अंकित करता है । समतल धरातल पर अपनी श्लाका या तूलिका से स्थूलता, न्यूनता, निकटता दूरी आदि स्वाभाविक एवं सजीव रूप में प्रकट करना ही उस नारी या पुरुष चित्रकार की प्रतिभा एवं कलानिपुणता का परिचायक है । उसके मानसिक भावों को दृश्यों, घटनाओं या विशिष्ट व्यक्ति स्वरूपों को सजीव रूप में चित्रित करने में ही उसकी सर्वाधिक सफलता प्रकट होती है ।

---

१. मा. मा. अंक २/१ के पूर्व - मालती की नृत्य दक्षता के सम्बन्ध में लवंगिका की उक्ति - "तस्मिन्नवसरे असंगीतकं नर्तितासि । पृ. ६१
मा. मा. १० अंक (मालती, मदयन्तिका, लवंगिका) ते - " (विविध नृत्यं कृत्वा) मा. मा. अंक १० लवंगिका की उक्ति - तस्मिन्नवसरे अंसगीतकं नर्तितासि । पृ. ६१ अतः सर्वप्रकारमहोत्सवे नृत्यति । पृ. ४७० .

२. मा. मा. अंक १०/२३ के बाद "मकरन्द - (पुरोऽवलोक्य)कथमवलोकिता बुद्धरक्षिते कलहंसश्च दूरः समागतानस्मान् वीक्ष्य तत्रैव हर्ष निर्भरं नृत्यन्त इव इवागच्छन्ति ।

३. मा. मा. ३/ १३ के पूर्व भर्तृदारिका - "नाभिनन्दति कलाक्रीडाः । " पृ. १४६

४. मा. मा. २ अंक एका चेटी - सखि, संगीतशालापरिसरे अवलोकिता द्वितीया भगवती कामन्दकी किमपि मंत्रयन्त्यासीत् ।

काव्य , नाट्य एवं संगीत कला के समान चित्रकला भी नारी अथवा पुरुष के आन्तरिक मनोभावों को अभिव्यक्त करने का सुन्दर एवं सशक्त साधन है । कालिदास [१] तथा भवभूति के नारी पात्रों की जितनी काव्य, नाट्य, नृत्य संगीत में जितनी अभिरुचि है उतनी चित्रकला में भी अभिरुचि और विशिष्टता प्रकट होती है ।

इन दोनों महाकवियों के समय समाज में चित्रकला के प्रति जितनी अभिरुचि और आदर भावना व्याप्त थी इसका पता इस तथ्य से चलता है कि सम्पन्न वर्ग द्वारा निर्मित चित्रशालाओं या चित्रवत्सद्मों [२] में नारियां भी जाकर चित्र रचना करने या उसे देखने में प्रवृत्त होती थीं । "मालविकाग्निमित्रम्" में देवी धारिणी की इसी प्रकार की चित्रकला प्रियता का उल्लेख इस प्रकार किया गया है --

"चित्रशालां गता देवी यदा प्रत्यग्रवर्णरागां चित्रलेखामाचार्यस्यालोकयन्ती तिष्ठति भर्ता च उपस्थिताः । अपूर्वेयं दारिका देव्या आसन्ना ऽऽलिखिता । " [३]

कालिदास ने चित्रकला के लिए सामान्यतः चित्र [४] तथा प्रतिकृति [५] दो शब्दों का प्रयोग किया है तथा जिस पर स्थापित कर चित्र तैया किया जाता था उसे चित्र फलक[६] नाम दिया गया है। यह एक सपाट काष्ठ का चौकोर तख्ता था ।

चित्रकला के उपकरण - शुष्क एवं आर्द्र चित्रों के उल्लेख के आधार पर चित्र को तैयार करने में तूलिका [७] (Brush) तथा वर्तिका [८](Colour Pencil) उपकरण रूप में प्रयुक्त होती थी । शलाका [९] भी वृत्तिका जैसी चित्र की रूपरेखा बनाने में प्रयुक्त भी होती थी । कूर्च तूलिका की तरह ही ब्रुश था जो आकार में लम्बे और छोटे दो प्रकार के होते थे । कालिदास ने एक स्थल पर लम्बकूर्च का "अभिज्ञान शाकुन्तलम्" में विदूषक के संवाद में उल्लेख किया है । चित्र में रंग भरने के लिए बालों वाले [१०] कूर्चों या तूलिकाओं का ही प्रयोग किया जाता था ।

---

१. माल. अंक १ (विषकम्भक) बकुलावलिका की उक्ति, पृ. २६१
२. रघु. १४/२५ तयोर्यथा प्रार्थितमिन्द्रियार्थानासेदुषोः सद्मसु चित्रवत्सु ।
३. माल. १, अंक, पृ. २६१ .
४. अभि. ६/१६ साक्षात्प्रियामुपगतामपहायपूर्व, चित्रार्पितां पुनरिमां बहुमन्यमानः ।
अभि. इयं चित्रगताभट्टिनी, पृ. ११३.
५. माल. ४ अंक, "शंके मे प्रतिकृति निदर्शिति", पृ. ३२४.
६. अभि. अंक ६. पृष्ठ १०८, विक्रमो पृ. १७८,
७. कुमार. १/३२ उन्मीलितं तूलिकयेव चित्रं सूर्यांशुभिर्भिन्नमिवारविन्दम् ।
८. अभि. अंक ६ "गच्छ वर्तिकां तावदानय । पृ. १३५
९. कुमार. १/२४ तथा दुहित्रा सुतरां सवित्री स्फुरतप्रभामण्डलया चकासे विदूरभूमिर्नवमेघ शब्दादुद्भिन्नया रत्नशलाकयेव ।
१०. अभि. अंक ६, विदूषक - यथाहं पश्यामि पूरितव्यमनेन चित्रफलकं लम्बकूर्चानां तापसानां कदम्बैः ।

जिस पेटिका में चित्रकला के विविध उपकरण, रंग वृत्तिकाएं, कूर्च आदि रखे जाते थे. उसाको ''वृर्त्तिकाकरण्ड'' कहा जाता था । चेटी चतुरिका द्वारा प्रमदवन में वर्तिकाकरण्ड [१] लेकर उपस्थित होने का उल्लेख ''अभिज्ञान शाकुन्तलम्'' में प्राप्त होता है । यह वर्तिका रंग पेटिका (Colour Box) से भिन्न नहीं कही जा सकती है ।

सामान्यतः स्त्री या पुरुष चित्रकार चित्रों को समतल भित्ति पटल, वस्त्र अथवा कागजों पर बनाते थे । चित्र की बाहरी रूपरेखा को बनाने के लिए काली पेंसिल जैसी शलाका [२] अथवा धातुराग लघुरंगीन वृत्तिका या प्रस्तरखण्ड [३] प्रयुक्त होता था ।

चित्र की बाहरी रूपरेखा बनाने के बाद साधारणतः शुष्क वर्तिका या पीले रंगों (वर्णराग) से उसे रंगा जाता था । प्रत्यग्रवर्णयुक्त [४] गीले चित्रों को सूखने के लिए लटका दिया जाता था जिससे वह बिगड़े नहीं । चित्र में सजीवता तथा आकर्षण लाने के लिए रंगों की बहुत उपयोगिता थी जिनमें लाल, [५] पीला, ब्रभु (भूरा) आदि रंगों का समिश्रण उसमें अनुपम सौन्दर्य संवर्धित करता था । [६] अनुकूल और आकर्षक सहज रंग का समुंचित रूप से भरा जाना ही चित्र के सौन्दर्य की बुद्धि में सहायक था ।

जिस समतल वस्त्र अथवा कागज पर चित्रांकित किया जाता था उसे सम्यक् रूप से बनाने के पूर्व चित्र फलक [७] पर समारोपित कर लिया जाता था जिससे सलवटें न पड़कर चित्र का आकार

---

१. अभि. अंक ६ वर्तिकाकरण्ड गृहीत्वेतोमुखं प्रस्थिताऽस्मि ।

२. कुमार. १/२४ तथा दुहित्रा . . . . . . उद्भिन्नया रत्नशलाकयेव ।
१/४७ तस्याः शलाकांजनमिर्मितेव कान्तिभ्रुवोरायतलेखयोर्वा ।
तां वीक्ष्यं लीलाचतुरामनंगः स्वचापसौन्दर्यमदं मुमोच ।।

३. उ. मे. ४७ त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलायाम् -
टीकाकार मल्लिनाथ के मतानुसार ''धातुराग'' में गैरिक एवं अन्य धातुएं आती हैं ।-
''धातुर्वादादि शब्दादि गैरिकादि त्वगादिषु'' इति यादवः (उ. मे. ४७ टीका)

४. माल. अंक १, चित्रशालां गता देवी यदा प्रत्यग्रवर्णरागां चित्रलेखांमाचार्यस्यलौकयन्ती तिष्ठतिं । पृ. २६४ ।

५. कुमार. ८/५४ रक्तपीत कपिशाः पयोमुचां कोटयः कुटिल केशिमान्त्यम् ।
द्रष्यसि त्वमिति सन्ध्ययानया वर्तिकाभिरिवं साधुमण्डिता ।।

६. कुमार. १/३२ उन्मीलितं तूलिकयेव चित्रं सूर्याशुभिभिन्नमिवारविन्दम् ।
६/८ के बाद विदूषक - तत्र मे चित्रफलकगतां स्वहस्तलिखितां तत्र ।

७. अभि. अंक ६, चित्रफलक हस्ताचतुरिका, अभि. ६/१५, १७, १८.
विक्रमो. २/१० तथा इसके पूर्व - उर्वश्याः प्रतिकृतिं चित्रफलके आलिरव्य अवलोकयं स्तिष्ठतु ।
मा. मा. २/१ के पूर्व-लवंगिका - तस्याश्चित्रफलकं प्रभाते हस्तीकृतमासीत ।

स्वाभाविक अंकित हो सके । यह चित्रफलक के स्थान पर कहीं कहीं "प्रतिछन्दक"[१] नाम भी प्रयुक्त किया है ।

चित्रों के प्रकार - कालिदास तथा भवभूति ने अपनी कृतियों में अनेक प्रकार के चित्रों का स्पष्ट संकेत किया है । जिनमें सामूहिक चित्र, व्यक्तिगत चित्र, वस्तुचित्र, स्मरण शक्ति से निर्मित चित्र आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

१. सामूहिक चित्र - "अभिज्ञान शाकुन्तलम्" के षष्ठांक [२] में शकुन्तला के चित्र में उसके साथ प्रियंवदा और अनसूया दोनों सखियां भी चित्रित थीं । इसी प्रकार "मालविकाग्निमित्रम्" के प्रथम अंक [३] में रानी के साथ उसकी दोनों सखियां भी चित्रित होकर सामूहिक चित्र का स्वरूप प्रदान करती हैं ।

इसी प्रकार "उत्तर रामचरितम्" के प्रथम अंक में चित्रदर्शन के सन्दर्भ में [४] चित्रवीथिका के अन्तर्गत राम विवाह दृश्यांकन में चारों भाइयों के साथ उनकी बधुओं का चित्रण सामूहिक चित्र का स्वरूप प्रस्तुत करता है ।

इस प्रकार कालिदास तथा भवभूति दोनों ने सामूहिक चित्रों का अपनी कृतियों में उल्लेख किया है जो अनेक नारी पात्रों से सम्बन्धित थे ।

२. व्यक्तिगत चित्र - कालिदास एवं भवभूति ने अनेक स्थलों पर अपनी कृतियों में व्यक्तिगत चित्रों का उल्लेख किया है । उ. मेघदूत में विरही यक्ष द्वारा दक्षिणी का चित्रांकन [५] करना, यक्षिणी द्वारा अपने निर्वासित पति यक्ष का चित्र बनाना, [६] पार्वती द्वारा अपने प्रियतम शंकर का चित्र बनाना, [७] विदूषक का पुरुरवा से उर्वशी का चित्र बनाने के लिए कहना [८] आदि कालिदासीय व्यक्तिगत चित्रों के उल्लेखनीय उदाहरण हैं ।

---

१. मा. मा. अंक २. मालती - नूनं तेनापि कलहंसकेनैतत्प्रतिछन्दकमात्मनः प्रभोदर्शितं भविष्यति । पृ. ६२ लवंगिका - एतत्खलुं . . . . तवप्रतिछन्दकम् । (प्रतिछन्दकम् = चित्रपलकम, मालतीमाधव टीकाकार-शेषराजशर्मा, चौ. सं. सी. सं. १२७ वाराणंसी)

२. अभि. - ६ अंक, विदूषक - भो इदानीं तिस्रस्तत्रभवत्यो दृश्यन्ते । सर्वाश्च दर्शनीयाः। कतमात्र तत्र भवती शकुन्तला । पृ. ५२८

३. माल. १ अंक वकुलावलिका - चित्रगताया देव्याः परिजनमध्यगतामासन्नदारिकां दृष्ट्वा देवी पृष्ठा । पृ. २६४, "सजनो देव्याः पार्श्वगतश्चित्रे दृष्टः "पृ. २६१

४. उत्तर. १/१८ तथा इसके पूर्वापर सीता एवं लक्ष्मण के संवाद "सीता - एते खलु चत्वारो भ्रातरो विवाहदीक्षिता यूयम् । " लक्ष्मणः - इयमायूर्या इयमप्यार्या माण्डवी इयमपि बधूः श्रुतकीर्तिः । सीता - वत्स, इयमपि अपरा का ? पृ. ८६ - ६०

५. उ. मे. ४७ त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलायामात्मानं ते चरणपतितं यावदिच्छामि कर्तुम् ।

६. उ. मे. २५ मत्सादृश्यं विरहतनु वा भावगम्यं लिखन्ती ।

७. कुमार. ५/५८ इति स्वहस्तोल्लिखितश्च मुग्धया रहस्युपालभ्यत चन्द्रशेखरः ।।

८. विक्रमो. "अथवा तत्रभवत्या उर्वश्याः प्रतिकृतिं चित्रफलक आलिख्यावलोकयंस्तिष्ठतु। पृ. १७८

"मालतीमाधव" में लवंगिका द्वारा मन्दारिका को माधव के लिए मालती का चित्र प्रदान करना अथवा कलहंस द्वारा मालती के लिए माधव का चित्र भवभूतिके [१] व्यक्तिगत चित्र का श्रेष्ठ निदर्शन है ।

३. **वस्तुचित्र** - जब नारी या पुरुषचित्रकार किन्हीं वस्तुओं या पदार्थों का विषयगत चित्रण जिन चित्रों में करते हैं उन्हें वस्तु चित्र कहा जाता है । कालिदास ने उत्तरमेघ में यक्षिणी के द्वार पर शंख एवं पद्म के चित्र [२] होने का विक्रमोर्वशीयम् [३] एवं मालविकाग्निमित्रम् में क्रमशः आलेख्य वानर के अतिरिक्त नागमुद्रांकित [४] अंगुलीयक का वस्तुचित्र रूप में उल्लेख किया है ।

इसी प्रकार "अभिज्ञानशाकुन्तलम्" में शकुन्तला के चित्र में मालिनली [५] नदी सैकत-तट पर हंसयुगल, हरिण आदि के साथ वृक्षों की शाखा पर वल्कल टंगा होना एवं शकुन्तला के स्तनों के मध्य मृणालसूत्र तथा कानों में शिरीष के डण्ठल अंकित करने में वस्तु चित्र की पूर्णता दृष्टिगत होती है ।

भवभूति के उत्तररामचरित के आलेख्य (चित्र) दर्शन नाम के प्रथम [६] अंक में कतिपय वनवास से सम्बन्धित घने वनों नदियों आदि के दृश्यों को देख कर सीता ने पुनः प्रसव गहन वनराजि में विहार करने के साथ भागीरथी के शीतल जल में अवगाहन का दोहद व्यक्त किया था ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र वस्तु चित्रात्मक अभिरुचि के पूर्णतः समन्वित हैं ।

---

१. मा. मा. अंक २ लवंगिका - तस्याश्चित्रफलकं प्रभाते हस्तीकृतमासीत्।
एतत् खलु . . . . तव प्रतिच्छन्दकम्, पृ. ६१-६३
"२ अंक मालती - नूनं तेनापि कलहंसके नैतत्प्रतिच्छन्दकमात्मनः प्रभोर्दशितं भविष्यति।
पृ. ६२.

२. उ. मे. १७ द्वारोपरन्ते लिखित वपुषौ शंखपद्मौ च दृष्ट्वा ।

३. विक्रमो. अंक २ (विषकम्भक) चेटी - अहो, आलेख्यंवानर इव किमपि मंत्रयन् निभृत आर्यमाणवकस्तिष्ठति । पृ. ३५०

४. माल. अंक । "सखि देव्या इदं शिल्पिसकाशादानीतं नागमुद्रासनाथमंगुलीयकं स्निग्धं निंध्यायन्तो तवोपालम्भे पशिाऽस्मि ।

५. अभि. ६/१८ कार्यासैकतलीनहंसमिथुना स्रोतोवहा मालिनी,
पादास्तामभिभितो निष्ण्णंहरिणा गौरीगुरोः पावनाः ।
शाखालम्बितवल्कलस्य च तरोनिर्मातुमिच्छाम्यधः,
श्रृंगें कृष्णमृगस्य वामनयनं कण्डूयमानां मृगीम् ।।
अभि. ६/१६ कृतं न कर्णार्पित बन्धनं सखे शिरीषमागण्डविलम्बिकेसरम् ।
न वा शरच्चन्द्रमरीचि कोमलं मृणालसूत्रं रचितं स्तनान्तरे ।।

६. उत्तर. १ अंक - एतेन चित्रदर्शनेन . . . . पुनरपि प्रसन्नगम्भीरासु वनराजिषु भागीरथीमवगाहिष्ये । पृ. १२६

४. स्मरण शक्ति से निर्मित चित्र - कालिदास ने अपनी नाट्य काव्य कृतियों में अपने नारी पात्रों को स्मरण शक्ति से [१] चित्रों को निर्मित करने में सिद्धहस्त प्रदर्शित किया है । अपनी कल्पना एवं स्मरण शक्ति से दुर्बल शरीर को Amemory Drauving द्वारा चित्रित करती है । इसी प्रकार "कुमारसंभव" में पार्वती ने कल्पना एवं स्मरण शक्ति के माध्यम से शंकर का चित्र निर्मित किया था ।

इसी प्रकार भवभूति के मालती माधव द्वितीयंक में मालती नायिका द्वारा अपनी कल्पना एवं स्मरण शक्ति से माधव का चित्र निर्मित किया था, जिसे लवंगिका ने मन्दारिका एवं कलहंसक के माध्यम से उस तक पहुंचाया था ।

उपर्युक्त चारों प्रकार के चित्रों को अंकित करने में वर्ण (Colour), भाव (exprssion)तथा आलेखन (Drawing) की उसमें उपयुक्तता तथा समन्वय होना अत्यावश्यक है । "मालविकाग्निमित्रम्" में प्रत्यग्रवर्णराग [२] मालविका के स्वाभाविक चित्र पर दृष्टि जाते ही राजा अग्निमित्र ने जिज्ञासा व्यक्त की कि यह कौन है ? इसी प्रकार अग्निमित्र का चित्र इतना आकार में सुन्दर एवं सजीव था कि मालविका राजा को इरावती की ओर देखते हुए ईर्ष्या [३] से मुख फेर लेती हैं । इसी प्रकार भवभूति ने भी उत्तररामचरितम् [४] चित्रवीथिका में रामचरित से सम्बन्धित रामायण के चित्र इतने सुन्दर एवं स्वाभाविक चित्रित किए हैं कि सीता इन्हें देखतें ही तन्मय हो गई तथा उन्हें यह बतलाना पड़ा कि यह चित्र है, सत्य नहीं ।

प्रतीत होता है, कालिदास तथा भवभूति के काल में चित्रकला की लोकप्रियता नारियों में पुरुषों की अपेक्षा अधिक थी । पार्वती [५], यक्षपत्नी, [६] सानुमती, [७] मालती, [८] सीता [९] आदि इन महाकवियों के नारीपात्र ही सिद्धहस्त नहीं थे वरन् इस कला की इतनी अधिक लोकप्रियता तथा प्रचलन समाज में था कि वनवासिनी प्रियंवदा अनसूया जैसी मुनि कन्याएं भी इससे पूर्ण परिचित एवं इसमें पारंगत थीं । शकुन्तला की इन दोनों प्रिय सखियों ने चित्रकला ज्ञान के आधार पर उसका आभूषणों से समुचित एवं यथेष्ट रूप से श्रृंगार किया था । [१०]

---

१. उ. मे. २५ मत्सादृश्यं विरहतनु वा भावगम्यं लिखन्ती ।
२. माल. अंक १ (विषकम्भक) बकुला. चित्रशालां गता देवी यदा प्रत्यग्रवर्णरागां चित्रलेखामाचार्यस्य आलोकयन्ती तिष्ठति । पृ. २६१
"अपूर्वेयं दारिका देव्या आसन्ना आलिखिता किं नामधेयेति । "
३. माल. - बकुलावलिका - (आत्मगतं) चित्रगतभर्तारं परमार्थतः संकल्पयासूयति ।
४. उत्तर अंक । "रामअभिविप्रयोगत्रस्ते चित्रमेतत्" पृ. १११ .
५. कुमार. ५/५८ इति स्वहस्तोलिखितश्च मुग्ध्या . . . ।
६. उ. मे. २५ मत्सादृश्यं विरहतनु वा भावगम्यं लिखन्ती ।
७. अभि. ६ अंक, पृ. १०६ ।
८. मा. मा. अंक २, पृ. ६१-६२
९. उत्तर. अंक १, पृ. १२६ ।
१०. अभि. अंक ४ "चित्रकर्मपरिचयेनांगेषु तेआभरणविनियोगं कुर्वः । पृ. ६६

चित्रकला जैसी ललित कला का अभ्यास नारियां व्यस्त जीवन में समय निकाल कर सामान्यतः किया करती ही थीं, किन्तु कभी कभी मनोविनोदार्थ विरह की दीर्घ अवधि काटने के लिए भी वे प्रियतम का यथेष्ट रूप में चित्रांकन किया करतीं । थीं। पार्वती [१] यक्षिणी मालती आदि की चित्रांकन प्रवृत्ति इसी प्रकार की प्रतीत होती है । अभीष्ट चित्र बनाने में दत्तचित्तता अथवा तन्मयता की तुलना कालिदास ने योगाभ्यास के साथ ठीक ही की है क्योंकि किसी चित्र में विकार अथवा त्रुटि कलाकार चाहे नारी हो या पुरुष उसके शिथिल समाधि होने से दृष्टिगत होती है । मालविका के चित्र का अवलोकन करने के पश्चात् जब मालविका को प्रत्यक्ष राजा ने देखा तो उसे चित्र फीका लगा क्योंकि चित्रकार की समाधि में शिथिलता थी, जिसके कारण वह उसके शरीर सौन्दर्य को समग्रतः चित्रित नहीं कर सका । [२]

मूर्त्तिकला - मानवीय मनोभावों को मूर्तरूप देने के लिए ललितकलाओं में मूर्तिकला का माध्यम महत्वपूर्ण माना गया है । कालिदास और भवभूति ने अपनी नाट्य काव्य कृतियों में मूर्ति शिल्पादि कलाओं के प्रति नारी पात्रों की अभिरुचि और निपुणता का स्पष्ट उल्लेख किया है ।

प्रतीत होता है कालिदास के काल में नारी या पुरुष मूर्तिकाल प्रस्तरों पर पशुपक्षियों की मूर्तियां या चित्र उत्कीर्ण करते होंगे । "विक्रमोर्वशीयम्" [३] में उपमान रूप में अलसाये मयूरों की उत्कीर्ण मूर्तियों का उल्लेख किया गया है । इसी प्रकार उजड़ी अयोध्या के शून्य प्रासादों के स्तम्भों पर उत्कीर्ण[४] उन स्त्रियों की विवरण प्रतिमाओं का वर्णन हुआ है जिनपर चन्दन की भ्रान्ति से लिपटे सर्पों की छोड़ी हुई केंचुल स्तनों पर उत्तरीय जैसा आवरण प्रस्तुत करती थी । इसके अतिरिक्त कवि ने गंगा एवं यमुना की चामरधारिणी मूर्तियों का भी कुमार सम्भव [५] में उल्लेख किया है । इन दोनों नदी देवियों की देवताओं की चामरवाहिनियों के रूप में निर्मित मूर्तियों का रचनाकाल कृष्णकाल के उत्तरार्ध एवं गुप्तकाल के प्रारम्भ में था । ऐसी मूर्तियां मथुरासंग्रहालय में पाई गई हैं ।

कालिदास की कृतियों में देव मूर्तियों [६] के उल्लेख का अभाव नहीं है जिनमें ब्रह्मा [७], शेषशायी

---

१. कुंमार. ५/५८, उ. मे. २५, मा. मा. २/१ के बाद, पृ. ६२.

२. माल. २/२ चित्रगतायांमस्यां कान्तिविसंवादि शंकि मे हृदयम् ।
सम्प्रति शिथिलसमाधि मन्ये येनेयमालिखिता ।।

३. विक्रमो. ३/२ उत्कीर्णा इव वासयष्टुषु निशा निद्रालसा वर्हिणो ।

४. रघु.१६/१७ स्तम्भेषु योषित्प्रतिमातनानामुक्रान्तवर्णक्रमधूसराणाम् ।
स्तनोत्तरायाणि भवन्ति संगान्निर्मोकपट्टाः फणिभिर्विमुक्ताः ।।

५. कुमार. ७/४२ मूर्ते च गंगायमुने तदानीं सचामरे दैवमसेविषाताम् ।
समुद्रगारूपविपर्यय्ताऽपि सहंसपाते इव लक्ष्यमाणे ।।

६. रघु. १६/३६ ततः सपर्या सपशूपहारां पुरा परार्ध्यप्रतिमागृहायाः ।
रघु. १७/३६ अयोध्यादेवताश्चैनं ....सान्निध्यैः प्रतिमागतैः ।।

७. रघु. १०/७३ तस्योदये चतुमूर्ते ....कुमार. २/३ अस्य सर्वस्य धातारं ....

विष्णु, [१] कमलासनी लक्ष्मी, [२] मयूरासीन कार्तिकेय [३], कपालाभरणा काली, [४] कामदेव, [५] यक्ष, [६] शिव [७] आदि प्रमुख हैं ।

प्रस्तर में मूर्तियां उत्कीर्ण होने के साथ ही कालिदास के समय में मृणमूर्तियों के निर्माण का भी पर्याप्त रूप से प्रचलन रहा होगा ।

''अभिज्ञान शाकुन्तलम्'' [८] में मृणमूर्तियां निर्मित करने का संकेत प्राप्त होता है । मारीच आश्रम में शकुन्तला या उसकी तपस्विनी दो सखियों ने सर्वदमन को खेलने के लिए मिट्‌टी का मयूर बनाकर दिया था ।

प्रतीत होता है, कालिदास गुप्तयुगीन नारी मूर्तिकला से विशेष रूप से प्रभावित थे क्योंकि उन्होंने उस समय की मूर्तियों की रचना शैली एवं स्वरूप का स्पष्ट चित्रण अपनी कृतियों में किया है।

मूर्तियों का प्रभामण्डल, [९] छाया मण्डल, [१०] स्फुरत् प्रभामण्डल [११], लीलारविन्दहस्ता लक्ष्मी [१२] या पार्वती या सुन्दरी नारी, चतुःस्तम्भ [१३] दोहद के अतिरिक्त नारियों के विविध प्रकार के

---

१. रघु. १०/७ भोगिभोगासनासीनं .... मणिद्योतितविग्रहम् ।

२. रघु. १०/८ श्रियः पद्‌मनिष्णणायाः क्षौमान्तंरित मेखले ।, रघु. १०/६२ विभ्रत्या . . . . . लक्ष्म्या च पद्‌मव्यजनहस्तया ।

३. रघु ६/ ४.........मयूर पृष्ठाश्रयिणा गुहेन ।

४. कुमार. ७/३६ तासां तु पश्चात्कनकप्रभाणां काली कपालाभरणा चकासे ।
रघु. ११/१५ ताडका चलकपालकुण्डला कालिकेव निविडा वलाकिनी

५. कुमार. १/४१, २/६४, ७/६२, रघु. ६/३६, ११/४५

६. कुमार. ६/३६, उ. मे. ५,

७. कुमार. ३/४०-५१.

८. अभि. अंक ७ (प्रविश्टय मृण्मयूरहस्ता) तापसी-सर्वदमन । शकुन्तलावण्यं पश्य ।

९. रघु. १५/८२ शातहृद्रमिव ज्योतिः प्रभामण्डलमुद्ययौ । कुमार. ७/३८ मुखैः प्रभा - मण्डलरेणुगौरेः . . . . .

१०. रघु. ४/५छायामण्डललक्ष्येण तमदृश्या किल स्वयम् । पद्‌मा पद्‌मातपत्रेण भेजे साम्राज्यदीक्षितम्, ।

११. रघु. ३/६० स चापसुत्सृत्य . . . . स्फुरतप्रभामण्डलमस्त्रमाददे ।
रघु. ५/५१ स विद्धमात्र ....स्फुरत्प्रभामण्डेंलमध्यवर्तित कान्तं वपुर्व्योमचरं प्रपेदे।
रघु. १४/१४ स्फुरत् प्रभामण्डलमानुसूयं सा विभ्रती शाश्वतमंगरागम् ।
रराजशुद्धेति पुनः स्वपुर्यै संदर्शिता वहिनगतेव भर्तो। ।

१२. माल. ५/६ विस्तृतहस्तकमलया नरेन्द्र लक्ष्म्या वसुमतीव । कुमार ३/५६, ६/८४,

१३. रघु १७/६ विमानं नवशुद्धेदि चतुः स्तम्भप्रतिष्ठितम् ।

वेश विन्यास (वलीभृत,[१] लम्बालक, बर्हभार, मुक्ताजाल ग्रथित अलक आदि), नारी सौन्दर्य (क्षीण कटि, सटे हुए पीन पयोधर, गुरु नितम्ब, गहरी नाभि आदि)[२] गुप्तकालीन मूर्तिकला की प्रमुख विशेषता है, जिससे प्रभावित होकर कालिदास ने प्रसंगानुसार अपने नाट्य एवं काव्य कृतियों में इसका चित्रण किया है ।

कालिदास की नाट्य कृति ''मालविकाग्निमित्रम्'' से ज्ञातहोता है कि मालविका जैसी श्रेष्ठ नायिका उन ललितकलानिपुणा नारीपात्रों का प्रतिनिधित्व करती है, जो नृत्य, नाट्य संगीत आदि के साथ मूर्ति एवं वास्तु शिल्प में भी अद्वितीय चित्रित है । नाटक के प्रथम अंक के अन्तर्गत बकुलावलिका तथा विदूषक के संवाद से यह तथ्य पुष्ट होता है (बकुला. - तेन शिल्पाधिकारे योग्येयं दारिकेति . . . . .

विदूषक - न केवलं रूपे शिल्पे ऽद्वितीया मालविका । पृ. २७६) माल. १/१२ के बाद

भवभूति भी कालिदास के समान तद्युगीन मूर्तिकला से प्रभावित प्रतीत होते हैं । ऐसा जान पड़ता है, भवभूति के समय मिट्टी प्रस्तर की मूर्तियों के अतिरिक्त धातु से प्रतिमाओं के निर्माण का प्रचलन प्रचुर रूप से होने लगा होगा । ''उत्तररामचरितम्''[३] मे अरुन्धती सीता की स्वर्ण निर्मित प्रतिमा का उल्लेख करती हुई राम को स्वधर्म पालन हेतु निर्दिष्ट करती हैं ।

इसके अतिरिक्त सीता के मूर्तगत स्वरूप का साम्य लवकुश के साथ स्वयं राम ''उत्तररामचरितम्'' के षष्ठांक [४] में करते हैं ।

कालिदास के नारी पात्र मालविका के समान भवभूति का मालती [५] आदि कोई भी नारी पात्र मूर्तशिल्पादि में निष्णात दृष्टिगत नहीं होता है । इससे प्रतीत होता है, भवभूति के समय नृत्य, नाट्यगीत, वाद्य, चित्रादि ललितकलाओं की अपेक्षा मूर्ति एवं वास्तुकला की नारियों में कम अभिरुचि एवं लोकप्रियता विद्यमान थी ।

वास्तु एवं स्थापत्य कला

मूर्तिकला के समान वास्तुकलागत अनेक सन्दर्भ कालिदास तथा भवभूति की कृतियों में प्राप्त

---

१. रघु. ८/ ५३ कुसुमोत्खचितान्वलीमृतश्चलयन् भृंगरचस्तवालकान् ।
उ. मे. २४ हस्तन्यस्तं मुखमसकलव्यक्तच लम्बालकत्वात् ....

२. कुमार. १/३५ वृतानुपूर्वे च न चातिदीर्घे जंघे शुभे, १/३७ कांचीगुणस्थानमनिन्दितायाः।
कुमार. १/३८ तस्याः प्रविष्टा नतनाभिरन्ध्रं रजाज तन्वी नवलोमराजिः ।
१/३६ मध्येन सा वेदिविलग्रमध्या।
कुमार. १/४० अऽन्योन्मुत्पीडयदुत्पलाक्ष्याः स्तनद्वयं पाण्डुतथा प्रवृद्धम् । . . मृणाल सूत्रान्तरमप्यलक्ष्यम् ।

३. उत्तर. ७/१६ नियोजय यथाधर्म प्रियां त्वं धर्मचारिणीम् ।
हिरण्मय्याः प्रतिकृतेः पुण्यप्रकृतिमध्वरे ।।

४. उत्तर. ६/२६ अपि जनकसुतायास्तच्च तत्रानुरूपं . .
अभिनवशंतपनश्रीमदास्यं प्रियायाः ।
उत्तर. ६/२७ सुक्ताच्छदन्तछविसुन्दरीयं सैवोष्ठमुद्रा स च कर्णपाशः ।
नेत्रे पुनर्यद्यपि रक्तनीले तथापि सौभाग्यगुणः स एव ।।

५. मा. मा. ३/१३ के पूर्व लवंगिका - ''नाभिनन्दति कलाक्रीडाः । ''

होते हैं । वास्तु कला में पारंगत [1] पात्रों का विद्यमान होना तथा कुशल शिल्पी संघ [2] द्वारा कोशल की राजधानी का काया पलट हो जाना तद्‌युगीन विकसित वास्तु कला की पारिचायक है ।

कालिदास ने नगर के अन्तर्गत राजमार्ग या राजपथ [3] आपण [4] मार्ग, विपणि [5], राजप्रासाद[6], हर्म्य [7], सोपानयुक्त स्नानागार [8] धारागृह (फौवारा) [9] यज्ञस्तम्भ [10] तोरण, [11] अग्न्यागार, सभागृह, प्रतिमागृह, दीर्घिका, शिलावेश्म, प्राकार, सिंह द्वारा, परिरवा आदि वास्तु कृतियों का उल्लेख अपनी कृतियों में किया है । जिससे उनका तदयुगीन वास्तुकला का ज्ञान प्रकट होता है ।

---

१. रघु. १६/३६ उपोषितै वास्तुविधानविद्भिर्निवर्त्तयामास रघुप्रवीरः ।

२. रघु. १६/३८ तां शिल्पिसंघाः प्रभुणा नियुक्तास्तथागतां सम्भृतसाधनत्वात्,
पुरं नवीचक्रुरपां विसर्गान्मथा निदाघग्लपितामिवोर्वीम् ।

३. रघु. १६/१२ नदन्मुखोल्काविचितामिषाभिः स वाह्यते राजपथः शिवाभिः ।
रघु. १४/३० ऋद्धापणे राजपथं स पश्यन् . . . . रघु. ६/६७ नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे ।

४. कुमार. ७/५५ स प्रतियोगात् . . . . . .प्रावेशयन्मन्दिर भृद्धमेनमागुल्फकीर्णापणमार्गमुख्यम् ।

५. रघु. १६/४१ सा मन्दुरासंश्रयिभिस्तुरंगैः शालाविधिस्तम्भगतैश्चनागैः ।
पुरावभासे विपणिस्थपण्या सर्वांगनद्धाभरणेव नारी ।।
पू. मे. ३४ हारास्तारांस्तरलगुटकान् . . . . . दृष्ट्वा यस्यां विपणिरचितान् विद्धमाणांन च मार्गान् संलक्ष्यन्ते सलिलनिधयस्तोयमात्रावशेषाः । ।

६. कुमार. ७/५६ तस्मिन् मुहूर्ते . . . कुमार. ७/६३ प्रासादश्रंगाणि दिवापि कुर्वन् ज्योत्स्नाभिषेक द्विगुणद्युतीःनि ।।
. . .प्रसादमालासु वभूवुरित्थं त्यक्तानि कार्याणि विचेष्टितानि ।। रघु. १४/२६
रघु ६/५६ प्रसादवातायनदृश्यवीचिः ....,६/६८ यस्यावरोधं प्रसादं भ्रंलिहमाररोह ।

७. कुमार. ७/५८ प्रसाधिका लम्बितमग्रपादमाक्षिप्य . . . .उत्सृष्टलीलागतिरागवाक्षादलक्तांका पदवी ततान ।
कु. ७/५६ तथैव वातायनसंन्निकर्ष ययौ श्लाकामपरा वहन्ती ।
कुमार. ७/६० जालान्तरप्रेषितदृष्टिरन्या . . . .कुमार. ७/५७ आलोकमार्ग सहसा व्रजन्त्या ।
पू. मे. ६३ उच्चैर्विमाना . . .उ मे. । प्रसादास्त्ल्वांतुलयितुमलं . . .,उ. मे. ३ हर्म्यस्थलानि ।
उ. मे. ६ सा तीरसोपानीपथ ।

८. विक्रमो.''सवेसोपानारोहणं नादयन्ति'' पृ. १६६ एतेन गंगातरंगसश्रीकेणस्फटिकमणि सोपानेनाराहेतु ।

६. ऋतु१/२जलयंत्रमन्दिरम फौवारा), रघु. १६/४६ धारागृहेष्वातपभृद्धिवन्तम् मणिहर्म्यप्रष्ठम

१०. रघु. ६/३८ अष्टादशद्वीपनिखातयूपाः ।

११. कुमार. ७/६३ तावत्पताकाकुलमिन्दुमौलिरुत्तोरणं राजपथं प्रपेदे । रघु. १/४१ तोरणस्त्रजम् । रघु. ७/४ उ. मे. १२ चरुणातोरणेन ।

वास्तुकला के नियमानुसार किसी रचना कार्य के समापन पर स्थापत्य के अधिष्ठाता देवता की अर्चना-पूजा की जाती थी जिसमें प्रतीत होता है, स्त्री पुरुष मिलकर उस पूजा में इष्टदेवता को पशुओं की बलि भी देते थे। कोशल राज्य के स्वामी कुश ने पुर्ननिर्माण की हुई राजधानी अयोध्या में प्रवेश के पूर्व प्रतिमागृह के समक्ष पशुओं की बलि युक्त देव पूजा वास्तुशास्त्र वक्ताओं द्वारा सम्पन्न की थी -

''ततः सपर्या सपशूपहारां पुरः परार्ध्यप्रतिमागृहायाः /

उपोषितैर्वास्तुविधानविद्भिर्निर्वर्तयामास रघुप्रवीरः / / रघु. १६३६

देवपूजन के पश्चात् ही उस वास्तुकलात्मक कृति का नारी या पुरुष लोग उपयोग करते थे।

कालिदास के समान भवभूति ने भी अपनी नाट्य कृतियों में वास्तुकलात्मक विविध स्वरूपों देवमन्दिरों, उद्याम, नगर ६ भवनों के अलिन्द आदि का उल्लेख किया हैं, १० जिनके उनके नारी पात्र घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित दृष्टिगत होते हैं। अन्य ललितकलाओं की भांति यद्यपि दोनों महाकवियों के नारीपात्र वास्तु कला में पारंगत एवं कार्यशील यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से परिलक्षित नहीं होते, तथापि इस कला से जुड़े होने से लाभान्वित अवश्य थे।

समीक्षा - समाज में प्रायः पुरुषों की अपेक्षा नारियां स्वभाव से ही ललित कलाओं में असाधारण अभिरुचि और दक्षता रखती हैं। यही कारण है, कालिदास तथा भवभूति की नाट्य काव्य कृतियों में अनेक नारी पात्र नृत्य, नाट्य, काव्य, गीति वाद्य (संगीत), चित्रादि विविध ललित कलाओं में परम प्रवीण परिलक्षित होते हैं। जहां मालविका नृत्य, नाट्य, गीत के साथ संगीत एवं शिल्पादि में अद्वितीय चित्रित है, वहीं मौलिक काव्य रचना चित्र एवं ललित कलाविधान में कालिदास की शकुन्तला और उर्वशी कम निपुणता नहीं रखतीं। इन्दुमती को तो अज ने ''ललित कलाविधि'' में ''प्रिय शिष्या'' विशेषण से अभिहित किया है।

इस दृष्टि से भवभूति के नारी पात्र भी ललित कलाओं में शून्य दृष्टिगत नहीं होते हैं। उनकी सीता, मालती जैसी नायिकाओं के अतिरिक्त वासन्ती, लवंगिका, मदयन्तिका, मन्दारिका जैसे नारी पात्र नृत्य, गीतिमय संगीत चित्रकलादि में पूर्ण पारंगत पाये जाते हैं।

दोनों महाकवियों की कृतियों में चित्रित नारी पात्रों की उपर्युक्त ललित कलाएं जहाँ उपयोगिता के साथ ही वैयक्तिक अभिरुचि को परिपोषित करती हैं, वहां विरहावस्था में अपने प्रियतम की मिलनकामना के लिए मनोभावों की मार्मिक अभिव्यक्ति के माध्यम के साथ ही ये उनके मनोविनोद का भी सुन्दर साधन बनती हैं। यही इन ललित कलाओं की मानवीय संवेदनाओं, सुकुमार भावों की सुन्दरतम अभिव्यक्ति की दिशा में चरम सार्थकता है। इस दृष्टि से दोनों महाकवियों की नाट्य कृतियों के अन्तर्गत चित्रित नारीपात्र ललित कलाओं में प्रवीणता प्राप्तकर पराकोटि के सांस्कृतिक समुत्कर्ष पर पहुँच चुके थीं, जिनसे भारतीय संस्कृति संसार भर में समादित होकर गौरवान्वित हुई।

---

१. मा. मा. अंक १/२० के बाद मकरन्द की उक्ति पृ. ४२, ४/१० के पूर्व नगरीमैव प्रविशाव;

२. मा. मा. अंक ५/२७ के पूर्व मालती का गृहभवन के अलिन्द (बाहरी द्वार के प्रकोष्ठ) में शयन करना। -

''उपर्यलन्दमेव प्रसेह प्रतिनुहास्मि।'' पृ. २४०, उत्तर. १/७ विशति वासगृहं नरेन्द्रः ११ ७/७ के पूर्व-भागीरथगृहे प्रासादः,

पंचम परिच्छेद

नारी पात्रों की वेशभूषा सौन्दर्यादि का अध्ययन

कालिदास एवं भवभूति के नारी पात्रों की वेशभूषा (सौन्दर्य प्रसाधन एवं अलंकारों) का तुलनात्मक अध्ययन

भारतीय संस्कृति मानव जीवन के सर्वांग विकास हेतु वर्गचतुष्ट्य (धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष) को संतुलित रूप में ग्रहण करती है । अपने आस पास के परिसर आवासीय स्थान के अतिरिक्त अपने आपको वेशभूषा साजसज्जा से अलंकृत रूप में प्रस्तुत करने की मानवीय मूल प्रवृत्ति'' सौन्दर्य प्रतिष्ठा'' इसी काम वृत्ति की ही परितृप्ति है जो पुरुषों की अपेक्षा नारियों में कम विद्यमान नहीं होती है । कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों में यह सौन्दर्य प्रतिष्ठा की प्रवृत्ति सर्वांग समन्वित है जिसे सुन्दर एवं विराट् प्रकृति के माध्यम से प्राप्तकर देश काल पात्रानुरूप विविध वस्त्रालंकारों एवं सौन्दर्य प्रसाधनों से अपने आपको अलंकृत रूप में प्रस्तुत किया है ।

कालिदास के नारी के सौन्दर्य की प्रतिष्ठा तथा सार्थकता असाधारण रूप में अभिव्यक्त की है । महाकवि की दृष्टि में उस नारी का सौन्दर्य श्रेष्ठ एवं सार्थक है, जो अपने पति को आनन्दित कर उससे प्रशंसा और प्रेम प्राप्त कर सके [१] । वस्तुतः सच्चे सौन्दर्य के लिए अथवा पार्वती, शकुन्तला, उर्वशी, मालविका आदि निसर्गतः सुन्दरियों के लिए किसी वाह्य उपकरण या अलंकरण की आवश्यकता नहीं होती । [२] इन नारियों के सौन्दर्य में रूप की पावनता सुकुमारता, शालीनता ही कवि को अभीष्ट प्रतीत होती है । [३]

नैसर्गिक सौन्दर्य का मूल्यांकन [४] करते हुए भी कालिदास ने नारी सौन्दर्य निरूपण में निसर्ग

---

१. कुमार. ५/१ निनिन्द रूप हृदयेन पार्वती, प्रियेषु सौभाग्यफला हि चारुता ।

२. अभि. १/१६ सरसिजमनुबिद्धं . . . . . किमिव हि मधुराणां माण्डनं नाकृतीनां ।
१/२० अधरः ५ /६ यथा प्रसिद्धैर्मधुरं शिरोरुहै . . . . प्रकाशते ।

३. अभि. २/१० अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनंकररुहै -
रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम् ।
अखण्डं पुण्यानाम् फलमिव च तद्रूपमनघम्,
न जाने मोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः ।।

४. उ. मे. २२ तन्वी श्यामा . . . . . .विक्रमो. ४/५६ सुरसुन्दरी जघनभरालसा . . . . .
माल. २/३ दीर्घाक्षं शरदिन्दुकान्तिवदनं . . . . . ।

के उपमानों के आलोक में नख से शिख तक सर्वांग वेश[१], भ्रू[२] नेत्र,[३] लोम [४] (बरौनियाँ), अधर[५], दशन, [६] मुखगन्ध, [७] मुखबिम्ब, वाणी,[८] बाहु,[९] पयोधर [१०] नाभि, [११] कटि, त्रिबलय, नितम्ब, जघन, चरणं, नख, चाल, मुद्रा, वर्ण आदि का सुन्दर चित्रण किया है किन्तु भवभूति ने नारी सौन्दर्य निरूपण में कालिदास के समान नख-शिख सर्वांग बाह्य सौन्दर्य का चित्रण न कर उसके गुणगत अन्तः सौन्दर्य का प्रभावी रूप से रेंखांकन किया है । यथा - कालिदास का नारी सौन्दर्य चित्रण -

तन्वी शष्यामा शिखरिदशना पक्वबिम्बधरोष्ठी,
मध्ये क्षामा चकितंहरिणी प्रेक्षणा निम्ननाभिः ।
श्रोणी मारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां,
यत्र तत्र स्याद्युवतिविषये सृष्टिरादयेव धातुः । (उ.मे. २२)

भवभूति का अन्तः सौन्दर्य निरूपण - ''इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिनयनयौः रसावस्याः स्पर्शो

---

१. कुमार. १/४८ तं केशपाशं प्रसमीक्ष्य कुर्युबलिप्रियत्वं शिथिलं चमर्यः ।
उ. मे. ४६ बर्हभारेषुं केशान् । ऋतु. २/१८ शिरोरुहैः श्रोणितटावलम्बिभिः ।
ऋतु. ३/१६ केशान्नितान्तधननील विकुंचिताग्रांनापूरयन्ति वनिताः नवमालतीभिः
२. रघु. १६/६३ आवर्तशोभानतनाभिकान्तेर्भगो भ्रुवां द्वन्द्वचराः स्तनानाम् ।
उ. मे. ४६ नदीवीचिषु भ्रूविलासान् ।, ऋतु ३/१७ भ्रूविभ्रमाश्च . . . . .
कुमार. १/४७ तस्याः शलाकांजननिर्मितेव कान्तिभ्रुवोरायतलेखयौर्या ।
कुमार. २/६४ भ्रू लता चार्स श्रंगं, पू. मे. ५१ परिचितभ्रूलताविभ्रमाणां ।
३. विक्रमो. ४/२१ दीर्घापांगा सितापांगा दृष्टा दृष्टिक्षमा भवेत ।
विक्. १/१३, १/६, १/१८, माल. ३/७ अत्यायतं नयनयोर्मम . . . . . .
माल. ४/१४ तन्मे दीर्घाक्षि....., ऋतु ५/१३ श्रवण तटनिषक्तैः पाटलोपान्तनेत्रैः ।
कुमार. ८/५७, ७/२०, ५/३५, १/४०, उ . मे. ३७, ऋतु. ३/२८३/१७, २/१२
४. अभि. ४/१५ उत्पक्ष्मणोर्नयनयोरुपरुद्धवृत्तिं . . . . .कुमार. ५/
५. कुमार. ७/१८ रेखाविभक् तः........लावण्यफल्लोऽधरोष्ठः । ।
,, १/४४ पुष्पं प्रवालोपहितं . . . . .ताम्रोष्ठपर्यस्तरुचः स्मितस्य ।
,, ३/५६ विम्बाधरासन्नचरं द्विरेफम् । ३/६७ उमामुखे विम्बफलाधरोष्ठे ।
माल. ४/१४ बिम्बोष्ठि, उ. मे. ...पक्वबिम्बाधरोष्ठी । ऋतु. ३/२६, ५/१३
६. उ. मे. २२. ऋतु. ६/३६ कुन्दापीडविशुद्धदन्तनिकरः, ऋतु. ६/३१
७. रघु. ६/५३, विक्रमो २/६, ४/२० कुमार. १/४३, माल. २/३
८. कुमार. १/४५ स्वरेण तस्यामृतस्नुतेव, रघु ८/५६ कलमन्यमृतासु भाषितं . . . . .
९. ऋतु. ३/१८, कुमार. १/४१ माल. ५/६ ।
१०. रघु. १६/६०, १६/३२, ऋतु. १/७
११. रघु. ६/५२, १६/६३, पू. मे. ३०, उ. मे. २२, ऋतु ५/१२.

वपुषि बहुलचन्दनरसः । अयं कण्ठे बाहुः शिशिरमृसणो मौक्तिकसरः । किमस्याः न प्रेयो यदि परमसह्यस्तु विरहः (उत्तर. १/३८)

नारी पात्रों की सौन्दर्य प्रतिष्ठात्मक प्रवृत्ति को पोषित करने का परिचय हमें इसी तथ्य से प्राप्त होता है कि ये विविध प्रकार की वस्त्रालंकार प्रसाधनपूर्ण वेशभूषा से अपने आप को समाज अथवा दर्शकों के समक्ष अलंकृत रूप में प्रस्तुत करते हैं । यहां कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों की वेशभूषा (वस्त्र, अलंकार, सौन्दर्य, प्रसाधन आदि) का अनुसंधानपूर्ण तुलनात्मक अध्ययन किया जा रहा है ।

वस्त्र - भोजन (खान-पान) के पश्चात् वस्त्र मानवीय द्वितीय आवश्यक आवश्यकता के अन्तर्गत आते हैं, जिनका वर्ण, आकार-प्रकार निर्माणकारी पदार्थों (तत्वों, सूती, रेशमी ऊनीवस्त्रों के प्रकार के आधार पर निम्नलिखित विविध रूपों में इन दोनों महाकवियों की कृतियों में उल्लेख प्राप्त होता है ।

क्षौम - यह अत्यन्त महीन एवं सुन्दर वस्त्र था, जिसे डा. मोतीचन्द [1] क्षमा अर्थात् अलसी की छाल से निर्मित मानते हैं । चीनी भाषा में "क्षुम" एक प्रकार की घास के रेशों से तैयार वस्त्रों के लिए पुरातन नाम था, जो वाण के समकालीन एवं उनसे पूर्वआसाम बंगाल आदि पूर्वी प्रान्तों में प्रयुक्त होता था क्योंकि आसाम के कुलभास्कर वर्मा ने सम्राट् हर्ष के लिए क्षौम वस्त्र का उपहार भेजा था । [2]

कालिदास की कृतियों में उल्लेखानुसार यह कौशेय के समान वर्ण श्वेत रेशमी [3] वस्त्र ही प्रतीत होता है । कण्वाश्रम की वनश्री देवता ने शकुन्तला को मांगलिक उपकरणों में क्षौम युगल वस्त्र [4] को भी प्रदान किया था जिसे प्रियंवदा अनसूया ने उसे विदा के पूर्व धारण कराया था ।

भवभूति ने किसी भी अपने नारीपात्र के सन्दर्भ में कालिदास के समान "क्षौम" वस्त्र के अभिधान का उल्लेख नहीं किया है ।

कौशेय - यह भी सामान्यतः रेशमी वस्त के रूप में प्रयुक्त हुआहै। डा. मोतीचन्द्र [6] के मतानुसार कौशेय वस्त्र का निर्माण कोशषकार देश मेंहोता था । कालिदास ने पार्वती [7] की वैवाहिक

---

१. प्राचीन वेशभूषा, डा. मोतीचन्द, भूमिका, पृ. ६, अध्याय ४ पृ. ५६.
२. हर्ष चरितः एक सांस्कृतिक अध्ययन, डा. वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ. ७६.
३. रघु. १०/८, १२/८, कुमार. ७/२६, उ मे. ७, अभि. ४/५, अंक ४. पृ. ६६.
४. कुमार. ७/२६ "क्षीरोदवेलेव सफेनमपुंजा पर्याप्तचन्द्रेव शरत्रियामा ।
नवं लवक्षौमनिवासिनी सा भूयो बभौ दर्पण्मादधाना ।। "
५. अभि. ४/५. क्षौमें केनिचिदिन्दुपाण्डुतरुणा . . . . .
,, अंक ४, सख्यौ - हला शकुन्तले । अवसितमण्डनासि ।
परिधत्स्व साम्प्रतं विचित्रं क्षौमयुगलम् ।
६. प्राचीन वेशभूषा, भूमिका, पृ. ६ अध्याय ४, पृ. ५६ .
७. कुमार. ७/७ सा गौरसिद्धार्थ . . . . . निर्नाभि कौशेयमुपात्तवाणमभ्यंगनेपथ्यमलंचकार।

वेश संज्ञा के प्रसंग के अतिरिक्त शिशिर [१] ऋतु में सुन्दरी स्त्रियों के द्वारा लाल रंग के अधो वस्त्रके रूप में इसे धारण किये जाने का उल्लेख किया है ।

भवभूति ने नारी पात्रों द्वारा यद्यपि रेशमी वस्त्र धारण किये जाने का अनेक स्थलों पर उल्लेख किया है तथापि कौशेय अभिधान का प्रयोग नहीं किया है ।

अंशुक - यह अत्यन्त हल्का, [२] महीन, रेशमी वस्त्र है, जिसका उपयोग ग्रीष्म, वर्षा शरद, वसन्त ऋतु में अधिक किया जाता था । कालिदास ने अपनी कृतियों में अनेक स्थलों पर इसका उल्लेख [३] किया है जिसमें इसकी धवलता चन्द्रमा की शुभ्र किरणों जैसी तथा सूक्ष्मता एवं हल्कापन इतना कि निःश्वास से भी उड़ जाना वर्णित है । [४]

विविध वर्णो के अनुसार अंशुक भी अनेक प्रकार के होते थे । यथा - सितांशुक, [५] रक्ताँशुक[६], नीलांशुक [७] आदि जिनका कालिदास तथा भवभूति ने भी अपनी कृतियों में यथास्थान अधिवस्त्र [८] ऊर्ध्व अंगों हेतु एवं अधोवस्त्र वैवाहिक वस्त्र युगल रूप में उल्लेख किया है ।

चीनांशुक - भारतीय रेशमी वस्त्रों के अतिरिक्त चीन देश से आयातित रेशम के वस्त्रों का भी समृद्ध समाज में प्रचुर मात्रा में प्रयोग होता था । [९] यह अत्यन्त पतला, हल्का, कोमल होने से नारियों में विशेष रूप से लोकप्रिय था । पताकाओं में भी चीनांशक [१०] वस्त्र प्रायः प्रयुक्त होता था तथा भवभूति के अनुसार उत्खचित चित्रों वाला रंगबिरंगा यह रेशमी वस्त्र अत्यन्त पसन्द किया जाता था।

इस प्रकार कालिदास तथा भवभूति दोनों ने चीनांशुक रेशमी [११] वस्त्र का उल्लेख किया है जिससे प्रतीत होत है तद्‌युगीन नारियों में इसका प्रचलन उत्तम कोटि का होने के कारण अधिक रहा होगा।

कौशेय-पत्रोर्ण - यह भी कौशेय अर्थात् रेशम मिश्रित ऊनी वस्त्र प्रतीत होता है, जिसको

---

१. ऋतु. ५/८ मनोज्ञ कूर्पासकपीडितस्तनाः सरागकौशेयक भूषितोरव ।

२. कुमार. १/१४, ७/३, ८/२, ७१. ऋतु. १/७, ३/१, ४/३, ६/५, २१.
रघु. १०/६, ६/७५, पू. मे. ६२, विक्रमो. ३/१२, ४/१७.

३. कुमार. ८/७१ पश्य कल्पतरु लम्बिं . . . . . व्यज्यते विपरिवृतमंशुकम् ।

४. रघु. १६/४३ निःश्वासहायांशुकमाजगाम धर्मः प्रियावेषमिवोपदेष्टुम् ।

५. ऋतु. ३/१ (सितांशुक), मालती ०६/७ के बाद-प्रतिहारी-धवलपदांशुक युगलम्। पृ. २६८

६. ऋतु. ६/२१, मा. मा. ६/७ के पश्चात् प्रतिहारी-एतच्योतरीय चरक्तवर्णांशुकम् ।

७. विक्रमो. अंक ३. नीलांशुक परिग्रहः, पृ. १६८.

८. विक्रमो. ४/७ शुकोदरश्याममिदं स्तनांशुकम् ।

९. हर्षचरित. "चीनांशुकसुकुमारे शोणेसैकते दुकूलकोमले शयने इव समुपविष्टा । "
सांस्कृतिक अध्ययन, डा. वासुदेवशरण अग्रवालपृ. ७६.

१०. अभि. १/३२ चीनांशुकमिवकेतोः प्रतिवातं नीयमानस्य ।

११. मा. मा. ६/५ व्यक्ताखण्डलकामुका इव भवन्युच्चित्रचीनांशुक -
प्रस्तारस्थगिता इवोन्मुखमणिज्योतिवितानैर्दिशः ।।

वैवाहिक मंगलमय शुभ अवसरों पर वर-वधू के द्वारा धारण किए जाने का प्रायः प्रचलन पुरातन कालिदास काल में रहा होगा । कौशेय (रेशम) से मिलकर आजकल की तरह बनने से यह सुन्दर चिकना एवं शरीर पर न चुभने वाला होने से विशेष आकर्षक समझा जाता था । कालिदास ने "मालविकाग्निमित्रम्" में कौशेय[१] पत्रोर्ण वस्त्र युगल का उल्लेख उस स्थल पर किया है जब महादेवी धारिणी प्रतिहारी जयसेना से राजा अग्निमित्र और मालविका को वैवाहिक वेशभूषा में धारण कराने के लिए "कौशेय-पत्रोर्ण युगल' लाने आदेश देती है ।

भवभूति ने इस प्रकार के मिश्रित कोटि के वस्त्र विशेष का उल्लेख अफनी कृतियों में नहीं किया है ।

पत्रोर्ण - ऋग्वैदिक काल से उनी वस्त्रों का उपयोग होता रहा है, सिन्धु तट एवं उसकी सहायक नदियों के तटों पर ऊन वाली भेड़ें अधिक होती थीं । अतः इन पंक्तियों के लेखक डा. कैलाशनाथ द्विवेदी)[२] के मतानुसार भेड़ों के साथ नदी का यह वैशिष्ट्य युक्त अभिधान "ऊर्णांवती" ऋग्वेद में (१/६७/३) में वर्णित प्रयुक्त हुआ है । इससे कालिदास तथा भवभूति के काल में पत्रोर्ण उन से भिन्न प्रतीत नहीं होता है ।

डा. मोतीचन्द[३] की अवधारणा है कि नागवृक्ष, लकुच, वकुल एवं वट वृक्षों की छाल से निकले रेशे से पत्रोर्ण को निर्मित किया जाता था जिसका रंग क्रमशः पीला, गेंहुआं, श्वेत (मक्खन के समान धवल-उज्ज्वल) होता था । नाग वृक्ष से निकले रेशे से बना पत्रोर्ण पीला, लकुच का बना गेहुआं तथा बकुल का बना यह श्वेत रंग का होता है ।

गुप्तकाल में पत्रोर्ण धुला हुआ अत्यन्त मूल्यवान् रेशमी वस्त्र था जिसे डा. वासुदेवशरण[४] अग्रवाल उन के स्थान पर इसे रेशमी स्वीकार करते हैं जिसे टीकाकार क्षीरस्वामी ने कीडों की तार से वट-लकुच के पत्तों पर समुत्पन्न बताया है । अतः डा. मोतीचन्द भी इनकी पत्तियाँ खाने वाले रेशम के कीड़ों से उत्पन्न जंगली रेशम इसे मानते हैं किन्तु मालविका[५] को विवाह के अवसर पर

---

१. माल. अंक ५. धारिणी - "जयसेने। गच्छ तावत् । कौशेयपत्रोर्णयुगलमुपनय ।" प. ३३३
इस आदेश के पालन में प्रतिहारी "कौशेयपत्रोर्ण युगल" के स्थान पर पत्रोर्ण मात्र लाकर देती है । प्रती. (निष्क्रिम्य पत्रोर्ण गृहीत्वा पुनः प्रविश्य) देवि एतत् । पृ. ३३४

२. ऋग्वैदिक भूगोल - डा. कैलाशनाथ द्विवेदी, कानपुर १६८४ पृ. (डी. लिट्. शोधग्रन्थ) कादम्बिनी, मास दिसम्बरे १६८५ "ऋग्वैदिक भूगोल डा. कैलाशनाथ द्विवेदी का शोध लेख पृ. १८७-१६८.

३. प्राचीन वेशभूषा, डा. मोतीचन्द्र पृ. ६, ५५ ।

४. हर्षचरित एक सांस्कृतिक अध्ययन, डा. वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ. ७६-७७ .
क्षीरस्वामी - "लकुचवटादिपत्रेषु कृमितालोर्णाकृतं पत्रोर्णम् । "

५. माल. ५/१२ स्नानीयवस्त्रक्रियया पत्रोर्णं वोपयुज्यते ।
"५/१६ के पूर्व, धारिणी, प्रतिहारी (निष्क्रम्य पत्रोर्ण ग्रहीत्वा पुनः प्रविश्य) देवि । एतत् । " पृ. ३३४.

पहनाने हेतु प्रयुक्त करने तथा इसके अन्य उल्लिखित संदर्भों को देखकर [१] इसे उनी वस्त्र कहना समीचीन प्रतीत होता है।

आज भी विवाहोत्सव के समय वरवधू का कौतुक हस्तसूत्र (कंकण) ऊन से निर्मित किया गया धारण करते हैं। पवित्रता तथा शुद्धता की दृष्टि से कालिदास तथा भवभूति के समय भी विवाह के अवसर पर वर वधू द्वारा पत्रोर्ण के पहनने का प्रचलन रहा होगा किन्तु कालिदास के समान भवभूति ने इस वैवाहिक करसूत्र "कंकण" [२] का उल्लेख करते हुए भी इससे निर्माणकारी पदार्थ ऊर्ण या पत्रोर्ण का उल्लेख नहीं किया है। [३]

दुकूल - वृक्ष की छाल के रेशे से बनने वाले वस्त्रों को दुकूल अभिधान प्राप्त होने का अनुमान डा. मोतीचन्द्र [४] करते हैं तथा उनके मतानुसार बंगाल जैसे पूर्वी राज्य में निर्मित दुकूल का रंग सफेद पौण्ड्र देश का नीला, सुवर्ण कुडया का दुकूल लाल रंग का होता था। कालिदास ने भी इसका रंग ज्योत्स्ना के समान धवल वर्णित किया है।

सामान्यतः वैवाहिक शुभ अवसरों पर क्षौम, कौशेय, अंशुक आदि रेशमीवस्त्रों का उपयोग नारियां करतीं थीं किन्तु कुछ स्थलों पर दुकूल [५] के भी प्रयोग किये जाने का उल्लेख हुआ है। ऋतु-संहार के आधार पर ज्ञात होता है कि इस दुकूल प्रायः ग्रीष्म, [६] वर्षा [७], शरद, [८] हेमन्त आदि ऋतुओं

---

१. कुमार. ७/२५ बबन्ध चास्राकुलदृष्टि रस्याः स्थानान्तरे कल्पितसन्निवेशं ।
धात्र्यंगुलीभिः प्रतिसार्यमाणमूर्णामयं कौतुकहस्तसूत्रम ।।
रघु. १६/८७ तस्याः स्पृष्टे मनुजपतिना साहचर्याय हस्ते,
मांगल्योर्णावलयिनि पुनः पावकस्योच्छिखस्य्र ।
दिव्यस्तूर्यध्वनिरुदचरदव्यश्नुवानो दिगन्तान् ,
गन्धोदग्रं तदनु ववृषुः पुष्पमाश्चर्यमेघाः ।।

२. उत्तर. १/१८ अयमुद्गृहीतकमनीय कंकणस्तव मूर्तिमानिव महोत्सवः कर
उ. च. ३/४० गृहीतो यः पूर्व परिणयविधौ ककणधरः ......
मा. मा. ६/७ के पश्चात प्रतिहारी ने ऊर्ण या पत्रोर्णमय हस्तसूत्र का उल्लेख न कर "एतावद्धवल मूर्णांशुकयुगम" का उल्लेख किया है।

३. प्राचीन वेशभूषा, डा. मोतीचन्द, पृ. ८. (भूमिका)

४. ऋतु. ३/७ ज्योत्स्नादुकूलममलं रजनी दधाना, वृद्धिं प्रयात्यनुदिनं प्रमदेव बाला ।

५. रघु. ७/१८ भोजोपनीतं च दुकूलयुग्मं जग्राह सार्धं वनिताकटाक्षैः ।
रघु. ७/१९ दुकूलवासाः स वधूसमीपं विन्ये विनीतैरवरोध दक्षैः ।
कुमार. ७/७२ नवे दुकूले च नगोपनीतं प्रत्यग्रहीत् सर्वममंत्रवर्जम् ।
,, ७/७३ दुकूलवासाः स वधूसमीपं निन्ये विनीतैरवरोधदक्षैः ।
,, ७/३२ . . .गजाजिनस्यैव दुकूलभावः ।

६. ऋतु. १/४ नितम्बबिम्बैः सदुकूलमेखलैः स्तनैः सहाराभरणैः सचन्दनैः ।

७. ऋतु. २/२६ प्रतनुसितदुकूलान्यायतैः श्रोणिबिम्बैः ....नार्यः ।

८. ऋतु. ३/७ ज्योत्स्नादुकूलममलं रजनी दधाना ....बाला ।

में स्त्रियां अधोवस्त्र के रूप में धारण करतीं थीं । [१]

यद्यपि अंशुक या कौशेय की अपेक्षा दुकूल [२] मोटा और भारी होता होगा जिसे स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष अधिक प्रयोग करते थे तथापि उत्तम कोटि के हल्के महीन एवं चिकने दुकूल वस्त्रों का निर्माण प्रचुर रूप में होता होगा जिससे प्रतीत होता है, मालविका, [३] उर्वशी [४] जैसे सम्पन्न वर्ग के नारी पात्र विवाहदि विशेष समारोहों के अवसर पर या प्रतिदिन धारण करते थे ।

भवभूति ने दुकूल किसी भी नारी पात्र द्वारा धारण करने का यद्यपि उल्लेख अपनी कृतियों में नहीं किया है तथापि उनके समय नारियों में इसके प्रयोग का प्रचलन का अभाव नहीं था ।

हंसचिह्नदुकूल - उपर्युक्त श्वेत दुकूल वस्त्र के अतिरिक्त अनेक प्रकार के वर्णों के हंस,[५] चक्रवाक आदि पक्षियों के चित्र से अंकित दुकूल भी प्रयुक्त होते थे जिन्हें हंस चिह्न दुकूल कहा गया है । यह हसंचिह्नित दुकूल अत्यन्त मांगलिक माना जाता था तथा वैवाहिक शुभ अवसरों पर यह प्रयुक्त होता था ।

प्रतीत होता है कि उस समय वस्त्रों पर रंगीन कलात्मक छपाई अथवा सुई धागे से चित्रों की कढ़ाई अत्यन्त उच्चस्तरीय रही होगी, [६] इससे तत्कालीन नारियों की कलात्मक अभिरुचि का भी पूर्ण परिचय प्राप्त होता है ।

चीर, वल्कल, मृगचर्म आदि

तपोवनों की ऋषिपत्नियाँ, मुनि कल्याएं आदि चीर अथवा वल्कल अथवा मृगचर्म से निर्मित वस्त्रों का उपयोग करती थीं । वृक्षों की छाल से बने वल्कल भारी, रूक्ष तथा मोटे होते थे जिन्हें

---

१. ऋतु. ४/३ नितम्बबिम्बेषु नवं दुकूलं तन्वंशुकं पीनपयोधरेषु ।

२. रघु. ७/१८, कुमार. ५/७८, ७/३२, ७२, ७३.

३. माल. ५/७ अनतिलम्बिदुकूलनिवासिनी बहुभाराभरणैः प्रतिभाति मे ।

४. विक्रमो अंक ५ (प्रवेशकः नेपथ्ये) हा धिक् दुकूलोत्तरच्छदे तालवृन्ता दारे नीयमानो मया ...., पृ. ४०८

५. कुमार.५/६७ बधू दुकूलं कलहंसलक्षणं गजाजिनं शोणितविन्दुर्विष च ।
,, ७/३२ उपान्तभागेषु च रोचनांको गजाजिनस्यैव दुकूलभावः ।
रघु. १७/३ आमुक्ताभरणः स्रग्वी हंसचिह्न दुकूलवान् ।
आसीदतिशय प्रेक्ष्यः स राज्यश्रीवधूवरः ।।

६. वैदिक काल से सुई से कलात्मक बेल-बूटे चित्रांकन आदि वस्त्रों पर होने का प्रतिपादन ऋक्. २/ ३२/४ के आधार पर डा. कैलाशनाथ द्विवेदी, पं. वि. ना. रे. उ. ने किया है। दृष्टव्य - ऋग्वैदिक भूगोल, १९८४, कानपुर ।
पृ. २२१, ऋग्वेद पर एक ऐतिहासिक दृष्टि, १९६७, पृ. १९६. ।

तपस्वीजनों के अतिरिक्त शकुन्तला [१] एवं उसकी दोनों प्रियसखियाँ प्रियंवदा-अनसूया सीता [२] आदि नारी पात्र धारण करते थे । इसी प्रकार कुमार सम्भव की तपस्विनी पार्वती ने भी रेशमी सुन्दर वस्त्रों का परित्याग कर लाल-लाल वल्कल धारण किये थे । [३] इसी की वे ओढनी भी ओढती थीं ।

चीर या वल्कल के अतिरिक्त मृगाजिन (मृगचर्म) यज्ञ, विद्यारम्भ आदि विशेष अवसरों पर पवित्र [४] होने के कारण प्रायः प्रयुक्त होता था जिसमें मृगचर्म के अतिरिक्त रुरु [५] मृग का चर्म अजिन, [६] और मेध्य [७] विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

भवभूति ने भी उत्तर रामचरित के चतुर्थांक [८] में सौधातिक के संवाद में तथा मालती माधव में परिव्राजिका कामन्दकी द्वारा चीर धारण किए जाने का उल्लेख किया है । [९] वस्तुतः कामन्दकी के चीरांचल की स्नेहिल छाया में नायिका मालती पलती हुई चित्रित की गई है । मालविकाग्निमित्रम् की यतिवेश (चीर) धारिणी कौशिकी परिव्राजिका भवभूति द्वारा मालती माधव में चित्रित कामन्दकी से पर्याप्त साम्य रखती हैं ।

वस्त्रों का स्वरूप - उपर्युक्त विवेचन के आधार पर ज्ञात होता है कि कालिदास तथा भवभूति के समय नारी पात्र विविध प्रकार के ऊनी, रेशमी एवं सूती वस्त्रों का उपयोग करते थे ।

इन वस्त्रों का वर्ण तथा स्वरूप भी विभिन्न प्रकार का होता था । मनोज्ञ [१०] वेश के अन्तर्गत वस्त्रों का उज्ज्वल, श्वेत तथा रंगीन होना आवश्यक समझा जाता है । देश काल को देख कर अपनी अभिरुचि के अनुसार नारियाँ नीला, लाल, कषाय, हरा, कुसम्भी या कुंकुम रंग के विविध प्रकार

---

१. अभि. १/१४ तोयाधारपथाश्च वल्कलशिखा निष्यन्दरेखांकिता ।
,, १/१८ इयमधिक मनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी।
तथा इसके पूर्व शकुन्तला - 'हला अनसूये । अतिपिनद्धेन वल्कलेन प्रियंवदया दढ़ं नियंत्रताऽस्मि । शिथिलय तावदेतत् । पृ. ४३४ । अभि. ६/१७ शाखालम्बित बल्कलस्य ।
२. रघु. १४/८२ वन्येन सा वल्कलिनी शरीरं पत्युः प्रजासन्ततये बभार।
३. कुमार. ५/८ बबन्ध बालारणवभ्रुवल्कलं पयोधरोत्सेध विशीर्णसंहतिः ।
,, ५/४४ किमित्यपास्याभरणानि यौवने घृतं त्वया वार्द्धकशोभिवल्कलंम् ।
,, ५/८४ चचाल बाला स्तनभिन्नवल्कला ।
४. कुंमार. ५/१६ कृताभिषेकां हुतजातवेदसं त्वगुत्तरासंगवतीमधीतिनीम्।
५. रघु. ३/३१ त्वचं स मैध्यां परिधाय रौरवीम् . . .
६. रघु. ३/३१
७. रघु. ३/३१, १४/८१ ता . . . . आस्तीर्णेणमिध्याजिनतल्पिमन्तः ।
८. उत्तर. ४ अंक पृ. ३८०
९. मा. मा. २/६ के पूर्व कामन्दकी - नान्वयमेव चीर चीवरविरुद्धपरिचयः । '', १०/४ के बाद कामन्दकी . . . मदीयचीवरांचले । पृ. ४४६.
१०. रघु. ६/१ तत्र मंचेषु मनोज्ञवेशान् . . . .

के वस्त्र धारण करती थीं । यथा - "विक्रमोर्वशीयम्" [1] की उर्वशी नायिका अभिसारिका वेश में एक स्थान पर नीला एव अन्यत्र एक स्थल पर शुकोदर [2] श्याम वर्ण का अंशुक धारण करती चित्रित है । वसन्त ऋतु में नारियां कुसम्भी [3] या कुंकुम रंग के वस्त्र पहनती थी । [4]

इसी प्रकार भवभूति के मालतीमाधव में नायिका मालती का वैवाहिक वेशभूषा में धवल एवं रक्तवर्णशुका तथा अन्यत्र बध्य चिह्न स्वरूप रक्तमाल्यवसनां [5] होना उल्लेखनीय है ।

परिव्राजिकाओं का कषाय [6] अथवा रक्तवर्ण का चीर पट होता था । इसके उदाहरण इन दोनों महाकवियों के क्रमशः कौशिकी [7] तथा कामन्दकी [8] जैसे नारी पात्र हैं ।

आकार के आधार पर कालिदास तथा भवभूति के नारीपात्र अधोलिखित अधिवस्त्रों (शरीर के ऊपरी भाग पर धारण किए जाने वाले) तथा अधोवस्त्रों (कटि के नीचे धारण किए जाने वाले) को धारण करते थे ।

उत्तरीय - नारियों एवं पुरुषों द्वारा शरीर पर कटि से ऊपरी भाग स्तनादि दुपट्टे की भांति पर ओढ़ा जाने वाला अधिवस्त्र उत्तरीय कहलाता था । कालिदास तथा भवभूति ने अपने नारी पात्रों को उत्तरीय [9] युक्त अनेक स्थलों पर चित्रित किया है । प्रायः विवाह के अवसर पर लाल उत्तरीय मालती [10] जैसे नारी पात्र धारण किया करते थे ।

---

१. विक्रमो. ३/६ के पश्चात् उर्वशी - हला चित्रलेखे । अपि रोचते ते अयं मम मुक्ताभरणभूषितः लीला शुकपरिग्रहः अभिसारिकावेषः । पृ. ३७४

२. विक्रमो. ४/७ शुकोदरश्याममिदं स्तनांशुकं ।

३. ऋतु. ६/५ कुसम्भरागारुणितैर्दुकूलैर्नितम्बविम्वानि विलासिनीनाम् ।
तन्वंशुकैः कुंकमरागगौरैरलं क्रियन्ते स्तनमण्डलानि ।

४. ऋतु. ६७६, ५/६ पयोधरैः कुंकुंरागपिंजरैः . . . . .

५. मा. मा. अंक६, प्रती. - एतद्वलं पट्टांशुकयुगम् । एतच्चोत्तरीयरक्तवर्णाशुकम् । पृ. २६८

६. मा. मा. अंक ५ पृ. २२६.

७. माल. १/१४ मंगलालंकृता भाति कौशिक्या यतिवेषया ।

८. मा. मा. "परिवृत्तरक्तपेटिका" (नेपथ्ये) उभावुपविष्टौ प्रविशत (लोहितवसन्नवेश), पृ. २६०,

९. रघु. १६/४३ अन्यास्य रत्नग्रथितोत्तरीयमेकान्तपाण्डुस्तनलम्बिहारम् ।
निःश्वासहार्यां शुकमाजगाम् धर्मः प्रियावेषमिवोपदेष्टुम् ।।
अभि अंक १. पृ. १३ .

१०. मा. मा. ४/८ "मामगणितस्खलदुत्तरीया"(स्तनों से स्खलित होने वाले उत्तरीय की अपेक्षा न करने वालीं मदयन्तिका)
मा. मा. अंक ७, पृ. ३२६) मदयन्तिका के उत्तरीयांचल का मकरन्द द्वारा स्वप्न में पकड़ा जाना) धृतंतच्चोत्तरीयं रक्तवर्णांशुकम् ।
मा. मा. अंक ६ प्रतिहारी - पृ. २६८ ।

ओढ़नी (अवगुण्ठन) - उत्तरीय की भांति कभी - कभी विशेष अवसर पर नारियां सिर को ढंकने के लिए क्षौम अथवा अंशुक की ओढनी अवगुण्ठन (घूंघट) के लिए प्रयोग करती थीं। दुष्यन्त के समक्ष शकुन्तला अवगुण्ठनवती [१] रूप में ही प्रस्तुत हुई थीं जिससे प्रतीत होता है, उसने क्षौम ओढनी सिर पर ओढ़ रखी होगी। इसी प्रकार वसन्तोत्सव पर मालविका ने भी छोटी ओढनी के रूप में दुकूल धारण कर रखा था।

प्रतीत होता है, विवाह के मांगलिक सुअवसर पर वधू दुकूल [२] या अंशुक की ओढनी अवगुण्ठन (घूंघट निकालने) के लिए प्रयुक्त करती थी। पार्वती को भी विवाह योग्य आयु के समय ''त्वगुतरासंगवती'' विशेषण से कवि ने उल्लिखित किया है। [३]

''कौशेय पत्रोर्णयुगल'', ''क्षौम युग्म'', ''धवलपदांशु का युगम्'', दुकूलयग्म, आदि शब्दों के प्रयोग से यह स्पष्ट है कि उत्तरीय या दुकूल [४] रूप में ओढनी कोई प्रथक् वस्त्र न होकर इन्हीं दोनों (अधोवस्त्र और अधिवस्त्र) में से एक नीचे और एक ऊपर नारियों द्वारा विवाहादि शुभ अवसरों पर सिर को ढकने के लिए धारण किया जाता होगा।

स्तनांशुक - स्त्रियों द्वारा स्तनों को समाच्छादित करने के लिये फेंटा या चोली जैसा जो वस्त्र प्रयोग किया जाता था उसे स्तनांशुक [५] कहा गया है। ये नारी पात्रों के मन पसन्दानुसार धवल, [६] नीले, [७] हरे, [८] कुसुम्भी या कुंकुम आदि वर्ण के बिना सिला हुआ अंशुक का [९] अधिवस्त्र होता था।

इसका आशय यह नहीं है कि स्तनांशुक को स्त्रियां इसलिए बिना सिला हुआ अंशुक स्तनों पर बांधती तीं कि वे अच्छा सिलना नहीं जानती थीं। इस सम्बन्ध में डा. गायत्री वर्मा [१०] की

---

१. अभि. ५/१३ कास्विदवगुण्ठनवती नाति परिस्फुटशरीर लावण्या।
,, अंक ५ गौतमी - जाते। मुहूर्त मा लज्जस्व।
अपनेष्यामि तावत्ते अवगुण्ठनम्। ततस्त्वां भर्ता अभिज्ञास्यासि। पृ. ५०३

२. माल. ५/७ अनतिलम्बिदुकूलनिवासिनी . . . . । अंक ५, पृ. ३५६ .

३. कुमार ५/१६ कृताभिषेकां हुतजातवेदसं त्वगुत्तरासंगवतीमधीतिनीम्।

४. माल. अंक ५, पृ. ३५६.

५. अभि. अंक ४, पृ. ६८.

६. मा. मा. अंक ६, प्रतिहारी की उक्ति पृ. २६८.

७. रघु. ७/१८.

८. विक्रमो. ५/१२, ४/७, ऋतु. १/७, ४/३, ६/५.

९. विक्रमो. ४/७ शुकोदरश्याममिदं स्तनांशुकम्।
ऋतु ६/५, मा. मा. अंक ६, पृ. २६८.

१०. कालिदास के ग्रन्थों पर आधारित तत्कालीन भारतीय संस्कृति, वाराणसी १९६ ई. पृ. १६८, पृ. २०६.

अवधारणा असमीचीन प्रतीत होती है, क्योंकि जब ऋगवैदिक काल [१] से ही स्त्रियां सुई से वस्त्रों पर कलात्मक सिलाई, कढाई आदि करने में पारंगत थीं तो कालिदास एवं भवभूति के काल में भी अवश्य वे अपने वस्त्रों को अच्छा सिलना अवश्य जानती होंगी, क्योंकि उस समय वस्त्र निर्माण कला का पर्याप्त विकास हो चुका था ।

कूर्पासक - प्रतीत होता है कि यह सिला हुआ, सूती, शीत ऋतु में स्त्रियों के पहिनने का मोटा एवं भारी वस्त्र था । कालिदास ने कूर्पासक [२] को क्रमशः हेमन्त [३] तथा शिशिर जैसी (शीत प्रधान) ऋतु में धारण करने का वर्णन किया है, जिससे प्रतीत होता है यह भारी एवं मोटा होने से पहिनने पर शीत से पर्याप्त बचाव करता होगा ।

कूर्मासक के स्वरूप के सम्बन्ध में डा. मोतीचन्द [४] का अनुमान है कि यह आधी बाँह की मिर्जई जैसा वस्त्र था, जबकि डा. गायत्री [५] वर्मा इसे ढीला ढाला उल्टा सीधा जम्परनुमा सिला वस्त्र मानती हैं, किन्तु ऋतु. ५/८ के उल्लेख "कूर्पासकपीडितस्तना" के आधार पर इसे न ढीला ढाला और न उल्टा सीधा सिला वस्त्र कहा जा सकता है । इतना अवश्य है, यह आकार में ऊंची आस्तीन के जम्पर या फतुई या ब्लांउज से पर्याप्त समानता रखता होगा, जैसा कि डा. वासुदेवशरण [६] अग्रवाल ने कूर्पासक अभिधान का आधार इसकी आस्तीन को कोहनियों से ऊपर रहना स्वीकार किया है ।

कालिदास के समान यद्यपि भवभूति ने अपने किसी नारी पात्र द्वारा इसे धारण किए जाने का अपनी कृतियों में उल्लेख नहीं किया है, तथापि कटि से ऊँचा, आस्तीन रहित, चोलीनुमा जम्फर या ब्लाउज जैसे इस मोटे भारी वस्त्र का प्रचलन उस समय अवश्य रहा होगा जिसे नारियां प्रायः जाड़ों में पहिनती होंगी ।

---

१. ऋग्वेदे वस्त्रनिर्माणम् (पंचम विश्वसंस्कृत सम्मेलन वाराणसी के पंचम वर्ग में) प्रस्तुत लेखक (डा. कैलाशनाथ द्विवेदी) का शोध पत्र
द्रष्टव्य सागरिका २१/१, पृ. ९८-१०० । अजस्रा.
ऋग्वैदिक भूगोल डा. कैलाशनाथ द्विवेदी, १९८४ पृ. २२१, कादम्बिनी, दिसम्बर १९८५ पृ. १८७ - १९८.
ऋग्वेद पर एक एतिहासिक दृष्टि, पं. वि. ना. रे उ, १९६७, पृ. १६६ ।
हेमन्त ऋतु में कूर्पासक नारियों द्वारा धारण करने का वर्णन

२. ऋतु ४/१७ अन्याप्रियेण परिभुक्तमवेक्ष्य गात्रं,
हर्षान्विता विरचिताधरचारुशोभा ।
कूर्पासकं परिदधाति नखक्षतांगी ,
व्यालम्बिनील ललितालककुंचिताक्षी ।।

३. ऋतु. ५/८ मनोज्ञकूर्पासकपीडि स्तनाः सरागकौषेयकभूषितोरवः ।
निवेशितान्तः कुसुमैः शिरोरुहैः विभूषयन्तीव हिमागमं स्त्रियः ।।

४. प्राचीन वेश भूषा, डा. मोतीचन्द, पृ. १६१ ,

५. कालिदास के ग्रन्थों पर आधारित तत्कालीन भारतीय वेश-भूषा, १९६३, पृ. २०६.

६. हर्षचरितः एक सांस्कृतिक अध्ययन, पृ. १५२ .

समीक्षा - उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र अपनी विकसित विविध प्रकार की वस्त्रों वाली वेशभूषा से सौम्य एवं भीषण स्वरूप [1] सफलतापूर्वक प्रदर्शित करते रहें । इन दोनों महाकवियों के काल में इतने उत्कृष्ट कोटि के कोमल, महीन, चिकने, हल्के एवं मनोज्ञ वस्त्र बनते थे कि इन्हें धारण करते हुए नारियों के अंग झलकते रहते थे । कालिदास तथा भवभूति ने ऐसी नारियों का प्रायः वर्णन किया है, जिनके जल से भीगे वस्त्रों से चिपके अंग प्रत्यंग झलकते रहते थे । इस दृष्टि से रघुवंश के १६ वें सर्ग सरयू में सुन्दरियों नारियों के साथ कुश का जलविहार [2] वर्णन तथा मालतीमाधव में भवभूति का वरदा-सिन्धु नदियों के संगम स्थल में सुन्दर बधुओं के सघःस्नान से जल से भीगे संश्लिष्ट अंगों का वर्णन उल्लेखनीय है । [3] दोनों महाकवियों ने नव वधू के वैवाहिक वेशभूषा परिव्राजिका अथवा तापसी की वेशभूषा, विरहिणी या परित्यक्ता की वेशभूषा का विशिष्ट रूप से वर्णन किया है ।

इस प्रकार दोनों महाकवियों के नारी पात्रों की वस्त्रगत वेशभूषा विकसित एवं उत्कृष्ट कोटि की प्रतीत होती है ।

अलंकार (आभूषण) - अपने को अलंकृत अथवा सज्जित करने की सहज प्रवृत्ति मानव जीवन में पाई जाती है । अतः प्राचीनकाल से ही पुरुषों के साथ ही स्त्रियां भी अनेक प्रकार के आभूषणों और श्रृंगारिक प्रसाधनों के द्वारा अपने आपको अलंकृत किया करती थीं । कालिदास तथा भवभूति ने नारियों की इसी सामान्य सौन्दर्य प्रतिष्ठा की प्रवृत्ति को दृष्टि में रख कर अपनी कृतियों में नारी पात्रों को विविध प्रकार के अंलकारों अथवा आभूषणों से अभिमण्डित चित्रित किया है । उनके इन अलंकारों को अधोलिखित रूप में वर्गीकृत कर तुलनात्मक रूप में विवेचित किया जा सकता है-

विविध मणियाँ - रत्नजटित अनेक प्रकार के नारियों के आभूषणों में विविध मणियों का उपयोग सामान्यतः होता ही है । कालिदास ने अलंकारों के विशेष संदर्भ में वैदूर्यमणि, [4] इन्द्रनील,

---

१. शकुन्तला, उर्वशी, मालविका, मालती,सीता जैसे नारी पात्रों का वस्त्रों से सौम्य स्वरूप व्यक्त हुआ है जबकि ताडका, कपालकुण्डला की अत्यन्त भीषण वेशभूषा (द्रष्टव्य सम्बन्धित कृतियों के पूर्वोक्त संदर्भ)

२. ऋतु २/२६ दधति वरकुचाग्रैः ....
प्रतनुसितदुकूलान्यायतैः श्रोणिविम्बैः . . . . नार्यः
रघु. १६/६५ संदष्टवस्त्रेष्वबला नितम्बेस्विन्दु . . . . . . रसनाकलापाः ।
१६/६७ मनोज्ञ एवं प्रमदामुखानांम्भोविहाराकुम्भिोऽपि वेशः ।

३. मा. मा. ४/१० जलनिविदवस्त्र व्यक्त निम्नोन्नताभिः ,
परिगत तटभूमिः स्नानमात्रोत्थिताभिः ।
रुचिरकनककुम्भश्रीमदाभोगतुंगस्तनविनिहितहस्तस्वस्तिकाभि र्वधूभिः ।।

४. कुमार. ७/१० विन्यस्तवैदर्यूशिलातलेऽस्मिन् . . . . . स्नपयांबभूवः ।
उ. में . १६ तन्मध्ये च स्फटिकफलका कांचनी वासयष्टि -
मूले वद्धामणिभिरनति प्रौढवंशप्रकाशैः
ऋतु. २/५ प्रभिन्नवैदूर्य निस्तृणां कुरैः . . . .
विभातिशुक्लेतरेरत्नभूषिता . . ..।

[१] महानील, [२] पद्मराग, [३] मूँगा, [४] मरकत, [५] चन्द्रकान्त,[६] सूर्यकान्त, [७] सितमणि (हीरा) आदि मणियों का अपनी कृतियों में उल्लेख किया है ।

इन मणियों के समुचित प्रयोग की रीति प्रायः प्रत्येक पुरुष एवं नारी को ज्ञात थी । आजकल जितने प्रकार की बहुमूल्य मणियां पाई जाती हैं, कालिदास[८] तथा भवभूति के समय भी समुपलब्ध थी, जिनको नारियां आभूषणों में यथेष्ट प्रयोग करती थीं । वस्तुतः स्वर्ण के साथ अनुकूल मणि का संयोग किसी आभूषण में परम विशिष्टता उत्पन्न कर देता था । [६]

भवभूति ने भी अपने नारी पात्रों के रत्नालंकारों [१०] में एवं मणिजटित [११] नूपुर आदि का उल्लेख किया है ।

शिरोभूषण - कालिदास तथा भवभूति के किसी भी नारी पात्र के शिरोभूषण का यद्यपि उल्लेख संयोगवश इनकी कृतियों में नहीं प्राप्त होता है तथापि तत्कालीननारियों में सिर पर तिलक अथवा चूडामणि को सौभाग्यचिह्न स्वरूप धारण करने का प्रचलन अवश्य रहा होगा । एक स्थल पर भवभूति ने मालती के सभी अंगों के लिए अलंकारों के संयोग का "मालती-माधव"[१२] में उल्लेख किया है । अतः नारियों का उत्तमांग (सिर या मस्तक) अंलकारों से शून्य होगा, यह सम्भव प्रतीत नहीं होता है चाहे वे वकुल या जूही मालती की माला को केशपाश में भले धारण करती हो । (मा. मा. अंक ६ एषः सित कुसुमापीड इति) ।

करर्णाभूषण - प्राचीनकाल से स्त्री पुरुषों का बाल्यावस्था में कर्ण भेद संस्कार होने के कारण कानों में छेद होता था तथा उसमें विविध आकार के आभूषण स्त्री पुरुष धारण करते थे। कालिदास

---

१. पू. मे. ५०, उ. मे. १७, रघु. १३/५४, १६/६६
२. रघु. १८/३२ तस्य प्रभानिर्जित पुष्परागं ....पुष्प इव द्वितीयै ।
३. रघु. १७/२३ तेऽस्य मुक्तागुणोन्नद्धं मौलिमन्तर्गतस्रजम् ।
   प्रत्यूपुः पद्मरागेण प्रभामण्डलशोभिना ।।
४. कुमार. १/४४ पुष्पं प्रवालोपहितं यदि स्यन्मुक्ताफलं वा स्फुट विद्रुम स्थम् ।
   पू. मे. ३४ हारांस्तारांस्तरलगुटिकान् कोटिशः शंखशुक्ती ....
५. पू. मे. ३४ उ. मे. १६ तन्मध्ये च स्फटिकफलका ....
६. उ. मे. ६, कुमार. ८/६७, ऋतु. ३/२१
७. कुमार. ८/७५, अभि. २/७
८. रघु. १८/२१, उ. मे. ५
६. माल. ५/१८ जातरूपेण कल्याणि मणिसंयोगमर्हति ।
१०. मा. मा. ६/५ के पूर्व, पृ. २६८, ६/६,
११. मा. मा. ७/३ मूकमणिनूपुरमेहि यामः ।
१२. मा. मा. अंक ६ "इमे च सर्वांगिका आभरण संयोगाः, इमे च मौक्तिकहाराः एतच्चन्दनम् एषसित कुसुमापीड इति । पृ. २६७.
   ऋतु. २/५५ शिरसिबकुलमालां ....।

ने नारी पात्रों के कर्णालंकारों में [१] कर्णपूर, कुण्डल [२] कनक कमल, [३] अवतंस [४] का उल्लेख अपनी कृतियों में किया है । इन विविध कर्णाभरणों में स्वर्णादि धातुओं की अपेक्षा सामयिक ऋतु पुष्पों (कमल, कदम्ब, शिरीष आदि) का प्रयोग प्रायः नारियाँ किया करती थीं । भवभूति ने यद्यपि अपने किसी नारी पात्र के कर्णाभरणका संयोगवश उल्लेख नहीं किया है तथापि नारियां इनका उपयोग अवश्य करती होंगी क्योंकि मालती को सजाने के लिए आभूषणों की पेटिकायुक्त प्रतिहारी उससे ''इमे च सर्वांगिका आभरण संयोगाः'' [५] सभी अंगों से सम्बन्धित आभूषणों के सम्बन्ध में कहती हैं, जिसमें कर्णाभूषण भी अवश्य रहे होंगे ।

कण्ठाभूषण - स्त्री तथा पुरुष दोनों अनेक प्रकार के कण्ठाभरणों को धारण करते थे । कालिदास तथा भवभूति ने विविध प्रकार के कण्ठाभूषणों से सुसज्जित नारी पात्रों को अपनी कृतियों में चित्रित किया है, जिनमें मुक्ताहार (एकावली या मुक्तावली), हार, [६] निष्क, आदि उल्लेखनीय हैं। सामान्यतःकण्ठाभरणों में मुक्ताहार [७] ही अधिक प्रयुक्त होते थे चाहे एकावली हो या हार यष्टि या मुक्तावली । हार से तात्पर्य मोतियों का हार ही समझा जाता था । यथा - कुश की रानियों के हार जल क्रीडा के समय टूट जाते हैं तथा मोतियों के समान जलबिन्दुओं को देख कर उन्हें ऐसा लगता है कि वे टूटे नहीं हैं।

इसी प्रकार यक्षिणी के अश्रुबिन्दु पर्यंक पर टपकते हुए टूटे हार के मोतियों जैसे प्रतीत होते हैं (तत्पर्यक प्रगलितनवैश्छिन्नहारै रिवास्रैः । उ. मे. ३०)

---

१. रघु. ७/२७ इन्दुमती का मुर्झाया बीजांकुर का कर्णपूर तदंजनक्लेद प्रम्लानबीजांकुर कर्णपूरम्। वधूमुखं पाटलगण्डलेख ।
कुमार ८/६२ पार्वती का यवांकुर का कर्णपूर - शक्यमोषधिपतेर्नवोदयाः कर्णपूररचना कृते तव । अप्रगल्भयवसू चिकोमलाः ....
ऋतु. २/२५ बधुओं के खिले कदम्ब पुष्प का कर्णपूर - किचनवकदम्बैः कर्णपूरं वधूनां, रचयितजलदौघः कान्तवत् काल एषः ।
२. ऋतु. २/२० स्त्रियश्च कांचीमणिकुण्डलोज्ज्वला हरन्ति चेतो युगपत् प्रवासिनाम् ।
''३/१६ कर्णेषु च प्रवरकांचन कुण्डलेषु नीलोत्पलानि विविधानि निवेष्यति ।
३. उ. मे. ६, गत्युत्कम्पादलकपतितैः . . . . . पत्रच्छेदैः कनककमलैर्कर्णविभ्रंशिभिश्च ।
४. ऋतु. २/१८ कृतावतंसैः कुसमैः सुगन्धिभिः ।, अभि. १/४ अवतंसयन्ति दयमानाः प्रमदाः शिरीषकुसुमानि ।
रघु. १ ३/४६, ६१, १६/६१, कुमार. ४/८, ६/६१, ७/३८.
५. मा. मा. अंक ६, प्रतिहारी - पृ. २६७.
६. रघु. १६/६२ आसां जलास्फालनतत्पराणां मुक्ताफलस्पर्धिषु सीकरेषु ।
पयोधरोत्सर्पिसु शीर्यमाणः संलक्ष्येच्छिदुरोऽपि हारः ।
७. रघु. १३/४८, विक्रमो. ५/१५ (उर्वशी की मुक्तावली एकावली)

कण्ठाभरणों में मुक्तावली या एकावली (उर्वशी की वैजयन्तिका[१]), हारयष्टि, [२] स्तनलम्बिहार [३] सामान्यतः स्त्रियों के स्तनमण्डल पर पड़े उनसे टकराते रहते थे । मुक्ताहार के मध्य में कभी कभी रत्न या मणियां पिरो दी जाती [४] थीं । इसी प्रकार नारियां निष्क [५] को भी धारण करती थीं जो सोने की माला से भिन्न नहीं प्रतीत होती हैं ।

भवभूति ने पुष्पों की मालाओं या हारों को बधुओं द्वारा धारण करने का उल्लेख किया है । [६]

कालिदास ने नारी पात्रों के कण्ठाभूषण में एक से अनेक लडियों के रत्न स्वर्ण या मणि मिश्रित मुक्ताहारों का जबकि भवभूति ने मालती जैसी नायिका के मौक्तिक [७] हार के अतिरिक्त कपालकुण्डला के कपालों से बनी कण्ठमाला का भी उल्लेख किया है ।

इससे प्रतीत होता है भवभूति के नारी पात्र मणि स्वर्ण या मोतियों से बनी कण्ठमाला [८] को भी अवश्य धारण करते होंगे ।

कराभूषण - कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र विविध प्रकार के करालंकारों को धारण करते थे जिनमें केयूर[९], अंगद[१०], वलय[११] (कंकण) अंगूठी (मुद्रिका) आदि उल्लेखनीय हैं । भवभूति ने वलय कंगन के स्थान पर कंकण (मालती एवं सीता द्वारा धारण किए हुए) आभूषण का प्रयोग वैवाहिक मंगलमय हस्तसूत्र (Nuptial Thread) के अर्थ में मालती माधव तथा उत्तर रामचरित में किया है ।

---

१. विक्रमो. १/७ के बाद उर्वशी - "अहो लताविटपे एषैकावली वैजयन्तिका मे लग्ना ।
२. ऋतु. १/८ सहारयष्टस्तनमण्डलापर्णैः । कुमार. ८/६८ हारयष्टिरचनाम् ।
३. रघु. १६/४३ अथास्य रत्नग्रथितोतरीयमेकान्तपाण्डुस्तनलम्बिहारम् ।
४. पू. मे. ४६ त्यूयदातुं . . . . . रेकं मुक्तागुणमिव भुवः स्थूलमध्येन्द्रनीलम् ।
रघु. ६/१४, १३/४८, ५४ क्वचित्प्रभालेपिभिरिन्द्रनीलैर्मुक्तामयी यष्टिरिवानुविद्धा ।
५. कुमार. २/४६ जयाशा यत्र . . . . . . .कण्ठे निष्कमिवार्पितम् ।
६. मा. मा. ७/५ प्रसादानासुपरि . . . . . .माल्यामोदीमुरियचितस्फीतकर्पूरवासो वातो यूनामभिमतबधूसं निधानं व्यनक्ति ।
७. मा. मा. अंक ६ प्रतिहारी - इमे च मौक्तिकहाराः . . . . . . .पृ. २६७.
८. मा. मा. ५/३ उदवृतस्खलितकपालकण्ठमाला ।
९. रघु. १६/५६ सा तीरसोपान यथावतारादन्योन्य केयूरविघट्टिनीभिः
कुमार. ७/६९ केयूरचूर्णीकृत लाजमुष्टिं महिमालयस्यालयमाससाद ।
१०. रघु. १६/६० गाढांगदैबाहंनिरप्सु बालाः क्लेशोत्तरं रागवशात् प्लवन्ते ।
११. अभि. ३/११, ६/६, कुमार. २/६४ रतिवलयपदांके चापमासज्य कण्ठे ।
पू. मे. ६४, रघु. १३/४३, १६/७३, १९/२२.
ऋतु ४३३ न बाहुयुग्मेषु विलासिनीनां प्रयान्ति संगं वलयांगदानि ।
"६/७ भुजेषु संगं वलयांगदानि"
मा. मा. ६/१४ आबद्धकंकणकरप्रणयप्रसादं, ६/६
उत्तर. १/१८ अयमुद्गृहीतकमनीयकंकणस्तव मूर्तिमनिव महोत्सवः करः ।

कालिदास ने अंगूठियों के रत्नजटित, नामांकित [१] (राजमुद्रिका), चित्रांकित (नाग मुद्रांकित[२]) होने का उल्लेख अपनी कृतियों में किया है, जबकि भवभूति ने किसी भी अपने नारी पात्र की इस प्रकार की वैविध्यमयी मुद्रिकाओं का उल्लेख अपनी कृतियों में नहीं किया है ।

कटि के आभूषण - सोने, चांदी, रत्न, मुक्ता आदि से निर्मित कंमर के अलंकार [३] मे मेखला,[४] २रशना, [५] कांची जैसे आभूषण उल्लेखनीय हैं, जिन्हें नारियाँ दुकूल अथवा क्षौम के अधोवस्त्रों के ऊपर कटि में धारण करती थीं । मेखला में रशना के समान बजने का गुण नहीं था क्योंकि रशना की लडियां घुंघरू या किंकणियों से युक्त रहती थीं । मेखला पतली पेटी जैसी स्वर्ण या हेम की निर्मित होती [६] थी जबकि कांची मेखला की अपेक्षा अधिक चौड़ी होती थी ।

कालिदास ने हेम मेखला, मणि मेखला, रसना कांची जैसे कटि आभूषणों का विविध रूपों में उल्लेख किया है जबकि भवभूति ने कपाल कुण्डला की उस मेखला का संकेत मात्र किया है जिसमें लगी किंकिणियां उसके आकाश में उड़ने के वेग से परस्पर संघर्षण से शब्दायमान हो रहीं थीं । इसी प्रकार मालती एवं उसकी सखियों की मेखला की किंकिणियां का शब्द माधव अपने मित्र मकरन्द से वर्णित करता है । [७]

कालिदास के कतिपय नारी पात्रों में (रानियां या प्रेयसियाँ) पतली मेखला से अपने प्रियतम

---

१. अभि. अंक ६/११, पृ. ६८, अंक ५, पृ, ८३, अंक ४ प्रियंवदा की उक्ति, पृ. माल. अंक। (विषकम्भक) कौमुदिका द्वारा नागमुद्रांकित अंगूठी ।

२. माल. अंक । कौमुदिका द्वारा नागमुद्रांकित मुद्रिका, अभि. अंक १, ६, (दुष्यन्त की नामांकित) रघु. ६/१८.
नितिम्बदेशाश्च सहेममेख्लाः . . १

३. कुंमार. /६/३८, ८/२६, ६७, ८६, ७/६१ रघु. १०/८, १५/१, १६/१७, २५/४०, ऋतु १/४, ६.

४. ऋतु. ६/४ वापीजलानां मणिमेखलानां . . . . . वसन्तः ।
कुमार. १/३८ तन्मेखलामध्यमणैरिवार्चिः ।
रघु. १६/४५ ग्रीष्मवेषाविधिभिः सिषेविरे श्रोणिलम्बिमणिमेखलैः प्रियाः ।

५. ऋतु. ६/२६ आलम्बिहेमरसनाः स्तनसक्तहाराः ।
रघु. १६/४१ व्यक्तहेमरसनैस्तमेकतः ।
रशना - ऋतु ३/३, २०, ६/२६, माल. अंक ३, पृ. ३१२, विक्रमो. ४/२८ उ. मे. ३, रघु. ७/१०, ८/५८, १५/८३, १६/३५, १६/४१.

६. माल. ३१य२१ हेमकांचीगुणेन ऋतु २/२०, ३/२६, ४ ४, ६७ (शब्दायमान स्वर्णिमक्रांची = ऋतु ३/ २६)

७. मा. मा. ५/३, संघट्टक्वणितकरालकिंकणीकः . . . . .गगनतलप्रयाणवेगः
मा. मा. १/२६ के बाद माधव पृ. ५२.

राजा को बांध देती [१] थीं अथवा इरावती जैसी मुंहलगी एवं सिर चढ़ी रानी अग्निमित्र को रशना से पीटने का प्रयास करती चित्रित है। [२] इस प्रकार इन कटि आभूषणों का सदुपयोग करता भवभूति का कोई भी नारी पात्र दृष्टिगत नहीं होता है ।

पादाभूषण - नारियां नूपुरों को पैरों में धारण करती थीं, जो स्वर्ण एवं मणि जटित निर्मित होते थे । नूपुर का मात्र बिछुए के अर्थ में प्रयोग न होकर पायल के अर्थ में भी प्रयोग होता था जिसका प्रमाण यह है कि मालविका [३] जैसी कुमारी कन्याएं इसे धारण कर सकती थीं । बिछुआ इतना छोटा आकार में होता है कि उसमें मणियों का जड़ा जाना कम संभव प्रतीत होता है । कालिदास ने नूपुरों का अनेक रूपों .. सिञ्जित नूपुर[४] मणि नूपुर[५], कलनूपुर [६] आदि का उल्लेख किया है ।

कालिदास [७] के समान भवभूति ने भी बुद्धरक्षिता के शब्दों में मदयन्तिका के मणिजटित नूपुरों को निःशब्द रूप में वर्णित किया है[८]। इसी प्रकार माधव अपने मित्र मकरन्द से मालती एवं उसकी सखियों के सुन्दर मंजीर (पाजेब या नूपुरों) के शब्दायमान होने का वर्णन प्रकरण के प्रथम अंक में करता है ।

पुष्पाभरण - ऋतु अनुसार नारी पात्र रत्न, स्वर्ण, मणिमय आभूषणों के स्थान पर शिर, केश कंठ, कर्ण, कटि, कर आदि अंगों में रंगबिरंगे पुष्पों के आभरण [६] धारण करते हुए सुसज्जित रूप में चित्रित हैं । इन पुष्पों में कुरबक, नवकदम्ब, रक्त कदम्ब, केशर, केतकी, मधूक, बकुल, मालती, जूही, अशोक, नवमल्लिका आदि केशाभरण रूप में ऋतु अनुसार नारियों द्वारा प्रयुक्त हुए हैं । [१०]

---

१. कुमार. ४/८ स्मरसि स्मर मेखलागुणैरुत गोत्रस्खलितेषु बन्धनम् ।
रघु. १६/१७मेखलाभिरसकृच्च बन्धनं वंचयन् प्रणयिनीरवाप सः ।

२. माल. अंक ३, पृ. ३११ .

३. माल. ३/१७ (मुखरनूपराराविणा) अंक ३ वकुलावलिका -तस्मादेकं ते चरणमुपनय सनूपुरं च करोमि । पृ. २८८.

४. विक्रमो. ३/१५ गूढानुपुरंशब्दमात्रमपि ४/३०, कुमार. १/३४ सा राजहंसैरिव नूपुर सिंजितानि ।

५. ऋतु ३/२७ स्त्रीणां . . . . . काम्यं च हंसवचनं मणिनूपुरेषु ।

६. रघु. १६/१२ निशा सुभास्वत्कलनूपुराणां यः संचरोऽभूदभिसारिकाणाम् ।
ऋतु ३/२० हारैः सचन्दनरसैः . . . . . . पादाम्बुजानि कलनूपुरशेखरैश्च नार्यः प्रहृष्टमनसोऽद्य विभूषयन्ति ।

७. रघु. १३/३३ सैषा स्थली यत्र विचन्वता त्वां भ्रष्टं मया नूपुरमेकमुर्व्यां ।
अदृश्यत त्वच्चरणारविन्दविश्लेषदुःखादिव बिमौनम । विक्रमो. ३/१५ गूढ़ नपुरशब्द मात्रमपि मे कान्तं श्रुतो पातयेत् ।

८. मा. मा. ७/३ सूत्क्षिप्तमूकमणिनूपुरमोहियामः । १/२६ के बाद पृ. ५२

६. उ. मे. २, ऋतु २/२१, २२, २५, ३/१६, ५/८, ६/३, ६/३३,
विक्रमो. ४/३३ रक्तकंदम्ब . . . कृतशिखाभरणम् । ४/३४ रक्ताशोक

१०. उ. मे २, रघु. १६/६१, १३/४६ अभि. १/२८, ऋतु. २/१८, २५, ३/१६
ऋतु. ६/६, अभि ६ अंक पृ. ११७, सप्तम. अंक ३, पृ. ३०५, ३०६, ऋतुओ। २/२१

इसी प्रकार शिरीष कमल, कर्णिकार, यवांकुर आदि अवतंस या [१] कर्णफूल रूप में मृणाल नाल वृक्ष में था करवलय रूप में केसर के पुष्प कांची [२] रूप में कटि पर प्रयुक्त होते थे । कालिदासकी कृतियों में शकुन्तला, मालविका, उर्वशी जैसी नायिकाएं एवं अनेक नारी पात्र इन नैसर्गिक पुष्पाभरणों से अभिमण्डित दृष्टिगत होते हैं । भवभूति कृत मालतीमाधव में नायिका के मालती सदृश नारी पात्र भी वैवाहिक शुभ अवसरों पर भी अनेक रत्नाभरणों के होते हुए भी पुष्पाभूषणों से समन्वित संलक्षित होते हैं । [३] कालिदास की पुष्पाभरण प्रिया निसर्ग कन्या शकुन्तला के समान भवभूति की वनवासिनी, पतिपरित्यक्तता सीता भी पुष्पाभरणों से आभूषित प्रतीत होती है ।

आभूषण मंजूषा - नारियां अपने समस्त आभरणों को सुरक्षित रखने के लिए एक पैटिका या छोटे सन्दूक का भी उपयोग करती थीं, जिसे आभरण मंजूषा या समुदगक कहा जाता था । वनवासिनी मुनि कन्याएं भी अपने पुष्पाभरणों को रखने के लिए जंगली वृक्ष के पत्तों से पेटिका या समुदगक बना लेती थीं । अनसूया ने शकुन्तला को बिदा वेला के लिए बकुल की माला ''नारिकेल समुदगक'' में रख छोड़ी थी ।

इसी प्रकार ''मालविकाग्निमित्रम्'' [४] में आभरण मंजूषा का उल्लेख हुआ है । भवभूति ने भी अपने नारी पात्र (मालती) से सम्बन्धित ''आभूषण पटलक'' [५] (अलंकारों की पैटिका) को उल्लिखित किया है जिसे प्रतिहारी हाथ में लेकर मालती को उसमें रखे आभूषणों से अलंकृत करने आई थी ।

इन नारी पात्रों के विविध मूल्यवान् कलात्मक आभूषणों के प्रयोग से इनकी सौन्दर्यात्मक परिष्कृत [६] अनुभूति के साथ ही तत्कालीन समृद्ध एवं समुन्नत समाज का परिचय प्राप्त होता है ।

(३) अन्य प्रसाधन - विविध वस्त्रालंकारों के अतिरिक्त विशिष्ट साज-सज्जा विधि तथा श्रृंगार प्रसाधन के प्रिय उपकरण भी उल्लेखनीय हैं जिन्हें कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र प्रयुक्त करते हुए चित्रित हैं ।

केश रचना - नारियों के लम्बे लम्बे बाल होते थे जिनकी सज्जा [७] विविध प्रार की वर्णित है ।

१. अभि. ६/१८, ३/७.

२. कुमार. ३/५५ केसरदामकांची .

३. मा. मा. ६/६ इयमवयवै कलितकुसुमा बालेवार्न्तलता परिशोषिणी ।
प्रतिहारी एतच्चन्दनम् एष सितकुसुमापीड़ इति । पृ. २६७.

४. माल. वि. अंक ४, पृ. ३२५, अंक ५, पृ. ३५५.

५. मा. मा. अंक ६ प्रतिहारी (भूषणपटलकहस्ता) पृ. २६७

६. ऋतु. २/१८ शिरोरुहैः श्रोणितटावलम्बिभिः कृतावतसैः कुसुमैः सुगन्धिभिः ।

७. रघु. ६/८१ अराल केश, कुमार. ८/४५ रक्तपीतकपिशाः पयोमुत्रां कोटयः कुटिलकेशि भान्त्यमूः ।
माल. ३/२२ कुटिलकेशि (इरावती)
ऋतु. ४/१६ निर्माल्यदाम परिमुक्तमनोज्ञगन्धं, मूर्ध्नोऽपनीय घननील शिरोरुहान्ताः ।
पीनोन्नतस्तनभरानतगात्रयष्टयः, कुर्वन्ति केशरचना मदरास्तरण्यः ११, उ. मे. १४ कठिन विषमामेकवैणी करेण । उ. मे. ३०, उ. मे. ४१
रघु. १४/१२ वेणी, पू. मे. १८, ३१, अभि. ७/२१.
विक्रमो. ३/१२ पवित्र्रदूर्वाकुरलांछितालका ।

नारी पात्रों का वैविध्यपूर्ण केश - श्रृंगार इन दोनों महाकवि की कृतियों में उल्लिखित है । सामान्यतः स्त्रियां केशों को तैल से चिकना कर विविध प्रकार की वेणियों तथा ऋतु अनुसार सुन्दर दूर्वा या यवांकुर अथवा पुष्पों से अलंकृत करती थीं । किन्तु पति से परित्यक्ता होकर या उसके विरहावस्था में यद्यपि तेल केशों में नहीं डालती [१] थीं, तथापि एकवेणी अवश्य धारण करती थी । इससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि सामान्य स्थिति में सधवा स्त्रियां एक से अधिक केशों की सुन्दर वेणियां अथवा केशपाश (जूडा) बनाती रही होंगी ।

इस दृष्टि से एकवेणी धारिणी विरहिणी शकुन्तला [२] जो संयोगावस्था में कम से कम दो वेणियां धारण करती होगी तथा उत्तररामचरित की बिखरे केशों वाली सीता [३] उल्लेखनीय हैं जो संयोगवास्था में सुन्दर केशपाश बनाती होगी । केश रचना के अन्तर्गत नारी पात्रों का वेणी बन्धन[४], अलकं संयमन [५] केश पाश [६] आदि उल्लेखनीय हैं । बिखरे या बिना बंधे खुले केश पाश (कबरी)[७] का चित्रण कालिदास तथा भवभूति दोनों ने अपनी कृतियों में किया है । "अलकसंयमन" से प्रतीत होता है कि केशों को स्वच्छ, सुगन्धित एवं सुचिक्कण कर कंघी आदि से मांग निकालते हुए केशों को संयमित और सज्ज़ित किया जाता होगा ।

केशों को सुगन्धित करने के लिए काले अगरु, [८] धूप, [९] कस्तूरी चूर्ण आदि का प्रयोग किया जाता था तथा तैलादि इन विविध उपकरणों से केश रचना नारियां सम्पन्न करती थीं ।

श्रृंगार प्रसाधन - नारी पात्रों के नाना श्रृंगार प्रसाधनों (उपकरणों) का कालिदास तथा भवभूति ने अपनी कृतियों में उल्लेख किया है जिनसे वे नख शिख पने शरीर के अंगों को सुसज़ित

---

१. उ. मे. २, ऋतु २/२१, २२, २५, ३/१९, ५/८, ६/३, ३३
मा. मा. ६ अंक "एवं सित कुसुमापीड इति" पृ. २६७
मा. मा. ९/५१ नैसर्गिकः सुरभिणः कुसुमस्य सिद्धा मूर्धिनस्थितिर्न मुसलैर्बतकुट्टनानि।
२. अभि. ७/२१ वसने परिधूसरे वसाना नियमक्षाममुखी धृतेकवेणिः ।
अतिनिष्करुणस्य शुद्धशीला मम दीर्घ विरहव्रतं विभर्ति ।
३. उत्तर. ३/४ परिपाण्डुदुर्बलकपोल सुन्दरं दघती विलोलकषरीकमाननम् ।
४. रघु. १०/४७.
५. विक्रमो. ३/६ अलकसंयमनादिव ।
६. ऋतु. ४/१५, ५/१२, उ. मे. २, कुमार. ७/५७,
७. अभि. १/२८ बंधे स्रंसिन् चैकहस्तयमिता पर्याकुलामूर्धजाः ।
८. रघु. ६/६७ रतिविगलितबन्ध केशपाश प्रियायाः ।
उत्तर. ३/४ दधती विलोकषरीकमानंनम् ।
पू.मे. ३६, ऋतु ४/५, ५/१२, कु ७/१४, रघु. १ ६/५०, ४/५४, ४/१६
९. ऋतु. ४/१६.

करती थी ।[1] मुख के सौन्दर्य को निखारने के लिए नारियां गोरोचन,[2] अंगराग, चन्दन[3] तथा तिलक से मुख पर पत्र रचना करती थीं । जिसका संकेत कालिदास ने अपनी कृतियों में किया है। पार्वती के मुख पर पत्र रचना विवाह के शुभ अवसर पर गोरोचन से की गई थी ।

भवभूति ने मालती की वैवाहिक श्रृंगार[4] प्रसाधन सामग्री के अन्तर्गत मुख सौन्दर्य हेतु कुंकुम एवं चन्दन का उल्लेख किया है, जिससे प्रतीत होता है मालती के मुख पर कुंकुम के अतिरिक्त चन्दन से पत्र रचना सजाने के लिए की गई होगी । इसी प्रकार सीता के विवाहमण्डन की शोभा का स्मरण कौशल्या करती है, जिसमें मुख की पत्र रचना से इसकी परिपूर्णता प्रतीत होती है । नारी पात्रों की पसीनें से पत्र रचना बिगड़ने का भी भवभूति ने उल्लेख किया है ।

मुख सौन्दर्य के लिए नारियां माथे पर तिलक हरताल एवं मनः शिला का बनाया करती थीं। कालिदास के कुंमारसंभव[5] रघुवंश[6] एवं मालविकाग्निमित्रम्[7] में नारी पात्रों के तिलक का उल्लेख किया है । प्रतीत होता है भवभूति के नारी[8] पात्र भी प्रायः सौभाग्यसूचक चिह्न के रूप में मांगलिक विवाहादि अवसरों पर माथे पर तिलक अवश्य लगाते होंगे । वैसे कवि ने तिलक का भी उल्लेख (मा. मा. ६/२१ में) किया है ।

---

१. कुमार. ७/१५, माल. ३/५, रक्ताशोक्तरुचा . . . मुखप्रसाधनविधौश्रीमाधवी योषिताम्।
कु. ३/३०, ३३, ३८, रघु. ६/७२, १६/६७, १७/३४.
ऋतु ४/५, ६/८ सपत्रलेखेषु विलासिसानां वक्त्रेषु हेमाम्बुरुहोपमेषु ।

२. कुमार. ७/१५ विन्यस्तशुक्लागुरु चक्ररंगं गोरोचनापत्रविभक्तमस्याः ।

३. मा. मा. ६ इमे च सर्वांगिका आभरणसंयोगाः, इमे च मोक्तिकहाराः एतच्चन्दनं एष सित कुसुमापीड इति । पृ. २६७
मा. मा. १/३८ धर्माम्भी। । वैदग्ध्यं जहति कपोलकुसुमानि ।

४. उत्तर. ४/१६ के पूर्व कौशल्या - स्मरामि ते विवाहलक्ष्मीपरिग्रहैकमण्डनं मा. मा. १/३८ धर्माम्भोविसृविः । प्रस्फुरच्छुद्धविहसितं मुग्धमुखपुण्डरीकंम् । पृ. ४१४

५. कुमार. ३/३० . . . मुखे मधुश्री तिलकं प्रकाश्य । उत्तर. ६/३७
कुमार. ७/२३, ७/३३ सान्निध्यपक्षे हरितालमय्यस्तिदैव जातं तिलकक्रियायाः ।
कु. ७/२३ अथांगलिभ्या हरितरालमार्द्र मांगल्यमादाय मनः शिलां च ।

६. रघु. १८/४४ न्यस्तं ललाटे तिलकं दधानः ।

७. माल. ३/५ . .आक्रान्ता तिलकक्रिया च तिलकैर्लग्नद्विफांयंजनैः ।

८. उत्तर. ४/१६ के पूर्व कौशल्या की उक्ति (सीता की विवाहमण्डन शोभा के सम्बन्ध में स्मरण)
मा. मा. अंक ६. प्रतिहारी की उक्ति पृ. २६७.

नारी पात्रों के मुख सौन्दर्य के अन्तर्गत आंखों में काले अंजन [१] का शलाका से प्रयोग [२] होता था, किन्तु विरह या तपस्या में नारी के लिए नेत्रों में अंजन लगाना वर्जित समझा जाता [३] था। भवभूति ने [४] आंखों में अंजन लगाने वाली शलाका के लिए वर्तिः का प्रयोग किया है ।

मुख ओष्ठों का श्रृंगार प्रसाधन में नारी पात्रों का ओष्ट राग भी उल्लेखनीय है । प्रतीत होता है नारियां ओष्ठों की नैसर्गिक लालिमा के होते हुए भी इन्हें लाल रंग से रंगती रहती थीं । [५] शकुन्तला, पार्वती, मालती आदि अनेक नारी पात्रों के ओष्ठ राग का उल्लेख हमें इन दोनों कवियों की कृतियों में प्राप्तहोता है ।

प्रतीत होता है, पान चबाकर भी नारियां अपने अधरोष्ठ को अनुरंजित करती रहती थीं । भवभूति ने मुख में पान [६] से भरे कपोलों वाली वेश्याओं का उल्लेख किया है, जिनके लीलापूर्वक पान चबाने से अधर और ओष्ठ लाल हो गये थे ।

आलक्त अथवा अलता जिसे महावर या लाक्षारस [७] कहा गया है, नारियां अपने चरणों को अत्यन्त कलात्मक रूप में अलंकृत करती थीं । नारी पात्रों का चरणराग या रागरेखा विन्यास श्रृंगार प्रसाधन का महत्वपूर्ण अंग था, जिसका कालिदास तथा भवभूति [८] ने अपनी कृतियों में सुन्दर निरूपण किया है । वकुलावलिका ने मालविका के चरणों को आलक् तक से अलंकृत किया था ।

---

१. रघु. ७/२७, १६/५६, १६/१० कुमार. १/४७, ५/५१, ७/२०, ५६, ८२
उ. मे. ३७, ऋतु १/११, २/२.

२. कुमार. १/४७, रघु. ७/८, कुमार. ७/५६.

३. कुमार. ५/५१ उ. मे. ३७ .

४. उ. च. १/३८ इयमृतवर्तिनियनयोः
उ. च. ३/२३ धवलबहलमुग्धा दुग्धकुल्येव दृष्टिः ।

५. अभि. शा. ७/२३ यत् ते दृष्टमसंस्कारपाटलोष्टपुटं मुखम् ।
कुमार. ३/३०, ५/११, ३४, ७/१८, विक्रमो. ४/१७, माल. ३/५ विम्बाधरा मकतकः।
उ. च. ४/१६ के पूर्व कौशल्यास्मराभि विवाह लक्ष्मी परिग्रहैकमण्डनं ।
मा. मा. अंक ३ लवंगिका की उक्ति पृ. १४७.

६. मा. मा. अंक ६/४ के बाद कलहंस "इमाः सविलास कवलिततताम्बूलाभिपूरितकपोल मण्डलाभोगव्यक्तिकरस्खलितमधुरमंगोलोदभीतिवृद्ध" पृ. २६०

७. माल. अंक ३/११, १२, १३, पृ. २६२-३०३ कुमार ७/१६, ४/१६, ५/६८
अभि. ४/५ (लाक्षारस) विक्रमो. ४/१६, पू. मे. ३६, रघु. १८/४१, १६/२५.

८. मा. मा. ६/६ इयमवयवैः पाण्डुक्षमैरलंकृतमण्डना, कलितकुसुमा बालेवन्तर्लता परिरोषिणी।

नारी पात्रों के श्रृंगार प्रसाधन सम्बन्धी अन्य उपकरणों में अगरु,[१] अंगराग,[२] गोरोचन उशीर कुंकुम, केंशर, कस्तूरी, चन्दन, तेल आदि उल्लेखनीय हैं, जिनके ऋतु अनुसार लेपन से शरीर के सभी अंग शीतल या संतृप्त सुगन्धित आमाभय एवं अनुरंजित हो जाते हैं । चन्दन ८ सामान्यतः स्त्रियां शीतलता तथा सौन्दर्य लाभ हेतु हेमन्त और शिशिरऋतु को छोड़कर सभी ऋतुओं में प्रयोग करती थीं ।

अंगराग[२] का भी चन्दन के समान स्त्रियां शारीरिक सौन्दर्य एवं कान्ति लाभ हेतु प्रयोग करती कालिदास तथा भवभूति दोनों के द्वारा अपनी कृतियों में चित्रित हुई हैं । कभी केशर या कस्तूरी में बसा कर सुगन्धित कर लिया जाता था । कालिदास तथा भवभूति ने बाल्मीकि रामायण (किष्किन्धा २८/१२ स्फुरन्ती रावणस्यांके वैदेहीव तपस्विनी) के आधार पर सीता के दिव्य अंगराग[३] का चमत्कार पूर्ण वर्णन किया है ।[४] जिससे श्रृंगार प्रसाधन में इसकी महत्ता प्रकट होती है ।

नारी पात्रों द्वारा उशीर,[५] कर्पूर, कस्तूरी[६], कुंकुम[७], धूप, अगरु आदि उपकरमों का भी श्रृंगार प्रसाधन में शरीर को सुगन्धित, शीतल या उष्ण बनाने के लिए प्रचुर प्रयोग किया जाता था ।

आजकल के पाउडर के समान सुगन्धित द्रव्यों में अनेक प्रकार के चूर्णों का भी शरीर के अंगों पर नारियां प्रयोग [८] करती थीं, जिनमें लोध्र प्रसवरज [९], अम्बुजरेणु,[१०] केसरचूर्ण [११],

---

१ ऋतु. १/२, ४, ६, ८, ३/२०, ६/३२, कुमार. ५/८, ५५, ८/८३, रघु. १७/२४ मा. मा. अंक ६ प्रतिहारी - एतच्चन्दनम्, पृ. २६७.

२. रघु. १६/५८, १७/२४, १६/३७ कुमार. ७/३२, ७/६, ऋतु. ४/५ मा. मा. अंक ६ लवंगिका - सखि, अयमंगरागः । इमाः कुसुममालाः पृ. २६६

३. रघु. १४/१४ स्पुरत्प्रभामण्डलमानसूर्यं सा विभ्रती शाश्वतमंगरागम् ।

४. उत्तर. ३/४३ पौलस्त्यस्य जटायुषा . . . सीतां ज्वलन्तीं वहन् कुंकुममय अंगरागविहीनसीता का सौन्दर्य उत्तर. ६/३७

५. अभि. अंक ३/७ पृ. ४६

६. मा. मा. ७/५ ऋतु ६/१४ रघु. ४५४.

७. ऋतु. ५/६ कुंकुमरागपिंजरैः ।

८. ऋतु. ४/५, ५/५, ६/१५, पू. मे. ३६

६. उ. मे. २, कुमार ७/६, १७ (मुख को गौर वर्ण का करने के लिए प्रयोग) कुमार. ७/१४

१०. रघु. १३/६० (मुख को उज्ञवल बनाने हेतु)

११. रघु. १६/२५ (केशों को सुगन्धित बनाने हेतु)

केतक[1] रज आदि उल्लेखनीय हैं । कालिदास की अपेक्षा भवभूति ने नारीपात्रों के इन सुगन्धित चूर्णों का उल्लेख स्वल्प ही किया है ।

श्रृंगार प्रसाधन के उपकरणों में शलाका (वर्तिः) दन्तपत्रिका (कंघी) के अतिरिक्त दर्पण[2] का भी अत्यन्त महत्व है । अपने मुख-श्रृंगार के सौन्दर्य को अवलोकन करने के लिए नारियां अपरिहार्य रूप से दर्पण का प्रयोग करती थीं, जिसमें उनका प्रसादित मुख प्रतिबिम्बित हो उठता था ।

समीक्षा - उपर्युक्त विवेचन के आधार पर ज्ञात होता है, तत्कालीन समाज में सौन्दर्य प्रतिष्ठा की सहज प्रवृत्ति पुरुषों के साथ ही नारियों में विशेष रूप से व्याप्त थी । कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र अपने को विभूषित करने के लिए प्रसाधन कला में परम प्रवीण परिलक्षित होते हैं । रंग बिरंगे सूती, रेशमी तथा ऊनी उत्कृष्ट कोटि के कोमल हल्के तथा चिकने वस्त्रों के अतिरिक्त अनेक रत्न, मणि, मोती, स्वर्ण, पुष्प आदि के बने आभूषणों और विविध प्रकार के प्रसाधनों (कुंकुम, केशर, कस्तूरी, कुसुम, चन्दन, गोरोचन, अगरू, धूप, अंजन, आलक्तक आदि) से नारी पात्रों की साज-सज्जा दर्शनीय एवं मनोमोहक होती थी ।

कालिदास तथा भवभूति के सभी नारी पात्रों में मात्र शकुन्तला ही एक निसर्ग कन्या के रूप में प्रस्तुत हुई है, जिसका नाना प्रकार के नैसर्गिक उपकरणों पुष्पादि से उसकी प्रिय दो सखियां मंगलमय मण्डन[3] कार्य सम्पन्न करती हैं, जबकि मालविका, इरावती, उर्वशी, पार्वती, मालती आदि नायिकाओं का रत्नाभरणमयं श्रृंगार प्रसाधन सेविकाएं करती दृष्टिगत होती हैं ।[4]

कालिदास के कतिपय नारी पात्रों का श्रृंगार प्रसाधन स्वयं उनके प्रेमी नायक करते वर्णित

---

१. रघु. ४/५५ (केवड़े का पराग)

२. कुमार. ७/२२, २६, २६, ३६, ८/११.
रघु. १४/३७, १६/२८, ३० प्रेक्ष्यदर्पण तस्यमालनं . . . . रघु. १७/२२

ऋतु. ४/१४ काचिद्विभूषयति दर्पणसक्तहस्ता . . . . ।
पू. मे. ५८ कैलासस्य त्रिदर्शवनिता दर्पणस्यतिथिः स्याः ।
मा. मा. ५के अंक. पृ. १८६.

३. अभि. अंक ४ शकुन्तला - दुर्लभमिदानीं मे सखीमण्डनं भविष्यति । पृ. ४८५.

४. कुमार. ७/२० तस्यांः सुजातोत्पलपत्रकान्ते प्रसाधिकाभिर्नयने निरीक्ष्य न चक्षुषोः कान्ति विशेष बुद्धया कालांजनं मंगलंमित्युपात्तम् ।

रघु. १८/२२, माल. अंक ३, पृ. ३०३.

हैं, जबकि भवभूति का कोई भी नारी पात्र अपनी मर्यादा को समझता हुआ इस रूप में चित्रित नहीं है । दोनों महाकवियों के नारी पात्र उच्च स्तरीय सौन्दर्य की श्रृंगारिक सुरुचि से सम्पन्न पाये जाते हैं।

षष्ठ परिच्छेद

नारीपात्रों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन

षष्ठ परिच्छेद

कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों का मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर तुलनात्मक अध्ययन

हमारे धार्मिक, साहित्यिक एवं दार्शनिक ग्रन्थों में मनस्तत्व का पर्याप्त विश्लेषण पाया जाता है । इस मन को अबोध और अद्भुत गति युक्त संकल्प विकल्प से सम्पन्न, सांसारिक बन्धन - मोक्ष का कारण, [1] कर्मों में प्रवृत्ति - निवृत्तिमूलक कहा गया है । वस्तुतः मानव मन के स्वरूप एवं इसकी प्रवृत्तियों को समझना अत्यन्त कठिन कार्य है, तथापि संस्कृत साहित्य में इसके स्वरूप एवं प्रवृत्तियों पर हमें पर्याप्त प्रकाश प्राप्त होता है । इसके आलोक में यहां कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों का मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सामाजिक वाह्य क्षेत्र के संघर्षपूर्ण विविध कठोर कर्मों में निरत रहने से नारी की अपेक्षा पुरुष का मन अधिककठोर तथा आघात सहिष्णु होता है, जबकि पुरुष की अपेक्षा नारी का मन सामान्यतः अत्यन्त सुकुमार एवं संवेदनशील रहता है । मानवीय मूल अन्तः प्रवृत्तियां - काम, क्रोध, संमोह, ईर्ष्या, असूया, द्वेष, मात्सर्य, अलंकार उन्माद, स्वप्न, स्मृति, मूर्च्छा, परिकल्पना आदि पुरुषों के समान नारियों में भी विद्यमान रहती हैं, जिनका सुन्दर उद्घाटन कवि एवं नाटककार अपनी कृतियों में स्वाभाविकरूप से करते हुए यथार्थ की इसी पृष्ठभूमि पर उज्ज्वल आदर्श को प्रतिष्ठापित करते हैं। कालिदास तथा वभूति ने अपनी कृतियों में अनेक नारी पात्रों की मानसिक स्थिति का मनोविज्ञान सम्मत सुन्दर चित्रण किया है जिसकी तुलनात्मक विवेचना यहां प्रस्तुत की जाती है ।

काम - स्त्री पुरुष में काम की प्रवृत्ति स्वाभाविक रूप से मूलतः रजोगुण से सद्भूत [2] होकर विद्यमान रहती हैं जो शब्द (वाक्) रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, विषय, इन्द्रियों से मन में पनपती है तथा यथासमय अभीष्ट पात्र के प्रति प्रणय या पूर्वराग में परिवर्तित हो जाती है । कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों में मन की यह पनपी हुई काम की प्रवृत्ति उपर्युक विषयेन्द्रियों के माध्यम से इनकी कृतियों में अनेक स्थलों पर अभिव्यक्त हुई है ।

---

१. श्रीमद्भगवद्गीता, मन एवं मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः ।

२. गीता - ३/३७ काम एषः क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः ।

गीता २/६२ ध्यायतो विषयान् पुंसः, संगस्तेषूपजायते।

संगात्संजायते कामः कामात् क्रोधोऽभिजायते ।।

कालिदास की नायिकाओं एवं नारी पात्रों का पूर्वराग [1] अथवा मन का कामभाव सम्पर्क में आये हुए नायक या प्रभावी व्यक्तित्व के धनी पुरुष के मनोहारी रूप, मधुर वचनों, पौरुषपूर्ण अद्भुत कर्मों अनुकूल चेष्टाओं आदि से मन के आकृष्ट होने पर सहज ही सामान्यतः उनकी सव्याज चेष्टाओं में अभिव्यक्तिहो जाता है । यथा - दुष्यन्त के प्रभावी रूप, तेजपूर्ण व्यक्तित्व को देख कर मधुर वचनों को सुनकर शकुन्तला के मन का काम विकार या काम भाव आश्रम में परिवेश विरुद्धः भाव इस प्रकार की चेष्टाओं से प्रकट होता है, जिन्हें वह स्वयं अनुभव करती मन ही मन कहती है -

शकुन्तला - "किं नु खल्विमं प्रेक्ष्य तपोवनविरोधिनो विकारस्य गमनीयाऽस्मि संवृता ?"

(अभि. १/२२ के पश्चात्, पृ. ४२८)

दुष्यन्त उसके व्यक्त मन के भाव को इन आंगिक चेष्टाओं में समझता हुआ कहता है --

वाचं न मिश्रयति यद्यपि मद्वचोभिः,
कर्णं दादात्यवहिता मयि भाषमाणे ।
कामं न तिष्ठति मदाननं सम्मुखीना,
भूयिष्ठमन्यविषया न तु दृष्टिरस्याः । । (अभि. १/२८)

इसी प्रकार उर्वशी के मन के कामभाव को समझता हुआ नायक पुरुरवा कहता है -

अनीशया शरीरस्य स्ववशं हृदयं मयि ।
स्तनकम्पक्रियालक्ष्यैर्न्यस्तं निःश्वसितैरिव । । (विक्रमो. २/१८)

मालविका के मन की तृष्णा एवं नायक से मिलन की रागमय कामना उसके अभिनयपूर्ण गीत के माध्यम से व्यक्त हुई है ---

"दुर्लभ प्रियो मे. . . . . . . परिगणय्य सतृष्णाम् । (माल. २/४)

परिलुप्त धैर्य शंकर की सस्पृह दृष्टि जब पार्वती के विम्बाधर पर काम के सम्मोहन वाण के प्रभाव वश पड़ी तो पार्वती के मन का सोया सा कामभाव इस चेष्टा से जाग उठा --

विवृण्वती शैलसुतापि भावमंगैः स्फुरद्बालकदम्बकल्पैः ।
साचीकृता चारुतरेण तस्थौ मुखेन पर्यस्तविलोचनेनै । । (कु. ३/६८)

नायिका की व्यक्त शारीरिक अवस्था (अंगों का क्षीण होना, मुख का पीला होना आदि से भी उसकी अव्यक्त मानसी कामवृत्ति प्रकट हो जाती है । यथा - प्रियं. - सखि, शकुन्तले । अनुदिवसं खलु परिहीयसेऽगैः । केवलं लवण्यमयी छाया त्वां न मुंचति । अभि. २/८ तथा इसके पूर्व ।

"क्षाम क्षोम कपोलमाननमुरः. . . . . स्पृष्टालता माधवी । ।" (अभि. २/८)

नारी पात्र में विशेषतः नायिका के मन का कामभाव कभी कभी उसकी अन्तरंग अभिन्न सखियों के परस्पर हास परिहास से भी प्रकट हो जाती है । [1] जैसे शकुन्तला की प्रिय सखियां प्रियंवदा

---

१. शोध प्रभा, ६/३-४ अंक १९८२ द्रष्टव्य - "कालिदास के काव्य में नायिकागत पूर्वराग, डा. दादूराम शर्मा का शोध लेख पृ. १७५- १८४.

और अनसूया में प्रियंवदा उसके मन में छिपे कामभाव को परिहास पूर्वक प्रकट करती हुई कहती है-

प्रियंवदा - अनसूये ! जानासि किं नि मित्तं शकुन्तला वन ज्योत्स्नामतिमात्रं पश्यति ?

अनुसूया - नखलु विभावयामि । कथय । प्रियं. - यथावनज्योत्स्ना अनुरूपेण पादपेन संगता, अपि नाम एवमहमाप्यात्मनेऽनुरूपं वरं लभयेति ।" (अभि. १/२० के पूर्व, पृ. ४३६)

इसी प्रकार अप्सराओं में अत्यन्त अंतरंग चित्रलेखा उर्वशी की अपने उपकारी प्रिय पुरुरवा के प्रति अनुरक्त होने पर लताविटप में काम भाववश सव्याज अपनी एकावली" वैजयन्तिका" उलझाती हुई उसे छुड़ाने का अनुरोध करने पर परिहासपूर्वक कहती है --

चित्र. आम दृढं खलु लग्ना सा । अशक्यं मोचयितुम् । (विक्रमो. अंक १/१८ के पूर्व, पृ.३४८)

"मालविकाग्निमित्रम्" में मालविका से उसकी अन्तरंग सखी वकुलावलिका भी परिहासपूर्वक उसके आलक्तक रंजित सुन्दर चरण की प्रशंसा करती हुई नायिका की मनोगत कामभावना को व्यक्त करती है - वकुला. - "सखि अरुण शतपत्रमिव शोभते ते चरणम् । सर्वथा भर्तुरंगपरिवर्तनी भव ।" (माल. अंक ३/१३ के पश्चात्, पृ. २६२)

पाणिग्रहण के अवसर पर पार्वती के श्रृंगार प्रसाधन के समय महावर लगाते हुए उनकी सखी ने जो परिहास किया था, उसमें नायक के संयोग का मानसिक काम (संभोग) भाव अभिव्यक्त होता है।

कभी कभी मन के काम भाव को "अनिवर्चनीयाकामवृत्ति" [२] रूप में भी नायिका अथवा नारी पात्र द्वारा प्रकट किया जाता है । बटुक वेशधारी शंकर से पार्वती कुछ इसी प्रकार अपनी मन की कामवृत्ति को प्रकट करती है । इन्दुमती का अज के प्रति अनिर्वचनीय मन का कामभाव कुछ ऐसा ही व्यक्त किया गया है । [३]

कालिदास के समान भवभूति ने भी नायिका अथवा नारी पात्रों के मन के काम भाव को विविध रूप में प्रकट किया है -

मालती माधव के प्रभावी व्यक्तित्व को देख कर मन ही मन उस पर अनुरक्त हो जाती है [४] तथा उसकी आन्तरिक काम भाव उसके भ्रू विलासयुक्त कटाक्षों में प्रकट होता है ।

---

१. कुमार. ७/१९ पत्युः शिरश्चन्द्रकलामनेन स्पृशेति सख्या परिहासपूर्वम् ।
सा रंजयित्वा चरणौकृताशीर्माल्येन तां निर्वचनं जघान ।।

२. कुमार. ५/८२ अलं विवादेन ....ममात्र भावैकरसं मनः स्थितं न कामवृत्तिर्वचनीय मीक्षते ।।

३. रघु. ६/६९ तं प्राप्य सर्वावयवानवद्यं व्यावर्ततान्योपगमात् कुमारी ।
न हि प्रफुल्लंसहकारमेत्य वृक्षान्तरं कांक्षति षट्पदाली ।
रघु. ६/७६, ८५.

४. मा. मा. १/२६ सभ्रूविलासमथ ....मुक्तास्तदा स्मितसुधामधुरा कटाक्षाः ।
मा. मा. १/३० यान्त्या मुहुर्वलितकन्धरमाननं .... हृदये कटाक्षाः ।

मालती की शारीरिक अवस्था से[1] मन का कामभाव अभिव्यक्त ओ जाता है । इसे सम्यक् रूप से समझता हुआ नायक माधव से उसका मित्र मकरन्द मालती की कामप्रवृत्ति को मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि शारीरिक अवस्था के आधार पर व्यक्त करता है -

"इयमवयवैः पाण्डुक्षामैरलं कृतमण्डना,
कलित कुसुमा बालेवान्तर्लता परिशोषिणी ।
वहति च वरारोहा रम्यां विवाहमहोत्सव --
श्रियमुदयिनीमुद्भूतां च व्यनक्ति मनोरुजम् ।। (मा. मा. ६/६)

नायक के प्रति नायिका के काम भाव की क्रमिक परिपूर्णता कामन्दकी द्वारा भी हृदयंगम कर शुभाशसासहित इस प्रकार प्रकट हुई है --

"पुरश्चक्षू रागस्तदनु मनसोऽनन्य परता,
तनुर्ग्लानिर्यस्य त्वयिसमभवद्यत्र च तव ।
युवा सोऽयं प्रेयानिह सुवदने मुंच जड़तां,
विधातुर्वैदग्ध्यं विलसतु सकामोऽस्तु मदनः ।। (मा. मा. ६/१५)

नायिका की बलि देने वाले अधोरघण्ट के चंगुल से उपकारी नायक द्वारा छुड़ाने पर उपकृत मालती की उक्ति से प्रणय एवं कामभाव और बढ़ गया है ।

जिस प्रकार शकुन्तला की काम संतापावस्था को भांपते हुए उसकी प्रियसखी प्रियंवदा ने "अनुदिवसं खलु परिहीयसेऽगै । केवलं लावण्यमयी छाया त्वयां न मुंचति । "

कह कर नायिका का ध्यान आकृष्ट किया था, ठीक इसी प्रकार नायिका मालती की प्रिय सखी लवंगिका शारीरिक कामसंतप्तावस्था को समझती हुई कहती है --

"लवंगिका - यस्य कारणात् त्वमुत्खण्डितबंधनं कंकेलि पल्लवमिव हृदयं धारयन्ती क्लाम्यन्नवमालिकाकुसुमानि सहा कुसुमायुधेन परिहीयसे, सोऽपि ज्ञापितो भगवता मन्मथेन सन्तापस्व दुःसहत्वम् । " (मा. मा. अंक २, पृ. ६५)

नायक नायिका को एकान्त लाभ से काम से फलीभूत होने का अवसर देकर सखी लवंगिका मालती से परिहासपूर्वक इस तथ्य को व्यक्त करती है । मालती से परिहास में न केवल सखी लवंगिका अपितु मातृतुल्या परिव्राजिका कामन्दकी भी पुष्पावचय प्रसंग में उसका प्रियदर्शन विषयक मानसिक काम भाव व्यक्त करती है -

---

१. मालती - "प्रिय सखि । लवंगिके । एषेदानीं ते प्रियसख्यमाथा मरणे वर्तमाना अगर्भ निर्गम निरन्तरोपारुढ विस्रम्भं सदृशं परिष्वज्याभ्यर्थयते । यदि ते ऽहमनुवर्तनीया ततो मां हृदयेन धारयन्तीसमग्र सौभाग्यलक्ष्मीपरिग्रहैकमंगलं माधवस्य श्रीमुखारविन्दमानन्दमृसणं प्रलोकय (इतिरौदिति) पृ. २७२

. . . . . .यथा तस्य . . . . . न शिथिली करोति, तथा कुरु । एवं ते सखी मालती सकामा भवति । अंक ६, पृ. २७४.

"स्खलयति वचनं ते संश्रयत्यंगमंगं,
जनयति मुखचन्द्रोद्भासिनः स्वेदविन्दून् ।
मुकुलयति च नेत्रे सर्वथा सभ्रुखेदमस्
त्वयि विलसति तुल्यं वल्लभालोकनेन । । मा. मा. ३/८

लवंगिका [1] परिहास में मदयन्तिका के भी काम भाव को व्यक्त करती है, जिसमें अश्लीलता की झलक मिलती है जैसे कोई नीच नारी पात्र (दासी) भद्दा फूहड़ मजाक करे । कहीं कहीं नायिका मन ही मन प्रतिकूल परिस्थितिवश कामवृत्ति की अनिर्वचनीयता हताश होकर अभिव्यक्त करती है।[2] नायक से मिलने का सुसंयोग पाने और उसके पूछने पर भी नायिका लज्जावश अपनी अनिर्वचनीय कामवृत्ति को प्रकट भी नहीं कर पाती [3] है तथा इस प्रेम प्रकरण में नायक के प्रति अपनी पूर्व कथन पर अनभिज्ञता अभिव्यक्ति करती [4] है । मालती के अतिरिक्त कहीं कहीं लवंगिका तता मदयन्तिका का भी मनोगत कामभाव व्यक्त हुआ है । [5]

यद्यपि कालिदास तथा भवभूति के अन्य नारी पात्रों के समान "महावीरचरित" [6] तथा "उत्तररामचरितम्" [7] की सीता अथवा अन्य किसी नारी पात्र का मनोगत काम भाव किसी स्थल सशक्त रूप से अभिव्यक्त नहीं हुआ है, तथापि नायक विषयक काम गति को पुष्ट करने वाली श्रृंगारिक पृष्ठभूमि पर इसकी हल्की झलक अवश्य प्राप्त होती है ।

---

१. मा. मा. अंक ६, मालती-सखि, त्वयाऽपि गन्तव्यम् ।
लवंगिका - (विहस्य) साम्प्रतं खलु वयमत्रापसराम । मा. मा. अंक ७
" सखि मदयन्तिके किं न वेति । पृ. ३३१
मा. मा. ६/२० आमूलकण्टकितकोमलबाहुनाल . . . . . .द्विरदः सरस्या

२. मा. मा. ४/७ के पश्चात् मालती -महानुभाव लोचनान्दकर एतावद् दृष्टहाऽसि । परिणतमिदानीं जीविततृष्णायाः फलम् । परिनिष्ठतौ दैवहतकस्य दारुणसमारम्भ परिणामः। पृ. १६१-६२.

३. मा. मा. ८/५ के पूर्व मालती - नाहं किमपि जानामि (इत्यर्धोक्ते लज्जां नाटयति पृ. ३४६)

४. मा. मा. अंक२, पृ. १०६-११०,

५. मा. मा. अंक४, पृ. १७३,

६. महावीर चरितम्, प्रथम अंक (विश्वामित्र में राम से सीता के मिलन तथा राम-विवाह प्रसंग में) पृ. १०-१२,

७. उत्तर. ३/२३ सीता की राम के प्रति सतृष्ण (सकाम) दृष्टि विलुलितमतिपूरैर्वाष्पमानन्द शोक प्रभवमवसृजन्ती तृष्णयोत्तानदीर्घा । स्नपयति हृदयेश स्नेहनिष्यन्दिनी ते धवल बहल मुग्धा दुग्धकल्येव दृष्टि : ।
उत्तर. ३/४२ राम के संस्पर्श से सीता के जागृत कामभाव के सम्बन्ध में तमसा की उक्ति - सस्वेदरोमांचितकम्पितांगी जाता प्रियस्पर्शसुखेन वत्सा । श्रीमद्भगवद्गीता - ३/३७ काम एषः क्रोध एषः रजोगुणसमुद्भवः ।
गीता २/६२ कामात् संजायते क्रोधः कामात् क्रोधोऽभिजायते ।

क्रोध - मन के आन्तरिक काम जैसे अन्य भावों या विकारों के समान रजोगुण से उत्पन्न क्रोध भी स्त्री पुरुषों में पाया जाता है, जिसकी समुत्पत्ति काम से विचारकों ने बताई है । कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों में समुद्भूत क्रोध का भी अत्यन्त स्वाभाविक तथा प्रभावी चित्रण प्राप्त होता है ।

" अभिज्ञानशाकुन्तल"[१] में राजा दुष्यन्त द्वारा समस्त नारी जाति को छल एवं झूठ जैसे दुर्गुणों से लांक्षित करने पर तिरस्कृत शकुन्तला का स्वाभिमानिनी नारी सुलभ तेज जागृत हो उठा तथा अत्यन्त क्रोधपूर्वक उसने दुष्यन्त से कहा - इसमें कटु अपशब्द "अनार्य" जैसे सम्बोधन के साथ उसके क्रोध की स्वाभाविक अभिव्यक्ति - भौहों का अत्यन्त टेढ़ा तथा आंखों का लाल होना जैसी कम मार्मिक (प्रभावी) नहीं थी । [२]

शकुन्तला का यह स्वाभाविक क्रोध प्रथम अंक [३] में प्रियंवदा के असम्बद्ध विवाह की बात जैसे प्रलाप से समुत्पन्न कृत्रिम क्रोध के आगे बहुत भारी और हृदयावर्जक है । विक्रमोर्वशीयम् (२/२० के पूर्व) उर्वशी की प्रणय लीला में लीन राजा को भूर्ज पत्र खोजते हुए पाकर देवी औशीनरी कुपितहोकर निपुणिका के साथ चली जाती है । [४]

मन्दाकिनी तट पर क्रीडारत विद्याधर कुमारी उदयवती को ध्यान से देखने पर भाव स्खलित होने से पुरुरवा के प्रति उर्वशी के क्रुद्ध होने का उल्लेख प्राप्त होता है । इसी प्रकार मालविकाग्निमित्रम्[५] में मालविका से प्रणय लीलारत राजा को देख कर रानी इरावती का राजा अग्निमित्र के प्रति स्वाभाविक क्रोध इसमें प्रकट हुआ है कि वह रशना लेकर राजा की पिटाई भी करना चाहती है तथा क्रोध में राजा को "शठ" अपशब्द से सम्बोधन भी करती है, किन्तु इस हताशपूर्ण क्रोध की परिणति शोक सन्ताप पूर्ण आंसुओं से होती है ।

भवभूति के किसी भी नारी पात्र का कालिदास की कृतियों में उपर्युक्त नायिकाओं जैसा भीषण क्रोध दृष्टिगत नहीं होता है जिसमें नायक के प्रति उनके द्वारा अपशब्दों का प्रयोग हुआ हो । वहां वे शिष्टाचार एवं मर्यादा का उल्लंघन नहीं करती है ।

---

१. अभि. ५/२२ के पश्चात् शकुन्तला - अनार्य । आत्मनो हृदयानुमानेन पश्यसि ? क इदानीमन्यो धर्मकंचुकप्रवेशिनः तृणछन्नकूपोपमस्य तवानुकृतिं प्रतिपत्स्यते पृ. ५०६

२. अभि. ५/२३ मय्येव विस्मरणदारणचित्तवृत्तौ वृत्तं रहः प्रणयमप्रतिपद्यमाने ।
भेदाद् भ्रुवोः कुटिलयोरतिलोहिताक्ष्या भग्नं शरासनमिवातिरुषा स्मरस्य ।।

३. अभि. अंक १ शकुन्तला (सरोषमिव) अनसूये गमिष्याम्यहम् ।
इमामसम्बद्धप्रलापिनीं प्रियंवदामार्यायै गौतम्यै निवेदयिष्यामि । पृ. ४४२.

४. विक्रमो. अंक ४ (प्रवेशक) चित्रलेखा की उक्ति - तत्र खलु. . . . . . .
उदयवती नाम तेन राजर्षिणा निध्यातेति कुपिता उर्वशी । पृ. ३८७
विक्रमो. ४/१२ कुपिता न तु कोपकारणं . . . . नहिभावस्खलितान्यपेक्षते ।

५. माल. अंक ३/२० तथा इसके पूर्व इरावती (रुषा प्रस्थिता) शठ ! अविश्वसनीय हृदयोऽपि (इतिरसनामादाय राजनं ताडयितुंमिच्छति) ३/२१ के पूर्व तथा
माल. ३/२१ इयमिरावती-वाष्पासारा हेमकांचीगुणेन . . . . .चण्डी चण्डं हन्तुमन्यु

"मालती माधव" के षष्ठांक के [१] प्रारम्भ में कपालकुण्डला का क्रोध अपने गुरु अधौरघण्ट का मालती के निमित्त बध करने वाले माधव के प्रति असाधारण रूप में व्यक्त होता है, जहां कठोर शब्दों में उससे सर्पिणी की भांति प्रतिशोध लेने की धमकी भी देती है । इसी प्रकार प्रकरण के अष्टम अंक में भी अपहरणं करने के पूर्व मालती पर कपालकुण्डला अपना मनोगत भीषण क्रोध व्यक्त करती हुई चिल्लाती है -

"आः पापे ! तिष्ठ । (सक्रोधम) नन्वाक्रन्द, आक्रन्द ।

त्वद्बल्लभः क्व नु . . . . मया कवलीकृतासि । मा. मा. ८/८

किन्तु भवभूंति के नारी पात्रों का अपनी सखियों के प्रति प्रकट क्रोध आन्तरिक रूप से अनिष्टकारी अथवा द्वेषमूलक न होने के कारण कुछ कृत्रिम सा झिड़की भरा प्रतीत होता है । सखी लवंगिका के प्रति मदयन्तिका का कोप आन्तरिक अनिष्टकारी तथा द्वेषमूलक न होने के कारण झिड़कने जैसा (कृत्रिम) सा दृष्टिगत होता है । [२]

सीता का स्वभाव या मन कभी क्रोध को पनपने नहीं देता । [३] वे दुःस्वप्नावस्था में भी अपने प्रियतम राम या किसी परिजन पर कोप नहीं कर सकती । चित्रदर्शन नामक प्रथम अंक में उनकी असामान्य अवस्था में क्रोध न करने का स्वभाव स्वयं प्रकट कर दिया गया है ।

संमोह - सामान्यतः मन में क्रोध में संमोह की समुत्पत्ति होती है । कभी कभी यह संमोह अपने प्रियजन के प्रति आन्तरिक आकर्षण (राग) के कारण संताप विषाद आदि से भी समन्वित होता है। क्रुंद्ध इरावती जो प्रणयापराधी अग्निमित्र को रसना से पीटना चाहती थी, संताप या विषाद में आंसू बहाती [४] हुई अपने मन के तीव्र संमोह को प्रकट कर देती है और इसभाव को नायक से छिपा नहीं पाती ।

पुरुरवा के आकर्षणजन्य उर्वशी [५] का संमोह भी कुछ कम सन्तापमय नहीं है, जिसे वह अपनी सखी चित्रलेखा से अधिक शब्दों की अपेक्षा संक्षेप में सकेतित करती हैं । पंचम अंक में [६] अपने पुत्र आयु को तापसी के साथ समागत देकर वह स्वयं को अवितृष्ण कह कर भी मन के संमोह को नहीं छोड़ पाती तथा उसे व्यक्त भी कर देती हैं ।

---

१. मा. मा.६ अंक कला. (सक्रोधम) तवशयमनुभविष्यसि कपालकुण्डला कोपस्य फलम् । ६/१ शान्तिकुतस्तस्य भुजंगशत्रोर्यस्मिन् निबद्धानुशया सदैव । जागर्तिदशाय निशातद्रंष्ट्रा कोटि विषोद्‌गार गुरुर्भुजंगी ।।

२. मा. मा १० अंक मदयन्तिका (सकोपमिव) अपेहि । नास्मि ते वशंवदा । पृ. ४५०

३. उत्तर . १ अंक, सीता - भवतु तस्मै कोपिष्यामि, यदि तं प्रेक्षमाणा आत्मनः प्रभविष्यामि। पृ. १७१.

४. माल. ३/२१ इयमिरावती - बाष्पासारा . . . . . . .मेघसजीवविन्ध्यम् ।

५. विक्रमो. १ अंक /१२ श्लोक के पश्चात् उर्वशी - नतु समंदुःखातः पीयते लोचनाभ्याम्। पृ. ३४५

६. विक्रमो. ५/१२ तथा इसके बाद उर्वशी - चिरस्यायां दृष्ट्वा . . . . .न शक्नोमि विस्रमष्टुम् । अन्याभ्यं पुनरुपरोद्‌धुम् । पृ. ४१६.

अपने पति दुष्यन्त से प्रतारित प्रत्याख्यात तथा दोषारोपित होने पर शकुन्तला का सहज क्रोध संमोह में परिणत हो जाता है, जिसमें तीव्र मनोव्यथा एवं संताप विद्यमान है कि वह पटान्त से अपना मुख ढकं कर [1] रो पड़ती हैं । निष्ठुरतापूर्वक शारंख-शारद्धत के द्वारा छोड़कर चल देने पर [illegible] संमोवश ही विवश होकर उनके पीछे चल देती है । [2] हां, शकुन्तला के मनस्ताप से द्रवित गौतमी [illegible]य एवं करुणाजन्य संमोह भी द्रष्टव्य है ।

[illegible]ने [3] अपनी कृतियों में नारी पात्रों के मनोगत संमोह का स्वाभाविक रूप से सशक्त [illegible] रामचरित के तृतीय अंक में सीता का सन्ता[illegible] संमोह उल्लेखनीय [illegible]

[illegible]पनी

पतिव्रता होने के कारण देवी औशीनरी अपने पति पुरुरवा पर अनुरक्त उर्वशी के प्रति ईर्ष्या-मात्सर्य समन्वित कोई भी सौतिया डाह जैसा अप्रीतिकर मनोभाव प्रकट नहीं करती है ।

अपने गुरु अधोरघण्ट का मालती को बचाने के लिए माधव द्वारा बध कर दिए जाने पर कपालकुण्डला [१] क्रुद्ध होकर इन दोनों के प्रति द्वेष मात्सर्य से कुछ भी अनिष्ट कर्म करने को तत्पर चित्रित है । इसी द्वेषपूर्ण घृणित मनोभाव से प्रकरण के षष्ठांक में जो क्रुद्ध होकर उसके द्वारा माधव को धमकी दी गई है, अष्टम अंक में मालती [२] का श्री पर्वत पर अपहरण कर हत्या करने की क्रूर क्रिया कार्यान्वित करने की चेष्टा की गई है ।

इसी प्रकार ''महावीरचरितम्'' में[३] ताड़का शूर्पणखा राम लक्ष्मण और सीता के प्रति द्वेष मात्सर्य भाव पूर्ण प्रतीत होते हैं ।

अहंकार - प्रायः पुरुषों एवं नारियों में कुलीनता, रूप-सौन्दर्य धन-सम्पत्ति, प्रभुत्व आदि की मन में जो अस्मितापूर्ण मिथ्या भावना पनपी होती है इसे अभिमान अथवा अहंकार कहते हैं । कालिदास तथा भवभूति के किसी किसी नारी पात्र में यह मनोगति भाव स्पष्ट झलकता दृष्टिगत होता है ।

राजा दुष्यन्त द्वारा गौतमी की बात पर ध्यान न देकर नारी जाति को कपटपटु बताने पर कुल रूप गर्विता शकुन्तला का नारी सुलभ अभिमान जागृत हो गया । परिणामतःउसने रोष सहित टेढ़ी भौहें और लाल नेत्र करते हुए राजा से कहा था -

''अनार्य ! आत्मनो हृदयानुमानेन पश्यसि । क इदानीमन्यो धर्मकंचुकप्रवेशिनः तृणच्छन्न कूपोपमस्य तवानुकृतिं प्रतिपस्ये ।'' (अभि. ५/२२ के पश्चात् पृ. ५०६)

''मालविकाग्निमित्रम्'' के प्रथम अंक में [४] अपनी बात परिव्राजिका कौशिकी तथा गणदास द्वारा राजा और विदूषक के समक्ष स्वीकार न किए जाने पर अपने रूप पद प्रतिष्ठा के अलंकार में महारानी धारिणी उस स्थान से मन में कुछ कहती हुई चल देती हैं ।

तृतीयांक में [५] मदमत्त एवं सशंकित रानी इरावती रूपगर्विता होकर मालविका के सम्बन्ध में निपुणिका सेसाभिमान कहती हैं [६] । इसी प्रकार प्रसाधन कला में परंमनिष्णात होने का अभिमान

---

१. मालती. अंक ६ कपालकुण्डला - आ. पांप दुरात्मन् । मालती निमित्तं विनिपातितास्मद्गुरो । ....कपालकुण्डला कोपस्य फलम् ।
मा. मा. ६/१ शान्तिः कुतस्तस्य ......विषोद्गार गुरुर्भजंगी ।

२. मा. मा. अंक ८, पृ. ३५६ ''कपालकुण्डला - आः पापे तिष्ठ । स क्रोधसहासम्) नन्वाक्रन्द,आक्रन्द । ''८/१ त्वद्वल्लभः.........ननु मया कवलीकृतासि ।

३. महा. च. अंक २, ४, तथा ५.

४. माल. अंक १देवी - (स्वागतम्) मूढे परिव्राजिके । मां जाग्रतीमपि सुप्तामिव करोषि । (सासूयं परावर्तते) पृ. २७०.

५. माल. अंक ३ इरावती -अभूमिरियं मालविकायाः । कथमत्र तर्कयसि । पृ. २६१

६. माल. अंक ३ '' बकुला. - उपदेशानुरूपौ चरणौ लब्ध्वाऽध तावद् गर्विता भविष्यामि। हन्त सिद्धो मे दर्पः । '' पृ. २६२ (माल. ३/१३ के पूर्व)

(दर्प) रूपगर्विता मालविका की अपेक्षा बकुलावलिका को कम नहीं है । "विक्रमोर्वशीयम्" के चतुर्थांक[1] में उर्वशी के मनोगत रूप के दर्प ने उसे कुपित कर कुमारवन में प्रविष्ट होने के लिए प्रेरित किया था ।

भवभूति ने मालती माधव के पंचमांक के प्रारम्भ[2] में कपाल कुंडला की यौगिकी सिद्धि से समुद्भूत अहंकार का सुन्दर चित्रण किया है जिसमें आत्मश्लाघा सहित अपने योग बल के प्रभाव को वर्णित करती हैं, किन्तु नवम अंक में सौदामिनी योगिनी रूप में मकरन्द को अपना परिचय देती हुई भी अहंकार को प्रकट नहीं करती हैं ।

उन्माद - यह भी मन का विकार है, जिसके असामंजस्य के कारण बुद्धि भी सामान्य कार्य नहीं करती । अतः मन एवं बुद्धि की अस्त व्यस्त अवस्था से जब कोई नारी या पुरुष पागल जैसा असामान्य आचरण करने लगे तो इसे उन्माद कहा जाता है । रस के संचारी भावों में भी उन्माद की एक भाव स्थिति है, जब नायक या नायिका का मन या चित्त ठिकाने नहीं रहता ।

कालिदास के नायकों में पुरुरवा[3] और दुष्यन्त[4] के विप्रलभजन्य उन्माद का सुन्दर चित्रण प्राप्त होता है, जबकि नारी पात्रों में कामदहन से पति के दारण शोक में संतप्त रति की उन्मत्त अवस्था[5] उल्लेखनीय है । भवभूति के नायकों में माधव[6] तथा राम के मन का उन्माद चित्रित हुआ है, जबकि नारी पात्रों में अपनी प्रियसखी मालती को मारने के लिए कपाल कुण्डला द्वारा अपहरण किए जाने पर मदयन्तिका और लवंगिका[7] के दुःखद उन्माद को प्रकट किया गया है ।

"उत्तररामचरितम्" के तृतीय अंक[8] में सीता के मनः का तीव्र उन्माद अनेक स्थलों पर अभिव्यक्त हुआ है । वस्तुतः यह परित्यक्ता नारी की मनस्ताप तथा विप्रलम्भजन्य असामान्य अस्त व्यस्त अवस्था का ही सुन्दर एवं स्वाभाविक चित्रण है ।

उद्वेग - जब मन में विद्यमान भय अकुलाहट, चिन्ता, आश्चर्य, घबराहट आदि भावों को एक साथ मिश्रित अभिव्यक्ति तीव्रतापूर्वक होती है तो उसे उद्वेग की संज्ञा दी जाती है । उद्वेग में आश्चर्य और व्याकुलता जैसे विकारों का सांकर्य सामान्यतः वेगपूर्वक प्रकट होता है । उद्वेग में आश्चर्य और व्याकुलता जैसे विकारों का सांकर्य सामान्यतः वेगपूर्वक प्रकट होता है । यथा -

---

१. विक्रमो. ४/३ के पूर्व. पृ. ३८८.
२. मा. मा. ५/२, ३, ४.
३. विक्रमो. अंक ४/६ से २६ तक के समस्त संवाद ।
४. अभि. अंक ६/१०, ११, १३. " विदूषक - कथं गृहीतगऽनेन पन्थः उन्मत्तानाम् "
५. कुमार. ४/४ अथ सा पुनरेव विह्वला वसुधालिंगनधूसरस्तनी ।
विललाप विकीर्ण मूर्धजा समुदःखामिव कुर्वती स्थलीम् ।
६. मा. मा. अंक ६/६ से २७ तक
७. मा. मा. अंक ८ लवंगिका की उक्ति पृ. ३६३, उत्तररामचरितम् - दृष्टव्य अंक ३
८. उत्तर. ३/४१ के पूर्व - सीता - हा धिक् । आर्यपुत्रस्पर्शमोहितायाः प्रमादः खलु मे संवृतः । वासन्ती - कष्टमुन्माद एव । पृ. ३५२
उत्तर. ३/४४ के पूर्व सीता - अहो, उन्मत्तिकास्मि संवृता ।

मालविकाग्निमित्रम् में विदूषक द्वारा परिव्राजिका कौशिकी वृत्तान्त (परिचय) पूछे जाने पर वह अपने मन के उद्वेग को रोक नहीं [1] सकी तथा अत्यन्त व्याकुलतापूर्वक सुनने के लिए उसने विदूषक से कहा । इसी प्रकार कण्वाश्रम से विदा होने पर शकुन्तला के मन का उद्वेग [2] उल्लेखनीय है जिसमें उसकी चिन्ता, भय, कातरता आदि तीव्रता से व्यक्त हुए हैं । सप्तम अंक में मारीचाश्रम की पहली तापसी सर्वदमन के हाथ में रक्षाकरण्डक न पाकर विस्मय, भय चिन्ता मिश्रित उद्वेग व्यक्त करती है।

भवभूति ने कालिदास की अपेक्षा नारी पात्रों के मनोगत उद्वेग को अधिक सशक्त के रूप में प्रकट किया है । ''मालतीमाधव'' में अपनी प्रिय सखी मालती के भरण को समझती हुई कामन्दकी तथा मदयन्तिका के समक्ष अपने मन के उद्वेग को प्रकट [3] करती हैं, जिसमें विस्मय, व्याकुलता, निराशा की तीव्र अनुभूति हुई है ।

सीता के मन का उद्वेग अनेक स्थलों पर ''उत्तररामचरित'' के तृतीय अंक [4] में अभिव्यक्ति हुआ है । यथा - वासंती से राम के द्वारा लौट जाने की अनुमति लेने पर तमसा के सान्निध्य में सीता शोक, आश्चर्य, चिन्ता आदि मन के मिश्रित विकारों को तीव्रता से प्रकट करती हुई तमसा का अवलम्बन लेती है ।

स्वप्न - जब जागृत अवस्था में मन किसी साक्षात्कार का, आत्मीय अथवा अभीष्ट प्रियजन का निरन्तर ध्यान और चिन्तन करता है तो सुषुप्तावस्था में सामान्यतः स्वप्न में भी वही प्रिय जन का साक्षात्कार स्त्री या पुरुष करते रहते हैं । कभी कभी तो दिन में जागृत अवस्था में भी अधिक चिन्तन या ध्यान से दिवास्वपन् जैसी स्थिति शकुन्तला[5] जैसे नारी पात्र की दृष्टिगत होती है ।

कालिदास तथा भवभूति ने मनोविज्ञान के साहचर्य के सिद्धान्त (Law of Association) को ध्यान में रखते हुए नारी पात्रों की स्वप्नावस्था को चित्रित किया है, क्योंकि प्रायः नारियां या गायिकाएं अपने उन्हीं प्रियतमों का स्वप्न सामान्यतः देखा करती हैं, जिनका साहचर्य उन्होंने अधिक प्राप्त किया है अथवा जिनसे वे अधिक रागात्मक भावपूर्ण सम्बन्ध रखें होती हैं ।

---

१. माल. अंक ५. परिव्राजिका की उक्ति (सवैकलव्यम्), पृ. ३२७.

२. अभि. ४/१९ के पूर्व शकुन्तला की उक्ति तथा कण्वः - वत्से विभवे कातरासि ?
अभि. अंक ७, प्रथ. (विलोक्य सोद्वेगम) - अहो रक्षाकरण्डकमस्य मणिबन्धे न दृश्यते। पृ. ५५१

३. मा. मा. अंक १० लवंगिका (सोद्वेगम) - हताश, वज्रमयहृदय, सर्वथा नृशींसमसि । (इति हृदयमाहत्य पतति) पृ. ४४५.

४. उत्तर. १ अंक राम - अये सैवेयं रणरणकदायिनो चित्रदर्शनात् विरहभावना देव्याः स्वप्नोद्वेगं करोति । पृ. १४४ .
उत्तर. ३ अंक/४५ श्लोक के पश्चात् सीता - (सोद्वेगमोहं तमसामवलम्य) भगवति तमसे कथं गच्छत्येव आर्यपुत्रः ? पृ. ३६७.

५. अभि. ४ अंक, प्रियंवदा - अनसूये पश्य तावत् वामहस्तोपहितवदना आलिखितेव प्रियसखी।
भर्तृगतया चिन्तया आत्मानमपि नैषा विभावयति, किं पुनरागन्तुकम् ''?

पार्वती भगवान शंकर को पति रूप में वरण करने हेतु उनका इतना अधिक ध्यान एवं चिन्तन करती थी कि रात्रि में तीन प्रहर बीतने पर स्वप्नावस्था में शिव का साहचर्य लाभ करती हुई सहसा जागकर हे नीलकण्ठ, तुम कहां जा रहे हो ? कहती हुई जाग [१] पड़ती थीं । यक्षिणी की इसी प्रकार की स्वप्नावस्था उल्लेखनीय [२] है, जिसमें उसकी यक्ष के साथ संयोग स्थिति कहीं मेघ के गरजने से जागने के कारण समाप्त न होने की आशंका की गई है । यक्षिणी के स्वप्न देखने का [३] अन्य स्थलों पर भी उल्लेख प्राप्त होता है ।

भवभूति ने भी कालिदास के समान नारी पात्रों की स्वप्नावस्था को मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर ''साहचर्य के नियम'' के अनुसार ही प्रस्तुत किया है । मालतीमाधव में मदयन्तिका के [४] स्वप्न वर्णन करने पर लवंगिका अपनी सखी मदयन्तिका से बुद्धरक्षिता का साक्ष्य देती हुई अश्लील सा परिहास करती पूछती हैं कि क्या उसका अपने सहचर मकरन्द के साथ मयूरासन में स्वप्न उसके द्वारा नहीं देखा गया ।

इसी प्रकार ''उत्तररामचरित'' में सीता की उत्त्स्वप्नावस्था का स्वाभाविक चित्रण प्राप्त होता है । '' सीता (उत्स्वप्नायते) हा आर्य पुत्र, सौम्य कुत्र असि ? ''

(उत्तर.पृ. १४४ अंक १)

स्मृति - प्रत्येक स्त्री या पुरुष चेतन या अचेतन मन से अपने घनिष्ठ सहचर अथवा प्रियजन का स्मरण अवश्य करता है । प्रिय आत्मीय जन के साथ साहचर्यपूर्ण पूर्वदृष्ट स्थलों या दृश्यों की भी मन में स्मृति समायी रहती है जो मनोवैज्ञानिक ''साहचर्य नियम'' के अनुसार वह स्मृति अपने प्रिय के साथ निवास किए या उन पूर्व दृष्ट स्थलों, दृश्यों आदि को देखकर उद्बुद्ध हो उठती है । कालिदास तथा भवभूति ने मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर इसी साहचर्य नियम को ध्यान में रख कर अपने नारी पात्रों की स्मृति को अपनी कृतियों में यथास्थान वर्ण्य विषय विप्रलम्भ श्रृंगार के साथ चित्रित किया है ।

---

१. कुमार. ५/५७ त्रिभागशेषासु निशासु च क्षणं निमील्य नेत्रे सहसा व्यवुध्यत ।
क्व नीलकण्ठ व्रजसीत्यलक्ष्यवागसत्यकण्ठार्पितबाहुबन्धना ।

२. उ. मे. ३४ तस्मिन् काले जलद यदि सा लब्धनिद्रासुखा स्यात,
अन्वास्यैनां स्तनितविमुखो याममात्रं सहस्व ।
माभूदस्याः प्रणयिनि मयि स्वप्नलब्धे कथंचित् ,
सद्यः कण्ठच्युतभुजलताग्रन्थिगाढोपगूढम् ।।

३. उ. मे. २८ मत्संभोगः कथनुपनयेत स्वप्नजोऽपीतिनिद्रामांकांक्षती नयनसलिलो ।
'' ४८ . . . दृष्टः स्वप्ने कितवरमयन् कामपि त्वं मयेति ।

४. मा. मा. ७ अंक लवंगिका से मदयन्तिका का स्वप्न वर्णन - संकल्पचिन्तायां स्वप्नान्तरेषु। पृ. ३२५.
बुद्धरक्षिता निरुपितमासनमयूरकं परिजनाद् गोपनीयं भवति न वेति । पृ. ३३०

उत्तरमेघ में यक्षिणी अपने सहचर प्रियतम यक्ष के पूर्व साहचर्य की स्मृति [१] स्वयं मन में रखती हुई सारिका से भी स्मरण करने के सम्बन्ध में पूछती है । साथ ही प्रिय की स्मृति के कारण वीणा पर स्वयं द्वारा रचित मूर्च्छना को विमनस्कता के कारण विस्मृत कर बैठती है । [२]

''कुमारसंभव'' में कामदहन पर शोक संतप्त रति संयोगावस्था की पूर्व घटनाओं (स्मृतियों) को उस अवसर पर स्मरण कर अत्यधिक शोकाकुल हो जाती है ।[३]

दुष्यन्त की स्मृतिजन्य चिन्ता में लीन शकुन्तला को उसकी प्रिय सखियों ने उटज में होने पर भी हृदय से अनुपस्थित देखा, परिणामतः उसे दुर्वासा का दारुण शाप भोगना पड़ा । [४] पंचम अंक के प्रारम्भ में विप्रलब्धा रानी हंसपदिका राजा का स्मरण करती हुई संगीत शाला में मार्मिक गीत गाती है, जिसमें उसे विस्मृत करने वाले राजा पर मधुपवृत्ति का तीखा उपालम्भ दिया गया है । [५] आगे शकुन्तला दुष्यन्त के समागम समय का स्मरण करती हुई दीर्घापांग नाम मृगछौने की घटना का साक्ष्य प्रस्तुत करती हुई राजा को भी स्मरण दिलाने का प्रयास करती है, किन्तु दुर्वासा शाप के कारण दुष्यन्त इस घटना का स्मरण नहीं कर सकता [६] ।

भवभूति ने अपने नारीपात्रों के विप्रलम्भ श्रृंगार की पृष्ठभूमि घर मनोगत स्मृति [७] का सुन्दर चित्रणं किया है ।

उत्तररामचरित के चित्रदर्शन नामक प्रथम अंक[१] में सीता अपनी बनवासकालीन महत्वपूर्ण घटनाओं पर आधृत स्मृति को उद्बद्ध करती हुई उल्लिखित हैं । इसके पूर्व वे अपनी नन्द शांता और उसके परिवार का स्मरण करती हुई अष्टावक्र से उनकी कुशल और अपने बारे में स्मरण करने के सम्बन्ध में पूछती हैं । [८]

---

१. उ: मे. २२ आलोके ते निपतति पुरा सा बलि व्याकुला वा,
मत्सादृश्यं विरहतनु वा भावगम्यं लिखन्ती ।
पृच्छन्ती वा मधुरवचनां सारिकां पंजरस्थां,
कच्चिद् भर्तुः स्मरसि रसिके त्वं हि तस्य प्रियेति ।।

२. उ. मे. उत्संगे वा . . . . . . .भूयो भूयः स्वयमपि कृतां मूर्च्छनां विस्मरन्ती ।

३. कुमार ४/२६ तमवेक्ष्य रुरोद सा . . . . . . विवृत्त द्वार मिवोपजायते ।
४/२३ ऋजुतां नयतः स्मरामि ते शरमुत्संगनिष्ण्णधन्वनः ।

४. अभि. ४/१ विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा . . . . प्रथमं कृतामिव ।
प्रियं. - ननु उटजसंनिहिता शकुन्तला । आत्मगतमद्य पुनर्हृदयेनासंनिहिता । पृ. ४७७
. . भर्तगतया चिन्तया आत्मानमपि नैषा विभावयति, किं पुनरागन्तुकम् । पृ. ४७८

५. अभि. ५/१ अहिणव महु लोलुवो . . . . विम्हरिओ सिणं कहं । ।

६. अभि. ५/२२ के पूर्व शकुन्तला . . . . ., पृ. ५०६.

७. उत्तर. १/२२ के पूर्व - ''सीता एष जटासंयमनवृतान्तः'' पृ. ६८
१/२४ के पूर्व - सीता - स्मरति एतं प्रदेशंमार्य पुत्रः पृ. १०१
उत्तर . १/३१ के पूर्व - सीता - अत्र किल आर्यपुत्रेण विस्रब्धामर्षधीरत्वं प्रमुक्तकष्ट विदितमासीत् । पृ. १२१

८. उत्तर . अंक १/६ के पूर्व सीता - अस्मान् वा स्मरति पृ. ७०

तृतीय अंक के अनेक स्थलों पर सीता की मनोगत स्मृति उद्बुद्ध होने का कवि ने मनोवैज्ञानिक रूप में उल्लेख [१] किया है ।

चतुर्थ अंक में अरुन्धती कौशल्या के वैधव्य तथा सीता के बनवास को देख कर अयोध्या की पूर्व सुखदस्मृति को जगाती हुई जनक को भी मनोवैज्ञानिक ढंग से पूर्व सुखद घटनाओं की स्मृति करने को उत्प्रेरित करती है --

"स राजा तत् सौख्यं स च शिशु जनस्ते च दिवसाः
स्मृतावाविर्भूतं त्वपि सुहृदि दृष्टे तदखिलम् ।
विपाके घोकेऽस्मिन्नथ खलु विमूढा तव सखी,
पुरन्ध्रीणां चेतः कुसुम सुकुमारं हि भवति । । "उत्तर. ४/१२

मालती माधव के अनेक नारी पात्रों कामन्दकी, [२] बुद्धरक्षिता[३], लवंगिका, मालती [४] आदि की मनोवैज्ञानिक रूप में स्मृति को उदबुद्ध रूप में चित्रित किया गया है ।

मूर्च्छा - मन के साथ जब इन्द्रियाँ अतिशय शोक या शरीरिक कष्ट से चेतनवत् कार्य नहीं करतीं तो मन एवं इन्द्रियों की इस अचेतनावस्था को मूर्च्छा कहते हैं जो निद्रा या स्वप्नावस्था से सर्वथा भिन्न होती है क्योंकि निद्रा में मन की चेतना समाप्त नहीं होती करुण रस में शोक तथा विप्रलम्भ श्रृंगार में स्थायीभाव रति जब शोक के रूप में परिणत हो जाती है तो उन्माद आदि संचारी भावों के साथ मूर्च्छा मन इन्द्रियों को अचेतन सा बना देती हैं ।

कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों की मूर्च्छावस्था का मनोवैज्ञानिक पृष्ठ भूमि पर चित्रण पाया जाता है । भगवान् शंकर के भयंकर संरम्भ (क्रोध) से [५] कामदेव के दग्ध हो जाने पर उसकी पत्नी रति की इन्द्रियां संस्तम्भित होकर इस प्रकार की मूर्च्छा या मोह की स्थिति में पहुंच गई कि उसे उस क्षण पति के शोक का [६] ही अनुभव नहीं हो सका ।

कामदहन की इस भयंकर दुःखद घटना से मूर्च्छा या मोह को न प्राप्त कर भयवश पार्वती के तो नेत्र बन्द हो गये किन्तु रति के कोमल मन को इस दारुण शोक से ऐसा प्रचण्ड आघात लगा कि

---

१. उत्तर. अंक ३ सीता (स्मृतिमभिनीय सवैकलव्यम्) - हा धिक् ! हा धिक् ! तान्येव चिरपरिचतानि अक्षराणि पंचवटी दर्शनेन पुनरपि मां मन्दभागिनीमनुरुन्धयन्ति । पृ. २६८
उत्तर. ३/१७ के पूर्व सीता - भगवति तमसे । एतेन अपत्य संस्मरणेन उच्छ्वसित प्रसुतस्तनौ तयोश्च पितुः संन्निधानेन क्षमात्र संसारिणी अस्मि संवृता । पृ. ३०२

२. मा. मा. १०/१ चाटूनि चारु मधुराणि चं संस्मृतानि . . . . . .। १०/२ वदन कमलकं शिशोः स्मरामि ।
१०/३, ४, ५, ६ आदि ।

३. मा. मा. अंक ७ बुद्धरक्षिता (लवंगिका के प्रति) स्मरिष्यसि एतद्वचनम् पृ. ३३५

४. मा. मा. अंक ६/११ के पश्चात् मालती - त्वयाअपि प्रिय सखि सर्वदा स्मर्तव्यास्मि । पृ. २८१

५. कुमार. ३/७३ तीव्राभिषंगप्रभवेण वृत्तिं मोहेन संस्तम्भयतेन्द्रियाणाम् ।
अज्ञात भर्तृव्यसना मुहूर्त कृतोपकारेव रतिर्बभूव । ।

६. कुमार. ४/१ अथ मोहपरायणा सती विवशाकामवधूर्विवोधिता ।
विधिना प्रतिपादयता नववैधव्यमसह्यवेदनम् । ।

वह मूर्च्छा को प्राप्त हो गई तथा (भाग्यवश) विधाता के द्वारा नववैधव्य के असह्य दुःख का अनुभव कराने के लिए चेतना को प्राप्त हुई ।

विक्रमोर्वशीयम् के प्रथम अंक के[1] प्रारम्भ में दानव द्वारा अपहृत उर्वशी सहित चित्रलेखा को बन्धनमुक्त कराकर लौटने पर चित्रलेखा [2] तो भयवश नेत्र बन्द किये थी, किन्तु उर्वशी की मूर्च्छावस्था को पाकर पुरुरवा द्वारा उसे दाहिने हाथ से अवलम्ब दिये हुए था । उर्वशी की मूर्च्छावस्था के साथ ही मूर्च्छा शनैः शनैः दूर होने का सुन्दर चित्रण हुआ है । [3]

कालिदास के विक्रमो. की उर्वशी की मूर्च्छा के पश्चात् चैतन्य लाभ करने के समान भवभूति ने भी मालतीमाधव में मूर्च्छाग्रस्त मालती के चैतन्य लाभ करने का सुन्दर चित्रण किया है --

''भवति विततश्वासोन्नाह प्रणुन्न पयोधरम्,
हृदयमपि च स्निग्धं चक्षुर्निजप्रकृतौ स्थितम् ।
तदनुवदनं मूर्च्छाच्छेदात् प्रसादि विराजते,
परिणतमिव प्रारम्भे ऽह्नः श्रिया सरसीरुहम् । ।

(मा. मा. १०/१ तुलनीयविक्रमो. १/९)

मालती की इस मूर्च्छित स्वरूप की मीमांसा लवंगिका और मदयन्तिका [4] उसकी प्रियसखियां भी करती हैं क्योंकि उनको उसकी मृत्यु की आशँका भी हो गई थी । ''उत्तर रामचरितम्'' के तृतीय अंक में [5] अनेक स्थलों पर सीता के साथ शोकाकुल वासन्ती कौशल्या की मूर्च्छा का चित्रण किया गया है ।

विषम् मनोरोग एवं दारुण सन्ताप के कारण अचेतन सी कौशल्या की मूर्च्छा का अरुन्धती भी ठीक उसी प्रकार उन्हीं शब्दों में उल्लेख करती है[6] जिसप्रकार मालतीमाधव में मालती की

---

१. विक्रमो. अंक १/६ के पूर्व - ततः प्रविशति रथारुढां राजासूतश्च । भयनिमीलिताक्षी चित्रलेखा दक्षिणहस्तावालम्बिता उर्वशी च । (पृ. ३४२)

२. विक्रमो. १/७ तथा इसके पूर्व चित्रलेखा - अहो कथमुच्छ्वसितमात्रसंभावित जीविताः, अद्याप्येषा संज्ञा न प्रतिपद्यते। पृ. ३४३, विक्रमो १/७

३. विक्रमो. १/९ राजा - प्रकृतिमापन्नते प्रियसखी । पश्य -
आविर्भूते शशिनि तमसा मुच्यमानेव रात्रिर्नैशस्यर्चिहुतभुत इवच्छिन्नभूयिष्ठधूमा ।
मोहेनान्तर्वरतनुरियं लक्ष्यते मुक्तकल्पा गंगारोधः पतनकुलषा गच्छतीव प्रसादम् । ।

४. मा. मा. अंक १० मद. लवं. - भगवति परित्रायस्व । चिरनिरुद्धनिः श्वासनिश्चलमस्या हृदयम् । हा अमात्य,हा प्रियसखि । युवां द्वावपि परस्परावसानस्य कारणं जातौ । पृ. ४५८ ।

५. उत्तर. ३/९ के पूर्व सीता - (इति तमसामाश्लिस्य मूर्च्छति), पृ. २७४
उत्तर. ३/२६ में वासन्ती के कथन के पश्चात् - (इति मूर्च्छति) सीता के साथ वासन्ती भी मूर्च्छित चित्रित है । पृ. ३२०.
उत्तर. ३/३८ के पश्चात् - सीता - आर्यपुत्र . . . . दक्षिणो दशापरिणामः इतिमूर्च्छति) पृ. ३४४

६. उत्तर. ४ अरुन्धती - हा कष्टम् । चिरनिरुद्धाभिः श्वासनिष्ठुरं हृदयमस्याः ।
तुलनीय - मा. मा. अंक १० (मदयन्तिका की उक्ति) पृ. ४५८.

अचेतनावस्था का मदयन्तिका और लवंगिका उल्लेख करती हैं । मूर्च्छाग्रस्त कौशल्या की चेतना राजर्षि जनक के कमण्डलु जल के छिड़कने से वापस आई ।[१]

वस्तुतः कौशल्या की यह मूर्च्छा कंचुकी के शब्दों में विशिष्ट प्रकार का एक मनोरोग ही प्रतीत होता है जो उनको सीता के बनवास से समुत्पन्न दारुण सन्ताप के कारण ही पनप गया था । इस प्रचण्ड पीडाजन्य मूर्च्छा की परिणति दशरथके समान मरण में भी प्रायः होती है ।[२]

परिकल्पना - (Hypothlsis) - मन का स्वभाव जहां संकल्प-विकल्प का है वहां बुद्धि से प्रेरित किसी भी रागात्मक सांसारिक विषय के प्रति परिकल्पनाशील भी है । मन किसी भी तर्क या तथ्य पर पहुंचने के पूर्व बुद्धि के माध्यम से परिकल्पना स्मृति साम्य आदि के आधार पर विविध प्रकार से करता है । वस्तुतःमनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर परिकलृपना का क्षेत्र अत्यन्त प्रभावी तथा व्यापक है । कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र भी पर्याप्त परिकल्पना शील परिलक्षित होते हैं।

भोली भाली सिद्धांगनाओं द्वारा मन में काले मेघ को ऊपर देख कर पहाड़ की चोटी की पवन द्वारा उड़ाने की परिकल्पना[३] आकारसाम्य के आधार पर इन्दुमती स्वयंवर में प्रतिहारी सुनन्दा द्वारा[४] प्रत्येक राजा की आकृति, राज्यसमृद्धि उसकी राजधानी का आकर्षणपूर्ण वर्णन साम्य के साथ स्मृति के आधार पर परिकल्पित करना, सीता के द्वारा अपने परित्याग के समय अपने पूर्व जन्म के पापों के प्रभाव पूर्व बनवास में परित्यक्ता क्रुद्ध लक्ष्मी का सपत्नी के रूप में प्रतिशोध लेना जैसी परिकल्पना लोक ज्ञान के आधार पर की गई है ।[५]

"अभिज्ञान शाकुन्तलम्" के चतुर्थ अंक के विषकम्भक में अनसूया[६] द्वारा शकुन्तला दुष्यन्त के प्रणय के सम्बन्ध में चिन्तापूर्ण अनेक संकल्प विकल्पों पर आघृत परिकल्पना की गई है। इसी प्रकार नलिनीपत्र में छिपे चक्रवाक को न देखने पर चकवी के क्रन्दन को सुनकर शकुन्तला का अपने दुःखद दाम्पत्य की परिकल्पना[७] करना उल्लेखनीय है ।

इसी प्रकार भवभूति के वासन्ती[८], सीता, मालती[९], कामन्दकी, प्रभृति[१०] नारीपात्र मनोवैज्ञानिक आधार पर पर्याप्त परिकल्पनाशील परिलक्षित होते हैं ।

समीक्षा - उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि कालिदास तथा भवभूति ने

---

१. उत्तर. अंक ४/१५ के पूर्व तथा पश्चात् (कौशल्या - संज्ञा लब्ध्वा) पृ. ४१२, ४१४.
२. उत्तर. ४/१५ सुहृदिव प्रकटयेय सुखप्रदः . . . . विशिमष्टि मनोरथम् । ।
३. पू. मे. १४ अद्रेः श्रृंगं हरति पवनः किंस्विदित्युन्मुखीभिः,
दृष्टोत्साहश्चकित चकितं मुग्धसिद्धांगनाभिः ।
४. दृष्टव्य - रघुवंश षष्ठ सर्ग इन्दुमती स्वयंवर वर्णन सुनन्दा के द्वारा)
५. रघु. १४/६२, ६३, उपस्थितां पूर्वमापस्य लक्ष्मीं . . . . . . सोढास्मि न त्वद्भवने वसन्ती।
६. अभि. अंक ४ (विषकम्भक) अनसूया - ननु प्रभाता रजनी . . . . किं करणीयम् ? पृ. ४८१
७. अभि. ४/१६ तथा इसके पूर्व शकुन्तला की उक्ति, पृ. ४६०.
८. उत्तर. ३/२६ तथा इसके पूर्व वासन्ती, पृ. ३२०.
९. उत्तर. दृष्टव्य ३ अंक ३/३६ आदि
१०. मा. मा. अंक ३ लवंगिका की उक्ति, पृ. १४५-१५५,
११. मा. मा. १/१७, २/१२, १३, १०/३, ४, ५ आदि

मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर नारीपात्रों के मनोगत विकारों [१] काम, क्रोध, संमोह, ईर्ष्या, असूया,द्वेष-मात्सर्य, अंहकार उन्माद, उद्वेग, भय, हर्ष [२] शोक,[३] स्वप्न, स्मृति, मूर्च्छा, परिकल्पना आदि का यथार्थ चित्रण किया है । चिन्ता के कारण नारी पात्र की विमनस्कता, [४] दारुण शोक के कारण बुद्धि मन की विक्षिप्तता, [५] रक्षा , कठोरता, तथा चिड़चिड़ापन कभी कभी आत्महत्या [६] जैसी मनः प्रवृत्ति, अपराध बोध से मन की कातरता, [७] विषम परिस्थिति में मन का अन्तर्द्वन्द्व[८], मनोरोग का स्वरूप आदि की मनोवैज्ञानिक तथा स्वाभाविक अभिव्यक्ति इन कवियों के द्वारा की गई है । कहीं कहीं कालिदास की अपेक्षा भवभूति मनोवैज्ञानिक, पृष्ठभूमि पर इन मनोविकारों को अधिक सशक्त रूप में व्यक्त करने में सफल हुए हैं । उदाहरणार्थ मालती का तीव्र मनोरोग किस प्रकार विष के समान फैल कर कितना घातक हो जाता है --

"मनोरोगस्तीव्रो विषमिव विसर्पत्यविरतं, प्रमाथी निर्धूमो ज्वलित विधुतः पावक इव। हिस्ति प्रत्यंगं ज्वर इव गरीयानित इतो,

न मां त्रातुं तातः प्रभवति न चाम्बा न भवती ।। (मा. मा . २/१)

वस्तुतः जीवन में तन की अपेक्षा मन का नीरोग रहना अत्यन्त आवश्यक है। जो नारी मनोरोग ग्रस्त है, उससे समस्त समाज एवं घर-परिवार भी प्रभावित होकर रुग्ण सा हो जाता है । शरीर से स्वस्थ होने पर भी सद्‌लक्षणों या सहिष्णुता, उदारता, सेवापरायणता, जैसे गुणों से गृहिणियाँ यदि युक्त नहीं हैं तो ऐसी मनोरोग से पीड़ित वामा युवतियां कालिदास के मतानुसार कुल के लिए आधिस्वरूपा हो जातीहै । अतः दोनों महाकवियों के नारीपात्रों का मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से तुलनात्मक अध्ययन करने पर मानव जीवन में उनके समस्त मनोविकार स्वाभाविक ही प्रतीत होते हैं ।

---

१. विक्रमो. १/६ के पूर्व - नयननिमीलिताक्षी चित्रलेखा पृ. ३४२
अभि. ५/२७ के पूर्व - शारंगरव के क्रुद्ध होने पर शकुन्तला का भयभीत होकर कांपना (शकुन्तला भीता वेयते) पृ. ५०८ । उत्तर. ३/४२ सीता का कम्पन
मा. मा. ६/१५ के पूर्व (मालती कम्पमाना कामन्दकीमालिंगति) पृ. २८६

२. मा. मा. अंक ६/११ के पश्चात् पृ. २७६, मा. मा. ६/७ कामन्दकी का हर्ष, उत्तर. १/१८ के पश्चात् (लक्ष्मण से सीता का परिहास) पृ. ६०

३. मा. मा. ६/१२ के पश्चात् पृ. २८३, ५/२५ के पूर्व मालती का शोकाकुल विलाप । पृ. २३७ उत्तर. ४/१५ के पूर्व अरुन्धती का शोक, पृ. ४१२, ४/१२ कौशल्या का शोक, पृ. ४०८, उत्तर. ३/२० के पूर्व सीता का शोक पृ. ३०८

४. उ. मे २६ अधिक्षामा . . अभि. ४/ विषकम्भक, पृ. ४७६.

५. उत्तर. ४/१५ के पूर्व कौशल्या का चिड़चिड़ापन, रूखापन पृ. ४१२

६. उत्तर. ३ अंक तमसा द्वारा दुःख संक्षोभ से सीता का गंगा में कूद कर आत्महत्या की सूचना देना, पृ. २५३.

७. उत्तर. ३/३६ सीता के अपराध बोध से मन की कातरता अस्मिन्नेव लतागृहे . . कातर्यादरविन्दकुड्मल निभःमुग्धः प्रेणामांजर्लिः

८. कुमार. ५/८५ पार्वती का ठिठकना (व रुकना न चलना), मा. मा. २/१ मालती का अर्न्तद्वन्द्व ।

सप्तम परिच्छेद

नारीजीवन के विविध क्षेत्रों का अध्ययन

सप्तम परिच्छेद

कालिदास एवं भवभूति के नारी पात्रों की जीवन के अन्य विविध क्षेत्रों (आर्थिक, राजनैतिक सांस्कृतिक आदि) में भूमिका

तत्कालीन नारी समाज में सामिष तथा निरामिष दोनों प्रकार के भोजन का प्रचलन था । यद्यपि कालिदास तथा भवभूति ने प्रत्येक खाद्य एवं पेय पदार्थ का वर्णन नहीं किया तथापि इनके प्रसंगतः यत्र-तत्र उल्लेख से यह स्पष्ट प्रतीत होताहै कि ग्राम्य एवं नागरी नारियाँ इन पदार्थों में विविध प्रकार के यव[१], चावल[२], तिल[३] आदि अनाज, दूध, दही[४], (नवनीत)[५] मधु,[६] मांस,[७] मिष्ठान्न[८] फल, इलायची, लौंग, कालीमिर्च, नमक आदि मसाले, पान-सुपारी आदि का प्रयोग आवश्यक आवश्यकता समझ कर करती थीं ।

वनवासिनी तपस्विनी नारियां या कन्याएं सामान्यतः वन्य मोटे हल्के धान्यों, नीवार, श्यामाक (सावां), फल, कन्दमूल का आहार में प्रयोग करती थीं । कण्वाश्रम में शकुन्तला तथा जनस्थान (दण्डकारण्य) जैसे वन में सीता के द्वारा इनके प्रयोग करने का उल्लेख प्रायः दोनों महाकवियों ने अपनी नाट्य कृतियों में किया है । यथा --

''प्रतिष्ठितनीवार हस्ताभि स्वस्तिवाचनिकाभिस्तापसीभिरंभिनन्यमाना शकुन्तला तिष्ठति। '' (अभि. ४ अंक पृ. ६७)

,, शमेष्यति मम शोकः .... त्वया रचितपूर्वम् नीवारबलिम् विलोकयतः (अभि.४/२१)

,, नीवारजुष्टभागमस्माकमुफ्हरन्त्विवति । (अभि. अंक २, पृ. ३५)

,, श्यामाक सुर्ष्टिपरिवर्धितको जहाति, सोऽयं न पुत्रकृतकः पदवीं मृगस्ते । (अभि. ४/१४)

,, करकमलवितीर्णैरम्बुनीवारशष्पै स्तरुशकुनिकुरंगान् मैथिली यानपुष्यत् । (उत्तर. ३/२५)

तपोवन की ऋषिकाओं, मुनिकन्याओं आदि के भोजन की सामग्री में फलों का भी प्रमुख स्थान था ।

---

१. कुमार ७/१७ (यवप्रहोहः), ७/८२ (यवावतंसम्), रघु. ७/२७ प्रम्लानबीजांकुर रघु. १७/१२ (दूर्वयवांकुर)

२. ऋतु. ३/१, १०,, १६, ४/१, ८/१६, ५/१, १६ रघु. ४/३७, कुमार. ५/४७

३. अभि. ३ शकुन्तला - अन्यथा अवश्यं सिंचतं मे तिलोदकम्, पृ. ४६

४. रघु. २/२३ दोहावसाने पुनरेव दोग्ध्रीः १, रघु. २/६३ न केवलानां पयसां प्रसूतिमवे हिमां कामदुधां प्रसन्नाम् ।
अभि. ६/२८ (दुग्धनिर्मित क्षीर = खीर) हंसौ हि क्षीरमादत्ते . . ।
रघु. १०/५१ पयः रुवम.

५. माल., ३ अंक नवनीतकल्पहृदयः आर्यपुत्रः'' पृ. ३०६.
उत्तर. ३/२३ धवलबहलमुग्धा दुग्ध कुल्येव, कुमार. ७/७२ गव्यम्, रघु १/५४ हैयंवगवीन

६. ऋतु. ५/१०, कुमार. ८/७७, रघु. ६/३६ माल. अंक ३ पृ. ३०१.

७. अभि. ६ अंक (मत्समास) पृ. ६६ अंक २ (शूल्यमांस भुना हुआ) पृ. २६, मधुपर्क

८. माल. (मत्स्यण्डिका) पृ. २६६, विक्रमो. अंक ३ (खण्ड मोदक), पृ. १६७.

किसी अभ्यागत अतिथि के स्वागत सत्कार में गृहिणियां फलों का उपयोग अनिवार्यतः किया करती थीं । कण्वाश्रम में दुष्यन्त के पहुंचने पर उसके आतिथ्य सत्कार के लिए अनसूया ने फल मिश्रित अर्ध्य [1] कुटिया से लाने के लिए शकुन्तला को निर्दिष्ट किया था । फलों में सहकार (आम)[2], जामुन[3], द्राक्षा [4], खर्जूर [5], नारियल [6], बीजपूरक [7] (नीबू) आदि उल्लेखनीय हैं जिनमें आम का वर्णन सर्वाधिक होने से प्रतीत होता है, आम का प्रयोग अधिक किया जाता होगा ।

भवभूति ने उत्तर रामचरित में जन स्थान के व नों में कदली [8] (केला) का स्पष्ट उल्लेख किया है जो प्रतीत होता है, सीता को अत्यधिक रुचिकर लगते होंगे । इसके अतिरिक्त वहां की निर्झरिणियों के आस पास तटों पर उसे जामुन के [9] कुंजों का पके फलों की राशि से कालापन दृष्टिगत होने से पके जामुन फलों की सुलभता सूचित होती है ।

नारियों का मदिरापान - तत्कालीन समाज की आर्थिक समृद्धि तथा विलासिता का पूर्ण परिचय इस तथ्य से भी प्राप्त होता है कि दोनों महाकवियों ने अपनी कृतियों में नारी पात्रों के मधुपान करने की प्रवृत्ति का अनेक स्थलों पर उल्लेख किया है । यथा - रानी इरावती के मदपान का चित्रण इरा. " चेटि निपुण के श्रृणोमि बहुशों मदः किल स्त्रीजनस्य मण्डनमिति सत्य एष लोकवादः । " मदेनक्लाभ्यमानमात्मानमार्यपुत्रस्य दर्शने हृदयं त्वरयति चरणौ पुनर्न मम प्रसरतः । । " [10] चेटि ।

कामी पुरुषों के साथ विलासिनी नारियों का निशाकाल में मद्यपान द्रष्टव्य है –

सुगन्धि निःश्वास विकम्पितोत्पलं मनोहरं कामरतिप्रबोधकम् ।
निशासु हृष्टाः सह कामिभिः स्त्रियः पिबन्ति मद्यं मदनीयमुत्तमम् । । ऋतु. ५/१०)

---

१. अभि. १ अनसूया - हला शकुन्तले । गच्छोटजम् फलमिश्रमर्धमुपहर । पृ. ४३८
२. ऋतु. ६/२८ (सहकार), माल. ४/१३ (सहकार), अभि. १ अंक, पृ. ४१४
अभि. ३ (सहकार) ४३७ अंक ६ (चूतपादप) ६/२ कुमार ४/३८
पू. मे. १८ छन्नोपान्तः परिणतफलद्योतिभिः काननाम्रैः ।
३. विक्रमो., अंक ४ (जम्बूविटपमध्यास्ते) पृ. २२० ४/२७ राजजम्बुद्रुमस्य
४. रघु. ४/६५ द्राक्षावलयभूमिषु ,
५. रघु. ४/५७ खर्जूरी स्कन्धनद्धानां
अभि. २ अंक विदू. - यथा कस्यापि पिण्डखर्जूरैरुद्वेजितस्य तिन्तिण्यामभिलाषो भवेत । पृ. ४३३.
६. रघु. ४/४२ नारिकेलासवं योधाः शात्रवं च पपुर्यशाः । ।
७. माल. अंक ३ तद् बीजपूरकेण शुश्रूषितमिच्छामि, पृ. २६०
" ३ " ननु सन्निहितं बीजपूरकम् । पृ. २६१ ।
८. उत्तर. ३/२१ एतत्तदेव कदलीवनमध्यवर्ती कान्तासखस्य शयनीयशिलातलंमे
९. उत्तर. २/२० दूह . . . . . फलभरपरिणामश्यामजम्बूनिकुंजस्खलनमुखरभूरि स्रोतसो निर्झरिण्यः ।
१०. माल. अंक ३/१२ के पश्चात् इरावती की उक्ति, पृ. २६० ।

रति प्रसंग में स्त्री पुरुष का एक साथ मद्यपान करने का उल्लेख हुआ है --

''पतिषु निर्विविशुर्मधुमंगनाः स्मरसखं रस खण्डनवर्जितम् । (रघु. ९/३६)

मान्यमक्तिरधवा सखीजनः सेव्यतामिदमनंगदीपनम् ।

इत्युदारमभियाय शंकरस्तामपायत् पानमम्बिकाम् ।। (कुमार. ८/७७)

प्रमदा नारियों के मदपान करने से उनकी लाल आंखें घूमने लगती थीं तथा वाणी भी शब्द शब्द पर स्खलित होने लगती थी --

नयनान्यरुणानि घूर्णयन्वचनानि स्खलयन्पदे पदे ।

अस्ति त्वयि वारुणीमदः प्रमदानामधुना विडम्बना ।। (कुमार. ४/१२)

भवभूति ने भी मालतीमाधव में एक स्थल पर नारियों (योद्धाओं की प्रियतमाओं) के पीने से बची मदिरा को योद्धाओं द्वारा निशीथोत्सवे में पीने का उल्लेखकिया है --

''अद्यैवन्दुमयूखखण्डनिचितं पीतं निशीधोत्सवे थैर्लीलापरिरम्भदायिदयिता गण्डूषंमधु ।'' (मा. मा. ८/१०)

इस प्रकार नारी पात्रों के उत्तम खान पान के उल्लेख से तत्कालीन नारी समाज की आर्थिक सम्पन्नता का स्पष्ट परिचय प्राप्त होता है ।

श्रम पूर्ण आर्थिक क्रियाएं - (उद्योग-धन्धे) -- आर्थिक सम्पन्नता हेतु समाज में पुरुषों के साथ ही नारियों की अनेक श्रमपूर्ण आर्थिक [1] क्रियाएं अनवरत रूप से चलती रहती थीं ।

यद्यपि सम्पन्न वर्ग की नारियाँ श्रमपूर्ण आजीविका सम्बन्धी कार्य (धन्धे) से बची हुई थी तथापि गृहिणियों के विविध उत्तरदायित्वपूर्ण कर्तव्यों का ये नित्य निर्वाह करती थीं । सामान्य वर्ग की नारियाँ श्रमपूर्ण कार्यों में लगी रहती थीं । कृषि सम्बन्धीकार्यों में ये सहायिका होकर ईख[2] धान आदि के खेतों की रखवाली भी किया करती थीं । कालिदास ने ऐसी श्रमपरायणा नारियों का उल्लेख किया है, जिनमें पुष्पलावी, शालिगोपी, उद्यानपालिका [3], सौरभांडरक्षिका, [4] परिचारिकाएं आदि इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती हैं । [5]

वेश भूषा - तत्कालीन समाज में नारियाँ ऋतु अनुकूल ऊनी, रेशमी (क्षौम या कौषेय) तथा सूती विविध वर्ण के वस्त्र धारण करती [6] थीं । कालिदास तथा भवभूति ने विविध प्रकार के

---

१. पू. मे. २६ . . . छायादानात् क्षणपरिचितः पुष्पलावीमुखानाम् ।

२. रघु. ४/२० इक्षुच्छायानिषादिन्यस्तस्य . . . . शालिगोप्यो जगुर्यशः ।।

३. माल. अंक ३, पृ. २६० '' ततः प्रविशति उद्यानपालिका

४. माल. अंक ४ पृ. ३१६ यत्सारभाण्डगृह व्यापारिता मालविका देव्या संदिष्टा

५. माल. अंक ४, पृ. ३२१ बालिका आर्यपुत्रवचनमनुतिष्ठत्

रघु. १६/२३ इति कृतमार्गदर्शनः . . . . . परिजतांगनारतं . . . . .

मा. मा. अंक ३, पृ. १४५, अंक ६ दासी (प्रतिहारी = भूषणपटलकहस्ता), पृ. २६७

६. अभि. ४/५, विक्रमो. ४/७ (अंशुक) अंक ३, पृ. ३७४ नीलांशुक

मा. मा. ६/५ (चीनांशुक) अंक ७ पृष्ठ ३२६ (उत्तरीयांचल)

मा. मा. ४/८ (उत्तरीय स्तनों से स्खलित), अंक ६, पृ. २६८ (रक्तवर्णांशुक)

कलात्मक, अवस्था, अभिरुचि, समय उत्सव) ऋतु आदि को दृष्टि में रखकर नारी पात्रों के परिधानों के साथ ही उनके द्वारा प्रयुक्त स्वर्ण, रत्न, मणि मुक्ता, पुष्प आदि के बहुमूल्य आभूषणों का भी उल्लेख किया है [१] जिनका तुलनात्मक विस्तृत विवेचन इस प्रबन्ध के पंचम परिच्छेद में किया जा चुका है ।

नारीपात्रों की इस सुरुचिपूर्ण एवं समुन्नत वेश भूषा से तत्कालीन नारी समाज की आर्थिक सम्पन्नता का स्पष्ट परिचय प्राप्त होताहै ।

आवास - (गृह) - कालिदास तथा भवभूति ने अपने नारी पात्रों के आवास से सम्बन्धित कलात्मक [२] भवनों (प्रासाद, हर्म्य, सौध, सदम आदि) से लेकर उटजों(पर्ण कुटीरों) तक का उल्लेख अपनी कृतियों में किया है । उस समय के वास्तु शिल्पकारों द्वारा अनेक प्रकार के उत्कृष्ट तोरण, वलभी गवाक्ष युक्त कई मंजिलों के भवनों का[३] निर्माण होता था । नगरों में वास्तु शिल्पियों के संघ[४] राज्य की ओर से निर्माण कार्य में प्रवृत्त होते थे । ये आवास गृह विविध प्रकार के गृहोपकरणों (आसन्दिकाओं = आसन) पीठिका, पात्रों = कलश कुम्भ आदि से परिपूर्ण रहते थे ।

इस आवसीय व्यवस्था को दृ०ष्टि में रखते हुए नारी पात्रों की सुरुचि एवं आर्थिक सम्पन्नता स्पष्ट झलकती है ।

कालिदास ने सामान्य लोकजीवन में जहां नारी को श्रमपरायण चित्रित किया है, वहां भवभूति ने भी दैनिक गृहस्थ जीवन के चक्की से धान्य पीसने अथवा धान्य को मूसल से कूटने आदि विविध श्रमपूर्ण कार्यों में नारी की महत्वपूर्ण भूमिका का स्पष्ट संकेत किया है । कण्वाश्रम के फल फूल वाले पौधों को सींचने के श्रमपूर्ण कार्य में जहां प्रियंवदा अनसूया के साथ शकुन्तला व्यस्त [५] चित्रित है, वहां ईख तथा धान के खेतों में कार्य करने वाली श्रमिक स्त्रियों का भी उल्लेख [६] प्राप्त होता है । मूसल से धान्य कूटने [७] का कार्य सामान्यतः ये ही करती होंगी ।

---

१. माल. ३/२१ (हेमकांची), ३/५ (पुष्पाकरण) विक्रमो. १/१७ के बाद (एकावली), ३/१५ (नूपुरशिंजन) अभि. ६/११ अंगुलीयकम्
अभि. ४ पृ. ४८४ (अंगूठी), मा. मा. ५/१८ (जातरूप मणिसंयोग)
उत्तर. १/१८ मा. मा. ६/१४ (कंकण) ६/६ (अलंकृत मंडना मालती), ७/३ मणिनूपुर

२. रघु. ३/१६ (सदम) ६/६, कुमार. ६/४८ (सदम), रघु. १६/२ सौध कुमार. ७/६३ (प्रासाद), मा. मा. । अंक पृ. ७७ (भवन वातायन, अंक ३, ५४६) मा. मा. अंक ६/४ के पश्चात् (जालमार्ग), ७/५ (प्रासाद), ८ अंकप-. ३६२ (गृहे-गृहे)

३. रघु. १/५०, ५२, १४/८१, अभि. १ अंक, पृ. १७, ५८, कुमार. ५/१७, रघु. १६/२

४. रघु. १६/३८ तां शिल्पिसंघाः प्रभुणा नियुक्तस्तथागतां सम्भृतसाधनत्वात् ।

५. अभि. अंक १/१५ के बाद राजा - अये । एतास्तपस्विकन्याः स्वप्रमाणानुरूपैः सेचनघटैर्बाल पादपेभ्यः पयोदातुमित एवाभिवर्तन्ते । पृ. ४३३.
अभि. १/२२ के पश्चात् राजा - नूनं यूयमम्यनेन कर्मणा परिश्रान्ता । पृ. ४३८.

६. रघु. ४/२० इक्षुच्छायानिषादिन्यः . . . . शालिगेप्यो जगुर्यशः ।।

७. मा. मा. ६/५१ . . . मुसलैर्बत कुट्टनानि ।

. समृद्ध परिवरों में आर्थिक रूप से अशक्त स्त्रियां आजीविकोपार्जन के लिए धात्री [१] (धाय), पुष्पमाला [२] गूँथने, पान लगाने, परिचारिका [३] दाई के सेवा कार्य भी किया करती थीं ।

अतएव उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि कालिदास तथा भवभूति कालीन नारियों का खान पान (भोजन), वेशभूषा (वस्त्रालंकार), आवास (गृह) उच्चस्तरीय था तथा इनसे उनकी आर्थिक सम्पन्नता, परिष्कृत कलात्मक सौन्दर्य अभिरुचि एवं सांस्कृतिक उत्कर्ष भी व्यक्त होता है ।

आर्थिक जीवन को वैभव सम्पन्न बनाने में गृहस्थ जीवन सम्बन्धी अनेक श्रमपूर्ण उत्तरदायित्वों तथा आजीविका सम्बन्धी कार्यो के निर्वाह करने में इन नारी पात्रों की समाज में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका रही है । खेत खलिहान, कुटियों से लेकर राज प्रासादों तक इन नारी पात्रों को आजीविका निर्वाह हेतु आर्थिक कार्यों में तल्लीन हम देख सकते हैं ।

राजकीय एवं राजनैतिक जीवन

मानवीय जीवन विविध प्रकार की क्रियाओं के कारण बहुपक्षीय होता है जिसमें राजनीतिक गतिविधियाँ भी अत्यन्त महत्वपूर्ण होती हैं । कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक जीवन से भी जुड़े हुए परिलक्षित होते हैं ।

नारी पात्रों के अन्तर्गत राजमहिषी, राजकन्या, के अतिरिक्त उसकी सखियों एवं सेविकाओं का न केवल राजकीय अन्तःपुर में अपितु समस्त बाह्य राज परिसर में भी प्रभाव होता था । मंत्रिपरिषद् राजनीतिक विषयों में यद्यपि विधि सम्मत सामयिक सद्परामर्श राजा को प्रदान करती थी, तथापि रानियाँ भी अनेक गम्भीर राजनैतिक विषयों पर सचिव जैसा परामर्श देकर राजा के निर्णय के प्रभावित क्रिया करती थीं । राजा अज के लिए अनेक रूपों में इन्दुमती सचिव जैसी परामर्शदात्री भी थी । [४] रानी कैकेयी ने [५] राजा दशरथ के राम के राज्याभिषेक सम्बन्धी निर्णय को राजनीति से प्रेरित होकर परिवर्तित करा दिया था । परिणामतः राम के स्थान पर भरत को राजपद और राम को चौदह वर्ष का बनवास मिला था ।

कभी-कभी राजमहिषी भी राजनीति अथवा जनमत से प्रेरित अपयशपूर्ण आलोचना की पात्र होकर विवश राजा द्वारा परित्यक्ता बन जाती थीं । सती साध्वी होते हुए भी सीता को लोकनुरंजन के लिए लोकापवाद से विचलित होकर राम के द्वारा बनवास दे दिया गया । [६]

---

१. मा. मा. अंक १/३३ के बाद पृ. ६५ (धात्रेयिका)

२. पू. मे. २६ पुष्पलावीमुखानाम्, मा. मा. । अंक (कुसुमेषु व्यापारः) पृ. ६४

३. मा. मा. अंक १ '' अहं च भर्तुदारिकायाः प्रसादभूमि धात्रेयिका लवंगिका नाम , पृ.६५

४. रघु. ८/६७ गृहिणी सचिवः सखीमिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ ।

५. रघु. १२/२ कैकेयी शंकयेवाह . . . .।
रघु. १२/४ तस्याभिषेकसंभारं कल्पितं क्रूरनिश्चया ।
दूषयामास कैकेयी शोकोष्णैः पार्थिवाश्रुमिः ।।
रघु. १२/५ सा किला श्वासिता चण्डी भर्त्रा तत्संश्रुतौ वरौ . . . वितोरगौ ।

६. रघु. १४/३४, ३५, ३६,४० अवैमि चैनामनघेति किन्तु लोकापवादो बलवान् मतो मे।
उत्तर. १/२२ स्नेह दयांच सौख्यंच यदि वा जानकीमपि ।
आराधनाय लोकानां मुंचतो नास्ति मे व्यथा ।

राजा के कर्तव्य निर्वाह में प्रेरणा एवं सहायता देने वाली राजमहिषी न केवल अन्तः पुर में अपितु अन्यत्र व्रत एवं त्यागमय कार्यों में राजा की सहयोगिनी होती थी । दिलीप के वशिष्ठाश्रम जाने पर नन्दिनी की सेवामयी कठिन साधना मं रानी सुदक्षिणा भी सहभागिनी बनी थी । [१]

राजमहिषी के वैयक्तिक सम्बन्धों एवं प्रभाव के कारण प्रतिवेशी राज्य के साथ सन्धि-विग्रह जैसे महत्वपूर्ण निर्णय लिए जाते थे । कभी-कभी राजनैतिक विषयों में रुचि लेकर रानियाँ बन्दियों को विसुक्ति करा देती थीं और उनके प्रभाव के कारण उनके भाइयों को (राजश्याला) को राष्ट्रीय [२] (उच्च पुलिस अधिकारी) दुर्गपाल आदि महत्वपूर्ण राजपदों पर नियुक्त कर लिया जाता था । बिजित अथवा अधीन राज्य पर भी प्रायः राजमहिषी के भाई-भतीजे आदि सम्न्धी प्रतिष्ठापित हो जाते थे। मालविकाग्निमित्रम् के पंचम अंक के प्रवेशक में चेटी समाहितिका द्वरा रानी धारिणी के मंगल गृह में पड़ोसी विदर्भराज्य के अपने भाई वीरसेन [३] के किसी राजनैतिक विषय से सम्बन्धी पत्र को लेखक से सुने जाने का उल्लेख हुआ है । आगे उसके तथा मालविका के प्रभाव से विदर्भ नरेश को वश में कर यज्ञसेन तथा माधवसेन को बन्धनमुक्त [४] कराकर वरदा नदी को विदर्भ राज्य की द्वैराज्यीय विभाजक रेखा मानकर क्रमशः उत्तर दक्षिण राज्यों में इन्हें प्रतिष्ठापित किया जाता है । माधवसेन की ही छोटी बहिन राजकुमारी मालविका थी जिसे परिव्राजिका ने प्रच्छन्नवेश में कौशिकी ने विग्रह के साथ विदर्भ राज्य से सन्धि कराने हेतु विदिशा के राज प्रसाद में शुंगराज अग्निमित्र के समीप भेजा था । [५]

राजनैतिक प्रभाव से राजकन्याओं अथवा अमात्य पुत्रियों के वैवाहिक सम्बन्ध सुनिश्चित होते थे । अपने राजनीतिक प्रभुत्व अथवा सम्बन्ध को किसी अन्य आसपास के राज्य से स्थापित करने के लिए ऐसे विवाह सम्बन्ध सामान्यतः अधिक स्थायी और प्रभावी सिद्ध होते थे । शुंग साम्राज्य के साथ स्थायी एवं प्रभावी राजनैतिक सम्बन्ध स्थापित करने की दृष्टि से राजा अग्निमित्र के साथ विदर्भ राजपुत्री धारिणी तथा आगे राजकुमारी मालविका का वैवाहिक सम्बन्ध अधिक सहायक सिद्ध होता है । लेखक के मतानुसार इन्दुमती स्वयंवर भी राजनैतिक स्तर पर विदर्भ के साथ अन्य राज्यों के साथ भावात्मक सम्बन्धों को सुदृढ़ करने का कालिदास का एक श्लाघनीय काव्य प्रयास है ।

---

१. रघु. १/३५, २/१ जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्याम्, २/२, ३, १६, २०, २१, २४, ७०.

२. अभि. अंक ६ (मिश्र विकम्भक) ६/१ के पूर्वापर (धीवर प्रसंग) पृ. ५१२ - ५१५

३. माल. अंक ५ (प्रवेशक) मंगलगृहे आसनस्था भूत्वा विदर्भविषयात् भ्रात्रा वीरसेनं प्रेषित पनं लेखकैरर्वाच्यमानं श्रृणोति । पृ. ३२०

४. माल. ५/१० के पूर्व उमे - "विजयदण्डैविदर्भनाथं वशीकृत्य बन्धनामोचितः कुंमारो माधवसेनो नाम तस्येयं कनीयसी भगिनी मालविका नाम । पृ. ३२६
राजा - यज्ञसेनश्यालमुररीकृत्य मोच्यन्तां सर्वे बन्धनस्थाः । पृ. ३३२

५. माल. अंक ५, राजा - तत्र भवतोर्यज्ञसेन माधवसेनयोर्द्वैराज्यमिदानीमवस्थापयितु कामोऽस्मि । - ५/१३ तौ पृथगूवरदांकूलेशिष्टामुत्तरदक्षिणे नक्तन्दिवं विभज्योभौ शीतोष्ण-किरणाविव ।। पृ. ३२६.

★ महाकवि कालिदास, डा० कैलाशनाथ द्विवेदी, पृ. ३४

भवभूति ने भी नारी पात्रों (विशेषतः मालती जैसी अमात्यपुत्री) के वैवाहिक [१] संबन्ध में पद्मावती नरेश के राजनैतिक हस्तक्षेप का समुल्लेख किया है। वस्तुतः पूद्मावती के मंत्री भूरिवसु अपनी कन्या मालती का विवाह विदर्भपति के मंत्री देवरात के पुत्र माधव जिस पर उनकी कन्याअनुरक्त थी, से करना चाहते थे किन्तु राजा ने धर्मशास्त्रीय नियमों की अवहेलना कर मालती का विवाह अपने नर्मसचिव नन्दन के साथ करने के लिए राजनीतिक प्रभाव का प्रयोग करते हुए हस्तक्षेप किया। ''मालतीमाधव'' के द्वितीय [२] अंक के प्रवेशक में यह तथ्य चेटियों द्वारा व्यक्त होता है, जिसमें इस राजनैतिक हस्तक्षेप को आगे कामन्दकी की कूटनीति से अप्रभावी होने की सम्भावना प्रकट की गई की है।

राजनैतिक दृष्टि से सार्वजनिक राजकीय समारोहों (राज्याभिषेक, विजयोत्सव) आदि में राजपरिवार के साथ, राजमहिषी, राजपुत्री, मंत्रिपुत्री अपनी सखियों सहित भाग लेती ही थी, सामाजिक ऋतूत्सवों, मदन महोत्सव, कौमुदी महोत्सव, होलोत्सव, आदि में वैयक्तिक रूप से राजा के साथ रानियां भी प्रायः भाग लिया करती थीं। [३] राजपरिवार में अपनी सन्तानों के सामयिक शैशव[४] संस्कारों को सम्पन्न करने के लिए राजकीय व्यवस्था के अनुसार समारोह समायोजित होते थे, जिसके सम्बन्ध में तमसा द्वारा निर्वासिनी सीता की अपनी आशंका एवं चिन्ता प्रकट की गई है।

तत्कालीन राजाओं के राजनैतिक दृष्टि से निकले सैन्य अभियानों [५] में भी नारियों (रनिवास के अतिरिक्त अंगरक्षिकाएं (यवनी), परिचारिकाएं, वेश्याएं आदि) का भी समावेश सामान्यतः दृष्टिगत होता है। सैन्य अभियान के सात ही राजा का स्वागत या विदा में भावपूर्ण अभिनन्दन भी कुमारियों पौरांगननाओं[६] (बालाओं एवं वृद्धाओं) द्वारा सम्पन्न होता था।

★ विश्वभारतीपत्रिका शान्ति निकेतन अंक १६/१, १९६७ द्रष्टव्य - ''कालिदास द्वारा वर्णित इन्दुमती स्वयंवर डा. कैलाशनाथ द्विवेदी का शोध लेख

१. मा. मा. अंक २ (प्रवेशक) - चेढ़ी - (द्वितीया) - प्रभवति निजस्य कन्यकाजनस्य महाराज इति। अत आमरणं खलु मालत्या हृदयशल्यं माधवानुरागइति तर्कयामि। पृ. ८६

२. मा. मा. अंक २ (प्रवेशक) प्रथमा - अपि नाम भगवत्यत्रं किमपि भगवतीत्वं दर्शयिष्यति। पृ. ८७

३. अभि. ६/२० पीतं मया सदयमेवं रतोत्सवेषु, ६/२३ के बाद कंचुकी - देवेन प्रतिषिद्धे वसन्तोत्सवे त्वं चूतकलिका भगंमारंभसे, पृ.
माल. ३/१६ (दोहदोत्सव), ३/६ के पूर्व (दोलाधिरोहण), पृ. २८६
मा. मा. १/१६ के पश्चात् अवलोकिता - प्रवृत्तमदनमहोत्सवं मदनोद्यानं। पृ. ४२
मा. मा. १/२० के पश्चात् ''वारांगनाप्रवर्तितमहोत्सव कामदेवोद्यानं यात्रा . . पृ. ३०

४. उत्तर. अंक ३ तमसा - वत्से समाश्वसिहि आयुष्मतोः कुशलवयोर्वर्षिग्रन्थि मंगलं सम्पादयितुं भागीरथी पदातिकयोः गच्छामः। '' पृ. १६०.

५. रघु. ४/६१ यवनी मुखपद्मानां सेहे मधुमदं न सः।
रघु. ५/४६ रामापरित्राण विहस्तयोधं सेनानिवेशं तुमुलं चकार।

६. रघु. ४/२७ अवाकिरन् वयोवृद्धास्तं लाजैः पौरयोषितः।

सम्पूर्ण राजपरिवार में अनेक मनोविनोद के साधन(नर्तकियों के नृत्य गीत वाद्य आदि) सुलभ होते हुए भी राजा अपनी व्यक्तिगत ऐकान्तिक मनोरंजन अपनी प्रिय राजमहिषी अथवा अनेक प्रियाओं के साथ प्रमदवन में दोलाधिरोहण, दीर्घिका (वापं) या नदियों में जड़क्रीडा आदि द्वारा भी किया करता था "मालविकाग्निमित्रम्" में अग्निमित्र द्वारा अपनी प्रिय रानियों इरावती और धारिणी के साथ प्रमदवन में दोलाधिरोहण द्वारा श्रृंगार विलासपूर्ण मनोरंजन का सुन्दर चित्रण हुआ है जिसमें दोला (झूले) से फिसल कर गिर जाने के कारण [1] ज्येष्ठ रानी धारिणी के पैर ठीक न होने की सूचना स्वयं मालविका द्वारा दी जाती है ।

आतप से सन्तप्त कुश का अपनी अन्तःपुर की रानियों के साथ सरयू में जलक्रीडा करने का सुन्दर वर्णन कालिदास ने रघुवंश के सोलहवें[2] सर्ग में किया है, जिनके सोपानों से उतरने पर केयूरों के परस्पर रगड़ने, नूपुरों के शब्दायमान होने, काजल एवं सुगन्धित अंगरागों के जल में घुलने, शिरीषपुष्पावंतसों के धारा में बहने, मौक्तिकहारों के टूटने आदि का सुन्दर चित्रण प्राप्त होता है ।

ससैन्य राजा के मृगया-विहार हेतु वन में निकलने पर अंगरक्षिकाएं सशस्त्र यवनियाँ [3] जैसे नारी पात्र भी राजा का अनुसरण करती थीं तथा विषम आपात स्थिति में सुरक्षा सम्बन्धी अपने कर्तव्य में ये धनुषवाण लिए सावधान एवं तत्पर भी रहती थीं । "अभिज्ञान शाकुन्तल" के द्वितीय तथा षष्ठ अंक में इन सशत्र यवनी अंगरक्षिकाओं का उल्लेख हुआ है । [4]

वेत्रवती जैसी प्रतिहारी, चतुरिका, मधुरिका जैसी अन्तःपुर की चेटियां , प्रभृति नारीपात्रों की भी निरन्तर रानियों एवं राजा से सम्पर्क रहने के कारण अप्रत्यक्षरूप से इनके राजनीतिक जीवन को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका रहती थी । भवभूति के "मालतीमाधव" प्रकरण [5] में

---

१. माल. अंकक ३/५ के पश्चात् मालविका - आदिष्टास्मि देव्या - मालविके, गौतम चापलाद् दोलापरिभ्रष्टायाः सरुजा मम चरणौ । पृ. २८६

२. रघु. १६/५४ अधोर्मिलोलोन्मदराजहंसे रोधोलतापुष्पवहे सरय्वाः ।
विहर्तुमिच्छा वनितासखस्य तस्याम्भसि ग्रीष्मसुखे बभूव ।।
रघु. १६/५६ सा . . . अन्योन्यकेयूर विघट्टिनीभिः सनूपुरक्षोभपदाभिरासीत् . . . सरिदंगनाभिः ।
रघु. १६/५८ पश्यावरोधैः . . . . . गलितांगरागैः . . . . . पुष्पत्यनेकं सरयूप्रवाहः ।
रघु. १६/५६ विलुप्तभन्तः पुरसुन्दरीणां यदञ्जनं . . . . ,१६/६१ अमी शिरीष प्रसवावतंसाः प्रभ्रंसिनो वारिविहारिणीनाम् ।
रघु. १६/६२, ६३, ६४, ६५, ६६, ६६ ।

३. अभि. २/१ के पूर्व विदूषकः - एष वाणासनहस्ताभिर्यवनीभिर्वनपुष्पमाला धारिणीभिः परिवृतः इत एवागच्छति वयस्यः । पृ. ४७७.

४. अभि. अंक ६/२६ के पश्चात् यवनी - भर्तः ! एतद् हस्तोचापसहितं शरासनम् । पृ. ५३७

५. मा. मा. २/६ के पूर्व प्रस्तावना खल्वेषा कपटनाटकस्य, पृ. १०७.
मा. मा. २/७ गुणापेक्षं शून्यं . ...भवान्नन्दन इति ।
द्रष्टव्य प्रवेशक (द्वितीय अंक), पृ. ८७ अपि नाम भगवत्यत्र किमपि भगवतीत्वं दर्शयिष्यति? "

मदयन्तिका, लवंगिका, सौदामिनी, अवलोकिता, बुद्धरक्षिता प्रभृति नारी पात्रों के साथ कामन्दकी की कूटनीति पूर्ण गतिविधियाँ पद्मावती नरेश के राजनीतिक हस्तक्षेपपूर्ण निर्णय (मालती के साथ नन्दन के विवाह कराने) को अप्रभावी करने में अत्यन्त सफल सिद्ध हुई ।

उपर्युक्त अनेक पक्षीय राजकीय जीवन में नारी पात्रों (राजमहिषियों, राजपुत्रियों, राजसेविकाओं आदि) के घनिष्ठ सम्पर्क से प्रभावित राजा के माध्यम से राजनैतिक जीवन भी पर्याप्त प्रभावित प्रतीत होता है । यह भी कहा जा सकता है राजा के राजनैतिक परिवेश अथवा समसामयिक राजनैतिक दशाओं से राजा का अन्तः पुर (समस्त निवास) भी पर्याप्त प्रभावित होता होगा । तत्कालीन अन्तःपुरों की हंसपदिका, वसुमती, इरावती जैसी नारियों में न केवल राजा के एकनिष्ठ प्रणय सिद्धि की प्रतिस्पर्धात्मक राजनीति व्याप्त थी वरन् राजा के रूप में राज्य की एकमात्र प्रभुसत्ता को अपनी मुट्ठी में रख कर परोक्ष रूप में राजनैतिक क्षेत्र की एकच्छत्र स्वामिनी बनने की उत्कट लालसा व्याप्त रहती थी ।

सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन के कतिपय अन्य पक्ष

यद्यपि प्रस्तुत प्रबन्ध के द्वितीय परिच्छेदों में कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों के सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन की गतिविधियों तथा तृतीय से पंचम अध्यायों में सांस्कृतिक जीविका तुलनात्मक विवेचन किया गया है तथापि यहां नारीपात्रों के कतिपय अन्य महत्वपूर्ण पक्षों पर विचार किया जा रहा है । कालिदास [१] और भवभूति [२] दोनों महाकवियों ने नारी पात्रों के बहुआयामी सर्वांगजीवन के विविध पक्षों को अपनी कृतियों में सर्वथा उजागर किया है । शकुन्तला, मालविका के साथ ही मालती जैसी निसर्गतः सुकुमार सुन्दर कन्याओं की रचना समाज के लिए लालनीय प्रतीत होती है न कि विनाश करने योग्य ।

सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन के विविध पक्षों ने नारी पात्रों की कन्या, युवती, वधू, माता (श्वश्रू), भगिनी आदि रूपों में महत्वपूर्ण भूमिका अनेक प्रकार के उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यों के द्वारा सम्पन्न होती थी । अपने अप्रतिम प्रकृति प्रेम के अन्तर्गत जहां लता वृक्ष, फल, फूल के प्रति अनन्य आकर्षण इनमें परिलक्षित होता [३] है , वहां पशु पक्षियों से लेकर सामान्य मानव के प्रति इनमें निश्चल मातृत्वपूर्ण प्रेम एवं वात्सल्यभाव [४] विद्यमान है । कालिदास की शकुन्तला तथा भवभूति की सीता जैसे नारीपात्रों की इस दृष्टि से पूर्ण समानता स्वभावगत पाई जाती है ।

---

१. माल. २/३, १०, अभि. १/१६, १/१७, २/११, १३,

२. मा. मा. ६/५१ निर्माणमेव हि तदा तव लालनीयं, मा पूतनात्वमुपगाः शिवतातिरेव । नैसर्गिकी सुरभिणः कुसुमस्य सिद्धा, मूर्धिन स्थितिर्न मुसलैर्वत कुट्टनानि । ।

३. अभि. ४/६ पातुं न प्रथमं व्यवसयति जलं . . . . ४/१२ के बाद (लताभगिनींवनज्योत्स्ना) ४/१४ यस्य त्वया व्रणविरोपणमिंगुदीनां . . . .पुत्र कृतकः पदवीं मृगस्ते ।

४. उत्तर. ३/६ सीतादेव्या स्वकरकलितैः शल्लकीपल्लवाग्रैरग्रे लोलः करिकरभको यः पुरः पोषितो ऽभूत ।
उत्तर. ३/१६ के बाद सीता को उक्ति. पृ. २६८ (वात्सल्य)
उत्तर. ३/२० स्मरति गिरिमयूरः . . . . .३/२५ करकमलवितीर्णैरम्बु नीवारशष्पैस्तरु शकुनिकुरंगान् मैथिली यानपुष्यत् ।

इसी प्रकार कालिदास की वयोवृद्धा तापसीतुल्य नारियों में गौतमी,[१] कौशिकी आदि की भवभूति की कामन्दकी, अरुन्धती, कौशल्या आदि से क्षमा, दया, ममता, वात्सल्य आदि नारी सुलभ गुणों में पूर्ण समानता पाई जाती है ।

कालिदास की कृतियों में भवभूति की अपेक्षा नारी समाज में भोग विलास के साधन के रूप में अधिक चित्रित पाई जाती है । उद्दाम संभोग श्रृगार की पृष्ठभूमि में जितना कालिदास ने अपने नारी पात्रों (मालविका, उर्वशी, शकुन्तला आदि) को आलम्बन या उद्दीपन विभावों में उत्तेजक रूप में उभारा है, उतना भवभूति ने नहीं, तथापि सम्पन्न समाज के भोग विलास की सामान्य प्रवृत्ति को चित्रित करने के लिए भवभूति ने यत्र-तत्र वेश्यादि [२] वारी पात्रों को नाटक में सूच्य रूप में प्रयुक्त किया है । इस सम्बन्ध में श्री द्विजेन्द्र लाल राय की [३] वह अवधारणा तथ्यपूर्ण तथा समीचीन प्रतीत होती है -

''अभिज्ञान शाकुन्तल'' में नारी केवल उपभोग की सामग्री है, परन्तु उत्तररामचरित में नारी पूजनीय है । इन दोनों नाटकों में पग-पग पर नारी जाति की इस विभिन्न पदवी को देख सकते हैं । यह जो आचार-व्यवहार का वैषम्य बतलाया गया है वह सामयिक आचार का पार्थक्य न होकर दोनों कवियों की रुचि का ही परिचायक हो सकता है, किन्तु कवि चाहे जितना बड़ा हो वह समय के बहुत ऊपर नहीं जा सकता । '' [३]

भवभूति [४] की अपेक्षा कालिदास अपनी नायिकाओं के वासनामुक्त पावन प्रेम को प्रारम्भ में चित्रित करने में कम सफल हो सके हैं । उदाहरणार्थ ''अभिज्ञानशाकुन्तलम्'' के तृतीय अंक में तापसी शकुन्तला का कामपरवश स्वच्छन्द, निर्लज्ज तथा कानोच्छ्वसित प्रेम व्यापार देखते हैं जबकि भवभूति के मर्यादित पावन प्रेम की परिकल्पना अत्यन्त ऊँची है, जिसे उन्होंने मालती, सीता जैसे

---

१. अभि. ३/२१ के बाद (गौतमी का शकुन्तला के शरीर वृतान्त जानने के लिए आना। पृ. ४७३.
५/२७ के पूर्व गौतमी (प्रत्यादेशपरुषे भर्तृरि किं वा मे पुत्रिका करोतु ? (माल. ५/१० के पूर्व कोशिकी) ।
उत्तर . ४/११ (अरुन्धती, ४/१६ (कौशल्या), मा. मा. ३/१, १०/१८ आदि (कामन्दकी) पृ. ३२७.

२. मा. मा. ८/१० अद्यैवेन्दुमयूखखण्डनिचितं पीतं निशीथोत्सवे. . . गण्डूषशेषं मधु । मा. मा. ७/५ प्रासादानामुपरि . . . . .माल्यामोदी मुहुरूपचितस्फीत कर्पूरवासो वातो यूनामभिमतबधूसं निधानं व्यनक्ति ।

३. कालिदास और भवभूति, (अनु. रूपनारायण पाण्डेय), बम्बई, १६५६, पृ. १६०

४. मा. मा. २/२ ज्वलतु गगने, रात्रौ रात्रावखण्डकलः शशी ,
दहतु मदनः किं वा मृत्योः परेण विधास्यत ।
मम तु दयितः श्लाध्यस्तातो जनन्यमलान्वया,
कुलंमलिनं न त्वेवायं जनो न च जीवितम् ।।
मा. मा. २/३ निकामं क्षामांगी . . . .मनः कम्पयति च । २/४, ५.

नारी पात्रों में साकार किया है ।[१]

कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र स्मृतियों द्वारा अननुमोदित अथवा तत्कालीन अनुमोदित सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं से पूर्णतः प्रभावित प्रतीत होते हैं । कहीं कहीं इन नारी पात्रों की इन परिस्थितियों एवं प्रवृत्तियों में समानता पायी जाती है तो कहीं असमानता ।

दोनों महाकवियों के नारी पात्रों में विविध लौकिक धर्मों को कुशलता पूर्वक सम्पन्न करने में सामान्य व्यावहारिकता की कोई कमी नहीं है । अपने गृह, परिवार, परिजन, परिवेश के प्रति सभी दायित्वों को निर्वाह करने में ये कभी पीछे नहीं रहते । चाहे अपनी सखियों से परस्पर सरस हास परिहाससहित सुख दुःख का एकान्त वार्तालाप हो, परिजन या परिवारीजन माता पिता या पति पुत्रों के संस्कारों के प्रति दैनिक कर्तव्य की बात हो, अपने सम्बन्धी जनों के कुशल क्षेम की चर्चा हो, ये नारी पात्र शील एवं सौजन्यपूर्ण व्यावहारिकता से समन्वित दृष्टिगत होते हैं । प्रियंवदा,[२] शकुन्तला,[३] लवंगिका,[४] मालती,[५] सीता,[६] वासन्ती,[७] आदि इसके प्रत्यक्ष उदाहरण इन दोनों कवियों के नारी पात्रों में प्रस्तुत किये जा सकते हैं ।

प्रतीत होता है, इन नारी पात्रों का अपनी सखियों से निश्छल, निःस्वार्थ तथा पक्षपात रहित प्रेम व्यवहार होता था । प्रियंवदा, अनसूया का शकुन्तला के साथ तथा लवंगिका, मदयन्तिका का

---

१. उत्तर. १/३८ इयं गेहे लक्ष्मीरियमृतवर्तिर्नयनयोः . . . . . परमसह्यस्तु विरहः ।
उत्तर. २/२८ यस्यां ते दिवसास्तया सह मया नीताः पुनः स्वे गृहे . . . . . .,
३/१३ तटस्थं नैराश्यादपि . . . . द्रवीभूतं प्रेम्णा तव हृदयमस्मिन् क्षण इव ।

२. अभि. १/१६, १/२० के पूर्व प्रियंवदा, अभि. ४/१ के पूर्व तथा पश्चात् प्रियंवदा, ३/१० के पूर्व प्रियंवदा ।

३. अभि. ४/१८, १६, ७/२५ के पूर्व शकुन्तला - अथ कथमार्यपुत्रेण स्मृतो दुःखभागी अयं जनः ? पृ। ५५४

४. मा. मा. २/६ के पश्चात् लवंगिका - अस्त्येतद्यन्नरेन्द्रवचनानुरोधेन . . . जनोऽमात्यं जुगुप्सते । पृ. १०८, ३/८ के पश्चात् लवंगिका पृ. १३७.

५. मा. मा. २/२, २/७ के पूर्व (कथमुपहारीकृताऽस्मि राज्ञस्तेन), पृ. १०८.
२/६ के पश्चात् मालती की उक्ति, पृ. ११६, ८/६ तथा इसके पश्चात् की उक्ति प. ३८४.

६. उत्तर. १ अंक सीता - अपि कुशलं मे सकलगुरुजनस्य आर्यायाश्चशान्तायाः पृ. १५४
सीता - नमो रघुकुल देवताभ्यः नमः आर्य पुत्रचरण कमलेभ्यः, पृ. १७३

७. उत्तर. ३/२१ एतत्तदेव कदलीवनमध्यवर्ती . . .सीता ततो हरिणकैर्नविमुच्यते स्म
३/२६ त्वं जीवितं त्वमपि मे हृदयं द्वितीयं, त्वं कौमुदी नयनोरमृतं त्वमंगे ।
इत्यादिभिः प्रियशतैरनुरुध्य मुग्धां, तामेव-शान्तमथव किमिहोत्तरेण ।।

अपनी प्रिय सखी मालती के साथ निःस्वार्थ , निष्कपट एवं पक्षपात रहित प्रेम व्यवहार दोनों कवियों के इन रूपकों में सर्वत्र पाया जाता है । [१]

कालिदास कालीन समाज में प्रतीत होता है कि विवाहिता नारियों में पर्दा-प्रथा का पूर्णतया प्रचलन था । तापसवृद्धा गौतमी एवं ऋषि शिष्य शार्ङ्गरव तथा शारद्वत के साथ शकुन्तला जब हस्तिनापुर राजा दुष्यन्त के समक्ष पहुँची तो उसके अवगुंठनवती होने का स्पष्ट उल्लेख इस प्रकार किया है --

" का स्विदवगुण्ठ नवती नातिपरिस्फुट शरीर लावण्या ।
मध्ये तपोधनानां किसलयमिव पाण्डुपत्राणाम् ।। (अभि. ५/१३)

शकुन्तला को सम्यक् रूप से देखकर पति के पहिचानने के लिए गौतमी[२] ने उसका घूंघट उठाते हुए कहा था -

"जाते । मुहूर्त मा लज्जस्व । अपनेष्यामि तावत् ते अवगुण्ठनम् ।
ततस्त्वां भर्ता अभिज्ञास्यते । " (गौतमी की उक्ति अंक ५. श्लोक १६ के पूर्व)

भवभूति ने अपने किसी भी रूपक में नारी पात्रों के अवगुण्ठन अथवा पर्दे के प्रयोग का उल्लेख नहीं किया है, ऐसा प्रतीत होआ है कि उनके समय में समाज में नारियों में पर्दा प्रथा का प्रचलन कम रहाहोगा ।

यद्यपि समाज में पुरुषों के साथ नारियों की मित्रता अथवा संगति सामान्यतः प्रचलित नहीं थी तथापि विशेष परिस्थितियों में स्त्री पुरुषों ने परस्पर समझ बूझ कर संगीत (साहचर्य) करने के संकेत कालिदास तथा भवभूति की कृतियों में पाये जाते हैं । कभी कभी विषम परिस्थितिवश अपरिचित पुरुषों के साथ शकुन्तला जैसे नारी पात्र का सौहार्द दुष्यन्त जैसे पुरुष के साथ वैर रूप में परिणत दृष्टिगत होता था, इस सम्बन्ध में गौतमी [२] की सामयिक सीख सर्वथा समीचीन प्रतीत होती है । इसी प्रकार मालती माधव में बौद्ध संन्यासिनी कामन्दकी की पद्मावतीश्वर के मंत्री भूरिवसु से मित्रता का पता स्वयं उसी के शब्दों में ज्ञात होता है । [३]

---

१. अभि. १/२२ के पश्चात् राजा - अहो । समानवयोरूपरमणीयं भवतीनां सौहार्दम् ।
३/१७ के पूर्व - अनसूया - वयस्य । बहुवल्लभा राजानः श्रूयन्ते
मा. मा. ४ अंक, मदयन्तिका - न खलुवसमांदृशीसु युष्मादृश्यः पक्षपतिन्यो भवन्ति । पृ. १७४.

२. अभि. ५/२४ अतः परीक्ष्य कर्त्तव्यं विशेषात् संगतं रहः ।
अज्ञातहृदयेष्वेवं वैरीभवति सौहृदम् ।।

३. मा. मा. अंक १, अवलोकिता से कामन्दकी की उक्ति --
यन्मां विधेयविषये सभवान् नियुंक्ते स्नेहस्य तत्पलमसौ प्रणयस्य सारः ।
प्राणैस्तपोभिरथवाभिमतं मदीयैः कृत्यं घटेत सुहृदो यदि तत्कृतं स्यात्
यदैव नो विद्या परिग्रहाय नानादिगन्तवाससाहचर्यमासीत तदैव
अस्मत् सौदामिनीसमक्षमनयोर्भूरिवसुदेवरातयोः प्रवृत्तेयं प्रतिज्ञा . . . . पृ. २२.

कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों में हमें सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर सम्भाषण, सम्बोधन, अभिवादन आदि विविध मर्यादा एवं शिष्टाचारपूर्ण सुसंस्कृत स्वरूप देखने को मिलता है । सामान्यतः कालिदास [1] तथा भवभूति ने नारीपात्रों के सम्भाषणों (संवादों) में शौरसेनी जैसी प्राकृत भाषा का प्रयोग किया है किन्तु कहीं कहीं सम्पन्न एवं उच्च वर्ग की सुशिक्षित नारी पात्रों की विदग्धता व्यक्त करने के लिए नाट्यशास्त्रीय [2] निर्देश को ध्यान में रखते हुए इन नारी पात्रों का संस्कृत भाषा में भी संवाद प्रस्तुत किया है । इस दृष्टि से कालिदास की कृति "मालविकाग्निमित्रम्" में केवल परिव्राजिका कौशिकी का ही उदाहरण दृष्टिगत होता है, जबकि भवभूति के अनेक नारी पात्र अपनी विदग्धता व्यक्त करने के लिए संस्कृत में संवाद [3] साभिनय प्रस्तुत करते हैं जिनमें मालती, लवंगिका, मदयन्तिका तथा कामन्दकी के उदाहरण उल्लेखनीय हैं ।

समाज में नारियों के सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर अनेक मर्यादापूर्ण शिष्टाचार प्रचलित थे । वे अपने कुलदेवता के साथ ही पति देवता पर पूज्य श्रद्धाभाव रखती हुई सदैव प्रणाम करती थीं । इसी प्रकार अभ्यागत अतिथि, राजा गुरुजन आदि उनके लिए पूज्य एवं प्रणम्य थे । [4] सीता तथा शकुन्तला आदि नारी पात्र समुचित अभिवादन [5] पूर्ण शिष्टाचार का यथासमय इन पूज्य अतिथि गुरुजनों के प्रति पालन करती थीं । गुरुजन (नारीपात्र) अपने से छोटों को अभिवादन करने पर शुभाशीर्वाद भी देते थे । [6]

तृतीय अंक में काम-परवश होती हुई भी शकुन्तला एकान्त में दुष्यन्त के " किंसंवाहयामि चरणावुत पद्मताम्रौ" जैसे शब्दों में चाटुकारितापूर्ण प्रणयनिवेदन करने पर अपनी मर्यादा एवं शालीनता का ध्यान रखती हुई स्वयं को दोषभागिनी न होने देने के लिए राजा की इस अनुचित चेष्टा

---

१. माल. अंक १/१२ के आगे नाटक में केवल परिव्राजिका कौशिकी के पण्डिता होने से सभी संवाद संस्कृत में हैं, जबकि कालिदास के अन्य सभी नारी पात्र प्राकृत भाषा में बोलते हैं ।

२. योषित सखी बालवेश्या कितवाअप्सरसां तथा ।
वैदग्ध्याऽर्थ प्रदातव्यं संस्कृतं चान्तराऽन्तरा ।। (साहित्यदर्पण)
"दिव्याया गणिकायाश्च शिल्पकार्यास्तथैव च ।
विदग्धायाः स्त्रिया भाषां संस्कृतेनाऽपि योजयेत् । ।।'

३. मालती माधव, अंक २/१ के पूर्व मालती - मनोरोगस्तीव्रो . . . . न भवती ।
३/६ कामन्दकी, अंक ७/१ लवंगिका आदि का संस्कृत में सम्भाषण, दृष्टव्य, पृ. ३१६

४. उत्तर. अंक १ सीता - नमो तपोधनेभ्यो, नमोरघुकुलदेवताभ्यो, नमो आर्यपुत्र चरण कमलेभ्य नमः सकलगुरुजनेभ्येष्ठ पृ. १७३.

५. अभि. अंक ४ शकुन्तला का वयोवृद्ध तापसियों को प्रणाम करना (भगवतयः वन्दे) पृ. ४८४.

६. अभि ४, एका-जाते, भर्तुः बहुमानसूचकं देवी शब्दं लभस्व द्वितीया - वत्से वीर प्रसविनी भव । तृतीया - वत्से भर्तुर्बहुमता भव । पृ. ४८४.

का निषेध व्यक्त करती है । [१]

सम्बोधन में सामान्यतः स्त्रियां शिष्टाचारवश धर्मशास्त्रीय [२] निर्देश को ध्यान में रखती हुई अपने पति का नाम नहीं लेतीथी । सम्बोधन के लिए "आर्यपुत्र" अथवा अन्यकोई समुचित अभिधान का वे प्रयोग करती थीं । उदाहरणार्थ शकुन्तला ने अक्रोध की सामान्य स्थिति में दुष्यन्त को "पौरव"[३] तथा "आर्यपुत्र" अभिधान से सम्बोधित किया था । इसी प्रकार सीता तथा मालती के अपने पति के लिए प्रयुक्त अनेक सम्बोधन [४] शब्द द्रष्टव्य हैं ।

इसी प्रकार सेविकाएं या चेटियां अपनी स्वामिनी (राजमहिषी) को भट्टिनी (भर्त्री), वयोवृद्धा नारियां अपनी आत्मीय कनिष्ठाओं से "वत्से" "जाते", कनिष्ठा कुमारी या युवती पूज्या वयोवृद्धाओं को ' "भगवति"[५] समृवयस्का सुहृत्तुल्यनारी को " हला, सखि", स्वामिनी का सेविका के लिए "हंजे" प्रभृति सम्बोधन शब्दों को नाट्य शास्त्रीय निर्देशानुसार प्रयुक्त करती थीं । यथा -

राजस्त्रियस्तु समभाष्या सर्वाः परिजनेन तु ।
भट्टिनी स्वामिनीत्येवं नाट्ये प्राहुर्विचक्षणाः (नाट्यशास्त्र)

"समाहलेति प्रेष्या च हंजे वेश्याअंजुका तथा ।"दश. २/१०४ (द्रष्टव्य नाटय. १७/६५-६४)

प्रतीत होता है कि कालिदास की अपेक्षा भवभूति ने स्मृतियों के निर्देशानुसार सांस्कृतिक उत्कर्ष में अपने नारी की पात्रों प्रतिष्ठापित किया है, जिसमें उदार नारी के पावन शीलमय चरित्र

---

१. अभि. ३/ १८ के पश्चात् शकुन्तला - न माननीयेष्वात्मानमपराधयिष्ये । (उत्थाय गन्तुमिच्छति), पृ. ४७१.

२. आत्मामो गुरोर्नाम नामोऽतिकृपणस्य च ।
श्रेयस्कामो न गृह्णीयाज्ज्येणीऽपत्य कलत्रयोः ।। (मनुस्मृतिः)
पिता, पति,गुरु या वयोवृद्ध अन्य सम्बन्धी परिवारीजन गुरु होते हैं -

३. अभि. ३/१६ के पश्चात् शुक्र. - पौरव रक्ष विनयम् । पृ. ४७१.
३/२१ के पश्चात् पोरव । ममशरीरवृतान्तोपलाम्भायं आर्या गौतमी इत एवागच्छति यावद् विटपान्तरितो भव । '
५/२१ के पूर्व आर्यपुत्र पृ. ५०४, ७/२१ के पश्चात् आर्यपुत्र पृ. ५५२-५३.

४. उत्तर. सीता के १/८ के पश्चात् ७वें अंक तक आर्य. पुत्र महाराज आदि संबोधन प्रयुक्त हैं ।
मा. मा. ६/११ के पश्चात् मालती का माधव को - "जन' पृ. २७६
५/३१ के पश्चात् "नाथ" साहसिक, भगवान् महानुभाव आदि संबोधन पृ. १६१-२४७

५. मा. मा. अंक ४ "भगवति कामन्दकि । एषा भर्त्री विज्ञापयति यथा मालती कामन्दकी - वत्से, उतिष्ठोतिष्ठ, पृ. १६० अभि. अंक १/२२ पूर्वापर अभि. ४ अंक
मा. मा. अंक ६ लवंगिका को मालती का सखि, सम्बोधन पृ. २७७
माल. अंक ३ इरावती का निपुणिका चेटी को "हंजे" सम्बोधन पृ. २६०
" ३/१२ के बाद निपुणिका का इरावती को भट्टिनी सम्बोधन. पृ. २६०

तथा मातृत्व को महती महिमा मिली है । यद्यपि कालिदास ने अपने समय के समाज में व्याप्त नारी के स्वच्छन्द एवं उच्छृंखल कामाचरण को कहीं कहीं गर्हित किया [1] है तथापि नारी के मर्यादित पावन मातृत्व एवं वात्सल्य की महिमा को वे भवभूति के समान अपनी कृतियों में साकार नहीं कर सके हैं। उनके मालविकाग्निमित्रम्, विक्रमोर्वशीयम्, यहां तक "अभिज्ञानशाकुन्तलम्" में नारी के मातृत्व को उतना महिमामण्डित कर अंकित नहीं किया जा सका , जितना भवभूति के रूपकों में पावन मातृत्व एवं वात्सल्य से गौरवान्वित नारी पात्रों को चित्रित किया गया है । उदाहरणार्थ --

सीता को अफने दोनों पुत्रों लव कुश की वर्षगांठ तथा अन्य संस्कार [2] न करने की मनोव्यथा नाटक के अन्त तक संतप्त करती रहती है । उनका मातृत्व भाव उत्तर रामचरित में अनेक स्थलों पर सुन्दर चित्रित हुआ है । [3] कौशल्या, अरुन्धती, कामन्दकी , जैसे नारी पात्रों में मातृत्व एवं वात्सल्य [4] का पावन भाव अकुण्ठित रूप में पाया जाता है ।

कालिदासकालीन समाज बहुविवाह [5] प्रथा से जहां नारी को भोग्या जैसा मानता प्रतीत होता है, वहां भवभूति ने सर्वत्र अपनी कृतियों में एक पत्नी के गौरव को समाज में प्रतिष्ठापित किया है । कालिदास की सभी नाट्य कृतियों के वैभव धन सम्पन्न नायक अनेक नायिकाओं (पत्नियों) से कामोपभोग लिप्त चित्रित है जबकि भवभूति का कोई भी नायक इस रूप में दृष्टिगत नहीं होता है ।

कालिदास की अपेक्षा भवभूति ने अपने नारी पात्रों को समाज में सामाजिकता तथा सांस्कृतिक दृष्टि से अधिक आदरणीय एवं महत्वपूर्ण माना है । भवभूति ने [6] स्पष्टतः समाज में नारी वध को अत्यन्त निन्दनीय अपयशकारी बताया है, वह चाहे जितनी ही अपराधिनी अथवा आततायिनी क्यों न हो ? जबकि इस विषय में कालिदास ने कुछ भी संकेत नहीं किया है । "उत्तररामचरित" में लव बड़ी निर्भीकता से राम के ताडकावध जैसे निन्द्यकर्म की भर्त्सना अत्यन्त व्यंग्यपूर्वक करता हुआ कहता है --

"सुन्दस्त्री दमने ऽप्यखण्डयशसो लोके महान्तो हि ते " (उत्तर. ५/३५)

किन्तु कतिपय वामाचारियों (अघोरियों आदि) द्वारा अन्धविश्वास के वशीभूत होकर पशु

---

१. अभि. ५/१६ नापेक्षितो गुरुजनोऽनया . . . .भणामिकिमेकैकम् ।
अभि. ५/२० कृताभिमशर्मिभिमन्यमानः सुतां त्वया नाम मुनिर्विमानयः ।

२. उत्तर. ७/१३ तथा इसके पूर्व सीता - भगवत्यौ क एतयोः क्षत्रियोचितं कर्म करिष्यति। राम - "कष्ट सीताऽपि सुतयोः संस्कर्तारं न विन्दति? उत्तर. ७/१३

३. उत्तर. अंक ३ सीता - भगवति तमसे । एतेन अपत्यस्मरणेन उच्छवसितप्रसुतस्तनीव तयोश्च पितुः सन्निधानेन क्षणमात्र संसारिणी अस्मि संवृता । पृ. ३०२.

४. उत्तर. ४/११ शिशुर्वा शिष्या वा. . . . .४/१६ बधू चतुष्केऽपि यथाहि शान्ता प्रिया तनूजास्य तथैव सीता । मा. मा. १०/१, २, (कामन्दकी की मालती के प्रति वात्सल्य भाव)

५. अभि. ६/२३ के पूर्व राजा - बहुधनत्वात् बहुपत्नीकेन तत्र भवता भवितव्यम्, विचार्यतां यदि काचिद्आपन्नसत्वा स्यात् ।

६. मा. मा. अंक ५, पृ. २०४ .

बलि से लेकर नारी बलि तक श्मशान आदि निर्जन स्थानों में दी जाती थी । अघोरघण्ट जैसे कापालिकों या कपालकुण्डला जैसे कापालिकी के द्वारा मालती जैसी नारी रत्न की कराला देवी पर बलि चढ़ाना इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है ।

मधुर प्रणयपूर्ण दाम्पत्य जीवन का जितना सुन्दर चित्रण भवभूति [1] ने किया है उतना कालिदास ने नहीं । पत्नी या प्रियाशून्य संसार और समाज शून्य अरण्य सा सन्तापकारी होने की मार्मिक अनुभूति भवभूति ने समाज को कराई है, कालिदास ने नहीं ।

प्रतीत होता है, कालिदास तथा भूवभूति दोनों कवियों ने पौराणिक साहित्य एवं परम्परिक रूढ़ियों से प्रभावित होकर अपने कतिपय नारी पात्रों को अर्द्ध दिव्य योनि में ग्रहण कर अतीन्द्रिय अथवा अतिलौकिक (प्रतीक) रूप में चित्रित किया है जिनपर छाया नाट्य का प्रतिबिम्ब प्रतिभाषित होता है । इस दृष्टि से कालिदास के तपोवन देवता [2], सानुमती, चित्रलेखा, उर्वशी तथा भवभूति के वनदेवता तमसा, सुरला, सौदामिनी प्रभृति नारी पात्र उल्लेखनीय हैं ।

प्रतीत होता है, समाज में नारी के रूप जन्य आकर्षण से वासना विषयक बलात्कार अपहरण जैसे अपराधों की कमी नहीं थी । इन अपराधों के निग्रह हेतु राजा यथासंभव प्रयास करते थे, किन्तु इन नारी बलात्कार, [3] अपहरण आदि से परिपीडिता नारी की रक्षा अथवा अपराधों की पूर्णतया रोक नहीं हो पाती थी। एतदर्थ सामाजिकों का कभी कभी आक्रोश भी प्रकट होता था । शकुन्तला उर्वशी, चित्रलेखा एवं मालती प्रभृति नारी पात्र इन्हीं प्रकार के सामाजिक वासनापूर्ण अपराधों से पीड़ित प्रतीत होते हैं । उर्वशी आदि का अपहरण किसी असुर द्वारा कुवेर भवन से लौटते समय गिरि मार्ग में, किन्तु भवभूति के मालती माधव को नायिकामालती जब वह अट्टालिका के खुले अलिन्द पर प्रसुप्त [4] थी तभी अघोरघण्ट और कपालकुण्डला द्वारा उसका अपहरण हो गया । इससे यह जान पड़ता है कि युवतियां सामान्यतः अपहरण आदि से बचने के लिए बन्द प्रकोष्ठों (अन्तःपुरों)

---

१. उत्तर. ६/३० विना सीतादेव्या किमिव हि न दुःखं रघुपतेः,
प्रियानाशे कृत्स्नं किल जगदरण्यं हि भवति ।

२. अभि. अंक ४/५ अन्येभ्यो वनदेवताकरतलैरापर्वभागोत्थितैर्दत्तान्याभरणानि तत किसलयोद्भेदप्रतिद्वन्द्विभिः ।
अभि. ५/३० उतक्षिप्यैनां ज्योतिरेकं जगाम, अंक ६/६ के पूर्व से सानुमती ।
विक्रमो. अंक २/६ के पश्चात् (ततः प्रविशति आकाशयानेनोर्वशी चित्रलेखा च)
उत्तर. अंक २ प्रारम्भ से (वनदेवता) अंक ३ प्रारम्भ से (तमसा-मुरला) पृ. २४७-३७१
पृ. तक मा. मा. प्रारम्भ से अंक ६/४१ के पश्चात्, पृ. ४२५.

३. अभि. ५/२० कृताभिमर्शामनुमन्यमानः सुतां त्वया नाम मुनिर्विमान्यः ।
विक्रमो. अंक । (प्रस्तावना के पश्चात्) अप्सर - आर्याः परित्रायध्यवं परित्रायध्वं ...
उर्वशी चित्रलेखा, सहजन्या रम्भा आदि असुर अपहृता अप्सराओं का आर्तस्वर पृ. ३४१

४. मा. मा. अंक ५/२६ के पश्चात् मालती - उपर्यलिन्दमेव प्रसुप्तेह प्रतिबुद्धाऽस्मि, पृ. २४०.

में रहती होंगी तथा कभी कभी खुले प्रांगण, अट्टालिका आदि में उनके विद्यमान होने से संयोगतः ऐसी दुर्घटनाएं भी घटित हो जाती होंगी ।

नारी शिक्षा - कालिदास तथा भवभूति की कृतियों में नारी पात्र पूर्णतया शिक्षा प्राप्त प्रतीत होते हैं । "मालविकाग्निमित्रम्" में चित्रित परिव्राजिका कौशिकी को पण्डिता [१] कहा गया है जो धर्मशास्त्र, संगीत, शिल्प आदि विषयों में पूर्ण पारंगत परिलक्षित होती हैं । इनको इन विषयों के गुण दोष समझने की पूर्ण क्षमता विद्यमान थी । [२] सामान्यतः सत्पत्नियां [३] धर्मशास्त्र की शिक्षा ग्रहण करती थीं क्योंकि इन्हें धार्मिक क्रियाओं का मूल कारण कालिदास ने बताया है । रघुवंश में भी इन्दुमती सीता आदि के बिना धार्मिक क्रिया सम्पन्न न होने का उल्लेख है । प्रतीत होता है, अवर वर्ण की स्त्रियां पठन पाठन से वंचित रहती थीं । यही कारण है, वर्णावर धारिणी स्वयं अपने भाई वीरसेन का प्रेषित पत्र न पढ़ पाने के कारण लेखक द्वारा पढ़वाकर सुनती है [४] परन्तु कालिदास के प्रियंवदा, अनसूया, शकुन्तला, इन्दुमती, मालविका, उर्वशी, प्रभृति सभी नारी पात्र उच्चशिक्षित ज्ञात होते हैं, क्योंकि शकुन्तला [५] एवं उर्वशी का प्रणयनिवेदन काव्यात्मक [६] तथा लिपिबद्ध था, जिसे इनके द्वारा क्रमशः नलिनी पत्र और भोजपत्र पर अंकित किया गया था । इन्दुमती ललितकलाओं के सीखने में अज की प्रिय शिष्या ही थी । [७] अनसूया और प्रियंवदा ने निबन्ध-इतिहास एवं लेखबद्ध कामशास्त्र के अतिरिक्त अध्ययन से ही शकुन्तला की कामसंतप्त अवस्था को समझा था । [८] इन ऋषि कन्याओं ने अपनी सद्यः पति गृह प्रस्थिता प्रियसखी का प्रसाधन

---

१. माल. अंक १/१२ के पश्चात् (राजा-पण्डितकौशिक्या सार्ध देवी) पृ. २६७.
२. माल. अंक १ मध्यस्था भगवती नौ गुणदोषतः परिच्छेत्तुमर्हति, पृ. २७४.
३. कुमार. ६/१३ क्रियाणां खलु धर्म्याणां सत्पत्न्यो मूलकारणम् ।
कवि की कृति "मालतीमाधव" की घटना स्थली "पद्मावती" नगरी उच्च शिक्षा का केन्द्र थी, जिसमें हिन्दू तथा बौद्ध धर्म की शिक्षा छात्र छात्राओं को एक साथ ही दी जाती थी, इस सम्बन्ध में प्रो. मिराशी का मत दृष्टव्य है .
" The University of padmavati provided instructions of both Hindu and Baudhi st religions to male & female students. Who studied to gether. " Bhavabhuti. p. 359 .
४. माल. अंक ५ (प्रवेशक) सार. - भ्रात्रा वीरसेनेन प्रेषित्तपत्रं लेखकैर्वाच्यमानं श्रणोति। पृ. ३२०.
५. अभि. ३/१२ उन्नमितैकभ्रूलतमाननमस्याः पदानि रचयन्त्याः ।
३/२३ क्लान्तो मन्मथलेख एष नलिनीपत्रे नखैरंकितः ।
६. विक्रमो. २ /१८ के बाद देवी तथा निपुणिका - परिवर्तनविभाविताक्षरं भूर्जपत्रं खल्वेतत्। पृ ३६४.
७. रघु. ८/६७ गृहिणी सचिवः सखीमिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ
८. अभि. अंक ३ यादृशी इतिहास निबन्धेषु कामयमानामवस्था श्रूयते तादृशीं ते पश्यामि। पृ. ४६.

कर्म चित्रकला के परिचय से ही पूर्ण किया था । [१] स्त्रियों के बिना सिखाई पटुता पर तीव्र व्यंग्य दुष्यन्त ने किया था, [२] जिससे तत्कालीन स्त्री शिक्षा के पूर्ण प्रचलन का पता चलता है । तत्कालीन समाज में नारियां तैरना भी सीखतीं थीं, यह तथ्य कुश के सरयू में जल क्रीडा संदर्भ में संपुष्ट होता है। [३]

भवभूति के भी मालती, सौदामिनी, कपालकुण्डला सीता जैसे नारी पात्र पूर्ण शिक्षा प्राप्त अनेक संदर्भों के आधार पर ज्ञात होते हैं । मालती तथा सौदामिनी कामन्दकी की शिष्या, कपालकुण्डला अधोरघण्ट की, सीता अरुन्धती की शिष्या रूप में उल्लिखित हुई है । [४]

इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि दोनों कवियों के सम सामयिक समाजमें सांस्कृतिक समुत्कर्ष हेतु सभी शास्त्रों एवं कलाओं में नारी को भी सर्वोच्च शिक्षा से समलंकृत किया जाता था ।

नाटकीयता की दृष्टि से नारी पात्रों का तुलनात्मक संक्षिप्त चित्रण

कालिदास तथा भवभूति ने अपनी नाट्य कृतियों में नारीपात्रों का चित्रण सोद्देश्य किया है। दोनों महाकवियों की नायिकाओं में नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से पर्याप्त समानता और असमानता स्वरूपगत दृष्टिगत होती है । यद्यपि शकुन्तला तथा सीता में कहीं कहीं अभिनय स्वरूप आदि की अवस्थाओं में साम्य देखा जा सकता है [५] - दोनों पति द्वारा परित्यक्ता हैं । प्रोषित पतिका (विरहिणी) रूप में दोनों ऋषि आश्रमों में आश्रय प्राप्त कर अपने पुत्रों को जन्म देती हैं, जहां इनका अपने पति से साक्षात्कार होता है किन्तु इन समानताओं के होते हुए भी शकुन्तला और सीता के नारीगत आदर्शों (मातृत्व सतीत्व आदि) की दृष्टि से इन नाटकों में अत्यन्त अन्तर पाया जाता है । कन्या, पत्नी, मां आदि अप्रतिम रूपों में जो आदर्श सीता का नाटकीय रूप में भवभूति द्वारा चित्रित हुआ है वैसा कालिदास न केवल शकुन्तला का अपितु किसी भी नायिका का आदर्श अंकित नहीं कर सके हैं ।

नारी पात्रों में उर्वशी जैसी नायिका अभिसारिका वेश में राजापुरुरवा के साथ स्वच्छन्द विहार हेतु चित्रलेखा के साथ निकलती चित्रित है, वैसी भवभूति की कोई भी नायिका या नारी पात्र उत्तके रूपकों में अंकित नहीं है । मालविकाग्निमित्रम् में रानी इरावती जैसा भवभूति का कोई भी नारी पात्र नायक को अपनी रशना से पीटता भी चित्रित नहीं है । दोनों नाटककारों के नारीपात्रों में से

---

१. अभि. अंक ४ चित्रकर्मपरिचयेनांगेषु ते आभरणविनियोगं कुर्वः । पृ. ६७
२. अभि. ५/२२ स्त्रीणामशिक्षितपटुत्वममानुषीषु संदृश्यते किमुत याः प्रतिबोधवत्यः ।
३. रघु. १६/६० . . बालाः, क्लेशोत्तरं रागवशात्प्लवन्ते ।
४. उत्तर. ४/११ शिशुर्वा शिष्या वा, मा. मा. १०/१, २. अंक ५/१ से ४ तक योगशास्त्र की अधोरघण्ट से शिक्षा प्राप्त कपालकुण्डला । पृ. २०३.
५. इस सम्बन्ध में एस. आर. रे. की समीक्षा समीचीन प्रतीत होती है --
"Both sita and sakuntala are abondoned. Both the Queens;sita and sakuntala depart leaving no trance behind and their husbands meet their sons unexpectedly after the lapse of years in a hermitage (Uttar charitam, Calcutta. 1934. - introduction p. 23. 24.

नाटकीयता की दृष्टि से परिव्राजिका, कौशिकी तथा कामन्दकी के स्वरूपों, एवं कार्यों में भी पर्याप्त समानता परिलक्षित होती है । दोनों बौद्ध संन्यासिनियां होती हुई भी नायकों-नायिकाओं के प्रणय एवं परिणय को सफल बनाती हुई सांसारिकता में तल्लीन दृष्टिगत होती हैं । दोनों नाटककारों के कतिपय नारीपात्र अतिलौकिक शक्ति सम्पन्न हैं और नाटकों में प्रतीक या छाया रूप से कथानक में क्रियाशील पाये जाते हैं ।

समीक्षा - उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कालिदास तथा भवभूति के नारीपात्रों को चित्रित करती कालजयी कृतियाँ अपनी अनेक आर्थिक, धार्मिक सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों से नाटकों के कथानक को गति एवं जीवन्तता प्रदान करते हुए नारियों के महिमामण्डित सुसंस्कृत स्वरूप को प्रस्तुत करती हैं । यद्यपि लंबे लंबे भवभूति के नारी पात्रों के संवाद एवं नाटकीयता की दृष्टि से कालिदास के नारी पात्रों की अपेक्षा कम प्रभावी प्रतीत होते हैं तथापि चारित्रिक गुणों के प्रभावी अंकन से श्रव्य काव्य के रूप में भवभूति के नारी पात्र अपना कम नाटकीय सांस्कृतिक एवं साहित्यिक महत्व नहीं रखते हैं ।

उपसंहार

निष्कर्षों का संक्षिप्त निरूपण

उपसंहार

निष्कर्षों का संक्षिप्त निरूपण

विश्वभर में गौरवान्वित भारतीय - संस्कृति की अनुपम निधिस्वरूप संस्कृत - साहित्य सहृदय सामाजिकों की ज्ञान वृद्धि एवं रसानुभूति को दृष्टि में रखते हुए अनेक काव्यात्मक विद्याओं से विलसित है । काव्य प्रधानतः श्रव्य तथा दृश्य दो रूप में पाया जाता है । श्रव्य काव्य की अपेक्षा दृश्य काव्य की प्रभाव शीलता अधिक होती हैं, जिसमें पात्रों के साभिनय सरस संवादों से नाटकादि रूपों में सहृदयों को श्रव्य काव्य की अपेक्षा अधिक आनन्दानुभूति होती है । यही कारण है, काव्यों में नाटक अधिक रम्य माना जाता है ।

भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने संस्कृत नाटक की उद्‌भव सम्बन्धी अनेक प्रमाणों पर आधृत परिकल्पनाएं प्रस्तुत कीं, किन्तु इसके क्रमिक विकास में अनेक शताब्दियाँ लगीं, जिसमें भारतीय साहित्य की कलात्मक प्रतिभा, मौलिकता, स्वाभाविकता एवं सैद्धान्तिकता के साथ लगभग ८०० सरस नाटक ग्रन्थों में अभिव्यक्त हुई । संस्कृत के समग्र नाट्य साहित्य में जो महत्व एवं गौरव स्थान भास के पश्चात् कालिदास तथा भंवभूति को प्राप्त हुआ, उतना अन्य किसी नाटककार को नहीं।

समस्त सामाजिक सम्बन्धों के मूल में प्राचीनकालसे ही नारी की स्थिति एवं रचनात्मक भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण रही है । नारी जीवन की वैयक्तिक विविध विवशताएँ एवं सीमाएं होती हुई भी पुरुषों की प्रत्येक परिस्थिति में पूरक होकर वह सांस्कृतिक एवं सुशिक्षित होकर कलात्मक क्रियाओं से कुशलतापूर्वक बुद्धि वैभव के सहारे सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक अनेक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करती हैं। वैसे समग्र संस्कृत साहित्य में महिमा मण्डित नारी का सुन्दर चित्रण उसके नख शिख सौन्दर्य से लेकर अनेक आन्तरिक सद्‌गुणों के वर्णन से पूर्ण पाया जाता है, तथापि संस्कृत रूपकों के (नाटकादि) में नारी की महत्वपूर्ण एवं अपरिहार्य भूमिका का निर्देश भरत आदि नाट्य शास्त्रियों ने भी किया है, जिसमें अनेक सामाजिक सम्बन्धों का निर्वाह करती हुई वह कुलजा नायिका के साथ उसकी सखियों, सेविकाओं, सम्बन्धी आदि विविध रूपों में अंकित हुई है ।

संस्कृत नाट्य साहित्य में भास के पश्चात् कालिदास तथा भवभूति ही श्रेष्ठ नाटककार हैं, जिन्होंने मानव जीवन के केन्द्र बिन्दु में नारी का मुग्धा कन्या प्रेयसी युवती, पतिव्रता पत्नी, मातृत्व एवं वात्सल्यमयी मां, लोकज्ञानसमन्वित गुरु पत्नी आत्मीय प्रेमभावमय अन्तरंग सखी, सेवापरायण सेविकाओं आदि के रूप में हृदयावर्जक चित्रण नाटकीयता की दृष्टि से सोद्‌देश्य ही किया है । इसका प्रमुख आधार तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के साथ पूर्ववर्ती साहित्यिक सामग्री (वैदिक साहित्य, पुराणेतिहास, रामायण महाभारत भास के नाटक आदि) हैं ।

कालिदास तथा भवभूति ने सामान्यतः सोद्‌देश्य नाट्यशास्त्रीय सिद्धान्तों के आधार पर नारी पात्रों के अन्तर्गत उत्तमा कोटि की नायिकाओं को अनेक गुणों से अभिमण्डित अंकित किया है ।

ये मृदुभाषिणी, अदीर्धरोषा, संगीत, शिल्प, कलादिनिपुणा, अनिन्द्य रूपसौन्दर्यशालिनी, सरल, विनम्र, उदार, शुद्ध चरित्र युक्त कुलीना, धीरा, उदात्ता, ललिता, निभृता, निहंकार, कृतज्ञा, सुहृतप्रिया आदि रूप से सहृदय हृदय को आकर्षित करती हैं जिनमें मालविका, उर्वशी, शकुन्तला, मालती, सीता उल्लेखनीय हैं । दोनों नाटककारों ने इन नायिकाओं के नाट्यशास्त्रीय आधार पर आंगिक, स्वाभाविक और अयत्नज अनेक भावगत अलंकारों को भी यथास्थान अभिव्यक्त किया है ।

प्रच्छन्न काम्या एवं प्रच्छन्न रूपा मालविका के समान दोनों नाटककारों की कोई भी नायिका नृत्यादि ललित कलाओं में पारंगत परिलक्षित नहीं होती । "उर्वशी" जैसी दिव्या (वेश्या), इरावती जैसी प्रगल्भा एवं नायक को रसना से वाली कनिष्ठा, नायक पर स्वामित्व रखने वाली धारिणी जैसी ज्येष्ठा एवं शकुन्तला जैसी अनिन्द्य सुन्दरी निसर्ग कन्या नायिकाएं भवभूति के नाटकों में नहीं पाईजातीं तथापि मालती और सीता को महिमामण्डित भारतीय आदर्श नायिका के रूप में प्रतिविम्बित करने का भवभूति का श्लाघनीय प्रयास है । शकुन्तला की प्रतिच्छवि अनेक स्थलों पर सीता में पाकर भी हम उनमें अधिक अनेक आन्तरिक सद्‌गुणों को देखते हैं, जिससे भारतीय नारी समाज में गौरवान्वित होती हैं ।

नाट्य शास्त्रीय दृष्टि से दोनों कवियों ने नायिका के अतिरिक्त नायिका की सखियाँ (प्रियंवदा, अनसूया, चित्रलेखा, बकुलावलिका, वासन्ती, लवंगिका, मदयन्तिका), सेविकाएँ, तपस्विनी, परिव्राजिका, कपालिनी आदि नारी पात्रों की नियोजना की है । वाग्विदग्धता, सरसता एवं आत्मीयता में कालिदास की प्रियम्वदा और बकुलावलिकां की समता भवभूति की लवंगिका एवं वासन्ती के साथ की जा सकती है । इसी प्रकार वयोवृद्धा नारियों में गौतमी की आत्रेयी और अरुन्धती से तथा परिव्राजिकाओं में कौशिकी की तुलना कामन्दकी से करना सर्वथा समीचीन है ।

दोनों कवियों के नारी पात्रों की अभिनेयता का आधार नाट्यशास्त्र में निर्दिष्ट सभी चारों तत्व हैं । कायिक और आहार्य अभिनय में दोनों नाटककारों के नारीपात्र निपुण है, किन्तु वाचिक अभिनय में भवभूति के नारी पात्रों के लम्बे सामासिक शैलीके संवाद अनुपयुक्त तथा कालिदास के नारीपात्रों से कम प्रभावी प्रतीत होते हैं । सात्विक अभिनय में कालिदास की अपेक्षा भवभूति के नारी पात्र अधिक सशक्त एवं सिद्धहस्त पाये जाते हैं ।

सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन की दृष्टि से नारी पात्रों का विविध रूपों-कन्या, युवती, पत्नी, माता आदि का चित्रण कालिदास तथा भवभूति दोनों ने किया है । कालिदास के समान भवभूति ने कन्या की विविध क्रियाओं का विस्तृत वर्णन न कर उसके शैशव के स्वरूप एवं बाल सुलभ चेष्टाओं का स्वाभाविक चित्रण किया है । प्रतीत होता है, कालिदासकालीन समृद्ध समाज में सामान्यतः कन्याओं का गान्धर्व विवाह प्रचलित था, जबकि भवभूति के समय में नहीं । भवभूति के समय कन्या के माता पिता इस दायित्व का निर्वाह करते थे किन्तु कभी कभी राज परिवार इन विवाह जैसे संस्कारों में अवांछनीय राजनैतिक हस्तक्षेप करने लगते थे जो धर्मशास्त्रीय दृष्टि से भी अनुकूल नहीं होता था ।

नवयौवना के नखशिख सौन्दर्य चित्रण करने में कालिदास सिद्धहस्त हैं जबकि भवभूति युवती के मांसल शारीरिक सौन्दर्य का अंकन न कर उसकी रम्य आंगिक, चेष्टाओं, आन्तरिक सद्‌गुणों की वैशिष्ट्यपूर्ण रमणीयता को उजागर करने में अत्यन्त निष्णात हैं । कालिदास के समान भवभूति ने युवती नारी के अर्न्तजातीय अथवा गान्धर्वादि बहुविध विवाहों के निदर्शन प्रस्तुत नहीं किए हैं । कालिदास के समान भवभूति ने वधू की वैवाहिक वेशभूषा एवं श्रृंगार प्रसाधन विविधों

का विस्तृत वर्णन नहीं किया है और न उसकी पतिगृह विदा का "अभिज्ञानशाकुन्तल" जैसा मार्मिक चित्रण ही तथापि नववधू विषयक अवान्तर अनेक प्रसंगों का उन्होंने उल्लेख अवश्य किया है ।

प्रतीत होता है, भवभूति कालिदास की इरावती के समान शालीन नारी का सुरापन कर रशना से पति को पीटने का चित्रण करना भारतीय संस्कृति में नारी की मर्यादा को ध्यान में रख कर समुचित नहीं समझते । गृहलक्ष्मी के रूप में उसके आदर्श दाम्पत्य जीवन के विविध भावपूर्ण पक्षों का कालिदास से अधिक अच्छा उद्घाटन भवभूति ने किया है, किन्तु उन्होंने कालिदास के समान लोकजीवन के समाज में श्रमपरायणा नारी का चित्रण नहीं किया है ।

दोनों महाकवियों ने अषने रूपकों में परिव्राजिका को सांसारिक विषयों में लिप्त नायिका के प्रणयसम्बन्ध को सिद्ध करने के प्रयास में निरत चित्रित किया है । दोनों नाटककारों ने भारतीय संस्कृति के आदर्शों पर आघृत व्यापक सामाजिक जीवन की दृष्टि से नारी पात्रों के विविध स्वरूपों एवं सम्बन्धोंका तदनुरूप चित्रण किया है । इनकी वेशभूषा, खानपान, दायित्वपूर्ण क्रियाएँ गृहस्थ जीवन में देशकाल पात्र के अनुरूप लगभग एक सी दोनों कवियों के द्वारा चित्रित हैं, हां, कहीं कहीं काल एवं वर्ण्य विषयगत भिन्नता के कारण इनके स्वरूपचित्रण में पर्याप्त अन्तर पाया जाता है ।

कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्र अपने सुसंस्कृत आचार-विचार, यज्ञ-हवन के अतिरिक्त यम नियमपूर्ण अनेक व्रतों (पुत्रपिण्डपालन, प्रियानुप्रसादन, गोसेवा, पतिविरहव्रतम, अतिथि पूजा आदि), धार्मिक अनेंक अनुष्ठानों पूजा बलि कर्म आदि में निरन्तर निरत अंकित हैं । हवन यज्ञ जैसे धार्मिक अनुष्ठानों में पुरुष के साथ इनका सहभागित्व अपरिहार्य रूप से था। कालिदास की अपेक्षा भवभूति ने नारी पात्रों के विविध प्रकार के व्रतों का उल्लेख नहीं किया है । इससे यह निष्कर्ष निकाल्नना असमीचीन प्रतीत होता है कि भवभूतियुगीन नारियाँ कम धार्मिक व्रतादि रखती थीं ।

ऐसा आभास होता है कि भवभूति के समय शैव तथा शाक्त सम्प्रदाय प्रभावी होने से नारियों में भी यौगिक क्रियाओं एवं तंत्र मंत्र से सिद्धि प्राप्त करने का प्रचलन हो गया था । इस सन्दर्भ में कपालकुण्डला के कापालिक प्रभाव के अतिरिक्त सौदामिनी की मंत्र एवं योग प्रभाव से आकर्षिणी सिद्धि प्रकट करना उल्लेखनीय है ।

दोनों कवियों द्वारा नारी पात्रों का सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर कम या अधिक मात्रा में अनेक उत्सव-समारोहों (पुत्रजन्मोत्सव एवं वर्षगाँठ, विवाहोत्सव, कौमुदी महोत्सव, वसंन्तोत्सव आदि अनेक ऋतूत्सव, मदनोत्सव, अशोक दोहद, दोला, नाटक, राज्याभिषेकोत्सव, नववधूगृहप्रवेशोत्सव, पानभूमि रचना, पुरुहूतोत्सव, तीर्थयात्रा एवं तीर्थस्थान आदि (मनोरंजन पूर्ण क्रियाओं) वन विहार,जलक्रीडा,संगीत एवं लोकनृत्य, चित्रकला, कथा-आख्यायिका, क्रीडा पशुपक्षी, क्रीडाशैल, जलक्रीडा, उद्यान, कन्दुक क्रीडा, पुत्तलिका, सिकलाबलिकेलि, वृक्षों का विवाह आदि) का उल्लेख किया गया है ।

जहां जगत् के विविध भौतिक विषयों में दोनों कवियोंके नारी पात्रों को हम प्रभावी रूप से लिप्त पाते हैं, वहां गहन एवं सूक्ष्म आध्यात्मिक विषयों - लोकपरलोक, कर्मवाद, पुर्नजन्म, ब्रह्म, ईश्वर, मायादि के सम्बन्ध में उनका दार्शनिक दृष्टिकोण द्रष्टव्य है ।

दोनों कवियों की कृतियों में चित्रित अनेक नारीपात्र परिष्कृत सांस्कृतिक प्रवृत्तियों से परिपूर्ण परिलक्षित होते हैं जिनमें समुन्नत समाज की प्रचलित व्रत, हवन, यज्ञादि धार्मिक प्रवृत्तियों के साथ उच्च स्तरीय सांस्कृतिक समारोह और मनोरंजनपूर्ण क्रियाएँ उल्लेखनीय हैं, जिनसे नारियां अपनी अभिरुचि के अनुकूल गौण आवश्यकताओं की आपूर्ति कर समाज को सांस्कृतिक उत्कर्ष

प्रदान करती थीं ।

मानव समाज में रह कर नारियों ने अपनी सुकुमार एवं सात्विक उत्प्रेरक भावनाओंको जहां कागज, प्रस्तर, धातु आदि के माध्यम से चित्रकला, मूर्तिकलाके रूप में साकार किया, वहीं स्वर आदि साधना से काव्य एवं संगीत कला के माध्यम से अमूर्त रूप में अभिव्यक्त किया है । अतः दोनों नाटककारों के नारीपात्र पुरुषों की अपेक्षा ललित कलाओं में अधिक असाधारण अभिरुचि और निपुणता रखती हैं । फलतः वे नृत्य, नाट्य, काव्य,संगीत (गीत-काव्य), चित्रादि विविध ललित कलाओं को दक्षतापूर्वक प्रकट करते हैं । जहां मालविका छलिक जैसे नृत्य नाट्य गीतके साथ संगीत शिल्पादि में अद्वितीय चित्रित है, वहीं मौलिक काव्य रचना, चित्र एवं ललित कला विधान में शकुन्तला और उर्वशी कम नैपुण्य नहीं रखतीं । इन्दुमती को तो अज ने ''ललित कलाविधि'' में ''प्रियशिष्या''विशेषण से अभिहित किया है ।

इस दृष्टि से भवभूति के भी नारीपात्र ललित कलाओं में शून्य दृष्टिगत नहीं होते । उनकी सीता, मालती जैसी नायिकाओं के अतिरिक्त वासन्ती, लवंगिका, मदयन्तिका, मन्दारिका जैसे नायिका के सहचर नारी पात्र नृत्य, गीत, संगीत, चित्रकलादि, में पूर्ण पारंगत पाये जाते हैं । दोनोंकवियों के चित्रित नारी पात्रों की व्यक्त ललित कलाएं वैयक्तिक उपयोगिता के साथ उनकी अभिरुचि को परिपोषित करती थीं, जहां विरहावस्था में अपने प्रियतम की मिलन कामना लिए मनोभावों की मार्मिक अभिव्यक्ति के माध्यम के साथ ही ये उनके मनोविनोद का भी सुन्दर साधन बनती हैं । यही इन ललित कलाओं की मानवीय संवेदना एवं सुकुमार मनोभावों की सुन्दरतम अभिव्यक्ति की दिशा में इन नारीपात्रों के लिए चरम सार्थकता है । अपने आस पास के परिवेश अथवा आवास के अतिरिक्त अपने आपको वेशभूषा साज-सज्ञा से अलंकृत रूप में प्रस्तुत करने की मानवीय मूल प्रवृत्ति ''सौन्दर्य-प्रतिष्ठा'' कामवृत्ति की परितृप्ति के रूप में पुरुषों की अपेक्षा नारियों में कम नहीं पाई जाती हैं । कालिदास तथा भवभूति के नारी पात्रों में यह ''सौन्दर्य प्रतिष्ठा'' की प्रवृत्ति सर्वांग समन्वित है, जिसे विराट् प्रकृति के माध्यम से देश काल पात्रानुरूप विविध वस्त्रालंकारों एवं सौन्दर्य प्रसाधनों से उन्होंने अपने आप को अलंकृत रूप में प्रस्तुत किया है । नैसर्गिक सौन्दर्य का मूल्यांकन करते हुए कालिदास ने नारी सौन्दर्य-निरूपण में निसर्ग के उपमानों के आलोक में नख शिख (सर्वांग) का सुन्दर चित्रण किया है, जबकि भवभूति ने नारी पात्रों के वाह्य सौन्दर्य का चित्रण न कर उनके गुणगत अन्तः सौन्दर्य का प्रभावी रेखांकन किया है ।

वेश-भूषा के अन्तर्गत विविध (क्षौम, कौशेय, अंशुक, चीनांशुक, पत्रोर्ण, कौशेय पत्रोर्ण, दुकूल, चीर, वल्कल, आदि) रंगबिरंगे सूती, रेशमी तथा ऊनी उत्कृष्टि कोटि के चिकने, कोमल, हल्के वस्त्रों के अतिरिक्त अनेक रत्न, मणि, मोती, स्वर्ण, पुष्प आदि से निर्मित आभूषण और विविध प्रकार के प्रसाधनों (कुंकुम, केशर, कस्तूरी, चन्दन, गोरोचन, अगरू, धूप, अंजन, आलक्तक , आदि) से इन दोनों महाकवियों के नारी पात्रों की साज सज्ञा दर्शनीय एवं मनमोहक प्रतीत होती है ।

कालिदास तथा भवभूति के सभी नारी पात्रों में मात्र शकुन्तला ही निसर्ग कन्या रूप में प्रस्तुत हुई है, जिसका नाना प्रकार के नैसर्गिक उपकरणों (पुष्पादि) से उसकी दो प्रिय सखियाँ मंगलमय मण्डन कार्य सम्पन्न करती हां, जबकि अन्य नायिकाओं-मालविका, इरावती, उर्वशी, मालती आदि का रत्नाभरणमय श्रृंगार प्रसाधिका सेवाकाएँ करती हैं ।

कालिदास के कतिपय नारी पात्र प्रेयसी रानियाँ इरावती आदि पतली मेखला से अपने प्रियतम राजा को बाँध देतीं या अधिक मदपान से मत्त सी सिर चढ़ी होकर उससे पीटने का प्रयास करती चित्रित हैं । इस प्रकार मदिरा पीकर इन कटि आभूषणों का ''सदुपयोग'' करता भवभूति

का कोई भी नारी पात्र दृष्टिगत नहीं होता है । कालिदास के कतिपय नारी पात्रों (नायिकाओं) का श्रृंगार प्रसाधन उनके प्रेमी नायक करते वर्णित हैं, जबकि भवभूति का कोई भी नारी पात्र भारतीय नारी की मर्यादा को समझता हुआ इस रूप में चित्रित नहीं हैं। दोनों महाकवियों के नारी पात्र उच्चस्तरीय सौन्दर्य प्रतिष्ठा की सहज प्रवृत्तिवश श्रृंगारिक सुरुचि से सम्पन्न पाये जाते हैं ।

मानवीय मूल अन्तः प्रवृत्तियों में काम, क्रोध, संमोह, ईर्ष्या - अनसूया, द्वेष मात्सर्य, अहंकार, उन्माद, मूर्च्छा, भय, स्वप्न, स्मृति, परिकल्पना आदि पुरुषों के समान नारियों में भी सामान्यतः विद्यमान रहती हैं । दोनों महाकवियों ने मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर नारी पात्रों के उपर्युक्त मनोगत विविध विकारों का यथार्थ चित्रण कियाहै । चिन्ता के कारण विशिष्ट नारी पात्र की विमनस्कता, दारुण शोक के कारण बुद्धि एवं मन की विक्षिप्तता, रूक्षता (कठोरता) तथा चिडचिडापन, कभी कभी उनकी आत्महत्या जैसी मनः प्रवृत्ति, अपराध बोध से मन की कातरता, विषम परिस्थितियों में मानसिक अन्तर्द्वन्द्व, मनोरोग आदि की मनोविज्ञान सम्मत अभिव्यक्ति इन दोनों कवियों के द्वारा की गई है ।

कहीं कहीं कालिदास की अपेक्षा भवभूति मालती, सीता, कौशल्या आदि नारी पात्रों के मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर मनोविकारों को अधिक सशक्त रूप में व्यक्त करने में सफल हुए हैं । इन नारीपात्रों के मनोविकारों को दृष्टि में रखते हुए इन कवियों का यह मन्तव्य समीचीन है कि शरीर से स्वस्थ-सुन्दर होने पर भी गृहणियाँ यदि प्रेम सहिष्णुता, उदारता, सेवापरायणता जैसे सद्गुणों से समन्वित नहीं है तो मनोरोग से पीड़ित वामा युवतियाँ परिवार - समाज के लिए आधि स्वरूपा हो जाती हैं । अतः नारी पात्रों के मनोविकारों को समझते हुए यथासंभव मुक्त होने के लिए नारियों को प्रयास करना चाहिए जिससे वे समाज में सदैव मर्यादित एवं सुसंस्कृत सद् आचरण कर सकें ।

दोनों कवियों के नारी पात्रों का आर्थिक जीवन भौतिक परिस्थितियों से सम्बद्ध, समाज सापेक्ष आवश्यक आवश्यकताओं की सम्पूर्ति कर समृद्ध प्रतीत होता है । आर्थिक पक्ष से जुड़ी प्राथमिक आवश्यकताओं में जहां "पंचविधस्याभ्यहार" भोजन, विविध प्रकार के सूती, ऊनी, रेशमी, वस्त्र, और कच्चे पक्के आवास की आपूर्ति होती है, वहां समाज में शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन, प्रभृति गौण आवश्यकताएं भी उपेक्षित नहीं हुई हैं । खेत खलिहान और कुटियों से लेकर राजप्रसादों तक धात्री, पुष्पलावी, उद्यानपालिका, ताम्बूलवाहिनी, परिचारिका (चेटी) प्रभृति इन नारी पात्रों को आजीविका निर्वाह हेतु आर्थिक क्रियाओं में तल्लीन देख सकते हैं ।

तत्कालीन राजकीय अन्तःपुरों की हंसपदिका, वसुमती इरावती जैसी रानियों में न केवल राजा के एकनिष्ठ प्रणय सिद्धि की प्रतिस्पर्धात्मक राजनीति व्याप्त थी, वरन् राजा के माध्यम से राज्य की एकमात्र प्रभुसत्ता को अपनी मुट्ठी में रख कर राजनैतिक क्षेत्र की एकच्छत्र स्वामिनी बनने की उत्कट अभिलाषा उनमें रहती थी । वेत्रवती, चतुरिका, मधुरिका जैसी अन्तः पुर की प्रतिहारी या चेटियों की भी राजा एवं रानी से निरन्तर सम्पर्क रहने के कारण अप्रत्यक्ष रूप से राजनैतिक वातावरण को प्रभावित करने में महत्व पूर्ण भूमिका रहती थी ।

दोनों महाकवियों ने नारी पात्रों के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन के विविध पक्षों को सर्वथा उजागर किया है । उद्दाम संभोग श्रृंगार की पृष्ठभूमि में जितना आलम्बन या उद्दीपन विभावों में जितना कालिदास ने अपने नारीपात्रों को उत्तेजक रूप में उभारा है, उतना भवभूति ने नहीं । कालिदास की नायिकाएं केवल कामोपभोग की सामग्री सी चित्रित हैं, जबकि भवभूति ने अपनी नायिकायों को नारी महिमा से मण्डित मर्यादित एवं पूज्य रूप में प्रस्तुत किया है । कालिदास भवभूति की अपेक्षा अपनी नायिकाओं को वासनामुक्त पावन प्रेम को अंकित करने में कम सफल हो

सके हैं । इन दोनों कवियों में नारी जाति की जो विभिन्न पदवी या आचार व्यवहार का पार्थक्य पाया जाता है, वह इन दोनों की भिन्न रुचि का ही परिचायक हो सकता है ।

प्रतीत होता है, कालिदास कालीन समाज में विवाहिता नारियों में पर्दाप्रथा का प्रचलन था, जबकि भवभूति ने किसी भी नारी पात्र के अवगुण्ठनयुक्त होने का उल्लेख नहीं किया है ।

कालिदास ने नारी पात्रों के संवादों की भाषा कौशिकी (परिव्राजिका) को छोड़कर सर्वत्र शौरसेनी जैसी प्राकृत भाषा का प्रयोग किया है, जबकि भवभूति ने मालती, लवंगिका, मदयन्तिका, कामन्दकी प्रभृति नारी पात्रों के वैदग्ध्य को व्यक्त करने के लिए प्राकृत के साथ संस्कृत का भी नाट्य शास्त्रीय निर्देशानुसार प्रयोग किया है ।

कालिदास की अपेक्षा भवभूति ने स्मृतियों के निर्देशानुशार अत्यधिक सांस्कृतिक उत्कर्ष युक्त समाज में अपने नारी पात्रों को प्रतिष्ठापित किया है, जिसमें उदार नारी के शीलमय चरित्र एवं मातृत्व को महती महिमा मिली है । कालिदासकालीन सम्पन्न समाज का बहुविवाह प्रथा से जहां नारी को भोग्या समझा जाना प्रतीतहोता है वहाँ भवभूति ने सर्वत्र अपनी कृतियों में एक पत्नी के गौरव को प्रतिष्ठापित किया है। कालिदास की उर्वशी जैसी नायिका अभिसारिकावेश में नायक के साथ स्वच्छन्द विहार के लिए चित्रलेखा के साथ निकली हुई चित्रित है, वैसी भवभूति की कोई भी नायिका या नारी पात्र उनके रूपकों में अंकित नहीं है ।

दोनों नाटककारों के कौशिकी एवं कामन्दकी जैसे नाटककारों के स्वरूप एवं कार्यों में पर्याप्त समानता पाई जाती है । दोनों बौद्ध संन्यासिनियाँ होती हुई भी नायक नायिकाओं के प्रणय एवं परिणय को सफल बनाती सांसारिक विषयों में तल्लीन दृष्टिगत होती हैं । दोनों कवियों के कतिपय नारी पात्र अतिलौकिक शक्ति सम्पन्न हैं और रूपकों में प्रतीक या छाया नाट्य रूप से कथानक में क्रियाशील पाये जाते हैं । दोनों नाटककारों के अनेक नारी पात्र सुसंस्कृत एवं सुशिक्षित रूपमें सभ्य समाज में गौरवपूर्ण स्थान रखते हैं ।

यद्यपि भवभूति के नारी पात्रों के लम्बे लम्बे सामासिक संवाद नाटकीयता की दृष्टि से कालिदास के नारीपात्रों की अपेक्षा कम प्रभावी प्रतीत होते हैं तथापि उच्च चारित्रिक गुणों के अप्रतिम और प्रभावी अंकन से कम से कम श्रव्य के रूप में भी भवभूति के नारी पात्र अपना कम साहित्यिक एवं सांस्कृतिक महत्व नहीं रखते ।

इन दोनों कवियों के नारी पात्रों के परिपूर्ण जीवन चित्रण से हमें तत्कालीन भारतीय समाज की संस्कृति के सभी पक्षों का सुन्दर परिचय प्राप्तहोता है जो आज के नारी जगत को पर्याप्त दिशा बोध के साथ सांस्कृतिक समुत्कर्ष पर पहुंच सकता है[१] । *// इत्यलम् //*

---

१. द्रष्टव्य - लेखक (डा. कै. ना. द्विवेदी) का शोधपत्र "कालिदास एवं भवभूति के नारीपात्र" विश्वभारतीपत्रिका, २६/१-४ अंक, वर्ष १९८५-८६ शान्तिनिकेतन (प.बंग), पृ. १३-२१

मेरठ विश्वविद्यालय संस्कृत शोधपत्रिका, भाग २ वर्ष, १९८६ पृ. ६१-६६, "कालिदास और भवभूति के नारी पात्र" - **डा. कै. ना. द्विवेदी**

परिशिष्ट

सहायक ग्रन्थसूची

परिशिष्ट

सहायक ग्रन्थसूची

(अ) आधार ग्रन्थ

१. ऋग्वेद (सायण भाष्य सहित) वैदिक संशोधन मण्डल, पूना (प्रथम सं.)

२. " संपादक - श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मण्डल, सतारा, सं. १६४०

३. यजुर्वेद - " " "सं. १६४८ वि.

४. अथर्ववेद - " " "सं. १६४८ वि.

५. तैत्तिरीयसंहिता (सायण भाष्य सहित) काशी, प्रथम सं.

६. तैत्तिरीय ब्राह्मण, आनन्दाश्रम, पूना, (प्रथम सं.)

७. कौषीतकि ब्राह्मण, सं. मंगलदेव शास्त्री, वाराणसी, प्रथम सं.

८. शतपथ ब्राह्मण सं. वंशीधर शास्त्री, अच्युत सं. मा., काशी, सं. १६६७

६. तैत्तिरीयोपनिषद् (शांकर भाष्य), व्याख्याकार आनन्दगिरि, काशी, प्रथम सं.

१०. कैनोपनिषद् (शंकर मा. आनन्दगिरि व्याख्याकार आनन्दगिरि, व्याख्या युक्त), काशी,

११. वृहदारण्यकोपनिषद् , आचार्य श्रीराम शर्मा, बरेली, प्रथम सं.

१२. मुण्डकोपनिषद् (शंकर भाष्य), सच्चिदानन्देन्द्र, वाराणसी प्रथम सं.

१३. गोभिल गृह्यसूत्र, म. म. मुकुन्द शर्मा, वाराणसी, सं. २०३७ वि.

१४. आश्वलायन गृह्यसूत्र (नारायणी टीका सहित), एन. एन. शर्मा, वाराणसी, प्रथम

१५. आश्वलायन श्रोत सूत्र, पूना संस्करण, प्रथम

१६. पारस्कर गृह्यसूत्र, चौ. सं. सी. वाराणसी,प्रथम

१७. मानव गृह्यसूत्र, आनन्दाश्रम, पूना, प्रथम सं.

१८. आपस्तम्ब गृह्य सूत्र, सं. डा. उमेश चन्द्र पाण्डेय, वाराणसी, १६६७

१६. आपस्तम्ब धर्म सूत्र (हिन्दी टीका सहित) " " प्रथम

२०. गौतम धर्मसूत्र (हरदत्त कृत मिताक्षरा वृत्ति युक्त) " "

२१. वसिष्ठ धर्मसूत्र, चौ. सं.सी., वनारस, प्रथम सं.

२२. बौधायन धर्मसूत्र, गोविन्द स्वामी ए. चिन्न स्वामी, काशी, प्रथम् सं.

२३. कामसूत्र (वात्स्यायन) (जयमंगला टीकता सहित), देवदत्त शास्त्री, काशी, १६८०

२४. श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण, निर्णय सागर प्रेस, संस्कर, बम्बई, १६२४

२५. " "गीता प्रेस , गोरखपुर, सं. २०२६ वि.

२६. श्रीमन्महाभारतम् - (सं. रा. ना. पाण्डेय) गीताप्रेस, गोरखपुर २०३० वि.

२७. श्रीमद्भगवद्गीता - " " " सं. २०३६ वि.

२८. मनुस्मृति - सं. पं. जनार्दन झा - कलकत्ता (प्रथम सं.)

२६. याज्ञवल्क्यस्मृतिः, सं. डा. उमेश चन्द्र पाण्डेय, वाराणसी, सं. २०२६ वि.

३०. पाराशरस्मृतिः (हिन्दी व्याख्या सहित) चौ. सं. सी. , वाराणसी, प्रथण सं.
३१. अत्रि स्मृतिः सं. श्री राम शर्मा, बरेली, प्रथम सं. (बीस स्मृतियां भाग १ व २)
३२. अष्टाध्यायी (पाणिनि) सं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, वाराणसी, १९७८
३३. महाभाष्य (पतंजलि) सं. चारुदेव शास्त्री, दिल्ली, १९६८
३४. सिद्धान्तकौमुदी (बालमनोरमा तत्वबोधिनी टीका सहित), भट्टोजिदीक्षित, दिल्ली १९६५
३५. उत्तररामचरितम् सं. पं. ब्रह्मानन्द शुक्ल, मेरठ सं. प्रथम
३६. ''सं. - एम. आर. काले, दिल्ली ''
३७. Uttar Caritam. S.R. Ray. Calcutta. 1934.
३८. उत्तररामचरितम् - डा. श्रीनिवास मिश्र, आगरा, १९८२
३९. पं. शेषराज शर्मा कान्तानाथ शास्त्री, वाराणसी, १९५३
४०. मालतीमाधव (भवभूतिकृति) सं. शेषराजशर्मा, चौ. सं. सी, वाराणसी, १९६४
४१. " " एम. आर. काले, बम्बई १९२८
४२. " " रामकृष्ण तलंग, निर्णय सागर, बम्बई, १९०० ई.
४४. " " रंगाचार्य अयूयर, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई १९२६
४५. मालविकाग्निमित्रम् (कालिदास कृत) सं. रामचन्द्र मिश्र, वाराणसी, १९५१
४६. " " डा. संसारचन्द्र, दिल्ली १९६७
४७. विक्रमोर्वशीयम् ''पं. रामचन्द्र मिश्र, वाराणसी १९५४
४८. " " डा. रेवा प्रसाद द्विवेदी (कालिदास ग्रन्थावली, वाराणसी, १९७८)
४९. उर्वशी (नाटिका) डा. चन्द्रभानु त्रिपाठी, इलाहाबाद १९८९ (प्रथम संस्करण)
५०. शाकुन्तलीयम् (शाकुन्तल सौरभम्,) - डॉ. कैलाशनाथ द्विवेदी, कानपुर, १९९१
५१(अ). अभिज्ञान शाकुन्तलम् '' सं. गुरु प्रसाद शास्त्री, वाराणसी , १९५४
५१ (ब). " '' कपिलदेव द्विवेदी, इलाहाबाद, १९५८
५१ (स). " निरूपण विद्यालंकार मेरठ, १९६४
५२. '' '' डा. कृ. का. त्रिपाठी डा. कै. ना. द्विवेदी, कानपुर, १९७५
५३. कुमारसम्भव् (कालिदास) निर्णय सागर प्रस, बम्बई, १९३०
५४. रघुवंशम् (कालिदास) चौ. सं. सी. बनारस, १९३१ट
५५. मेघदूतम् " सं. वासुदेवशरण अग्रवाल, दिल्ली, १९५३
५६. ऋतुसंहार " चौ. सं. सी. बनारस, १९५४
५७. कालिदास ग्रन्था० सं. पं. सीताराम चतुर्वेदी, अलीगढ़, द्वितीय सं.
५८. '' '' डा. रेवाप्रसाद द्विवेदी, काशी हिन्दू वि. वाराणसी, १९७८
५९. नाट्यशास्त्र (अभिनवगुप्त विवृतियुक्त), गायकवाड़, ओ. सी. सं., बड़ौदा, १९२६
६०. नाट्यशास्त्र (भरत प्रणीत) पं. बटुकनाथ शर्मा पं. बलदेव उपाध्याय,वाराणसी,'१९२९
अभिनव नाट्य शास्त्र - पं. सीताराम चतुर्वेदी वाराणसी, प्रथम संस्करण
६१. नाट्य दर्पण (गुणचन्द्र रामचन्द्र कृत) गा.ओ. सी. बडौदा, १९२०

६२. दशरूपक (धनंजय कृत) डा. श्रीनिवास शास्त्री, मेरठ, १६६६
६३. दशरूपक (धनंजय कृत) सं. डा. भोलाशंकर व्यास, वाराणसी, १६५५
६४. साहित्यदर्पण (विश्वनाथकृत) सं. दुर्गाप्रसाद द्विवेदी, बम्बई, १६१५
६५. " " डा. सत्यवृतसिंह, वाराणसी १६५७
६६. ध्वन्यालोक (आनन्दवर्धनकृत) आचार्य विश्वेश्वर, वाराणसी, १६६४
६७. श्रृंगार-प्रकाश (भोजराज कृत) निर्णय सागर संस्मरण, बम्बई, (प्रथम)
६८. संगीत-रत्नाकर (शारंगदेव कृत) सिंहभूपालकृत-व्याख्या, काशी, दिल्ली, १६७६
६६. संगीत दामोदर, शुभंकर, काशी प्रथम सं.
७०. कादम्बरी (बाणभट्ट कृत) डा. श्रीनिवास शास्त्री, मेरठ, १६६४.
७१. हर्षचारित (बाणभट्ट कृत) जगन्नाथ पाठक, वाराणसी, १६५८
७२. गौडवहो, वाक्पतिराज, काशी, प्रथम सं.
७३. हनुमन्नाटक (विभा टीका युक्त) चौ. सं. सी. वाराणसी, प्रथम
७४. संस्कार-प्रकाश (वीर मित्रोदयः), मित्र मिश्र, काशी, प्रथम सं.
७५. संस्काररत्नमाला, गोपीनाथ भट्ट, चौ. सं. सी., वाराणसी

(ब) सहायक ग्रन्थ

७६. Drama in sanskrit Literature, R. V. Jagirdar, Bombay 1947.
७७. The Natya shastra, M. M. Ghosh, Calcutta, 1950.
७८. Laws and practice of sanskrit Drama. S. N. Shastri. Varanasi. 1961
७६. A New History of Sanskrit literature. Krishna chaitany, Delhi. 1966.
८०. Education In Ancient India, A.s. Altekar. First Editon.
८१. Krishna Swami Aiyanger comenoration volume, Madras, first edition.
८२. Kalidasa. R.S. shastri, shrirangam. 1960.
८३. India in kalidasa, B.S. Upadhyaya, Allahabad. 1957.
८४. Bhavbhuti, V. V. Mirashi, Delhi, 1974.
८५. Great Women of India, R.C.Majumdar, calcutta, first edi.
८६. Position of Women In Hindu Civilization.
८७. A. History of Sanskrit litrature, Macdonell, Delhi. 1967.
८८. Sanskrit Drama (Keith)
८६. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, डा. कैलाश नाथ द्विवेदी, इटावा, १६७१
६०. महाकवि कालिदास. डा. कैलाश नाथ द्विवेदी, कानपुर, १६८४
६१. कालिदास की कृतियों में भौगोलिक स्थलों का प्रत्यभिज्ञान, डा. कै. ना. द्विवेदी, कानपुरर
६२ कालिदास, चन्द्रबली पाण्डेय, वाराणसी, सं. २०१६ वि.
६३. कालिदास और उनका युग, पं. भगवत शरण उपाध्याय, इलाहाबाद, १६५६
६४. मानवशिल्पी कालिदासः डा. रेवाप्रसाद द्विवेदी, सागर, (प्रथम सं.)

९५. कालिदासीयम्, डा. कैलाशनाथ द्विवेदी, सागर, १९७८
९६. लेखाञ्जलिः (शोध लेख संकलनम्) - डा. कैलाश नाथ द्विवेदी, साहित्य रत्नालय, कानपु
१९९२
९७. कालिदास के नाटक, डा. भगवत शरण उपाध्याय, दिल्ली (प्रथम सं.)
९८. कालिदास के रूपकों का नाट्यशास्त्रीय विवेचन, डा. कुसुमभूरिया, कानपुर १९७९
९९. कालिदास के ग्रन्थों पर आधारित तत्कालीन भारतीय संस्कृति, डा. गायत्री वर्मा, वाराणसी
१९९३
१००. भवभूति और उनकी नाट्यकला, डा. अयोध्याप्रसाद सिंह, दिल्ली, १९९९.
१०१. कालिदास और भवभूति, द्विजेन्द्रलाल राय (अनु. रूपनारायण) बम्बई, १९५६
१०२. उर्वशी, डा. रामधारी सिंह दिनकर, दिल्ली, (प्रथम सं.)
१०३. भवभूति के नाटक, डा. ब्रजवल्लभ शर्मा, भोपाल, १९७३
१०४. संस्कृत नाटक समीक्षा, डा. इन्द्रपाल सिंह "इन्द्र", कानपुर, १९७७
१०५. संस्कृत साहित्य की रूपरेखा, पं. चन्द्रशेखर पाण्डेय, कानपुर १९५८
१०६. धर्मशास्त्र का इतिहास (पी. वी. काणे कृत) अनु. अर्जुन चौबे काश्यप, लखनऊ (प्रथमस
१०७. वेशभूषा, डा. मोतीचन्द, पटना /दिल्ली (प्रथम सं.)
१०८. हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन, डा. वासुदेवशरण अग्रवाल, वाराणसी/पट
१९६४ (प्रथम सं.)
१०९. ऋग्वेदिक भूगोल, डा. कैलाशनाथ द्विवेदी, कानपुर, १९८४
११०. ऋग्वेद पर एक ऐतिहासिक दृष्टि, पं. विश्वेश्वरनाथ रेउ, दिल्ली, १९६७

'शोध-पत्रिकाएँ

१११. Journal of Bihar & Orisa REsearch Society, 1916.
११२. Journal of Royal Asiatic society, Calcutta. 1909.
११३. Journal of U. P. Historical Society Vol XXII, Pt. I & II 1949.
११४. शोध प्रभा, वर्ष ६ अंक ३-४, दिल्ली, १९८२
११५. विश्वभारती पत्रिका, वर्ष १६ अंक १, १९६७, वर्ष २०/३-४ अंक, १९७१
वर्ष २४/३-४, शान्तिनिकेतन, १९८०
११६. ऋतम्भरा (स्वर्णजयन्ती स्मारिका, वि. सिं. सनातनधर्म कालेज), कानपुर, १९७१
११७. सागरिका (२१/१, २२/४ अंक) सागर/वाराणसी. सं. २०४० वि.
११८. अजस्रा (४/३ अंक), लखनऊ, १९८२
११९. पारिजातम् (२/४अंक), कानपुर, १९८३, अंक ९१९, १९९१
१२०. कादम्बिनी, (दिसम्बर ८५ अंक) नई दिल्ली - १, १९८५
१२१. अर्वाचीन-संस्कृतम् १५ जनवरी, १९९१, नई दिल्ली (देववाणी परिषद,)